अनन्तकीर्ति-ग्रन्थमालाका ९ वाँ ग्रन्थ

आचार्यकल्प पं० टोडरमल्लजी विरचित

मोक्षमार्गप्रकाशक

भाषावचनिका

प्रकाशक—

मंत्री, अनन्तकीर्ति-ग्रन्थमाला, बम्बई

चैत्र, १९९४ वि०

वीर-निर्वाण संवत् २४६३

मू० १।)

प्रकाशक—
राजमल बड़जात्या
मंत्री, अनन्तकीर्ति-ग्रन्थमाला
भिलसा (ग्वालियर)

श्री हंसराज बच्छराज नाहटा
सरदारशहर निवासी
द्वारा
जैन विश्व भारती, लाडनूं
को सप्रेम भेंट –

प्रिंटर
पं० फूलचन्द शास्त्री,
मैनेजर, महावीर प्रेस,
नातेपूते (शोलापुर)

कव्हर, टाइटिल पेज, शुद्धिपत्र, न्यू भारत प्रेस, बम्बईमें छपा।

निवेदन

यह महान् ग्रन्थ चौथी बार प्रकाशित हो रहा है। पहली बार स्वर्गीय बाबू ज्ञानचन्द्रजी जैनीने इसे लाहोरसे प्रकाशित किया था। दूसरी बार इसकी तीन हजार प्रतियाँ जैनग्रन्थरत्नाकर-कार्यालयके स्वामियोंने निर्णयसागर प्रेसमें बड़ी ही सुन्दरतासे प्रकाशित करके लागत-मात्र मूल्यसे वितरण की थीं। उसके बाद काशीसे बाबू पन्नालालजी चौधरीने इसे प्रकाशित किया। उनका संस्करण समाप्त हो जानेसे अब यह अनन्त-कीर्तिग्रन्थमालाकी ओरसे प्रकाशित किया जाता है।

हम चाहते थे कि यह संस्कारण भी सुन्दरतासे प्रकाशित किया जाय, महावीर प्रेसके व्यवस्थापक पं० फूलचन्द्रजी शास्त्रीने इसके लिए नया टाइप खरीदकर विश्वास भी दिलाया था कि सुन्दरतासे छापेंगे; परन्तु दुर्भाग्यसे उन्होंने अपने उत्तरदायित्वका खयाल न रखकर इसे जिस रूपमें छापकर दिया, वह पाठकोंके सामने है। अवश्य ही इसके लिए हम पाठकोंके निकट क्षमाप्रार्थी हैं।

हमें दुःख है कि ग्रन्थमें अशुद्धियाँ भी बहुत रह गई हैं और इसका कारण यह है कि प्रूफ संशोधन भी उक्त शास्त्रीजीके ऊपर छोड़ दिया गया था। ग्रन्थके अन्तमें मोटी मोटी अशुद्धियोंका शुद्धिपत्र लगा दिया गया है। उनके अतिरिक्त अक्षर मात्राओंकी भी अनेक अशुद्धियाँ हैं जिन्हें पाठक सुधारकर स्वाध्याय करनेकी कृपा करे।

निवेदक

रामप्रसाद जैन, उपमंत्री

विषय-सूची

तीसरा अधिकार

नवाँ अधिकार

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२८	१६	कोड़ी	कोढ़ी
५३	१८	व्य ता	व्यक्तता
५६	४	अस्वाद	आस्वाद
१०१	९	भा	भाव
१०९	१२	सुख	सुखदुःख
१२५	१५	भेदविपर्यय	भेदाभेदविपर्यय
१२६	२२	यथार्थ	अयथार्थ
१२७	२०	भया मिथ्यादर्शन	भया मिथ्याज्ञान मिथ्यादर्शन
१३४	४	राग	द्वेष
१३५	५	राग	राग द्वेष
१४८	३	ब्रह्म अंधकार	अंधकार
१५०	८	शाश्वता ठहरया	शाश्वता न ठहरया
१५०	१०	कौन	कौन,
१५६	१६	ब्रह्म	ब्रह्मा
१५८	१९	जीवनींकै	जीवनिकै
१६३	६	न उपजेगे	नए उपजेंगे
१८८	१७	पुरुषरहित	पुरुष प्रकृतिरहित
१९४	१३	अपरप	अपर
१९६	१३	' भट्ट ' तौ	' भट्ट '
१९८	१६	मनरूप	ममरूप
२१०	१७	रैवताद्रो	रैवताद्रौ
२४४	१९	वंदनादि	चंदनादि
२६०	१०	भेरा	मेरा
२७०	१	विषा	विषै
२७१	४	भट्टाविभट्टा	भट्टविभट्टा
२७९	३	भ्रमतें	भ्रमतैं

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२८५	१०	लज्जभयगारवदो	लज्जाभयगारवदो
२९०	१४	जीवस्य	जीवश्च
२९०	१६	काहूकारि किया नाही	काहू करि नहीं किया नाहीं
२९२	१०	शीतका अधिकार	शीतका आधिक्य
२९४	४	नोमकर्मका	नोकर्मका
३०५	१६	शुभोपयोग	शुद्धोपयोग
३४०	७	बधका	बंधका
३४१	१५	उपसादि	उपवासादि
३४६	२	गुणकार	गुणाकार
३७२	१७	व्यवहार	व्याख्यान
३९६	५	विना मिथ्यात्व	विनय मिथ्यात्व
४०५	९	व्यहवार	व्यवहार
४५४	१६	परिणानिकी	परिणामनिकी
४७५	२०	तन्मुक्ता	तन्मुक्त्वा
४७६	२५	बंधकौ	बंधका

ग्रन्थकर्त्ता स्व० पं० टोडरमल्लजी

प्रस्तावना

आदिवक्तव्य.

प्रिय पाठक वृन्द ! यह अपूर्व ग्रंथ आपकी सेवामें सादर उपस्थित किया जाता है। यह कितने महत्वका स्थान है तथा इसके कर्ता किन २ अपूर्व गुणोंके धारक थे इस बातका स्थूल रूपसे परिज्ञान प्रस्तावना द्वारा सुलभ रीतिसे हो सकता है अतः उपयोगी समझकर इसे ग्रंथके साथ सम्बन्धित कर दिया है। इस ग्रंथमें ग्रन्थकर्ता कृत पहले कुछ पाठ छूटगये थे और वे ग्रंथके साथ अलग मुद्रित थे उनको यथास्थान सम्बन्धित कर दिया है तथा पहले कुछ ऐसी अशुद्धियां भी रह गईं थीं कि जिनकी सत्ता तीन संस्करणोंतक बराबर चली आरही थी इस–संस्करणमें उनको भी संशोधित कर शुद्धि पत्र लगा दिया है अतः इस संस्करणको जहांतक बना है वहांतक प्रमादस्थानसे बचानेकी कोशिश की है फिर भी दैववश कुछ त्रुटियां रह गईं हैं वे और कुछ निवेद्य विषय हैं वे आगे लिखित निवेदन द्वारा ज्ञातव्य हैं।

ग्रंथकर्ताका और उनकी कृतिका सामान्य परिचय—

इस निकृष्ट कालमें जब संस्कृत प्राकृतके ज्ञानकी विशेष न्यूनता हो गई थी उससमय जैन धर्मके ग्रंथोंके पठनपाठनका एक तरहसे अभाव ही होगया था ऐसे समयमें स्वनामधन्य खंडेलवाल कुलभूषण दिगम्बर जैन धर्मके परम श्रद्धालु सातिशय बुद्धिके धारक श्रीमान् पंडित टोडरमलजीका उदय हुआ था। वह समय ऐसा नहीं था कि जिसमें सुलभतासे प्रचुर-

ग्रंथोंकी प्राप्तिका तथा उनके पठन पाठनका संयोग उनको मिलसकता हो। फिर भी उनके द्वारा की गई गोम्मटसार, लब्धिसार, क्षपणासार, त्रिलोकसार आदि टीका और उनकृत जो मोक्षमार्ग प्रकाश है उन सबका स्वाध्याय करनेसे विदित होता है कि उस समय इनसरीखा अनेक स्वमत परमत शास्त्रका ज्ञाता दिगम्बर जैन समाजमें तो क्या अन्य समाजमें भी शायद ही क्वचित् कोई होगा। दिगम्बर जैन समाजमें गोम्मटसार वगैरह ये एसे ग्रंथ हैं कि जिनका पठन पाठन एक विशेष बुद्धिके उत्कर्षमें और धारणाके उत्कर्षमें भी बड़ी कठिनताके साथ बनसकता है। क्योंकि बहुत विद्वज्जनसमुदायका अनुभवित कहना है कि गोम्मटसारके पठनका तो कुछ रहस्य उसी समय प्राप्त होसकता है जब कि आजन्म सर्व विषयका अभ्यास छोड़ कर उसीका अभ्यास बना रहे। जब गोम्मटसारके विषयका यह हाल है तो उससरीखे अन्य इनके टीकाकृत ग्रंथोंका भी यह हाल अवश्यही है। ऐसी दशामें उन ग्रंथोंके टीकाकार कितनी उत्कर्ष बुद्धिके धारक थे यह स्वयमेव अनुभवसे निश्चित होजाता है। आपने अपने स्वल्पजीवनमें इन महान् ग्रंथोंकी टीका ही लिखीं हैं केवल इतनाही नहीं है किंतु अपने उस समयके जीवनमें आपने अनेक मत मतान्तरो और अपने धर्मके सैकडों ग्रंथोंका सविशेषतासे पठनके साथ मार्मिक रीतिसे मनन किया है यह सब बात आपके मोक्ष मार्ग प्रकाशके मनन करनेसे ही स्वयमेव अवगत होती है। उनके टीका ग्रंथोंकी बात तो अलग रहने दीजिये क्योंकि उनका मार्मिक पठन और मनन तो उन्हीं सरीखे विशेष

बुद्धिशालियोंके भाग्यका विषय है। परंतु उनका सरल स्वल्प बुद्धिवालोंके लिये बनाया हुआ देशभाषामय जो यह मोक्षमार्ग प्रकाश है इसीकी मार्मिक गहराईके साथ सुश्रृंखलित संकलित और सुसंबद्ध रचनाको भी देखकर बुद्धिमानोंकी बुद्धि चकित होजाती है। इस ग्रंथको गहरी दृष्टिसे मनन करने पर मालूम हो जाता है कि यह ग्रंथ साधारण ग्रंथ नहीं है किंतु इस कोटिका एक अनूठाही महत्वपूर्ण ग्रंथराज है। तथा इसके कर्ता भी अनेक शास्त्रोंके मर्मज्ञ अपूर्व प्रतिमाशाली विद्वान् थे। इस ग्रंथका विषय सर्व हितकर और महान् गंभीराशयको लिये हुए है। तथा आदिसे लेकर जहांतक इसका निर्माण हुआ है वहांतक कहीं भी यह अपने विषयसे स्खलित नहीं है। किंतु सर्वांगरूपसे सुसंबद्ध और सुहावना है।

ग्रंथविषयक विशेष परिचय.

इस ग्रंथका विषय मुख्यतया वीतराग विज्ञानतारूप मोक्षमार्गको लेकर उस प्रसंगके अनेक श्रद्धा भाजन अकाट्य विषयोंको लिये हुए है।

इस ग्रंथमें जिस २ विषयका प्रतिपादन किया है उसको स्वयं शंका समाधानके साथ उत्तम विशद रीतिसे वर्णित किया है। तथा इसमें वीतराग विज्ञानताके मुख्य साधक सम्यक्त्वादि रत्नत्रयको सविस्तर सहायक सामिग्रीके साथ विशेषरूपसे वर्णित किया है। तथा उसके मुख्य विपक्षी मिथ्यात्वके स्वरूपविपर्यास कारणविपर्यास भेदाभेदविपर्यासरूप वेदान्त मीमांस सांख्य योग न्याय वैशेषिक

जैमिनीय चार्वाक बौद्ध मुसलमान मतका पूर्वपक्ष (शंका) और उत्तरपक्ष (समाधान) के साथ निरूपण किया है। इसी तरह केवल निश्चयावलंबी केवल व्यवहारावलंबी तथा केवल उभयावलंबी सूक्ष्म जैनाभासोंका खंडन कर और तत्वस्वरूपको समझाकर उनको संबोधा है। और वेदादि अन्य मतके शास्त्रोंसे जैन मतकी प्राचीनता और समीचीनताका बहुत सुंदर रीतिसे वर्णन किया है। तथा श्वेताम्बर जैन और ढूंढक जैनोंके सिद्धान्त आचरण आगमका बड़ी कुशलताके साथ खंडनकर निर्बाध जैनसिद्धान्त सदाचार और जैनागमके स्वरूपका प्रतिपादन किया है। प्रसंगोपात्त सिद्धान्त आचार नीति आदि ग्रंथोंके अनेक वाक्य प्रमाण रूपमें उद्धृत किये हैं। तथा मिथ्यात्वमें एकान्त विनय संशय विपरीत अज्ञान भेदरूप गृहीत मिथ्यात्व तथा अगृहीत मिथ्यात्व और उनके स्वामी, तथा सम्यक्त्व और उसके आज्ञादिक दशभेद और उपशमादिक ३ भेद तथा उनके प्रभेद, और द्रव्यलिंगी, भावलिंगी, सम्यक्त्व मिथ्यात्वी आदिका अनेक हेतु और दृष्टान्तों द्वारा निरूपण किया है यह सब वर्णन इस ग्रंथका केवल सामान्य विषयमात्र प्रदर्शन करनेवाला ही है क्योंकि यह ग्रंथ दुर्भाग्यवश अपूर्ण है अपूर्ण ही क्यों शतांश भी नहीं है। क्योंकि

---

१ उनके द्वारा की गई पुरुषार्थ सिद्ध्युपायकी टीका भी अधूरी रह गई है इसका कारण यह मालूम पड़ता है कि-पुरुषार्थ सिद्ध्युपायकी टीका और मोक्षमार्ग प्रकाश इन दोनोंका निर्माण साथही साथ रहा होगा इसलिये दोनोंकी अपूर्णताका एकही कारण हो सकता है। भाषा शैलीके देखनेसे मालूम होता है कि पुरुषार्थ सिद्ध्युपायकी ९५ छंद पर्यंतकी टीका टोडरमलजी कृत है और बाकी टीका आनंदचंदजीके

इसमें रत्नत्रयके प्रथम रत्न सम्यग्दर्शनके वर्णनकी बिलकुल कुछ आरंभ दशाका अधूरा वर्णन है ऐसी दशामें नहीं कह सकते कि यह ग्रंथराज कितना बड़ा होता। फिर भी इतने मात्रमें जो कुछ वर्णन है वह अनेक विषयों पर प्रकाश डालनेवाला संक्षिप्त, सुसंबद्ध और आश्चर्यकारी है। इस तरह यह ग्रंथ अनेक विषय रत्नोंका उत्तम अगाध खजाना है इसके इन सर्व रत्नोंकी प्राप्ति तो इसके पूर्ण ज्ञानावगाहसे हो सकेगी तथा संक्षेपमें विषयानुक्रमणिकासे भी इसके संक्षिप्त विषयोंका ज्ञान हो सकेगा। फिर भी इसमें कुछ ऐसे विषय है जिनपर सर्व साधारणकी दृष्टि नहीं जा सकती इसलिये उन विषयोंमेंसे कुछ विषयोंपर किंचित् मार्मिक दृष्टिसे किया विवेचन इस प्रकार है—

मोक्षमार्ग प्रकाशके प्रतिपाद्य विषयपर कुछ प्रकाश—

मंगलाचरणमें–ग्रंथकर्ताने–वीतरागविज्ञानको नमस्कार किया है। वह कारण, स्वरूप और फलकी दृष्टिसे बहुतही समंजस है। वीतराग विज्ञानका अर्थ–रत्नत्रय तथा रत्नत्रयके धारक हो सकता है क्योंकि इस पदमें कर्मधारय बहुव्रीय आदि समास द्वारा ये अर्थ गर्भित हैं

पुत्र पं. दौलतरामजी कृत है। जिनवाणी प्रचारक कार्यालय कलकत्ताकी मुद्रित पुरुषार्थसिद्ध्युपायमें पं. दौलतरामजीकी जगह पं. सत्यंधर-जीका नाम छपा है वह प्रमादसे छप गया है क्योंकि टोडरमलजीके बाद पुरुषार्थ सिद्ध्युपायकी टीका को पं. दौलतरामजीने पूर्ण किया है। यह बात उस पुरुषार्थसिद्ध्युपायके अन्तमें दी हुई प्रशस्तिसे स्पष्ट हो जाती है।

तथापि यहां शास्त्रसंबधित होनेसे प्रधानतया ज्ञान अर्थ है, समासमें वीतराग और वि उपसर्ग उस ज्ञानके विशेषण होनेसे—उसका संक्षेपमें रागद्वेषरहित विशिष्ट ज्ञान ऐसा अर्थ होता है और जिसकी सत्ता—भेदविज्ञानकी प्रारंभ दशासे लेकर केवल ज्ञानतक होती है इसके मंगलमय, और मंगलकरण, दो विशेषणों द्वारा अभेद और भेदविवक्षासे पापनिवृत्तिदानस्वरूप, सुखदानस्वरूप, और पापनिवृत्ति-दानकारण, सुखदानकारण ये चार अर्थ हो जाते हैं। और इसका फल महान् अरहंतादि पदकी प्राप्तिरूप कारणसापेक्ष कार्यदशासे स्थित है। ऐसे गुणकी नमस्कृति रत्नत्रयके प्रथम पाये रूप श्रद्धानकी अभिरुचि है।

मंगलाचरणके दूसरे दोहेमें—महाशब्द देहलीदीपकन्यायसे—मंगलका ग्रंथका और ग्रंथ बनाने रूप कार्यका पृथक् २ रूपसे विशेषण है। इसका तात्पर्य यह है कि यह वीतराग विज्ञानरूप मंगल महान् है और जिस शास्त्रमें यह शब्दात्मक भावात्मक—या उभयात्मक दृष्टिसे पाया जाता है वह ग्रंथ महान् होता है तथा उस ग्रंथका बनाने रूप कार्य भी महान् होता है। इन सबमें महत्ता क्यों है इस बातको ग्रंथकारने सूचित किया है कि—इनसे समाज (जीवसमुदाय) आत्मीक पदरूप मोक्षसुखको प्राप्त करता है।

ये ग्रंथकार श्री टोडलमलजीके दोनों दोहे अपने इष्टमें परमभक्तिके सूचक हैं तथा ग्रंथ बनाने रूप अपनी कृतिके अभिमान नाशके सूचक हैं। क्योंकि उनने इस बातको स्पष्ट शब्दोंमें सूचित किया है कि यह मेरी ग्रंथरूप कृति है वह मैंने बनाई है तथा मेरे पाण्डित्यसे

संपादित हुई है इस कारणसे महान् नहीं है किंतु इसमें सर्व कल्याण-कारक मंगलात्मक वीतराग विज्ञानता है इस लिये यह ग्रंथ और इसका कर्तृत्वकार्य महान् है।

स्वजन्यमंगल कृतिमें अहंकारजन्य दोषकी संभावना हो सकती थी उसको दूर करनेके लिये तथा उसमें आर्षवाक्यकी अविरुद्धतारूप सारता है इस बातको सूचित करनेके लिये पुनः प्राचीन मंगलका विधान किया है इस कृतिसे ग्रंथकारने ऋषिवाक्योंमें अपनी परम श्रद्धा सूचितकी है तथा इस बातको सूचित किया है कि मेरे मंगलाचरण रूपवाक्यसे लेकर समस्त ग्रंथमें आर्ष वाक्योंसे अविरुद्धता है। भावभंगीरूप यह आदिकी कृति इस ग्रंथमें आगे जाकर स्पष्ट हो जाती हैजहां कि उनने अपने मंतव्योंकी प्रमाणीकतामें आर्ष वाक्य उद्धृत किये हैं तथा वैसे ऋषिवाक्यअभिरुचिके अन्य दूसरे वाक्य भी उद्धृत किये हैं।

पत्र ७ में—परमेष्ट और परमेष्ठी दो शब्दोंका केवल शब्दकृत भेद है परंतु भावकृत भेद नहीं है इस बातको दिखानेके लिये ही—‘ जातें जो सर्वोत्कृष्ट होय, ताका नाम परमेष्ट है। पंच जो परमेष्ठी तिनका समाहार समुदायका नाम पंचपरमेष्ठी जानना, ’ ऐसे वाक्य लिखे हैं। यह भेद सम्यग्दर्शन और सम्यक्श्रद्धान सरीखे शाब्दिक भेदके समान है भावकी अपेक्षासे दर्शन और श्रद्धानके समान परमेष्ट और परमेष्ठी एकार्थ हैं विवादके विषय नहीं हैं।

पत्र ११ में मंगलकी सफलता सूचक विज्ञसम्मत समुचित युक्तियोंमें जो प्रथमही तर्कात्मक प्रश्नका उत्तर दिया है वह एक

हृदयग्राही मनमोहक है कारण कि—अन्यमतियोंके ग्रंथोंमें ऐसे मंगलोंके न होने पर उनमें विघ्ननाश और ग्रंथ समाप्ति जो होती है वह तीव्र मोहमिथ्यात्वके कारणसे होती है क्योंकि उनग्रंथोंमें तीव्र मोहमिथ्यात्व संपादक विषयोंका ओतप्रोत है, जिस जगह जैसे उपादान और निमित्त कारण होंगे वहां वैसेही कार्य होंगे वीतरागरूप-मंगलतामें विषयपोषकतारूप शास्त्र सामिग्रीका सद्भाव अग्निको जलके समान सर्वथा विपरीत है। कदाचित् विषय पोषक शास्त्र-सामिग्रीके साथ वीतरागरूप द्रव्यमंगलके सहयोगमें विघ्नका अभाव और ग्रंथसमाप्ति देखी जाय तो वहां वह मंगल भक्तिभावशून्य छलसे निर्दिष्ट है इसलिये उसकी कारणता—समुत्पन्न वहां वह फल नहीं है किंतु ग्रंथकर्ताके हृदयस्थ अनेक वैसी भाव सामिग्रीं हैं। वास्तविक रीतिसे देखा जाय तो भाव सामिग्री ही कार्यकी साधक है द्रव्यसामिग्री तो उस भावकी साधक है क्योंकि द्रव्यावलंबनके विना भावकी स्थिति नहीं होती अतः भावस्थितिके साथ द्रव्यावलं-बितकार्य होते हैं वे उसके अनुकूलही होते हैं विपरीततामें वहां भाव-स्थितिका अभावही रहता है। यह न्यायनियमित ग्रंथकर्ताका संक्षिप्त समंजस आशय है।

पत्र २३—२४ में आत्मानुशासन आदि ग्रन्थोंके उद्धरणोंको देकर जो वक्ताके गुण वतलाये हैं—उनमें—आगमज्ञान, तत्वार्थश्रद्धान, और संयमभाव, ये तीन गुण मुख्य बतलाये हैं परंतु ये ज्ञान मिथ्यादृष्टि द्रव्यलिंगीके भी होसकते हैं इसलिये इनमें परोपकारिताकी साधनता भलेही कुछ होसकती है परंतु स्वोपकारिताका नियम नहीं है।

क्योंकि इन तीन गुणका संबंध आभासताके रूपमें मिथ्यादृष्टिके भी होसकता है। इसलिये ग्रंथकारने इन तीन गुणोंके मुख्यत्वको गौणकर मुख्यमुख्यता आत्मरसके रसिया आत्मानुभवनमें बतलाई है इस केवल एक गुणके होनेसे उपर्युक्त तीन गुणके गोणत्वका अभाव होकर उनमें मुख्यता आजाती है तथा और सभी गुण कार्यकारी होजाते हैं और स्वोपकारिताके साथ परोपकारिता मुख्यतासे आजाती है क्योंकि स्वानुभवके सिवाय पूर्णज्ञानी (केवली) कभी हो नहीं सकता और केवलज्ञानदशाके विना पूर्ण परोपकारिता नही होसकती स्वोपकारिता तो फिर कोसों दूर है क्योंकि दिव्यध्वनिका सद्भाव केवलज्ञानदशामें ही है अन्यदशा अर्थात् मिथ्यादृष्टिकी दशामें नहीं है। यह कथन यहांपर एक मुख्य मार्मिक दृष्टिसे विमार्षित रूप वर्णित है।

पत्र ३३ में—जीवात्मा और कर्मका बंधान है वह अनादि है उसमें जो–इतरेतराश्रय दोष देकर प्रश्न उठाया गया है तथा उसका–समाधान सुमेरुके दृष्टान्त द्वारा किया गया है वह एक वहुतही मार्मिक है। इस प्रकरणमें आपने यह ध्वनित किया है कि वैभाविक परिणाति मुख्यतया अनादि और सादिके भेदसे दो प्रकारकी होती है। जीव और कर्मका सम्बन्ध सुमेरु आदिके दृष्टान्तसे अनादि है। यहां इस दृष्टान्त और दार्ष्टान्तके सम्बन्धसे यह बात ध्वनित नहीं हो सकती है जिसको कि प्रश्नकर्ताने इतरेताश्रय दूषणयुक्त बतलाया है अर्थात् वह दूषण की बात यहां नहीं है कारण कि जो एक वस्तु कहीं दूषण होती है वह सर्वत्र दूषणही रूप हो ऐसी एकान्तपूर्ण बात यहां नहीं है किंतु कहीं कहीं वह भूषण भी हो जाती है जैसे पित्तज्वरवालेको—

मिष्टदुग्ध कटुक भासता है तो क्या सभीको वह कटुक भासता है अतः वह बात यहां नहीं है यही प्रकार यहां (इतरेतराश्रयमें) है अर्थात् इतरेतराश्रय वहां दूषण है जहां हमारे साध्यकी सिद्धि नहीं होती जैसे कि किसीके मतमें ज्ञान स्वप्रकाशक नहीं परप्रकाशक है स्वकाज्ञान उससे उत्पन्न हुए दूसरे ज्ञान द्वारा होता है और उसका भी ज्ञान तज्जन्य अगले ज्ञानसे होता है इस प्रकार अविश्रान्तिमें अन्य अन्यके आश्रय होनेसे मुख्यतया वह उस मुख्य साध्य ज्ञानका ज्ञान नहीं होने देता इस कारण वहां इतरेतराश्रय दूषण है। परंतु जीव और कर्मके सम्बन्धमें वह भूषण है क्योंकि इस सम्बन्धकी हमको अनादिता सिद्ध करनी है इसलिये वह अनादिताका विषय हमारा साध्य है और वह भूतकालीन इतर इतरका आश्रय होनेसे अनादि है अर्थात् उस अनदिताका अन्त सादितामें नहीं है यही हमारा मुख्य साध्य है अतः यहांपर प्रश्नकर्ताका दिया हुआ इतरेतराश्रय दूषण दूषणरूपसे न ठहरकर भूषणरूप परिणत हो जाता है यह वात सुमेरुके दृष्टान्त द्वारा ग्रन्थकर्त्ताके कथनसे साधुरूप ध्वनित है।

पत्र ३४ में वादीने शंका की है कि मूर्तिक मूर्तिकका बंध हो सकता है अमूर्तिक मूर्तिकका बन्ध कैसे हो सकता है? इसका उत्तर देते हुए आपने सैद्धान्तिक विषयको युक्तिद्वारा बड़ेही मर्मके साथ प्रदर्शित किया है। सैद्धान्तिक विषय यह है कि बन्धअवस्थामें आत्माको व्यवहार नयसे मूर्तिक माना है और इसकी बन्धसापेक्ष मूर्तिकता अनादि कालसे है इस वातका समर्थन मेरुके दृष्टान्तसे

किया है इसविषयको प्रश्नकर्ताने नहीं समझा है इसलिये अथवा इस-विषय का विशेष खुलासा करने के लिये जो उत्तर दिया है उसका तात्पर्य सिर्फ इतनाही है कि अमूर्तिकका और मूर्तिका बंध नहीं होता बंध दशामें वह आत्मा मूर्तिक सूक्ष्म है, सूक्ष्मतो यों है कि उसके असली स्वभावकी वहां अव्यक्त सत्ता है और मूर्त यों है कि वह बंध सहित है। जिस जगह असली स्वभाव (अमूर्तिक भाव) प्रगट हो गया है वहां इसको बंध भी नहीं है। मूर्तका अर्थ इन्द्रिय ज्ञानगम्यत्व स्थूल है। और अमूर्तका अर्थ इन्द्रियज्ञानगम्य रहित सूक्ष्म है। सूक्ष्म भी जबतक बंधावस्थाके योग्य है तब तक बंधित है और जब उसमें वह अवस्था नहीं होती तब वह अवन्धित हो जाता है क्योंकि कारणके अभावसे कार्यका अभाव होता है जैसे जघन्य गुणी अबन्ध योग्य परमाणुका बंध नहीं है। भविष्यमें यहां बन्धन नही होगा यह बात दृष्टान्त (परमाणु) में नहीं परंतु दार्ष्टान्त (आत्मा) में यह बात है इसलिये ही पुद्गल और आत्मा जुदे जुदे द्रव्य हैं।

पत्र ९० में श्रीमान् ग्रंथकर्ता महोदयने—उच्च नीच कुलका विचार करते हुए एक ऐसा प्रकाश डाला है जिससे आज कल कुलके विषयमें जो विवाद चल रहा है वह सर्वथा दूर हो जाता है। आप लिखते हैं कि—“ ऊंचा कुलका कोई निंद्य कार्य करै तो वह नीचा होइ जाय। अर नीचा कुलविषैं कोई श्लाघ्य कार्य करै तो वह ऊंचा होइ जाय। लोभादिकतैं नीचकुलवालेकी उच्च कुल-वाला सेवा करने लगि जाय। बहुरि कुल कितेक काल रहे? पर्याय

छूटे कुलकी पलटनि होइ जाय। तातैं ऊंचा नीचा कुल करि आपकों ऊंचा नीचा मानैं। ऊंचा कुलवालाकों नीचा होनेका भयका और नीच कुलवालाकों पाए हुए नीचपनेका दुख है।" यह सर्व कथन जिस बातको द्योतित करता है उसका स्पष्ट आशय यह है—वास्तवमें ऊंच नीच अवस्थाका नाश वर्तमान मनुष्य पर्याय छूटे बिना नहीं होता। वर्तमान ऊंच नीच पर्यायमें नीच ऊंच कार्यजनित कर्मनिमित्तसे उच्चतासे नीचता और नीचतासे उच्चता कर्मकी बंध सत्व और उदय अवस्थासे हो सकती है परंतु वह अव्यक्तरूपमें अवस्थित है इसलिये वर्तमान पर्यायमें ही नीचके श्लाघ्य कार्यसे नीचतासे उच्चता हो गई यह निश्चय नहीं होता अत एव उच्च कार्य करनेवाले नीचको उच्चवर्णी अपनेमें सामिल करलें यह बन नहीं सकता। परंतु उच्चकुलीसे नीचताका कार्य होनेपर उसमें नीचता आजाती है क्योंकि सफेद वस्तुमें काला दाग स्पष्टतासे प्रतीत हो जाता है इसलिये उसमें उच्चापेक्षा नीचता स्पष्ट है इसीलिये वह उच्चकुलकी सत्तासे गिरा हुआ है। नीचकुली उच्चकार्य करनेसे यद्यपि नीच दशासे उन्नतिमें कर्मोदय दशासे समाविष्ट हुआ उच्च माना जा सकता है परंतु वह उच्चता कितनी दशामें है इसका व्यवहृतिमें कुछ निश्चय नहीं है इस कारण वह उन उच्चकुलियोंमें समाविष्ट नहीं हो सकता जिनका कि कुल परंपरासे शुद्ध है। अतः उसका उच्च कुलियोंमें समाविष्ट होनेका केवल एक पर्याय पलटनाही कारण रह जाता है और ऊंचसे नीच होनेके तथा ऊंचको नीचोंमें मिलनेके वर्तमान पर्याय और जन्मान्तरीय पर्याय ये दोनों ही कारण हो सकते हैं। इसका

असली तात्पर्य यह है कि नीचताके अंश उच्चतामें मिलनेसे उच्चताके अंशोंको भंग होनेके साधन हैं। और ऊंचताके अंश नीचतामें सम्मिलित होनेसे नीचताके अंशोंको उज्वल करनेके साधन हैं। अतः ऊंच नीच हो सकता है परंतु नीच ऊंच नहीं हो सकता. यही अभिप्राय श्रीटोडरमलजीके कथनका है। क्योंकि टोडरमलजी साहब स्पष्ट डंडेकी चोटसे सूचित कर रहे हैं–'ऊंचा कुलवालोंकौं नीचा होनेका भयका अर नीचा कुलवालाकौं पाए हुए नीचपनेका दुखही है, यहांपर यदि नीच अच्छे कर्म करनेसे उच्च होजाता तो उसके लिये ग्रंथकर्ता कुछ सुख भी सूचित करते सो किया नही क्योंकि अच्छे कर्म करनेसे उसकी वर्तमान पर्यायमें उच्चताकी श्रेणिमें गणना नहीं होती अतः उसकी इस पर्यायमें सुखदृष्टिका फल नहीं है इसीलिये उसके लिये दुख होना ही लिखा है। अब इस दुखसे छूटनेका साधन उसको केवल पर्याय बदलनेके दूसरा रहता नहीं इसीलिये उनने लिखा है 'बहुरि कुल केते काल रहै? पर्याय छूटे कुलकी पलटनि होइ जाय,' यह ग्रन्थकर्ताका यहां स्पष्ट अभिप्राय है युक्तिसे भी यह बात सिद्ध होती है उसका खुलासा ऊपर किया गया है।

अध्याय छह पत्र २५१ में कुदेवके पूजन और नमस्कार निषेधके प्रकरणसे—यह ध्वनित होता है कि जिस दशामें सम्यक्त्वके घातकी सम्भावना है वह दशा सर्वथा त्याज्य है परंतु चारित्रघातक चारित्र-मोहनीयकी सभी दशामें यह बात संभवित पूर्णरूपसे नहीं हो सकती। देव गुणअवस्थाजन्य और पर्यायअवस्थाजन्य दो प्रकारके होते हैं गुण-अवस्थाजन्य देव समय (धर्म) प्रवर्तक तीर्थंकर देव और तीर्थंकरा-

भास देव हैं यहां श्रद्धान प्रकरणमें मुख्यतया तीर्थंकराभासदेवकी ही स्तुति पूजा आदि निषद्ध है किंतु पर्यायआदि अन्य दशाश्रित देवत्वमें जो पूजनादिका निषेध है वह वहां केवल गुण दशाश्रित देवत्वबुद्धि भ्रमको दूर करनेकी अपेक्षासे हैं। यदि सर्वापेक्षाही यह बात होती तो राजाको भी नमस्कारआदि सम्यग्दृष्टिके व्यवहाराश्रित कर्म हैं वे नहीं बन सकते। परंतु २८० पेजमें श्रीमान् पंडित टोडरमलजीने सम्यग्दृष्टि द्वारा राजाको नमस्कार बतलाया है इसलिये साफ जाहिर है कि चारित्रमोहकतामें इस विधिका विधान भी संभवित है किन्तु दर्शनमोहकतामें नहीं। अन्यथा देवत्व और गुरुत्व धर्मव्यवहृत राजा और मातापिता आदिमें सम्यग्दृष्टिकी नमस्कृतिसे सम्यत्वका घात होना चाहिये परंतु वहांपर वह बात नहीं होती इसलिये यह विषय विवेकसाध्य है।

पत्र ५००—५०१ में निमत्तकी अपेक्षासे सम्यक्त्व के दशभेद किये हैं वहां ग्रंथकारने आठ भेद कारण अपेक्षासे बतलाये हैं और दो भेद ज्ञानके सहकारीपनेसे बतलाये हैं। परंतु अवगाढ सम्यक्त्वको कारण अपेक्षा और ज्ञानसहकारीपनेकी अपेक्षासे दो रूपमें विभक्त किया है। इस तरह ११ भेद सम्यक्त्वके हो सकते हैं परंतु कारण अपेक्षामें आठही लिखे हैं इसलिये भेद तो १० ही माने हैं कारण अपेक्षामें यदि नवमां भेद और मान लेते तो ११ भेद होसकते थे परंतु ऐसा नहीं किया है उसका सबब यही है कि कारण और कार्यमें अभेद विवक्षा है क्योंकि अंगश्रुत अंगबाह्यश्रुत और श्रुत केवलीका श्रुत अभेद दृष्टिसे एक है। इसलिये आठ भेदोंमें इस

भेदका अन्तर्भाव कर लिया है। वास्तवमें अवगाढसम्यक्त्व श्रुत-केवलीके ही होता है गौणतासे अंग और अंगबाह्यताको निमित्त माना है क्योंकि द्वादशांग लिखा नहीं जाता परंतु उसका प्रमाण जरूर है अवबोध उसका क्षयोपशमऋद्धिविशेषसे होता है ग्रंथ-पठनादिरूप शैलीसे नही होता इसलिये यहां कारणअपेक्षामें गौणता है और ज्ञानसहकारित्वमें मुख्यता है। इसी बातको प्रगट करनेके लिये ग्रंथमें ऐसा संगठन किया है। इसी तरह राजवार्तिककारकी कथन शैलीसे परमावगाढ सम्यक्त्वमें तथा अर्थसम्यक्त्व आदिमें भी शब्दकृत भेद पडता है इसीलिये कुछ विरोध सरीखा मालूम होता है परंतु अपेक्षाकृत भेदसे वहां कुछ भी विरोध नहीं रहता, केवल वचन विन्यासका ही भेद है मुख्य अर्थजन्यभेद कुछ भी नही है। राजवार्तिकमें परमावगाढ सम्मक्त्वका विषय प्रारम्भसे निष्पन्न दशातक विवक्षित है और इस ग्रंथमें केवल निष्पन्न दशाही विवक्षित है। श्रोताकी आकाङ्क्ष्यदशामें दोनों हीं सत्य हैं। इसी प्रकार अर्थसम्यक्त्वमें भी जो विरोधसरीखा दीखता है उसका भी निराकरण होजाता है। क्योंकि वचनोंका वास्तविक विस्तार जैन शास्त्रोंमें है स्याद्वादरूपनयप्रमाणभंगकी अपेक्षा या द्वादशांगकी अपेक्षा सत्य समुचित निर्भ्रान्त वचन विस्तारिता यहीं है इसलिये वचनविस्ताररहित, यह राजवार्तिकका वाक्य और जैन शास्त्रके वचनविना यह मोक्षमार्ग प्रकाशका वाक्य शब्दअपेक्षासे भिन्न २ है परंतु भावमें ये दोनों वाक्य एक अर्थके वाचक होजाते हैं और अर्थका निमित्त दोनों ग्रंथोंमें कहा है इसलिये अभिप्रायमें कोई भेद

नहीं है केवल शब्दरचनामें भेद है वास्तवमें अभिप्रायजन्य एकता होने पर भी जो शास्त्रीय भेद है वह वचन रचनाका है नहीं तो एक अभिप्रायके सब शास्त्र एकही होजाँय भेदही न रहे। कहीं २ पर शब्दकृत एकता भी होजाय तो वह कचित् कदाचित् किसी विशेष कारण जन्य होसकती है । इसलिये उसको शास्त्रभेदमें कारणता नहीं है। इन निमित्तसापेक्ष सम्मक्त्वोंमें इसी प्रकार अन्यत्र भी विरोध प्रतिभासित होता हो तो इसीतरह विवक्षासे उसका परिहार होसकता है।

इस तरह यह ग्रंथ अनेक जगह गंभीराशयरूप खूबियोंसे भरा है इसका जैसा २ स्वाध्यायकलासे मनन किया जायगा तैसा २ सर्वत्र विशेषाशयरूप मननीय विशेष रत्नोंकी उपलब्धि का साधन हो सकेगा। यह उपर्युक्त विषयोंपर जो दृष्टि डाली गयी है वह एक साधारण अनवकाश दशाकी है इससे यह न समझना चाहिये कि एतावन्मात्रही चुने हुए गंभीराशयवाले विषय इसमें हैं। विशेष २ विद्वानोंको-सर्वत्र ही यहां अनूठे गंभीराशयवाले विषय उपलब्ध हो सकेंगे क्योंकि यह गंभीराशयोंका जलधि है अतः इसकी विषयरत्नप्राप्ति विशेष अलोडनपर निर्भर है तथा छोटे बड़े पात्रके समान बुद्धिपात्रपर निर्भरित है अतः यह ग्रन्थ जैसा चाहिये तैसा सर्वांगसुन्दर है। ऐसा होकर भी यह अपूर्ण दशामें मिलता है यह एक दुर्भाग्य का विषय है।

ग्रंथकर्ताका विशेष परिचय—

इस ग्रंथके कर्ता कितने विद्वान थे इस विषयका उल्लेख तो इनके

टीका ग्रंथोंके अवलोकनसे तथा इस ग्रंथराजके अवलोकनसे ही हो जाता है फिर भी इनकी इन विषयोंमें कितनी एक जनश्रुतियां हैं जिनसे इनकी सदाचारता, शास्त्रस्वाध्यायतत्परता और सज्जनता दयालुता आदि विशेष गुणोंका विशेष ज्ञान हो सकता है इसलिये कुछ जनश्रुतियोंसे ग्रंथकर्ताका और इस ग्रंथके अधूरे रह जानेका जो परिचय है वह निम्न प्रकार है।

श्रीमान् पंडित टोडरमल्लजी दिगम्बर जैनधर्मके प्रभावक एक विशिष्ठ महापुरुष थे आठ वर्षकी उमरसेही जैन समाजको आपकी कुशाग्रबुद्धिका परिचय प्राप्त हो चुका था क्योंकि विना पढ़ायेही केवल सुनने मात्रसे आपने तत्वार्थ सूत्र आदि ग्रंथ कंठस्थ कर लिये थे। छह महीनेमेंही आपने सिद्धान्त कौमुदी सरीखे क्लिष्ट और बड़े व्याकरणको पढ़ लिया था। कुछ दिनोंमें ही अपनी कुशाग्रबुद्धिके प्रभावसे षट्दर्शनके शास्त्र बौद्धशास्त्र और मुसलमानग्रंथ आदि अनेक मतमतांतरोंके शास्त्रोंका और पुस्तकोंका अध्ययन कर लिया था और श्वेताम्बरोंके आचारांगआदि सूत्र तथा अनेक उस संप्रदायके ग्रंथोंका अवलोकन किया था तथा इसीप्रकार ढूंढकमतके भी सर्व शास्त्रोंके वे ज्ञाता थे। तथा व्याकरण न्याय गणित आदि अनेक उपयोगी ग्रंथोंका आपने अभ्यास किया था। तथा दिगम्बर जैनग्रंथोंमेंसे समयसार, पंचास्तिकाय, प्रवचनसार, नियमसार, गोम्मटसार, लब्धिसार, क्षपणासार, त्रिलोकसार, सटीकतत्वार्थसूत्र, अष्टपाहुड आत्मानुशासन, और श्रावकमुनिधर्मप्ररूपक अनेक शास्त्र अनेक कथापुराण आदि बहुत शास्त्रोंका अभ्यास किया था तथा इन

सर्व शास्त्रोंके अभ्यासके कारण आपकी बुद्धि बहुतही प्रखर हो गई थी इसकारण शास्त्रसभा, व्याख्यानसभा तथा अन्य मतियोंके साथ वादविवादमें आप बहुत प्रसिद्ध हो गये थे। इन सर्व कार्योंके साथ आपने जिन २ ग्रंथोंकी टीकायें लिखी हैं वे समाजमें प्रसिद्ध हैं। इन सभी प्रख्यातियोंके कारण आप राज्यके भी अतिप्रिय हो गये थे। राज्यके प्रिय होनेके कारण तथा पाण्डित्यप्रखरताके कारण अन्यधर्मी उनसे मत्सरभाव करने लग गये थे क्योंकि उनके सामने अन्यधर्मियोंके बड़े २ विद्वानोंको भी पराजित होना पड़ता था यद्यपि आप किसी भी विधर्मीका अनुपकार नहीं करते थे। वल्कि जहां तक बनता था उपकारही किया करते थे तथापि मत्सरी पुरुषोंका मत्सरजन्य कुकृत्य करनेका ही धर्म है वह यावत्‌मिथ्यात्व मिथ्यात्वजन्य संस्कारसे दूषित रहताही है। इन लोगोंके मत्सर और वैरभावके कारणही उक्त पंडितजीका करीब २८ वर्षकी अवस्थामें शरीरान्त हो गया था। इस विषयकी जन-श्रुति ऐसी है कि विधर्मियोंने राजाके इष्टदेवकी प्रतिमा इनकी जेबमें डलवाकर प्रतिमाके अविनयरूप अपराधके आरोपणसे राजाको रुष्ट कर दिया था इसलिये राजाकी अनुचित आज्ञासे असमयमें उनका देहान्त होगया था। यद्यपि राजाको एकाएक उनके अपराध पर विश्वास नहीं हुआ था परंतु अन्य प्राणियोंकी प्राणरक्षाके खातिर उनने उस अपराधको अपने ऊपर सहर्ष स्वीकार कर लिया था राजाको असली क्रोधका कारण यहीं था कि इनने अन्यायियोंको निर्दोष सिद्धकर न्यायका खून किया है अतः क्रोधान्धसे आच्छादित होकर राजाने उनको अनुचित दण्ड दिया

था। आपका जीवनपर्यंत मुख्य ध्येय एक आत्मकल्याणके साथ पर-कल्याणकाही रहा है। अन्तरंगमें क्षयोपशमविशेषसे तथा वाह्यमें तर्कवितर्कके साथ अनेक शास्त्रोंके अध्ययनसे वीतरागभाव तथा विज्ञानभाव उनका इतना वढ़ गया था कि सांसारिक कार्योंसे आप वहुधा विरक्तही रहा करते थे और अपने धार्मिक कार्योंमें ऐसे तल्लीन रहा करते थे कि वाह्यजगतकी तथा आस्वाद्यपदार्थोंकी तरफ उनका कुछ भी ध्यान नहीं रहता था। इस विषयमें एक जनश्रुति ऐसी भी है कि जिस समयमें वे ग्रंथ निर्माण कर रहे थे उस समय छह माह तक इनकी माताजीने खाद्य पदार्थोंमें निमक नहीं डाला था छह महीनेके वाद उनका उपयोग शास्त्रनिर्माणकी तरफसे कुछ हटा तो एक दिन अपनी माजीसे वोले कि माजी आज आपने दालमें निमक क्यों नही डाला। माजी इस वातको सुनकर वोलीं कि मैं तो छह महीनेसे निमक नहीं डालती हूं। इसी प्रकार और भी उनकी धर्मप्रवृत्ति और शास्त्रकार्यकी अनेक जनश्रुति हैं। इन सवके लिखनेका तात्पर्य यह है कि ये अपने समयमें वड़े धर्मात्मा श्रेष्ठपरोपकारी, निरभिमान, और अद्वितीय विद्वान् थे इस दिगम्वर जैन समाजके दुर्भाग्यसेही ऐसे महात्माका अकालमृत्युसे असमयमें वियोग होगया। इस थोड़ी उमरमेंही आपने जो अनन्य उपकार किया है वह कृतज्ञसमाजके विस्मरणका स्थान नहीं है इसीलिये समाज आज भी आपका और आपके गुणोंका स्मरणकर परम संतुष्ट है। और आपकी जन्मजन्मान्तरीय हितैषिताका अभिकांक्षी है।

इतने वड़े प्रभावक पुरुषका परिचय जैनसमाज या अन्य समाज

इतनाही जानती है कि ये जयपुरके निवासी थे और खंडेलवाल जातिमें उत्पन्न हुए थे, और श्रीगोम्मटसार आदि ग्रंथके भाषाटीका कर्ता और मोक्षमार्ग प्रकाशके कर्ता थे, इसके अलावा आजतक उनके विषयका अधिक परिचय कुछ भी नहीं मिलता था।

उनने १८१८ विक्रम संवत्में गोम्मटसारकी टीका समाप्तकी और राजमल्ल साधर्मीकी प्रेरणासे इस ग्रंथकी टीका बनायी—इन दो बातोंका अधिक ज्ञान मुझे—श्रीयुत चि. न्यायतीर्थ पंडित गजाधर-लाल शास्त्री तथा काव्यतीर्थ श्रीयुत पंडित श्रीलालजीकृत मुद्रित जीवकाण्डकी प्रशस्तिसे हुआ है। इससे अधिक मुझे इनके विषयमें कुछ भी ज्ञान नहीं था तथा अन्य विद्वानोंने भी इस विषयमें विशेष प्रयत्न नहीं किया था तथा जिनने प्रयत्न भी किया तो वे इतने विषयके सिवाय ज्यादा सफल न हुए। मुझे इस विषयकी विशेष अभिकांक्षा थी कि उनका परिचय कुछ विशेष मिलै. नही तो कमसे कम इनके पिता पितामहका नाम आदि तो मिले। इसके लिये मैंने बहुत कुछ प्रयत्न किये परंतु मेरी आशा सफल न हुई अकस्मात् इस प्रशस्तिके लिखते समय यह मनमें आया कि श्रीमान् टोडरमलजीकी उस प्रशस्तिका बारीकीसे निरीक्षण करना चाहिये जिसमें कि उनने गोम्मटसारकी टीका बनानेका संवत् दिया है। लब्धिसारके अन्तमें उनकी लिखीं हुई प्रशस्ति देखी तो उसमें एक दोहाछंदके द्वारा पितामहका नाम रमापति और पिताका नाम जोगीदास दिया हुआमिला है और वह इस युक्तिसे दिया है कि जिसका अर्थ भावप्राण (चैतन्य अर्थ) होता है। दोहा निम्न प्रकार है—

रमापति स्तुतगुन जनक जाको जोगीदास ॥
सोई मेरो प्रान है धारै प्रगट प्रकाश ॥ ३८ ॥

संदृष्टिअधिकार पत्र २०४ ।

आगे चलकर चौपाई और सवैया छंदोंद्वारा—अपना सामान्य-विशेषनाम अपनी उत्पत्तिमें कुटुम्बका हर्ष देशका नाम अपनी बुद्धिका विकाश सामान्य विद्याभ्यास जैनग्रंथोंका अभ्यास गोम्मटसार लब्धिसार ग्रंथोंका ज्ञान हुआ इस बातका और इनकी टीकाका विधान किस निमित्तसे किस संवत् और किस मितीमें हुआ यह सब बात उनने प्रशस्तिमें बतलाई है ।

गोम्मट सारकी टीका आपने माघ सुदि पंचमीके दिन सम्वत् १८१८ में पूर्ण की ऐसा स्पष्ट विधान है । जिन छंदोंमें उपर्युक्त वर्णन है वे छंद निम्न प्रकार हैं ।

चौपाई

मै आतम अर पुद्गलस्कंध । मिलि कैं भयो परस्परबंध ।
सो असमान जाति पर्याय । उपजो मानुष नाम कहाय ॥ ३८॥

मातगर्भमें सो पर्याय करकें पूरण अंग सुभाय ।
बाहिर निकसि प्रकट जब भयो तब कुटुम्बको भेलो भयो ॥३९॥

नाम धर्यौं तिनि हर्षित होय टोडरमल्ल कहैं सबकोय ।
ऐसैं यह मानुष पर्याय बधतभयो निजकाल गमाय ॥ ४० ॥

देश ढुंढाहड माहिं महान नगर सवाई जयपुर धान ।
तामैं ताकौ रहनौ घनौ थोरो रहनो ओढै बनो ॥ ४१ ॥

सवैया

कर्मकौ क्षयोपशम होत भयो मेरे कछू
बुद्धि कौ विकाश तातैं विद्याभ्यास कर्यौ है
होनहारनीकौ तातैं असाही बनाव बन्यो
नाना जैन ग्रंथनिमें ज्ञानविस्तयौं है
सार्थक गोम्मटसार लब्धिसार शास्त्रनिकौं
अर्थ अवभास्यौ तव ऐसौ भाव धर्यौ है
इनकी जो भाषाटीका ह्वै तौ तुच्छबुद्धि घनी
जानैं सारअर्थ जो प्रमाण अनुसर्यौ है ॥ ४६ ॥

चौपई

राजमल्ल साधर्मी एक धर्म सधैया सहित विवेक
सो नानाविधि प्रेरकभयो तव यहु उत्तम कारज थयो ॥ ४८ ॥
संवत्सर अष्टादशयुक्त अष्टादशशत लौकिक युक्त
माघ शुक्ल पंचम दिन होत भयोग्रंथ पूरन उद्योत ॥ ५० ॥

इस प्रशस्तिमैं आपने अपनी जातिका और गोत्रका तथा व्यवसायका कुछ भी उल्लेख नहीं किया है । तथापि उनकी जातिकी तो अनुगत प्रसिद्धि है कि आप दिगम्बर जैन खंडेलवाल जातिके भूषण थे गोत्रके वारेमें श्रीयुत चिरंजीलालजी गोधा जयपुर तथा कुंदनमलजी

सेवा पाडली आदि सज्जनोंद्वारा सुननेमें आया है कि भौंसा (बडजात्या) आपका गोत्र है आजीविका उनकी श्रीअमरचंदजी दीवानके आश्रयसे जयपुरराज्यदत्त संतुष्टि प्रद थी इस तरह १९ वीं सदीके इन अपूर्व प्रतिभाशाली विद्वान्का यह संक्षिप्त जीवन चरित्र है। इनके ग्रंथराज मोक्षमार्ग प्रकाशके अपूर्ण रहनेका कारण आपके असमयकी अकाल मृत्यु है यह एक दिगम्बर जैन समाजके दुर्भाग्यकाही बनाव है जिससे कि परम हितकर इस ग्रंथकी पूर्ण दशा हमारे दृष्टि गोचर नहीं है। फिर भी जो कुछ उपलब्ध है वह हमारे लिये अमूल्य रत्नके समान ग्राह्य है तथा रक्षा करने योग्य है और अध्ययन तथा मननरूप कार्यमें परिणमन योग्य है।

रामप्रसाद जैन—उपमंत्री
बम्बई.

—:o:—

यह प्रस्तावना मुंबई वैभव प्रेस मुंबईमें मुद्रित हुई।

नमः सिद्धेभ्यः ।

मोक्षमार्गप्रकाश ।

दोहा

मंगलमय मंगलकरण, वीतरागविज्ञान ।
नमौं ताहि जातैं भये, अरहंतादि महान ॥१॥

करि मंगल करिहौं महा, ग्रंथकरनको काज ।
जातैं मिलै समाज सुख, पावै निजपदराज ॥२॥

अथ मोक्षमार्गप्रकाशनाम शास्त्रका उदय हो है । तहां मंगल करिये है,—

णमो अरहंताणं । णमो सिद्धाणं । णमो आइरीयाणं ।
णमो उवज्झायाणं । णमो लोए सव्वसाहूणं ।

यह प्राकृतभाषामय नमस्कार मंत्र है, सो महामंगलस्वरूप है । बहुरि याका संस्कृत ऐसा हो है,—

नमोऽर्हद्भ्यः । नमः सिद्धेभ्यः । नमः आचार्येभ्यः । नमः उपाध्यायेभ्यः । नमो लोके सर्वसाधुभ्यः । बहुरि याका अर्थ ऐसा है,—नमस्कार अरहंतनिके अर्थि, नमस्कार सिद्धनिके अर्थि, नमस्कार आचार्यनिके अर्थि, नमस्कार उपाध्यायनिके अर्थि, नमस्कार

लोकविषै सर्वसाधुनिके अर्थि, ऐसैं याविषै नमस्कार किया, तातैं याका नाम नमस्कारमंत्र है । अब इहां जिनकूं नमस्कार किया तिनका स्वरूप चितवन कीजिये है। जातै स्वरूप जाने विना यह जाण्या नहीं जाय जो मैं कौनकौ नमस्कार करूं तब उत्तम फलकी प्राप्ति कैसे होय तहाँ प्रथम अरहंतनिका स्वरूप विचारिये है,—

जे गृहस्थपनौ त्यागि मुनिधर्म अंगीकार करि निजस्वभावसाधनतै च्यारि घातिया कर्मनिकौं खिपाय अनंत चतुष्टयविराजमान भये। तहां अनंतज्ञानकरि तौ अपने अपने अनंत गुणपर्याय सहित समस्त जीवादि द्रव्यनिकौ युगपत् विशेषपनैकरि प्रत्यक्ष जानै है। अनंतदर्शनकरि तिनकौं सामान्यपनै अवलोकै हैं। अनंतवीर्यकरि ऐसी [उपर्युक्त] सामर्थ्यकौ धारै है। अनंतसुखकरि निराकुल परमानंदकौ अनुभवै है। बहुरि जे सर्वथा सर्वरागद्वेषादिविकारभावनिकरि रहित होइ शांतरसरूप परिणए है। बहुरि क्षुधा त्रिषा आदि समस्तदोषनितैं मुक्त होय देवाधिदेवपनाकौं प्राप्त भये हैं। बहुरि आयुध अंबरादिक वा अंग विकारादि जे काम क्रोधादिक निंद्यभावनिके चिन्ह, तिनकरि रहित जिनका परम औदारिक शरीर भया है। बहुरि जिनके वचननितैं लोकविषै धर्मतीर्थ प्रवर्तै है, ताकरि जीवनिका कल्याण हो है। बहुरि जिनकै लौकिक जीवनिकूं प्रभुत्व माननेके कारण अनेक अतिशय अरनानाप्रकार विभव तिनका संयुक्तपणा पाइये है। बहुरि जिनकौं अपना हितके अर्थि गणधर इद्रादिक उत्तम जीव सेवै हैं। ऐसे सर्वप्रकार पूजनै योग्य श्रीअरहंत देव हैं, तिनकौं हमारा नमस्कार

होहु। अब सिद्धनिका स्वरूप ध्याइये है,-

जे गृहस्थअवस्था त्यागि मुनिधर्मसाधनतै च्यारि घातिकर्म-निका नाश भये अनंतचतुष्टय भाव प्रगट करि केतेक काल पीछें च्यारि अघाति कर्मनिका भी भस्म होतै परमऔदारिक शरीरकौं भी छोरि ऊर्ध्वगमन स्वभावतै लोकका अग्रभागविषै जाय विराज-मान भये। तहां जिनकै समस्त परद्रव्यनिका संबंध छूटनैतैं मुक्त अवस्थाकी सिद्धि भई, बहुरि जिनकैं चर्मशरीरतैं किंचित् ऊन पुरुषाकारवत् आत्मप्रदेशनिका आकार अवस्थित भया, बहुरि जिनकै प्रतिपक्षी कर्मनिका नाश भया तातैं समस्त सम्यक्त्व ज्ञान दर्शनादिक आत्मीक गुण संपूर्णपने स्वभावकौं प्राप्त भये हैं, बहुरि जिनकैं नोकर्मका संबंध दूर भया तातैं समस्त अमूर्त्तत्वादिक आत्मीकधर्म प्रगट भये है। बहुरि जिनकैं भावकर्मका अभाव भया तातैं निराकुल आनंदमय शुद्धस्वभावरूप परिणमन हो है। बहुरि जिनका ध्यानकरि भव्य जीवनिकै स्वद्रव्यपरद्रव्यका अर उ-पाधिक भाव स्वभावनिका विज्ञान हो है, ताकरि सिद्धनिकै समान आप होनैका साधन हो है। तातै साधनैयोग्य जो अपना शुद्ध-स्वरूप ताके दिखावनेकौं प्रतिबिंब समान है। बहुरि जे कृतकृत्य भये हैं तातैं ऐसै ही अनंत कालपर्यंत रहैं हैं ऐसे निष्पन्न भये सिद्ध भगवान तिनकौं हमारा नमस्कार होहु। अब आचार्य उपाध्याय साधुनिका स्वरूप अवलोकिये है,—

जे विरागी होय समस्त परिग्रहकौं त्यागि शुद्धोपयोगरूप मुनिधर्म अंगीकार करि अंतरंगविषै तौ तिस शुद्धोपयोगकरि

आपकौं आप अनुभवै हैं परद्रव्यविषै अहंबुद्धि नाहीं धारै हैं बहुरि अपने ज्ञानादिकस्वभावनिहीकौं अपने मानै हैं। पर-भावनिविषै ममत्व न करैं हैं। बहुरि जे परद्रव्य वा तिनके स्वभाव ज्ञानविषै प्रतिभासै हैं तिनकौं जानै तो हैं परंतु इष्ट अनिष्ट मानि तिनविषै रागद्वेष नाहीं करै हैं। शरीरकी अनेक अवस्था हो है, बाह्य नाना निमित्त बनैं हैं। परंतु तहां किछू भी सुखदुःख मानते नाहीं। बहुरि अपने योग्य बाह्यक्रिया जैसैं बनै हैं तैसैं बनै हैं, खैंचिकरि तिनिकौं करते नाहीं। बहुरि अपने उपयोगकौं बहुत नाहीं भ्रमावै हैं। उदासीन होय निश्चल वृत्तिकौं धारै हैं। बहुरि कदाचित् मंदरागके उदयतैं शुभोपयोग भी हो है। तिसकरि जे शुद्धोपयोगके बाह्य साधन हैं तिनिविषै अनुराग करैं हैं परंतु तिस रागभावकौं हेय जानिकरि दूरि कीया चाहै हैं। बहुरि तीव्र कषायके उदयका अभावतैं हिंसादिरूप अशुभोपयोग परिणतिका तौ अस्तित्व ही रह्या नाहीं। बहुरि ऐसी अंतरंग अवस्था होतैं बाह्य दिगंबर सौम्यमुद्राके धारी भये हैं। शरी-रका सँवारना आदि विक्रियानिकरि रहित भये हैं। बनखंडादि विषै बसै हैं। अठाईस मूलगुणनिकौं अखंडित पालै हैं। बाईस परीसहनिकौं सहै हैं। बारह प्रकार तपनिकौं आदरैं हैं। कदाचित् ध्यानमुद्राधारि प्रतिमावत् निश्चल हो हैं। कदाचित् अध्ययनादि बाह्य धर्मक्रियानिविषै प्रवर्तै है। कदाचित् मुनिधर्मका सहकारी शरीरकी स्थितिके अर्थि योग्य आहार विहारादि क्रियानिविषै सावधान हो हैं। ऐसे जैनी मुनि हैं तिन सबनिकी ऐसी ही

अवस्था हो है। तिनिविषै जे सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रकी अधिकता करि प्रधानपदकौ पाय संघविषै नायक भये है। वहुरि जे मुख्यपनै तौ निर्विकल्प स्वरूपाचरण विषै ही मग्न हैं अर जो कदाचित् धर्मके लोभी अन्य जीवादिकनिकौं देखि रागअंशके उदयतै करुणाबुद्धि होय तो तिनिकौ धर्मोपदेश देते है। जे दीक्षाग्राहक है तिनकौं दीक्षा देते है जे अपने दोष प्रगट करै है तिनकौ प्रायश्चित्त विधिकरि शुद्ध करै हैं। ऐसैं आचार अचरावनवाले आचार्य तिनकौ हमारा नमस्कार होहु। बहुरि जे बहुत जैन-शास्त्रनिके ज्ञाता होय संघविषै पठन पाठनके अधिकारी भये है, वहुरि जे समस्त शास्त्रनिका प्रयोजनभूत अर्थ जानि एकाग्र होय अपने स्वरूपकौ ध्यावै हैं। अर जो कदाचित कषाय अंश-उदयतैं तहां उपयोग नाहीं थंभै है तौ तिन शास्त्रनिकौं आप पढै है वा अन्य धर्मवुद्धीनिको पढ़ावै है। ऐसैं समीपवर्ती भव्यनिको अध्ययन करावनहारे उपाध्याय तिनिकौं हमारा नमस्कार होहु। वहुरि इन दोय पदवीधारक विना अन्य समस्त जे मुनिपदके धारक हैं वहुरि जे आत्मस्वभावकौ साधै हैं। जैसै अपना उपयोग परद्रव्यनिविषै इष्ट अनिष्टपनौ मानि फसै नाहीं वा भागै नाहीं तैसैं उपयोगको सधावै हैं। वहुरि वाह्यताके साधनभूत तपश्चरण आदि क्रियानिविषै प्रवर्त्तै हैं। वा कदाचित् भक्तिवंदनादि कार्यनि-विषै प्रवर्त्तै है ऐसे आत्मस्वभावके साधक साधु है तिनकौ हमारा नमस्कार होहु। ऐसै इन अरहंतादिकनिका स्वरुप है सो वीतराग विज्ञानमय है। तिसहीकरि अरहंतादिक स्तुति योग्य महान

भये हैं तातैं जीव तत्त्वकरि तौ सर्व जीव समान हैं परंतु रागादिक विकारनिकरि वा ज्ञानकी हीनताकरि जीवनिंदा योग्य हो हैं। बहुरि रागादिककी हीनताकरि वा ज्ञानकी विशेषताकरि स्तुति योग्य हो है। सो अरहंत सिद्धनिकै तौ संपूर्ण रागादिककी हीनता अर ज्ञानकी विशेषता होनैकरि संपूर्ण वीतरागविज्ञान-भाव संभवै है। अर आचार्य उपाध्याय साधूनिकै एकोदेश रागादिककी हीनता अर ज्ञानकी विशेषता होनैकरि एकोदेश वीतराग विज्ञान भाव संभवै है। तातैं ते अरहंतादिक स्तुतियोग्य महान जानने। बहुरि ए अरहंतादिक पद हैं तिनविषै ऐसा जानना जो मुख्यपनै तो तीर्थंकरका अर गौणपनै सर्वकेवलीका अधिकार है। प्राकृतभाषाविषै **अरहंत** अर संस्कृतविषै **अर्हत्** ऐसा नाम जानना। बहुरि चौदहवां गुणस्थाकै अनंतर समयतैं लगाय सिद्ध नाम जानना बहुरि जिनकौं आचार्यपद भया होय ते संघविषै रहौ वा एकाकी आत्मध्यान करौ वा एकाविहारी होहु वा आचार्यनिविषै भी प्रधानताकौं पाय गणधर पदवीके धारक होहु तिन सबनिका नाम आचार्य कहिये है बहुरि पठनपाठन तौ अन्यमुनि भी करै है परंतु जिनकै आचार्यनिकरि उपाध्यायपद भया होय सो आत्मध्यानादिक कार्य करतै भी उपाध्याय ही नाम पावै हैं। बहुरि जे पदवीधारक नाहीं ते सर्व मुनि साधुसंज्ञाके धारक जानने। इहां ऐसा नियम नाहीं है जो पंचाचारनिकरि आचार्यपद हो है, पठनपाठनकरि उपाध्यायपद हो है, मूलगुण साधनकरि साधुपद हो है। जातै ए तो क्रिया सर्व मुनिनिकैं साधारण हैं परंतु शब्द नयकरि तिनका

अक्षरार्थ तैसैं करिये है। समभिरूढनयकरि पदवीकी अपेक्षा ही आचार्यादिक नाम जानने। जैसैं शब्द नयकरि गमन करै सो गऊ कहिये सो गमन तौ मनुष्यादि भी करै है परंतु समभिरूढनय-करि पर्याय अपेक्षा नाम है। तैसै ही इहां समजना। इहां सिद्धनिके पहिलै अरहंतनिकौ नमस्कार किया सो कौन कारण ऐसा संदेह है। ताका समाधान,—

नमस्कार करिये है सो अपने प्रयोजन सधनेकी अपेक्षातैं करिये है सो अरहंतनितै उपदेशादिकका प्रयोजन विशेष सिद्धि हो है तातैं पहले नमस्कार किया है। या प्रकार अरहंतादिकनिका स्वरूप चितवन किया। जातै स्वरूप चितवन किये विशेप कार्य-सिद्धि हो है। बहुरि इनि अरहंतादिकनिकौ पंचपरमेष्ठी कहिये है-जातै जो सर्वोत्कृष्ट होय ताका नाम परमेष्ट है। पंच जो परमेष्ठी तिनिका समाहार समुदायका नाम पंचपरमेष्ठी जानना। बहुरि वृपभ, अजित, शंभव, अभिनंदन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व, चंद्र-प्रभ, पुष्पदंत, शीतल, श्रेयान्, वासुपूज्य, विमल, अनंत, धर्म, शांति कुंथु, अर, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व, वर्द्धमान नामधारक चौवीस तीर्थंकर इस भरतक्षेत्रविषै वर्त्तमान धर्मतीर्थके नायक भये, गर्भ जन्म तप ज्ञान निर्वाण कल्याणकनिविषै इन्द्रादि-कनिकरि विशेप पूज्य होइ अब सिद्धालयविषै विराजै हैं तिनकौं हमारा नमस्कार होहु। बहुरि सीमंधर, युग्मंधर, बाहु, सुबाहु, संजातक, स्वयंप्रभ, वृषभानन, अनंतवीर्य, सूरप्रभ, विशालकीर्ति वज्रधर, चंद्रानन, चंद्रबाहु, भुजंगम, ईश्वर, नेमिप्रभु, वीरसेन

महाभद्र, देवयश, अजितवीर्य नामधारक वीस तीर्थंकर पंचमेरु संबंधी विदेहक्षेत्रनिविषै अबार केवलज्ञानसहित विराजमान है तिनकौ हमारा नमस्कार होहु। यद्यपि परमेष्ठी पदविषै इनका गर्भितपना है तथापि विद्यमान कालविषै इनकौ विशेष जानि जुदा नमस्कार किया है। बहुरि त्रिलोकविषै जे अकृत्रिम जिनबिंब विराजै है मध्यलोकविषै विधिपूर्वक कृत्रिम विराजै है जिनिके दर्शनादिकतै स्वपरभेदविज्ञान हो है, कषायमंद होय शान्तभाव होय है। एक धर्मोपदेश विना अन्य अपने हितकी सिद्धि जैसें तीर्थंकर केवलीके दर्शनादिकतैं होय तैसैं ही हो हैं तिनि जिनबिंबनिकौं हमारा नमस्कार होहु। बहुरि केवलीका दिव्यध्वनिकरि दिया उपदेश ताके अनुसार गणधरिकरि रचित अंगप्रकीर्णक तिनके अनुसार अन्य आचार्यादिकनिकरि रचे ग्रंथादिक है ते सर्व जिनवचन हैं स्याद्वादचिन्हकरि पहचानने योग्य है न्यायमार्गतै अविरुद्ध है तातैं प्रमाणीक है जीवनिकौ तत्त्वज्ञानके कारण हैं तातैं उपकारी है तिनिकौ हमारा नमस्कार होहु। बहुरि चैत्यालय, आर्जिका, उत्कृष्ट श्रावक आदि द्रव्य, अर तीर्थक्षेत्रादि क्षेत्र अर कल्याणककाल आदि काल, रत्नत्रय आदि भाव, जे मुझकरि नमस्कार करने योग्य है तिनकौ नमस्कार करौं हौं। अर जे किंचित् विनय करने योग्य है तिनिका यथायोग्य विनय करौं हौं। ऐसै अपने इष्टनिका सन्मानकरि मंगल किया है। अब ए अरहंतादिक इष्ट कैसै है सो विचार करिए है,—

जा करि सुख उपजै वा दुःखविनसै तिस कार्यका नाम प्रयोजन

है। बहुरि तिस प्रयोजनकी जाकरि सिद्धि होय सो ही अपना इष्ट है। सो हमारै इस अवसरविषै वीतरागविशेष ज्ञानका होना सो ही प्रयोजन है जातैं याकरि निराकुल सांचे सुखकी प्राप्ति हो है। अर सर्व आकुलतारूप दुःखका नाश हो है। बहुरि इस प्रयोजनकी सिद्धि अरहंतादिकनिकरि हो है। कैसैं सो विचारिए है,—

आत्माके परिणाम तीनप्रकार हैं, संक्लेश, विशुद्ध, शुद्ध। तहां तीव्रकषायरूप संक्लेश है, मंदकषायरूप विशुद्ध हैं, कषायरहित शुद्ध हैं। तहां वीतरागविशेष ज्ञानरूप अपने स्वभावके घातक जो है ज्ञानावरणादि घातियाकर्म, तिनिका संक्लेश परिणामकरि तौ तीव्रबंध हो है अर विशुद्ध परिणामकरि मंदबंध हो है वा विशुद्ध परिणाम प्रबल होय तौ पूर्वै जो तीव्र बंध भया था ताकौ भी मंद करै है। अर शुद्धपरिणामकरि बंध न हो है। केवल तिनकी निर्जरा ही हो है। सो अरहंतादिविषै स्तवनादि रूप भाव हो है सो कषायकी मंदता लिये हो है। तातै विशुद्ध परिणाम है। बहुरि समस्त कषायभाव मिटावनेका साधन है, तातै शुद्धपरिणामका कारण है सो ऐसा परिणाम करि अपना घातक घातिकर्मका हीनपनाके होनेतै सहज ही वीतराग विशेषज्ञान प्रगट हो है। जितने अंशनिकरि वह हीन होय तितने अंशनिकरि यह प्रगट हो है। ऐसै अरहंतादिक करि अपना प्रयोजन सिद्ध हो है। अथवा अरहंतादिकका आकार अवलोकना वा स्वरूप विचार करना वा वचन सुनना वा निकटवर्त्ती होना वा तिनकै अनुसार प्रवर्त्तना इत्यादि कार्य तत्काल ही निमित्तभूत होय रागादिकनिकौं हीन करै हैं। जीव

अजीवादिकका विशेषज्ञानकौ उपजावै हैं तातैं ऐसें भी अरहंतादिक करि वीतराग विशेषज्ञानरूप प्रयोजनकी सिद्धि हो है। इहां कोऊ कहै कि इनिकरि ऐसे प्रयोजनकी तौ सिद्धि ऐसैं हो है परंतु जाकरि इंद्रियजनित सुख उपजै दुःख विनशै ऐसे हू प्रयोजनकी सिद्धि इनिकरि हो है कि नाहीं। ताका समाधान,--

जो अरहंतादिविषै स्तवनादिरूप विशुद्ध परिणाम हो है ताकरि अघातिया कर्मनिकी साता आदि पुण्यप्रकृतिनिका बंध हो है। बहुरि जो वह परिणाम तीव्र होय तौ पूर्वें असाताआदि पापप्रकृति बँध थीं तिनिकौं भी मंद करै है अथवा नष्ट करि पुण्यप्रकृतिरूप परिणमावै है। बहुरि तिस पुण्यका उदय होतै स्वयमेव इन्द्रिय सुखकौं कारण-भूत सामग्री मिलै है। अर पापका उदयदूरि होतैं स्वयमे दुःखकौं कारणभूत सामग्री दूर हो है। ऐसें इस प्रयोजनकी भी सिद्धि तिन-करि हो है। अथवा जैनशासनके भक्तदेवादिक हैं ते तिस भक्तपु-रुषकै अनेक इन्द्रियसुखकौ कारणभूत सामग्रीनिका संयोग करावै हैं। दुःखकौं कारणभूत सामग्रीनिकौंदूरि करै हैं। ऐसैं भी इस प्रयोजनकी सिद्धि तिन अरहंतादिकनिकरि हो है। परंतु इस प्रयोजनतैं किछू अपना हित होता नाहीं जातैं यह आत्मा कषायभावनितैं बाह्य सामग्रीनविषै इष्टअनिष्टपनौं मानि आप ही सुख-दुःखकी कल्पना करै है। विना कषाय बाह्य सामग्री किछू सुखदुः-खकी दाता नाहीं। बहुरि कषाय है सो सर्व आकुलतामय हैं तातैं इंद्रियजनितसुखकी इच्छा करनी दुःखतैं डरना सो यह भ्रम है। बहुरि इस प्रयोजनके अर्थि अरहंतादिककी भक्ति किए भी तीव्रकषाय

होनेकरि पापबंध ही हो है तातैं आपकौं इस प्रयोजनका अर्थी होना योग्य नाहीं। जातै अरहंतादिककी भक्ति करतैं ऐसे प्रयोजन तौ स्वयमेव ही सधै हैं। ऐसैं अरहंतादिक परम इष्ट मानने योग्य है। बहुरि ए अरहंतादिक ही परममंगल हैं। इनविषै भक्तिभाव भये परममंगल हो है। जातैं 'मंग ,कहिये सुख ताहि लाति कहिये देवै अथवा मं कहिये पाप ताहि गाल्यति कहिये गलै ताका नाम मंगल है सो तिनकरि पूर्वोक्त प्रकार दोऊ कार्यनिकी सिद्धि हो है। तातैं तिनकै परममंगलपना संभवै है। इहां कोऊ पूछै कि प्रथम ग्रंथकी आदिविषै मंगल कीया सौ कौन कारण ? ताकौ उत्तर,—

जो सुखस्यौं ग्रंथकी समाप्तिता होइ पापकरि कोऊ विघ्न न होइ या कारण इहां प्रथम मंगल कीया है। इहां तर्क—जो अन्यमती ऐसैं मंगल नाहीं करै हैं तिनकै भी ग्रंथकी समाप्तता अरि विघ्नका नाश होंना देखिये है तहाँ कहा हेतु है। ताका समाधान,—

जो अन्यमती ग्रंथ करै है तिसविषैं मोहका तीव्र उदयकरि मिथ्यात्व भावनिकौं पोषेत विपरीत अर्थनिकौं धरै हैं तातै ताकी निर्विघ्न समाप्तता तौ ऐसैं मंगल किये विना ही होइ। जो ऐसे मंगलनिकरि मोह मंद होजाय तौ वैसा विपरीत कार्य कैसै बनै? ॥

बहुरि हम यह ग्रंथ करैं हैं तिसविषै मोहकी मंदता करि वीतराग तत्वज्ञानकौं पोषते अर्थनिकौं धरैंगे ताकी निर्विघ्न समाप्तता ऐसैं मंगल कीये ही होय जो ऐसैं मंगल न करैं तौ मोहका तीव्रपना रहै,तब ऐसा उत्तम कार्य कैसैं बनै? बहुरि वह कहै है जो ऐसैं तौ मानैंगे परंतु ऐसा मंगल न करै ताकै भी सुख देखिए है पापका उदय न देखिए है।

अर कोऊ ऐसा मंगल करै है ताकै भी सुख न देखिए है पापका उ-
दय देखिए है तातैं पूर्वोक्त मंगलपना कैसै बनैं? ताकौ कहिये है;—

जो जीवनिकै संक्लेश विशुद्ध परिणाम अनेक जातिके है तिनिकरि
अनेक कालनिविषै पूर्वैं बंधे कर्म एक कालविषै उदय आवै है। तातै
जैसै जाकै पूर्वैं बहुत धनका संचय होय ताकै विनाकुमाए भी धन
देखिए अर देणा न देखिए है। अर जाकै पूर्वैं ऋण बहुत होय
ताकै धन कुमावतै भी देणा देखिए है धन न देखिए है परंतु
विचार कीएतै कुमावना धन होनैहीका कारण है
ऋणका कारण नाहीं। तैसै ही जाकै पूर्वैं बहुत पुण्य बंध्या होइ ताकै
इहां ऐसा मंगल विना किए भी सुख देखिए है। पापका उदय न
देखिए है। बहुरि जाकै पूर्वैं बहुत पाप बंध्या होइ ताकै इहां ऐसा
मंगल किये भी सुख न देखिए है पापका उदय देखिए है। परंतु वि-
चार किएतै ऐसा मंगल तौ सुखका ही कारण है पाप उदयका कार-
ण नाहीं। ऐसै पूर्वोक्त मंगलका मंगलपना बनै है। बहुरि वह
कहै हैं कि यह भी मानी परंतु जिनशासनके भक्त देवादिक है तिनै
तिस मंगल करनेवालेकी सहायता न करी मंगल न करनेवालेको दंड
न दीया सो कौन कारण ताका समाधान, :—

जो जीवनिकै सुख दुख होनेका कारण आपना कर्मका उदय है ताहीकै
अनुसारी बाह्य निमित्त बनै है तातै पापका जाकै उदय होइ ताकै सहा-
यताका निमित्त न बनै है। अर जाकै पुण्यका उदय होइ ताकै दंडका
निमित्त न बनै है। यह निमित्त कैसे बनै है सो कहिये है,-

जे देवादिक है ते क्षयोशपम ज्ञानतैं सर्वकौं युगपत् जानि

सकते नाहीं तातै मंगल करनेवालेका जानना किसी देवादिककै काहू कालविषै हो है तातैं जो तिनिका जानपना न होइ तौ कैसैं सहाय करै वा दंड दे। अर जानपना होय तब आपकै जो अति मंदकषाय होइ तौ सहाय करनेके वा दंड देनेके परिणाम ही न होंइ। अर तीव्रकषाय होइ तौ धर्मानुराग होइ सकै नाहीं। बहुरि मध्य कषायरूप तिस कार्य करनेके परिणाम भये अर अपनी शक्ति नाहीं तौ कहा करै? ऐसै सहाय करने वा दंड देनैका निमित्त नाही बनै है। जो अपनी शक्ति होय अर आपकै धर्मानुरागरूप मन्दकषायका उदयतै तैसे ही परिणाम होंइ अर तिस समय अन्य जीविका धर्म अधर्मरूप कर्तव्य जानै तब कोई देवादिक किसी धर्मात्माकी सहाय करै वा किसी अधर्मीकौ दंड दे है। ऐसै कार्य होनेका किछू नियम तौ है नाहीं। ऐसै समाधान किया। इहां इतना जानना कि सुख होनेकी दुख होनेकी सहाय करावनेकी दुख द्यावनेकी जो इच्छा है सो कषायमय है तत्कालविषै वा आगामी कालविषै दुखदायक है। तातै ऐसी इच्छाकूं छोरि हम तौ एक वीतराग विशेष ज्ञान होनेके अर्थी होइ अरहंतादिककौं नमस्करादिरूप मंगल कीया है। ऐसै मंगलाचरण करि अब सार्थक मोक्षमार्गप्रकाश नाम ग्रंथका उद्योत करै है। तह यह ग्रंथ प्रमाण है ऐसी प्रतीति जनावनेके अर्थि पूर्व अनुसारका स्वरूप निरूपण करै है, —

अकारादि अक्षर हैं ते अनादिनिधन हैं काहूके किए नाहीं इनिका आकार लिखना तौ अपनी इच्छाके अनुसारि अनेक प्रकार

है परंतु बोलनेमैं आवै हैं ते अक्षर तौ सर्वत्र सर्वदा ऐसैं ही प्रवर्तैं हैं सोई कह्या है,–**सिद्धो वर्णसमाम्नायः** । याका अर्थ यह जो अक्षरनिका संप्रदाय है सो स्वयंसिद्ध है। बहुरि जिन अक्षरनिकरि निपजे सत्यार्थके प्रकाशक पद तिनके समूहका नाम श्रुत है सो भी अनादिनिधन है। जैसैं **'जीव'** ऐसा अनादिनिधन पद है सो जीवका जनावनहारा है। ऐसैं अपने अपने सत्य अर्थके प्रकाशक अनेक पद तिनका जो समुदाय सो श्रुत जानना। बहुरि जैसै मोती तौ स्वयंसिद्ध हैं तिनविषै कोऊ थोरे मोतीनकै कोऊ घने मोतीनकै कोऊ किसी प्रकार कोऊ किसी प्रकार गूंथिकरि गहना बनावै है। तैसैं पद तौ स्वयंसिद्ध हैं तिनविषै कोऊ थोरे पद-निकौ कोऊ घने पदनिकौं कोऊ किसीप्रकार कोऊ किसीप्रकार गूं-थि ग्रंथ बनावै है यहां मैं भी तिनि सत्यार्थ पदनिकौं मेरी बुद्धि अ-नुसारि गूंथि[1] ग्रंथ बनाऊं हूं सो मैं मेरी मतिकरि कल्पित झूठे अर्थके सूचक पद याविषै नाहीं गूंथूं हूं। तातैं यह ग्रंथ प्रमाण जानना। इ-हां प्रश्न—जो तिनि पदनिकी परंपराय इस ग्रंथ पर्यंत कैसैं प्रवर्तै है-ताका समधान,—

अनादितैं तीर्थंकर केवली होते आये हैं तिनिकै सर्वका ज्ञान हो है तातैं तिनि पदनिका वा तिनिके अर्थनिका भी ज्ञान हो है। बहुरि तिनि तीर्थंकर केवलिनिका जाकरि अन्य जीवनिकै पदनिका अर्थनिका ज्ञान होय ऐसा दिव्यध्वनिकरि उपदेश हो है। ताके अनुसारि

---

१ जोडकर वा लिखकरि।

गणधरदेव अंग प्रकीर्णकरूप ग्रंथ गूंथे हैं। बहुरि तिनकै अनुसारि अन्य आचार्यादिक नाना प्रकार ग्रंथादिककी रचना करै हैं। तिनिकूं केई अभ्यासैं हैं केई कहै हैं केई सुनै है ऐसै परंपराय मार्ग चल्या आवै है। सो अब इस भरतक्षेत्रविषै वर्तमान अवसर्पिणी काल है। तिस विषै चौवीस तीर्थंकर भए तिनिविषै श्रीवर्धमान नामा अंतिम तीर्थंकरदेव भया। सो केवलज्ञान विराजमान होइ जीवनिकों दिव्यध्वनिकरि उपदेश देता भया। ताके सुननेका निमित्त पाय गौतम नामा गणधर अगम्य अर्थनिकों भी जानि धर्म्मानुरागके वशतैं अंग प्रकीर्णकनिकी रचना करता भया। बहुरि वर्द्धमान स्वामि तौ मुक्त भए तह पीछै इस पंचम कालविषै तीन केवली भए गौतम १, सुधर्माचार्य२, जंबूस्वामी ३। तहां पीछैं कालदोषतै केवलज्ञानी होनेका तौ अभाव भया। बहुरि केतेक काल तांई द्वादशांगके पाठी श्रुतकेवली रहे पीछैं तिनिका भी अभाव भया। बहुरि केतेक काल तांई थोरे अंगनिके पाठी रहे तिनने यह जान करि जो भविष्यत कालमें हम सारिखे भी ज्ञानी न रहेंगे, तातैं ग्रन्थ रचना प्रारंभ करी अर द्वादशांगानुकूल प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोगके अनेक ग्रन्थ रचे। पीछैं तिनिका भी अभाव भया। तब आचार्यादिकनिकरि तिनिके अनुसारि बनाए ग्रन्थ वा अनुसारी ग्रन्थनिके अनुसारि बनाए ग्रंन्थ तिनिहीकी प्रवृति रही। तिनिविषै कालदोषतैं दुष्टनिकरि कितेक ग्रंथनिकी व्युच्छित्ति भई वा महान् ग्रन्थनिका अभ्यासादि न होनेतैं व्युच्छित्ति भई। बहुरि कितेक महान् ग्रन्थ पाइए है तिनिका बुद्धिकी मंदतातैं अभ्यास होता नाहीं। जैसै

दक्षिणमैं गोमट्टस्वामीके निकटि मूलविद्री नगरविषै धवल महाधवल जयधवल पाइए है। परंतु दर्शन मात्र ही हैं। बहुरि कितेक ग्रन्थ अपनी बुद्धिकरि अभ्यास करने योग्य पाइए हैं। तिनि विषै भी कितेक ग्रन्थनिका ही अभ्यास बनै है। ऐसैं इस निकृष्ट कालविषै उत्कृष्ट जैनमतका घटना तौ भया परंतु इस परंपरायकरि अब भी जैन शास्त्रविषै सत्य अर्थके प्रकाशनहारे पदनिका सद्भाव प्रवर्त्तै है। बहुरि हम इस कालविषै इहां अब मनुष्यपर्याय पाया सो इसविषै हमारै पूर्व संस्कारतै वा भला होनहारतै जैनशास्त्रनिविषै अभ्यास करनेका उद्यम होत भया। तातै व्याकरण न्याय गणित आदि उपयोगी ग्रन्थनिका किंचित् अभ्यास करि टीकासहित समयसार पंचास्तिकाय प्रवचन-सार नियमसार गोमट्टसार लब्धिसार त्रिलोकसार तत्त्वार्थसूत्र इत्यादि शास्त्र अर क्षपणासार पुरुषार्थसिध्युपाय अष्टपाहुड आत्मानुशासन आदि शास्त्र अर श्रावक मुनिका आचारके प्ररूपक अनेक शास्त्र अर सुष्टुकथासहित पुराणादि शास्त्र इत्यादि अनेक शास्त्र हैं तिनि-विषै हमारै बुद्धि अनुसारि अभ्यास वर्तै है। तिसकरि हमारै हू किंचित् सत्यार्थ पदनिका ज्ञान भया है। बहुरि इस निकृष्ट समयविषै हम सारिखे मंदबुद्धीनितै भी हीनबुद्धिके धारक घने जन अवलोकिए है। तिनिकौ तिनि पदनिके अर्थका ज्ञान होनेके अर्थि धर्मानुरागके वशतैं देशभाषामय ग्रन्थ करनेकी हमारै इच्छा भई है ताकरि हम ग्रंथ बनावै है सो याविषै भी अर्थसहित तिन ही पदनिका प्रकाशन हो है। इतना तौ विशेष है जैसैं प्राकृत संस्कृत शास्त्रनिकैविषै प्राकृत संस्कृत पद लिखिए है तैसैं इहां अपभ्रंश लिए वा यथार्थपनेकूंलिए

देशभाषारूप पद लिखिए है परंतु अर्थविषै व्यभिचार किछू नांहीं है ऐसै इस ग्रंथपर्यन्त तिनि सत्यार्थ पदनिकी परंपराय प्रवर्तै है। इहां कोऊ पूछै कि परंपराय तौ हम ऐसै जानी परन्तु इस परंपरायविषै सत्यार्थ पदनिहीकी रचना होती आई असत्यार्थ पद न मिले ऐसी प्रतीति हमकौ कैसै होय। ताका समाधान—

असत्यार्थ पदनिकी रचना अति तीव्र कषाय भए विना बनै नाहीं। जातै जिस असत्य रचनाकरि परंपराय अनेक जीवनिका महाबुरा होय आपकौ ऐसी महा हिंसाका फलकरि नर्क निगोदविषै गमन करना होइ सो ऐसा महाविपरीत कार्य तौ क्रोध मान माया लोभ अत्यन्त तीव्र भए ही होय। सो जैन धर्मविषै तौ ऐसा कषायवान होता नाहीं। प्रथम मूल उपदेशदाता तौ तीर्थंकर केवली भये सो तौ सर्वथा मोहके नासतै सर्व कषायनि करि रहित ही है। बहुरि ग्रन्थकर्त्ता गणधर वा आचार्य ते मोहका मन्द उदयकरि सर्व बाह्य अभ्यन्तर परिग्रहकौ त्यागि महा मंद कषायी भए हैं, तिनिकै तिस मंद कषायकरि किंचित् शुभोपयोग—हीकी प्रवृत्ति पाइए है और कीछू प्रयोजन है नाहीं। बहुरि श्रद्धानी गृहस्थ भी कोऊ ग्रंन्थ बनावै है सो भी तीव्रकषायी नाहीं है जो वाकै तीव्रकषाय होय तौ सर्वकषायनिका जिस तिस प्रकार नाश करणहारा जो जिनधर्म तिसविषै रुचि कैसै होय अथवा जो मोहके उदयतै अन्य कार्यनिकरि कषाय पोषै है तौ पोषौ परन्तु जिनआज्ञा भंगकरि अपना कषाय पोषै तौ जैनीपना रहता नाहीं ऐसैं जिनधर्म्मविषै ऐसा तीव्रकषायी कोऊ होता

नाहीं जो असत्य पदनिकी रचनाकरि परका अर अपना पर्याय पर्यायविषै बुरा करै। इहां प्रश्न,– जो कोउ जैनाभास तीव्रकषायी होय असत्यार्थ पदनिकौ जैन शास्त्रनिविषै मिलावै पीछैं ताकी परंपरा चली जाय तौ कहा करिये। ताका समाधान —

जैसैं कोऊ सांचे मोतीनिके गहनेविषै झूठे मोती मिलावै परंतु झलक मिलै नाहीं तातैं परीक्षाकरि पारखी ठिगावै भी नाहीं कोई भोला होय सो ही मोती नामकरि ठिगावै है। बहुरि ताकी परंपरा भी चलै नाही शीघ्र ही कोऊ झूंठे मोतीनिका निषेध करै है। तैसैं कोऊ सत्यार्थ पदनिके समूहरूप जैनशास्त्रनिविषै असत्यार्थ पद मिलावै परंतु जिनशास्त्रके पदनिविषै तौ कषाय मिटावनेका वा लौकिककार्य घटावनेका प्रयोजन है अर उस पापीनै जे असत्यार्थ पद मिलाए हैं तिनिविषै कषाय पोषनेका वा लौकिक कार्य साधनेका प्रयोजन है ऐसैं प्रयोजन मिलता नाहीं तातैं परीक्षाकरि ज्ञानी ठिगावते भी नाहीं कोई मूर्ख होय सो ही जैनशास्त्र नामकरि ठिगावै है बहुरि ताकी परंपरा भी चालै नाहीं शीघ्र ही कोऊ तिनि असत्यार्थ पदनिका निषेध करै है बहुरि ऐसे तीव्रकषायी जैनाभास इहां इस निकृष्ट कालविषै ही होय है उत्कृष्ट क्षेत्र काल बहुत हैं तिस विषै तौ ऐसे होते नाहीं तातैं जैनशास्त्रनिविषै असत्यार्थ पदनिकी परंपरा चलै नाहीं ऐसा निश्चय करना। बहुरि वह कहै है कि कषायनिकरि तौ असत्यार्थ पद न मिलावै परंतुग्रन्थ करनेवालेकै क्षयोपशम ज्ञान है तातैं कोई अन्यथा अर्थ भासै ताकरि असत्यार्थ पद मिलावै ताकी तौ परंपरा चलै; ताका समाधान,–

मूल ग्रंथकर्ता तौ गणधरदेव है ते आप च्यारिज्ञानके धारक हैं अर साक्षात् केवलीका दिव्यध्वनिउपदेश सुनै है ताका अतिशयकरि सत्यार्थ हि भासै है।अर ताहीके अनुसारि ग्रंथ बनावैं हैं। सो उन ग्रन्थनिविषै तौ असत्यार्थ पद कैसैं गूथे जाय अर अन्य आचार्यादिक ग्रन्थ वनावे है ते भी यथायोग्य सम्यग्ज्ञानके धारक है। वहुरि ते तिनि मूल ग्रन्थनिका परंपराकरि ग्रन्थ वनावै हैं। वहुरि जिन पदनिका आपकौ ज्ञान न होइ तिनकी तो आप रचना करै नाहीं अर जिन पदनिका ज्ञान होय तिनिकौं सम्यग्ज्ञान प्रमाणतैं ठीक गूंथै है सो प्रथम तौ ऐसी सावधानीविषै असत्यार्थ पद गूंथे जाय नाहीं अर कदाचित् आपकौ पूर्व ग्रन्थनिके पदनिका अर्थ अन्यथा ही भासै अर अपने प्रमाणतामै भी तैसै ही आय जाय तौ याका किछू सारा[1] नहीं। परंतु ऐसैं कोईकौ भासै सवहीकौं तौ न भासै। तातै जिनकौ सत्यार्थ भास्या होय ते ताका निषेधकरि परंपरा चलने देते नाहीं। बहुरि इतना जानना जिनकौ अन्यथा जाने जीवका बुरा होय ऐसा देव गुरु धर्मादिक वा जीवादिक तत्त्वनिकौं तौ श्रद्धानी जैनी अन्यथा जानै ही नाहीं इनिका तौ जैनशास्त्रनिविषै प्रसिद्ध कथन है अर जिनिकौ भ्रमकरि अन्यथा जाने भी जिनकी आज्ञा माननेतैं जीवका बुरा न होय ऐसा कोई सूक्ष्म अर्थ हो तिनिविषै किसीकौ कोई अर्थ अन्यथा प्रमाणतामै ल्यावै तौ भी ताका विशेष दोष नाहीं सो गोमट्टसारविषै कह्या है,–

---

[1] वश नहीं।

सम्माइट्ठी जीवो उवइट्ठं पवयणं तु सद्दहदि ।
सद्दहदि असब्भावं अजाणमाणो गुरुणियोगा ॥ १॥

याका अर्थ—सम्यग्दृष्टी जीव उपदेश्या सत्य प्रवचनकौं श्रद्धान करै है अर अजानमाण गुरुके नियोगतै असत्यकौं भी श्रद्धान करै है ऐसा कह्या है। बहुरि हमारै भी विशेष ज्ञान नाहीं है। अर जिनआज्ञा भंग करनेका बहुत भय है परंतु इसही विचारके बलतै ग्रन्थ करनेका साहस करते है सो इस ग्रन्थविषै जैसै पूर्व ग्रन्थनिमैं वर्नन है तैसै ही वर्नन करैंगे। अथवा कहीं पूर्व ग्रन्थनिविषै सामान्य गूढ़ वर्नन है ताका विशेष प्रगटकरि वर्नन इहां करैंगे सो ऐसै वर्नन करनेविषै मै तौ बहुत सावधानी राखूगा अर सावधानी करते भी कहीं सूक्ष्म अर्थका अन्यथा वर्नन होय जाय तौ विशेष बुद्धिमान् होय सो सँवारिकरि शुद्ध करियौ। यह मेरी प्रार्थना है। ऐसै शास्त्र करनेका निश्चय किया है। अब इहां कैसे शास्त्र बांचने सुनने योग्य है अर तिनि शास्त्रनिके वक्ता श्रोता कैसे चाहिए सो वर्नन करिए है।

जे शास्त्र मोक्षमार्गका प्रकाश करै तेई शास्त्र वांचने सुनने योग्य हैं जातै जीव संसारविषै नाना दुःखनिकरि पीड़ित हैं। सो शास्त्ररूपी दीपककरि मोक्षमार्गकौं पावै तौ उस मार्गविषै आप गमनकरि उन दुःखनितैं मुक्त होइ सो मोक्षमार्ग एक वीतरागभाव है तातैं जिन शास्त्रनिविषै काहूप्रकार रागद्वेष मोह भावनिका निषेध करि वीतरागभावका प्रयोजन प्रगट किया होय तिनिही शास्त्रनिका बांचना सुनना उचित है। बहुरि जिन शास्त्रनिविषै श्रृंगार भोग कौतू-

हलादिक पोषि रागभावका अर हिंसायुद्धादिक पोषि द्वेषभावका अर अतत्त्वश्रद्धान पोषि मोहभावका प्रयोजन प्रगट किया होय ते शास्त्र नाहीं शस्त्र हैं। जातै जिन राग द्वेष मोह भावनिकरि जीव अनादितैं दुखी भया तिनकी वासना जीवकै विना सिखाई ही थी। बहुरि इन शास्त्रनिकरि तिनही का पोषण किया भले होनेकी कहा शिक्षा दीनी। जीवका स्वभाव घात ही किया तातैं ऐसे शास्त्रनिका बांचना सुनना उचित नाहीं है। इहां बांचना सुनना जैसैं कह्या तैसैं ही जोड़ना सीखना सिखावना विचारना लिखावना आदि कार्य भी उपलक्षणकरि जानि लेनें। ऐसैं साक्षात् वा परंपराय-करि वीतरागभावकौ पोषै ऐसे शास्त्र ही अभ्यास करने योग्य है।

अब इनिके वक्ताका स्वरूप कहिये है। प्रथम तौ वक्ता कैसा चाहिए जो जैन श्रद्धानविषै दृढ़ होय जातै जो आप अश्रद्धानी होय तौ औरकौं श्रद्धानी कैसैं करै। श्रोता तौ आपहीतै हीन-बुद्धिके धारक है तिनिकौं कोऊ युक्तिकरि श्रद्धानी कैसैं करै। अर श्रद्धान ही धर्म्मका मूल है। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जाकै विद्याभ्यास करनेतैं शास्त्र बांचनेयोग्य बुद्धि प्रगट भई होय जातै ऐसी शक्ति विना वक्तापनेका अधिकारी कैसे होय। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जो सम्यग्ज्ञानकरि सर्व प्रकारके व्यवहार निश्चयादिरूप व्याख्यानका अभिप्राय पिछानता होय जातैं जो ऐसा न होय तौ कहीं अन्य प्रयोजन लिए व्याख्यानी होय ताका अन्य प्रयोजन प्रगटकरि विपरीत प्रवृत्ति करावै। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जाकै जिन आज्ञा भंग करनेका बहुत भय होय।

जातैं जो ऐसा न होय तौ कोई अभिप्राय विचारि सूत्रविरुद्ध उपदेश देय जीवनिका बुरा करै। सो ही कह्या है--

बहुगुणविज्जाणिलयो असुत्तभासी तहावि मुत्तव्वो।
जह वरमणिजुत्तो वि हु विग्घयरो विसहरो लोए॥ १॥

याका अर्थ--जो बहुत क्षमादिक गुण अर व्याकरण आदि विद्याका स्थान है तथापि उत्सूत्रभाषी है तौ छोडने योग्य ही है जैसै उत्कृष्टमणिसंयुक्त है तौ भी सर्प्प है सो लोकविषै विघ्नका ही करणहारा है। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जाकै शास्त्र वांचि आजीवका आदि लौकिक कार्य साधनेकी इच्छा न होय। जातै जो आशावान् होय तौ यथार्थ उपदेश देय सकै नाहीं वाकै तौ किछू श्रोतानिका अभिप्रायके अनुसारि व्याख्यानकरि अपने प्रयोजन साधनेकाही साधन रहै अर श्रोतानितैं वक्ताका पद उंचा है परंतु वक्ता लोभी होय तौ वक्ता आधीन हो जाय श्रोता उंचे होंय। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जाकै तीव्र क्रोध मान न होय जातैं तीव्र क्रोधी मानीकी निंदा होय श्रोता तिसतैं डरते रहै तब तिसतैं अपना हित कैसै करै। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जो आप ही नाना प्रश्न उठाय आप ही उत्तर करै अथवा अन्य जीव अनेक प्रकार करि बहुत विचारि प्रश्न करै तौ मिष्टवचनकरि जैसैं उनका संदेह दूरि होय, तैसैं समाधान करै। जातैं जो आपकै उत्तर देनेकी सामर्थ्य न होय तौ यों कहे याका मोकौं ज्ञान नाहीं किसी विशेष ज्ञानी सौ पूछकर मैं तिहारे ताँई उत्तर दूंगा। अथवा कोई समय पाय विशेष ज्ञानी तुमसों मिलै, तौ पूछकर अपना संदेह

दूर करना अर मोकौ हू बताय देना। जातै ऐसा होय तौ अभि मान के वशतैं अपनी पंडिताई जनावनेकौ प्रकरण विरुद्ध अर्थ उप-देशै। तातै श्रोतानिका विरुद्ध श्रद्धान करने तै बुरा होय जैन धर्मकी निंदा होय। जातै जो ऐसा न होय तौ श्रोतानिका संदेह दूरि न होय तब कल्याण कैसै होय अर जिनमतकी प्रभावना होय सकै नाहीं। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जाकै अनीतिरूप लोकनिंद्य कार्यनिकी प्रवृत्ति न होय जातै लोकनिंद्य कार्यनिकरि हास्यका स्थान होय जाय तब ताका वचन कौन प्रमाण करै जिनधर्मकौ लजावै। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जाका कुल हीन न होय अंगहीन न होय स्वरभंग न होय मिष्टवचन होय प्रभुत्व होय तातै लोकविषै मान्य होय जातै ऐसा न होय तौ ताकौ वक्तापनकी महंतता सोभै नाहीं ऐसा वक्ता होय। वक्ताविषै ये गुण तौ अवश्य चाहिए सो ही आत्मानु-शासनविषै कह्या है।

प्राज्ञः प्राप्तसमस्तशास्त्रहृदयः प्रव्यक्तलोकस्थितिः
प्रास्ताशः प्रतिभापरः प्रशमवान् प्रागेव दृष्टोत्तरः
प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः परमनोहारी परो निन्दया
ब्रूयाद्धर्मकथां गणी गुणनिधिः प्रस्पष्टमिष्टाक्षरः ॥ १ ॥

याका अर्थ—बुद्धिमान होय, जानै समस्त शास्त्रनिका रहस्य पाया होय, लोकमर्यादा जाकै प्रगट भई होय, आशा जाकै अस्त भई होय, कांतिमान् होय, उपशमी होय, प्रश्न किए पहले ही जानै उत्तर देख्या होय; बाहुल्यपनै प्रश्ननिका सहनहारा होय, प्रभु होय परकी वा परकरि आपकी निंदारहितपनाकरि परके मनका हरनहारा

होय, गुणनिधान होय, स्पष्ट मिष्ट जाके बचन हाेंय, ऐसा सभाका नायक धर्मकथा कहै। बहुरि वक्ताका विशेष लक्षण ऐसा है जो याकै व्याकरण न्यायादिक वा बड़े बड़े जैनशास्त्रनिका विशेष ज्ञान होय तौ विशेषपनै ताकौ वक्तापनौ सोभै। बहुरि ऐसा भी होय अर अध्यात्मरसकरि यथार्थ अपने स्वरूपका अनुभवन जाकै न भया होय सो जिनधर्मका मर्म जानै नाहीं पद्धतिहीकरि वक्ता होय है। अध्यात्मरसमय सांचा जिनधर्मका स्वरूप वाकरि कैसैं प्रगट किया जाय तातै आत्मज्ञानी होय तौ सांचा वक्तापनौ होय जातै प्रवचनसारविषै ऐसा कह्या है। आगमज्ञान तत्वार्थश्रद्धान संयमभाव ये तीनौ आत्मज्ञानकरि शून्य कार्यकारी नाहीं। बहुरि दोहा पाहुडविषै ऐसा कह्या है—

पंडिय पंडिय पंडिय कण छोडि वितुस कंडिया।
पय अत्थं तुट्ठोसि परमत्थ ण जाणइ मूढोसि ॥ १ ॥

याका अर्थ। हे पांडे हे पांडे हे पांडे तैं कणछोडि तुस ही ग्रहण करै है तू अर्थ अर शब्दविषै संतुष्ट है परमार्थ न जानै है तातैं मूर्ख ही है ऐसा कह्या है अर चौदह विद्यानिविषै भी पहलै अध्यात्मविद्या प्रधान कही है तातैं अध्यात्मरसका रसिया वक्ता है सो जिनधर्मके रहस्यका वक्ता जानना। बहुरि जे बुद्धिऋद्धिके धारक हैं अवधि मनःपर्यय केवलज्ञानके धनी वक्ता हैं ते महावक्ता जानने। ऐसै वक्तानिके विशेष गुण जानने सो इन विशेष गुणनिका धारी वक्ताका संयोग मिलै तौ बहुत ही भला है अर न मिलै तौ श्रद्धानादिक गुणनिके धारी वक्तानिहीके मुखतैं शास्त्र

सुनना। याप्रकार गुनके धारी मुनि वा श्रावक तिनिकै मुखतै तौ शास्त्र सुनना योग्य है अर पद्धतिबुद्धिकरि वा शास्त्र सुननेकै लोभकरि श्रद्धानादि गुणरहित पापी पुरुषनिके मुखतैं शास्त्र सुनना उचित नाही। उक्तं च-

तं जिणआणपरेण धम्मो सो यव्व सुगुरुपासम्मि।
अह उचिओ सद्धाओ तस्सुवएसस्सकहगाओ॥ १॥

याका अर्थ—जो जिन आज्ञा माननेवेवै सावधान है ताकरि निर्ग्रन्थ सुगुरुहीकै निकटि धर्म्म सुनना योग्य है अथवा तिस सुगुरुहीके उपदेशका कहनहारा उचित श्रद्धानी श्रावक तातै धर्म सुनना योग्य है। ऐसा जो वक्ता धर्म्मबुद्धिकरि उपदेशदाता होइ सो ही अपना अर अन्य जीवनिका भला करै है। अर जो कषायबुद्धिकरि उपदेश दे हैं सो अपना अर अन्य जीवनिका बुरा करै है ऐसा जानना। ऐसै वक्ताका स्वरूप कह्या अब श्रोताका स्वरूप कहै है—

भला होनहार है तातै जिस जीवकै ऐसा विचार आवै मै कौन हौं, अर कहां तै आकर यहां जन्म धरया है अर मरि करि कहां जाउंगा। मेरा कहा स्वरूप है यह चरित्र कैसै बनि रह्या है ए मेरै भाव हो है तिनिका कहा फल लागैगा जीव दुखी हो रहा है सो दुःख दूरि होनेका कहा उपाय है मुझकौ इतनी वातनिका ठीककरि किछू मेरा हित हो सो करना ऐसा विचारतै उद्यमवंत भया है। वहुरि इस कार्यकी सिद्धि शास्त्र सुननेतै होती जानि अतिप्रीति-करि शास्त्र सुनै है किछू पूछना होइ सो पूछै है वहुरि गुरुनिकरि

कह्या अर्थकौं अपने अंतरंगविषै बारंबार विचारै है बहुरि अपने वि-
चारतैं सत्य अर्थनिका निश्चयकरि जो कर्तव्य होय ताका उद्यमी हो-
य है ऐसा तौ नवीन श्रोताका स्वरूप जानना । बहुरि
जैनधर्म्मके गाढ़े श्रद्धानी हैं अर नाना शास्त्र निश्चयादिक-
सुननेंकरि जिनकी बुद्धि निर्मल भई है बहुरि व्यवहार
का स्वरूप नीकै जानि जिस अर्थकौं सुनै हैं ताकौं यथावत् नि-
श्चय जानि अवधारै हैं । बहुरि जब प्रश्न उपजै है तब अति
विनयवान होय प्रश्न करै है अथवा परस्पर अनेक प्रश्नोत्तरकरि
वस्तुका निर्णय करै हैं शास्त्राभ्यासविषै अति आसक्त हैं धर्म्मबुद्धि-
करि निंद्यकार्यनिके त्यागी भए हैं ऐसे शास्त्रनिके श्रोता चा
हिए । बहुरि श्रोतानिके विशेष लक्षण ऐसे हैं । जाके-
किछू व्याकरण न्यायादिकका वा बड़े जैन शास्त्रनिका ज्ञान होइ
तौ श्रोतापनौ विशेष सोभै है । बहुरि ऐसा भी श्रोता है अर
वाकै आत्मज्ञान न भया होय तौ उपदेशका मरम समझि सकै
नाहीं तातै आत्मज्ञानकरि जो स्वरूपका आस्वादी भया है सो
जिनधर्म्मके रहस्यका श्रोता है । बहुरि जो अतिशयवंत बुद्धिकरि
वा अवधिमनःपर्य्ययकरि संयुक्त होय तौ वह महान् श्रोता
जानना । ऐसै श्रोतानिके विशेष गुण हैं । ऐसे जिनशास्त्रनिके
श्रोता चाहिए । बहुरि शास्त्र सुननेतैं हमारा भला होगा ऐसीं
बुद्धिकरि जो शास्त्र सुनै है परन्तु ज्ञानकी मन्दताकरि विशेष
समझै नाहीं तिनिकै पुण्यबंन्ध होय है । कार्य सिद्ध होता नाहीं ।
बहुरि जे कुलप्रवृत्तिकरि वा सहज योग बननेकरि शास्त्र सुनै है वा

सुनै तौ हैं परन्तु किछू अवधारण करते नाहीं तिनकै परिणाम अनुसारि कदाचित् पुण्यबंन्ध हो है। कदाचित् पापबंध हो है। बहुरि जे मद मत्सर भावकरि शास्त्र सुनै हैं वाद तर्क करनेंहीका जिनिका अभिप्राय है। बहुरि जे महंतताकै अर्थि वा किसी लोभा-दिकका प्रयोजनके अर्थि शास्त्र सुनै है। बहुरि जो शास्त्र तौ सुनै है परंतु सुहावता नाहीं ऐसे श्रोतानिके केवल पापबन्ध ही हो है। ऐसा श्रोतानिका स्वरूप जानना। ऐसै ही यथासंभव सीखना सिखावना आदि जिनिकै पाइए तिनिका भी स्वरूप जानना। या प्र-कार शास्त्रका अर वक्ता श्रोताका स्वरूप कहया सो उ-चित्त शास्त्रकौ उचित वक्ता होय वांचना उचित श्रोता होय सुनना योग्य है अब यह मोक्षमार्गप्रकाश नाम शास्त्र रचिए है ताका सार्थकपना दिखाइए है---

इस संसार अटवीविषै समस्त जीव हैं ते कर्म्मनिमित्ततैं निपजे जे नानाप्रकार दुःख तिनकरि पीड़ित हो रहे है। बहुरि तहां मिथ्या अन्धकार व्याप्त होय रहा है। ताकरि तहांतैं मुक्त होनेका मार्ग पावते नाहीं तड़फि तड़फि तहां ही दुखःकौ सहैं हैं। बहुरि ऐसे जीवनिका भला होनेकौ कारण तीर्थंकर केवली भगवान सो ही भया सूर्य ताका भया उदय ताकी दिव्यध्वनिरूपी कि-रणनिकरि तहांतै मुक्तहोनेका मार्ग्ग प्रकाशित किया. जैसैं सूर्यकै ऐसी इच्छा नाहीं जो मैं मार्ग प्रकाशूं परंतु सहज ही वाकी किरण फैलै हैं ताकरि मार्गका प्रकाशन हो है तैसैं ही केवली वीत-राग है तातै ताकै ऐसी इच्छा नाहीं जो हम मोक्षमार्ग प्रगट करैं

परंतु सहज ही अघातिकर्मनिका उदयकरि तिनिका शरीररूप पुद्गल दिव्यध्वनिरूप परिणमै है ताकरि मोक्षमार्गका प्रकाशन हो है। बहुरि गणधर देवनिकैं यहु विचार आया जहां केवली सूर्यका अस्तपना होइ तहां जीव मोक्षमार्गकौ कैसैं पावै अर मोक्ष-मार्ग पाए विना जीव दुःख सहैंगे ऐसी करुणाबुद्धिकरि अंग प्रकीर्णकादिरूप ग्रन्थ तेई भए महान् दीपक तिनिकाउद्योत किया। बहुरि जैसैं दीपकरि दीपक जोवनेतैं दीपकनिकी परंपरा प्रवर्तैं तैसैं आचार्यादिकनिकरि तिन ग्रन्थनितैं अन्य ग्रंथ बनाए। बहुरि तिनिहूतैं किनिहू अन्य ग्रन्थ वनाए ऐसै ग्रन्थनितै ग्रन्थ होनेतैं ग्रन्थनिकी परंपरा वर्त्तै है। मै भी पूर्वग्रन्थनितै इस ग्रन्थकौं बनाऊं हूं। बहुरि जैसैं सूर्य वा सर्व दीपक हैं ते मार्गकौं एकरूप ही प्रकाशै है तैसैं दिव्यध्वनि वा सर्व ग्रंथ है ते मोक्षमार्गकौ एकरूप ही प्रकाशै हैं। सो यह भी ग्रन्थ मोक्षमार्गकौ प्रकासै है। बहुरि जैसैं प्रकाशे भी नेत्ररहित वा नेत्रविकार सहित पुरुष हैं तिनिकूं मार्ग सूझता नाहीं तौ दीपककै तौ मार्गप्रकाशकपनेका अभाव भया नाहीं तैसै प्रगट कीए भी जे मनुष्यज्ञानरहित हैं वा मिथ्यात्वादि विकारसहित हैं तिनिकूं मोक्षमार्ग सूझता नाहीं तौ ग्रन्थकै तौ मोक्षमार्गप्रकाशपनेका अभाव भया नाहीं। ऐसैं इस ग्रन्थका मोक्षमार्गप्रकाशक ऐसा नाम सार्थक जानना। इहां प्रश्न जो मोक्षमार्गके प्रकाशक पूर्व ग्रन्थ तौ थे ही तुम नवीन ग्रन्थ काहे कौ बनावो हौ। ताका समाधान—

जैसैं बड़े दीपकनिका तौ उद्योत बहुत तैलादिकका साधनतैं

रहै है जिनिकै वहुत तैलादिककी शक्ति न होइ तिनिकौ स्तोक[1] दीपक जोइ दीजिये तौ वे उसका साधन राखि ताके उद्योततैं अपना कार्य करैं तैसै वड़े ग्रन्थनिका तौ प्रकाश वहुत ज्ञानादिकका साधनतैं रहै है जिनिकै वहुत ज्ञानादिककी शक्ति नाहीं तिनिकूं स्तोक ग्रन्थ वनाय दीजिये तौ वे वाका साधन राखि ताके प्रकाशतैं अपना कार्य करैं। तातैं यह स्तोक सुगम ग्रन्थ वनाइए हैं। वहुरि इहा जो मैं यह ग्रन्थ वनाऊं हूं सो कपायनितैं अपना मान वधावनेकौं वा लोभ साधनेकौं वा यश होनेकौं वा अपनी पद्धति राखनेकौं नाहीं वनावौं हौ। जिनिकै व्याकरण न्यायादिकका वा नयप्रमाणादिकका वा विशेष अर्थनिका ज्ञान नाहीं तातै तिनिकै वड़े ग्रन्थनिका अभ्यास तौ वनि सकै नाहीं। वहुरि कोई छोटे ग्रन्थनिका अभ्यास वनै तौ भी यथार्थ अर्थ भासै नाहीं। ऐसै इस समयविषै मंदज्ञानवान् जीव वहुत देखिए है तिनिका भला होनेके अर्थि धर्मवुद्धितैं यह भापामय ग्रन्थ वनावौं हौं, बहुरि जैसैं वड़े दरिद्रीकौं अवलोकनमात्र चिन्तामणिकी प्राप्ति होइ अर वह न अवलोकै वहुरि जैसैं कोड़ीकूं अमृत पान करावै अर वह न करै तैसैं संसारपीड़ित जीवकौ सुगम मोक्षमार्गके उपदेशका निमित्त बनै अर वह अभ्यास न करै तौ वाके अभाग्यकी महिमा कौन करि सकै। वाका होनहारहीकौ विचारे अपने समता आवै।

उक्तं च-

---

1 छोटा

साहीणे गुरुजोगे जे ण सुणंतीह धम्मवयणाई ।
ते धिट्ठदुट्ठचित्ता अह सुहडा भवभयविहूणा ॥१॥

स्वाधीन उपदेशदाता गुरुका योग जुड़े भी जे जीव धर्म्म वचननिकौ नाहीं सुनै है ते धीठ हैं अर उनका दुष्टचित्त है अथवा जिस संसारभयतै तीर्थंकरादिक डरे तिससंसार भयतै रहित हैं ते बड़े सुभट हैं। बहुरि प्रवचनसारविषै भी मोक्षमार्गका अधिकार किया तहां प्रथम आगमज्ञान ही उपादेय कह्या सो इस जीवका तौ मुख्य कर्त्तव्य आगमज्ञान है । याकौ होतै तत्त्वनिका श्रद्धान हो है तत्त्वनिका श्रद्धान भए संयमभाव हो है अर तिस आगमतै आत्मज्ञानकी भी प्राप्ति हो है तब सहज ही मोक्षकी प्राप्ति हो है। बहुरि धर्मके अनेक अंग है तिनविषै एक ध्यान विना यातै ऊंचा और धर्मका अंग नाहीं है तातैं जिसतिसप्रकार आगम अभ्यास करना योग्य है बहुरि इस ग्रंथका तौ बांचना सुनना विचारना घना सुगम है कोऊ व्याकरणादिकका भी साधन न चाहिए तातैं अवश्य याका अभ्यासविषै प्रवर्त्तौ तुम्हारा कल्यान होइगा ।

इति श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक नाम शास्त्रविषै पीठबन्ध-प्ररूपक प्रथम अधिकार समाप्त भया ॥ १ ॥

दोहा ।

मिथ्याभाव अभावतैं, जो प्रगटै निजभाव ॥
सो जयवंत रहौ सदा, यह ही मोक्षउपाव ॥ १ ॥

अब इस शास्त्रविषै मोक्षमार्गका प्रकाश करिए है । तहां

वन्धनतै छूटनेका नाम मोक्ष है। सो इस आत्माकै कर्म्मका वन्धन है तिस बन्धनकरि आत्मा दुखी होय रह्या है बहुरि याकै दुःख दूरि करनेहीका निरंतर उपाय भी रहै है परंतु सांचा उपाय पाए विना दुःख दूरि होता नाही अर दुःख सह्या भी जाता नाहीं तातैं यह जीव व्याकुळ होय रह्या है ऐसे जीवकौं समस्त दुःखका मूल कारन कर्म्मबन्धन है ताका अभावरूप मोक्ष सोई परम हित है। बहुरि याका सांचा उपाय करना सो ही कर्त्तव्य है तातै इसहीका याकौ उपदेश दीजिए है। तहां जैसै वैद्य है सो रोगसहित मनुष्योंको प्रथम तौ रोगकानिदान बतावै। ऐसै यह रोग भया है। बहुरि उस रोगके निमित्ततै वाकै जो जो अवस्था होती होइ सो बतावै ताकरि वाकै निश्चय होइ जो मेरै ऐसा ही रोग है। बहुरि तिस रोगके दूरि करनेका उपाय अनेक प्रकार वतावै अर तिस उपायकी प्रतीति अनावै। इतना तौ वैद्यका वतावना है वहुरि जो वह रोगी ताका साधन करै तौ रोगतै मुक्त होय अपना स्वभावरूप प्रवर्तै सो यह रोगीका कर्तव्य है। तैसें ही इहां कर्मबंधनयुक्त जीवकौ प्रथम तौ कर्मबंधनका निदान वताइए है ऐसें यह कर्मबंधन भया है। वहुरि उस कर्मबन्धनके निमित्ततै याकै जो जो अवस्था होती है सो वताइए है। ताकरि जीवकै निश्चय होइ जो मेरै ऐसै ही कर्मवन्धन है। बहुरि तिस कर्मबन्धनके दूरि होनेका उपाय अनेक प्रकार बताइए है अर तिस उपायकी याकौ प्रतीति अनाइए है इतना तौ शास्त्रका उपदेश है। वहुरि यह जीव

ताका साधन करै तौ कर्मबन्धतैं मुक्त होइ अपना स्वभाव रूप प्रवर्त्तै सो यह जीवका कर्तव्य है सो इहां प्रथम ही कर्म्म बन्धनका निदान बताइए है बहुरि कर्म्मबन्धन होनेतैं नाना उपाधिक भावनिविषै परिभ्रमणपनौं पाइए है एक रूप रहनौं न हो है तातैं कर्म्मबन्धनसहित अवस्थाका नाम संसार अवस्था है। सो इस संसार अवस्थाविषै अनन्तानन्त जीव हैं ते अनादिही--तैं कर्म्मबन्धन सहित हैं ऐसा नाहीं है जो जीव पहिले न्यारा थ अर कर्म्म न्यारा था पीछैं इनका संयोग भया। तौ कैसं है-जैसैं मेरुगिरि आदि अकृत्रिम स्कंधनिविषै अनंते पुद्गलपरमाणु अनादितैं एक बन्धनरूप है। पीछैं तिनमैं केई परमाणु भिन्न हो हैं केई नए मिले हैं। ऐसैं मिलना बिछुरना हुवा करै है। तैसें इस संसारविषै एक जीव द्रव्य अर अनंते कर्म्मरूप पुद्गल परमाणु तिनिका अनादितैं एक बंधनरूप है पीछै तिनिमैं केई कर्मपरमाणु भिन्न हो है अर कई नए मिले हैं ऐसैं मिलना बिछुरना हुवा करै है। बहुरि इहां प्रश्न—जो पुद्गलपरमाणु तौ रागादिकके निमित्ततैं कर्म-रूप हो है अनादि कर्म्मरूप कैसें है ताका समाधान—

निमित्त तौ नवीन कार्य होय तिसविषैं ही संभव है। अनादि अवस्थाविषै निमित्तका किछू प्रयोजन नाहीं। जैसें नवीन पुद्गल-परमाणूनिका बंधान तौ स्निग्ध रूक्ष गुणके अंशनकरि ही हो है अर मेरुगिरि आदि स्कन्धनिविषै अनादि पुद्गलपरमाणूनिका बन्धान है तहां निमित्तका कहा प्रयोजन है। तैसें नवीन परमाणूनिका कर्म्मरूप होना तौ रागादिकनि ही करि हो है अर अनादि पुद्गल-

परमाणूनिकी कर्म्मरूपही अवस्था है। तहां निमित्तका कहा प्रयो-
जन है? बहुरि जो अनादिविषै भी निमित्त मानिए तौ अना-
दिपना रहै नाहीं। तातै कर्मका सम्बन्ध अनादि मानना। सो
तत्त्वप्रदीपिका प्रवचनसार शास्त्रकी व्याख्याविषै जो सामान्यज्ञेया-
धिकार है तहां कह्या है। रागादिकका कारण तौ द्रव्य कर्म है,
अर द्रव्यकर्मका कारण रागादिक है। तब उहां तर्क करी जो
ऐसें इतरेतराश्रयदोष लागै वह वाकै आश्रय वह वाकै आश्रय कहीं
थंभाव नाहीं है, तब उत्तर ऐसा दिया है

**नैवं अनादिप्रसिद्धद्रव्यकर्म्मसम्बन्धस्य तत्र हेतुत्वेनो-
पादानात्।**

याका अर्थ—ऐसें इतरेतराश्रय दोष नाहीं है। जातै अनादिका
स्वयसिद्ध द्रव्यकर्म्मका संबंध है ताका तहां कारणपनाकरि
ग्रहण किया है। ऐसें आगममैं कह्या है। बहुरि युक्तितै भी
ऐसेंही संभवै है जो कर्म्मनिमित्त विना पहले जीवकै रागादिक
कहिए तौ रागादिक जीवका निज स्वभाव होय जाय जातै पर-
निमित्त विना होई ताहीका नाम स्वभाव है। तातै कर्मका
संबंध अनादि ही मानना। बहुरि इहां प्रश्न जो न्यारे न्यारे द्रव्य
अर अनादितै तिनिका संबंध कैसै संभवै। ताका समाधान—

जैसै ठेठिहीसूं जल दूधका वा सोना किट्टिकका वा तुष कणका
वा तैल तिलका संबंध देखिए है नवीन इनिका मिलाप भया
नाहीं तैसै अनादिहीसौ जीवकर्म्मका संबंध जानना नवीन
इनिका मिलाप नाहीं भया। बहुरि तुम कही कैसै संभवै? अना-

दितैं जैसैं केई जुदे द्रव्य हैं तैसैं केई मिले द्रव्य हैं इस संभवनैं विषै किछु विरोध तौ भासता नाहीं । बहुरि प्रश्न जो संबंध वा संयोग कहना तौ तब संभवे जब पहले जुदे होइ पीछै मिलै। इहां अनादि मिले जीव कर्म्मनिका संबंध कैसे कह्या है । ताका समाधान—

अनादितै तौ मिले थे परंतु पीछे जुदे भए तब जान्या जुदे थे तौ जुदे भए। तातैं पहले भी भिन्न ही थे । ऐसै अनुमानकरि वा केवलज्ञानकरि प्रत्यक्ष भिन्न भासै है । तिसकरि तिनिका बंधान होतैं भिन्नपणा पाइए है। बहुरि तिस भिन्नताकी अपेक्षा तिनिका संबंध वा संयोग कह्या है जातै नए मिलौ वा मिले ही होहु भिन्न द्रव्यनिका मिलापविषै ऐसै ही कहना संभवै है। ऐसै इनि जीव-निका अर कर्म्मका अनादिसंबंध है। तहां जीव द्रव्य तौ देखने जाननेरूप चैतन्यगुणका धारक है। अर इन्द्रियगम्य न होने योग्य अमूर्त्तीक है । संकोचविस्तारशक्तिकौ लिए असंख्यातप्रदेशी एकद्रव्य है बहुरि कर्म्म है सो चेतनागुणरहित जड़ है अर मूर्त्तीक है अनंत पुद्गल परमाणूनिका पुंज है। तातै एक द्रव्य नाहीं है। ऐसै ए जीव अर कर्म्म हैं सो इनका अनादिसंबंध है तौ भी जीवका कोई प्रदेश कर्म्मरूप न हो है अर कर्म्मका कोइ परमाणु जीवरूप न हो है। अपने अपने लक्षणकौं धरें जुदे जुदे ही रहै है। जैसे सोना रूपाका एक स्कंध होइ तथापि पीतादि गुणनिकौ धरें सोना जुदा रहै है, स्वेतादि गुणनिकौ धरें रूपा जुदा रहै है, तैसैं जुदे जानने। इहां प्रश्न —जो मूर्त्तीक मूर्त्तीकका

तौ बंधान होना बनै अमूर्त्तीक मूर्तीकका बंधान कैसैं बनै। ताका समधान--

जैसैं अव्यक्त इंद्रियगम्य नाहीं ऐसे सूक्ष्मपुद्गल अर व्यक्त इंद्रियगम्य हैं ऐसे स्थूलपुद्गल तिनका बंधान होना मानिए है तैसैं इंद्रियगम्य होने योग्य नाहीं ऐसा अमूर्तीक आत्मा अर इंद्रिय गम्य होने योग्य मूर्तीककर्म्म इनका भी बंधान होना मानना। बहुरि इस बंधानविषै कोऊ किसीकौं करै तौ है नाहीं। यावत् बंधान रहै तावत् साथि रहै बिछुरै नाहीं अर कारणकार्यपना तिनिकै बन्या रहै इतना ही यहां बंधान जानना। सो मूर्तीक अमूर्तीककै ऐसे बंधान होनेविषै किछू विरोध है नाहीं। या प्रकार जैसैं एक जीवकै अनादिकर्म्मसंबंध कह्या तैसै ही जुदा जुदा अनंत जीवनकै जानना। बहुरि सो कर्म्म ज्ञानावरणादि भेदनिकरि आठ प्रकार है तहां च्यारि घातियाकर्म्मनिके निमित्ततैं तौ जीवके स्वभावका घात हो है तहां ज्ञानावरण दर्शनावरणकरि तौ जीवके स्वभाव दर्शन ज्ञान तिनिकी व्यक्तता नाहीं हो है तिनि कर्म्मनिका क्षयोपशमके अनुसारि किंचित् ज्ञान दर्शनकी व्यक्तता रहै है। बहुरि मोहनीयकरि जीवके स्वभाव नाहीं ऐसे मिथ्याश्रद्धान वा क्रोध मान माया लोभादिक कषाय तिनिकी व्यक्तता हो है। बहुरि अंतरायकरि जीवका स्वभाव दीक्षा लेनेकी समर्थतारूप वीर्य ताकी व्यक्तता न हो है ताका क्षयोपशमकै अनुसारि किंचित् शक्ति रहै है ऐसा घातिकर्म्मनिके निमित्ततैं जीवके स्वभावका घात अनादिहीतै भया है ऐसै नाही जो पहलै तौ

स्वभावरूप शुद्ध आत्मा था पीछैं कर्मनिमित्ततैं स्वभाव घातकरि अशुद्ध भया। इहां तर्क,—जो घात नाम तो अभावका है सोजाका पहलै सद्भाव होय ताका अभाव कहना बनै इहां स्वभावका तौ सद्भाव है ही नाहीं घात किसका किया। ताका समाधान—

जीवविषै अनादिहीतै ऐसी शक्ति पाइए है जो कर्म्मका निमित्त न होइ तो केवलज्ञानादि अपने स्वभावरूप प्रवर्त्तैं परंतु अनादिहीतैं कर्म्मका संबंध पाइए है तातैं तिस शक्तिका व्यक्तपना न भया सो शक्तिअपेक्षा स्वभाव है ताका व्यक्त न होने देनेकी अपेक्षा घात किया कहिए है। बहुरि च्यारि अघातिया कर्म्म हैं तिनिके निमित्ततैं इस आत्माकै बाह्य सामग्रीका संबंध बनै है तहां वेदनीयकरि तौ शरीरविषै वा शरीरतैं बाह्य नानाप्रकार सुख दुःखकौं कारण परद्रव्यनिका संयोग जुरै है अर आयुकरि अपनी स्थितिपर्यंत पाया शरीरका संबंध नाहीं छूटि सकै है। अर नामकरि गति जाति शरीरादिक निपजै है। अर गोत्रकरि ऊंचानीचा कुलकी प्राप्ति हो है ऐसैं अघातिकर्म्मनिकरि बाह्य समग्री भेली होय है ताकरि मोहकै उदयका सहकार होतैं जीव सुखी दुखी हो है। अर शरीरादिकनिके संबंधतैं जीवकै अमूर्त्तत्वादि स्वभाव अपने स्वार्थकौं नाहीं करै है। जैसैं कोऊ शरीरकौं पकरै तौ आत्मा भी पकरया जाय। बहुरि यावत् कर्म्मका उदय रहै तावत् बाह्य सामग्री तैसै ही बनी रहै अन्यथा न होय सकै ऐसा इनि अघातिकर्म्मनिका निमित्त जानना। इहां कोऊ प्रश्न करै कि कर्म्म तौ जड़ हैं किछू बलवान नाहीं तिनिकरि

जीवकै स्वभावका घात होना वा बाह्य समाग्रीका मिलना कैसैं संभवै है। ताका समाधान—

जो कर्म्म आप कर्त्ता होय उद्यमकरि जीवके स्वभावकौ घातै बाह्य सामग्रीकौ मिलावै तब तौ कर्मकै चैतन्यपनौ भी चाहिए अर बळवानपनौ भी चाहिए सो तौ है नाहीं सहज ही निमित्त नैमित्तिक संबंध है। जब उन कर्म्मनिका उदयकाल होय तिस कालविषै आप ही आत्मा स्वभावरूप न परिणमै विभावरूप परिणमै वा अन्य द्रव्य है ते तैसैं ही संबंधरूप होय परिणमै। जैसै काहू पुरुषकै सिरपरि मोहनधूलि परी है तिसकरि सो पुरुष बावला भया तहां उस मोहनधूलिकै ज्ञान भी न था अर बावलापना भी न था अर बावलापना तिस मोहनधूलि ही करि भया देखिए है। मोहनधूलिका तौ निमित्त है अर पुरुष आप ही बावला हुवा परिणमै है। ऐसा ही निमित नैमित्तिक बनि रह्या है। बहुरि जैसै सूर्यका उदयका कालविषै चकवा चकवीनिका संयोग होय तहां रात्रिविषै किसीनै दोषबुद्धितै जोरावरीकरि जुदे किए नाहीं। दिवसविषै काहूनै करुणाबुद्धिकरि मिळाए नाहीं सूर्यउदयका निमित्तपाय आप ही मिळै है अर सूर्यास्तका निमित्त पाय आपही बिछुरै है ऐसा ही निमित्तनैमित्तिक बनि रह्या है। तैसै ही कर्म्मका भी निमित्तनैमित्तिकभाव जानना। ऐसै कर्म्मका उदयकरि अवस्था होय है बहुरि त-हां नवीन बंध कैसै होय है सो कहिए है,—

जैसैं सूर्यका प्रकाश है सो मेघपटलतै जितना व्यक्त नाहीं तितनेका तौ तिसकालविषै अभाव है बहुरि तिस मेघपटलका

मंदपनातै जेता प्रकाश प्रगटै है सो तिस सूर्यके स्वभावका अंश है मेघपटलजनित नाहीं है। तैसैं जीवका ज्ञान दर्शन वीर्य स्वभाव है सो ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतरायके निमित्ततै जितने व्यक्त नाहीं तितनेका तौ तिसकालविषैं अभाव है। बहुरि तिन कर्म्मनिका क्षयोपशमतैं जेता ज्ञान दर्शन वीर्य प्रगट है सो तिस जीवके स्वभावका अंश ही है कर्म्मजनित उपाधिरूप भाव नाहीं है। सो ऐसे स्वभावके अंशका अनादितै लगाय कबहूं अभाव न हो है। याहीकारि जीवका जीवत्वपना निश्चय कीजिए है। जो यह देखनहार जाननहार शक्तिकौ धरै वस्तु है सो ही आत्मा है। बहुरि इस स्वभावकरि नवीन कर्म्मका बंध नाहीं है जातै निज स्वभाव ही बंधका कारन होय तौ बंधका छूटना कैसैं होय। बहुरि तिन कर्म्मनिके उदयतै जेता ज्ञान दर्शन वीर्य अभावरूप है ताकरि भी बंध नाहीं है जातै आपहीका अभाव होतै अन्यकौ कारन कैसै होय। तातै ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतरायके निमित्ततै उपजे भाव नवीनकर्म्मबंधके कारन नाहीं। बहुरि मोहनीय कर्म्मकरि जीवकै अयथार्थश्रद्धानरूप तौ मिथ्यात्वभाव हो है वा क्रोध मान माया लोभादिक कषाय हो हैं ते यद्यपि जीवके अस्तित्वमय हैं जीवतै जुदे नाहीं जीव ही इनिका कर्ता है जीवके परिणमनरूप ही ये कार्य है तथापि इनिका होना मोहकर्म्मके निमित्ततैं ही है कर्म्मनिमित्त दूर भए इनिका अभाव ही है तातैं ए जीवके निजस्वभाव नाहीं उपाधिकभाव हैं। बहुरि इनि भावनिकरि नवीनबंध हो है तातै मोहके उदयतै निपजे भाव

बंधके कारन है। बहुरि अघातिकर्म्मनिके उदयतैं बाह्य सामग्री मिलै है तिनिविषै शरीरादिक तौ जीवके प्रदेशनिसौं एक क्षेत्रावगाही होय एकबंधानरूप ही हो है। अर धन कुटुंबादिक आत्मातै भिन्नरूप है सो ए सर्व बंधके कारन नाहीं है जातै परद्रव्य बंधका कारन न होय। इविनिषै आत्माकै ममत्वादिरूप मिथ्यात्वादिभाव हो है सो इसका कारन जानना। बहुरि इतना जानना जो नामकर्म्मके उदयतै शरीर वा वचन वा मन निपजै है तिनिकी चेष्टाके निमित्ततैं आत्माके प्रदेशनिका चंचलपना हो है। ताकरि आत्माकै पुद्गलवर्गणासौं एक बंधान होनेकी शक्ति हो है ताका नाम योग है। ताके निमित्ततै समय समय प्रति कर्म्मरूप होनेयोग्य अनंत परमाणूनिका ग्रहण हो है। तहां अल्प योग होय तौ थोरे परमाणूनिका ग्रहण होय बहुत योग होय तौ घने परमाणूनिका ग्रहण होय। बहुरि एकसमय जे पुद्गलपरमाणू ग्रहे तिनिविषै ज्ञानावरणादि मूलप्रकृति वा तिनिकी उत्तर प्रकृतीनिका जैसै सिद्धांतविषै कह्या है तैसै बवटारा हो है तिस बटवारा माफिक परमाणू तिनि प्रकृतीनिरूप आप ही परिणमै है। विशेष इतना कि योग दोय प्रकार है शुभयोग अशुभयोग। तहां धर्मके अंगनिविषै मनवचनकायकी प्रवृत्ति भए तौ शुभयोग हो है अर अधर्म्म अंगनिविषै तिनिकी प्रवृत्ति भए अशुभयोग हो है। सो शुभयोग होहु वा अशुभयोग होहु सम्यक्त्व पाए विना घातिया कर्मनिका तौ सर्वप्रकृतीनिका निरंतर बंध हुवा ही करै है कोई समय किसीभी प्रकृतिका बंध हुवा विना रहता नाहीं।

इतना विशेष है जो मोहनियकी हास्य शोक युगलविषै रति अरति युगलविषै तीनौ वेदनिविषै एकै काल एक एकही प्रकृतिका बंध हो है। अघातियानिकी प्रकृतिविषै शुभोपयोग होतै सातावेदनीय आदि पुण्यप्रकृतीनिका बंध हो है। अशुभयोग होतैं असाता· वेदनीय आदि पाप प्रकृतीनिका बंध हो है। मिश्रयोग होतै केई पुण्यप्रकृतीनिका केई पापप्रकृतीनिका बंध हो है। ऐसै योगके निमित्ततै कर्मका आगमन हो है। तातै योग है सो आश्रव है। बहुरि याकरि ग्रहे कर्मपरमाणूनिका नाम प्रदेश है तिनिका बंध भया अर तिनिविषै मूल उत्तरप्रकृतीनिका विभाग भया तातै योगनिकरि प्रदेशबंध वा प्रकृतिबंधका होना जानना। बहुरि मोहके उदयतै मिथ्यात्व क्रोधादिक भाव हो है. तिनि सवनिका नाम सामान्यपनै कषाय है। ताकरि तिनि कर्मप्रकातीनिकी स्थिति बंधै है सो जितनी स्थिति बंधै तिसविषै आबाधा काल छोड़ि तहां पीछैं यावत् बंधी स्थितिपूर्ण होय तावत् समय समय तिस प्रकृतिका उदय आया ही करै। सो देव मनुष्य तिर्यचायु विना अन्य सर्व घातिया अघातिया प्रकृतीनिका अल्पकषाय होतै थोरा स्थितिबंध होय बहुत कषाय होतैं घना स्थिति बंध होय। इनि तीन आयूनिका अल्पकषायतै बहुत अर बहुत कषायतै अल्प स्थितिबंध जानना। बहुरि तिस कषायहीकरि तिनि कर्मप्रकृतीनिविषै अनुभागशक्तिका विशेष हो है सो जैसा अनुभाग बंधै तैसा ही उदयकालविषै तिनि प्रकृतीनिका घना वा थोरा फल निपजै है। तहां घाति कर्मनिकी सर्व प्रकृतीनिविषै वा अघाति कर्मनिकी पाप प्रकृतीनिविषै तौ

अल्पकषाय होतै थोरा अनुभाग बंधै है। बहुत कषाय होतैं घना अनुभाग बंधै है। बहुरि पुण्यप्रकृतीनिविषै अल्पकषाय होतै घना अनुभाग बंधै है। बहुत कषाय होतै थोरा अनुभाग बंधै है ऐसै कषायनिकरि कर्मप्रकृतीनिकै स्थिति अनुभागका विशेष भया तातै कषायनिकरि स्थितिबंध अनुभागबंधका होना जानना। इहां जैसे बहुत भी मदिरा है अर ताविषै थोरे कालपर्यंत थोरी उन्मत्तता उपजावनेकी शक्ति है तौ वह मदिरा हीनपनाकौं प्राप्त है। बहुरि थोरी भी मदिरा है ताविषै बहुत कालपर्यंत घनी उन्मत्तता उपजावनेकी शक्ति है तौ वह मदिरा अधिकपनाकौ प्राप्त है तैसै घने भी कर्मप्रकृतीनिके परमाणू है अर तिनिविषै थोरे कालपर्यंत थोरा फल देनेकी शक्ति है तो ते कर्मप्रकृति हीनताकौं प्राप्त है। बहुरि थोरे भी कर्मप्रकृतिनिके परमाणू है अर तिनिविषै बहुत कालपर्यंत बहुत फल देनेकी शक्ति है तौ ते कर्मप्रकृति अधिकपनाकौ प्राप्त हैं तातै योगनिकरि भया प्रकृतिबंध प्रदेशबंध बलवान् नाहीं। कषायनिकरि किया स्थितिबंध अनुभाग-बंध ही बलवान् है तातै मुख्यपनै कषाय ही बंधका कारन जानना। जिनिकौं बंध न करना होय ते कषाय मति करौ।
बहुरि इहां कोऊ प्रश्न करै कि पुद्गलपरमाणू तौ जड़ है उनकै किछू ज्ञान नाहीं कैसे यथायोग्य प्रकृतिरूप होय परिणमै है ताका समाधान—

जैसैं भूखा होतै मुखद्वारकरि ग्रह्या हुवा भोजनरूप पुद्गलपिंड सो मांस शुक्र शोणित आदि धातुरूप परिणमै है। बहुरि तिस

भोजनके परमाणूनिविषै यथायोग्य कोई धातुरूप थोरे कोई धातु-
रूप घने परमाणू हो हैं। बहुरि तिनिविषै कोई परमाणूनिका
संबंध घने काल रहै कोईनिका थोरे काल रहै। बहुरि तिनिपरमा-
णूनिविषै कोई तौ अपने कार्य निपजावनेकी शक्तिकौं बहुत धारै
हैं कोई स्तोकशक्तिकौं धरै हैं। सो ऐसैं होनेविषै कोऊ भोजन
रूप पुद्गलपिंडकै ज्ञान तौ नाहीं है जो मैं ऐसैं परिणमौं अर
और भी कोऊ परिणमावनहारा नाहीं है, ऐसा ही निमित्तनैमित्तिक
भाव बनि रह्या है ताकरि तैसैं ही परिणमन पाइए है। तैसै ही
कषाय होतैं योगद्वारिकरि ग्रह्याहुवा कर्मवर्गणारूप पुद्गलपिंड सो
ज्ञानावरणादि प्रकृतिरूप परिणमै है। बहुरि तिनि कर्मपरमाणूनि-
विषै यथायोग्य कोई प्रकृतिरूप थोरे कोई प्रकृतिरूप घने परमाणू
होय है। बहुरि तिनिविषै कोई परमाणूनिका संबंध घने काल रहै
कोईनिका थोरे काल रहै। बहुरि तिनिपरमाणूनिविषै कोऊ तौ
अपने कार्य निपजावनेकी बहुत शक्ति धरै हैं कोऊ थोरी शक्ति
धरै हैं सो ऐसै होनेविषै कोऊ कर्मवर्गणारूप पुद्गलपिंडकै ज्ञान
तौ नाहीं है जो मै ऐसैं परिणमौं अर और भी कोई परिणमावन-
हारा है नाहीं ऐसा ही निमित्तनैमित्तिकभाव बनि रह्या है ताकरि
तैसैं ही परिणमन पाइए है। सो ऐसैं तौ लोकविषै निमित्त
नैमित्तिक घने ही बनि रहे हैं। जैसैं मंत्रनिमित्तकरि जलादिकविषै
रोगादिक दूरिकरनेकी शक्ति हो है वा कांकरी आदिविषै सर्पादि
रोकनेकी शक्ति हो है तैसैं ही जीवभावके निमित्तकरि पुद्गलपरमा-
णूनिविषै ज्ञानावरणादिरूप शक्ति हो है। इहां विचारकरि अपने

उद्यमतैं कार्य करै तौ ज्ञान चाहिए अर तैसा निमित्त बने स्वयमेव तैसै परिणमन होय तौ तहां ज्ञानका किछू प्रयोजन नाहीं। या प्रकार नवीनबंध होनेका विधान जानना। अब जे परमाणू कर्मरूप परिणमैं तिनका यावत् उदयकाल न आवै तावत् जीवके प्रदेशनिसौं एक क्षेत्रावगाहरूप बंधान रहै है। तहां जीवभावके निमित्तकरि केई प्रकृतिनिकी अवस्थाका पलटना भी होय जाय है। तहां केई अन्य प्रकृतिनिके परमाणू थे ते संक्रमणरूप होय अन्य प्रकृतीके परमाणू हो जाएँ। वहुरि केई प्रकृतीनिका स्थिति वा अनुभाग वहुत था सो अपकर्षण होयकरि थोरा हो जाय। बहुरि केई प्रकृतीनिका स्थिनि वा अनुभाग थोरा था सो उत्कर्षण होयकरि वहुत हो जाय सो ऐसै पूर्वे बंधे परमाणूनिकी भी जीव-भावका निमित्त पाय अवस्था पलटै है अर निमित्त न बनै तौ न पलटै जैसेंके तैसै रहै। ऐसै सत्तारूप कर्म रहै हैं। बहुरि जब कर्मप्रकृतीनिका उदयकाल आवै तब स्वयमेव तिनि प्रकृतीनिका अनुभागके अनुसारि कार्य बनै। कर्म तिनिका कार्यकौ निपजावता नाहीं। याका उदयकाल आए वह कार्य बनै है। इतना ही निमित्तनैमित्तिक संबंध जानना। बहुरि जिस समय फल निपज्या तिसका अनंतर समयविषै तिनि कर्मरूप पुद्गलनिकै अनुभाग शक्तिका अभाव होनेतैं कर्मत्वपनाका अभाव हो है। ते पुद्गल अन्यपर्यायरूप परिणमै है। याका नाम सविपाकनिर्ज्जरा है। ऐसै समय समय प्रति उदय होय कर्म खिरै है कर्मत्वपना नास्ति भए पीछै ते परिमाणू तिस ही स्कंधविषै रहौ वा जुदे होइ जाहु किछू

प्रयोजन नाहीं । इहां इतना जानना,--इस जीवकै समय समय प्रति अनंत परमाणू बंधै हैं तहां एकसमयविषै बंधे परमाणू ते आबाधाकाल छोड़ि अपनी स्थितिके जेते समय होंहिं तिनिविषै क्रमतै उदय आवै है। बहुरि बहुतसमयविषै बंधे परमाणू जे एकसमयविषै उदय आवने योग्य है ते एकठे होय उदय आवै है। तिनि सब परमाणूनिका अनुभाग मिलै जेता अनुभाग होय तितना फल तिस कालविषै निपजै है। बहुरि अनेक समयनिविषै बंधे परमाणू बंधसमयतै लगाय उदयसमयपर्यंत कर्मरूप अस्तित्वकौं धरें जीवसौं संबंधरूप रहै। ऐसै कर्मनिकी बंध उदय सत्तारूप अवस्था जाननी। तहां समय समयप्रति एक समयप्रबद्ध मात्र परमाणू बंधै हैं एक समयप्रबद्ध मात्र निर्जरै है। ड्योढगुणहानिकरि गुणित समय प्रबद्ध मात्र सदा काल सत्ता रहै है। सो इनि सबनिका विशेष आगैं कर्मअधिकारविषै लिखैंगे तहां जानना। बहुरि ऐसे यह कर्म है सो परमाणुरूप अनंत पुद्गलद्रव्यनिकरि निपजाया कार्य है तातैं याका नाम द्रव्यकर्म है। बहुरि मोहके निमित्ततै मिथ्यात्व-क्रोधादिरूप जीवका परिणाम हो है सो अशुद्ध भावकारि निपजाया कार्य है तातै याका नाम भावकर्म है। सो द्रव्यकर्मके निमित्ततै भावकर्म होय अर भावकर्मके निमित्ततैं द्रव्यकर्मका बंध होय। बहुरि द्रव्यकर्मतै भावकर्म भावकर्मतै द्रव्यकर्म ऐसै ही परस्पर कारणकार्यभावकरि संसारचक्रविषैं परिभ्रमण हो हैं इतना विशेष जानना—तीव्रबंध होनेतैं वा संक्रमणादि होनेतै वा एक काल-विषै बंध्या अनेककालविषै वा अनेककालविषै बंधे एककालविषै

उदय आवनेतैं काहू कालविषै तीव्रउदय आवै तब तीव्रकषाय होय तब तीव्र ही नवीनबंध होय अर काहूकालविषै मंद उदय आवै तब मंदकषाय होय तब मंद ही नवीनबंध होय। बहुरि तिनि तीव्रमंदकषायनिहीकै अनुसारि पूर्वबंधे कर्मनिका भी संक्रमणादिक होय तौ होय। याप्रकार अनादितै लगाय धाराप्रवाहरूप द्रव्यकर्म वा भावकर्मकी प्रवृत्ति जाननी बहुरि नामकर्मके उदयतै शरीर हो है सो द्रव्यकर्मवत् किंचित् सुख दुःखकौ कारण है। तातै शरीरकौ नोकर्म कहिए है। इहां नो शब्द ईषत्वाचक जानना। सो शरीर पुद्गलपरमाणूनिका पिंड है अर द्रव्यइंद्रिय वा द्रव्यमन अर श्वासोश्वास वचन ए भी शरीरहीके अंग हैं सो ए भी पुद्गल-परमाणूनिके पिंड जानने। सो ऐसैं शरीरकै अर द्रव्यकर्मसंबंध--सहित जीवकै एक क्षेत्रावगाहरूप बंधान हो है। जो शरीरका जन्म समयतै लगाय जेती आयकी स्थिति होय तितने काल पर्यंत शरीरका संबंध रहै है। बहुरि आयु पूरण भए मरण हो है। तब तिस शरीरका संबंध छूटै है। शरीर आत्मा जुदे जुदे हो जाय है- बहुरि ताके अनंतर समयविषै वा दूसरै तीसरै चौथै समय जीव कर्मउदयके निमित्ततै नवीन शरीर धारै है तहां भी अपने आयु-पर्यंत तैसै ही संबंध रहै है। बहुरि मरण हो है तब तिससौं संबंध छूटै है। ऐसै ही पूर्व शरीरका छोड़ना नवीनशरीरका ग्रहण करना अनुक्रमतै हुवा करै है। बहुरि यह आत्मा यद्यपि असंख्यातप्रदेशी है तथापि संकोचविस्तारशक्तितै शरीरप्रमाण ही रहै है, विशेष इतना,- समुद्घात होतै शरीरतै बाह्य भी आत्माके प्रदेश फैलै

हैं। बहुरि अंतराल समयविषै पूर्वै शरीर छोड़या था तिस प्रमाण रहै हैं। बहुरि इस शरीरके अंगभूत द्रव्य इंद्रिय मन तिनिकैं सहायतै जीवकै जानपनाकी प्रवृत्ति हो है। बहुरि शरीरकी अवस्थाकै अनुसारि मोहके उदयतै सुखी दुखी हो है। कबहू तौ जीवकी इच्छाकै अनुसार शरीर प्रवर्तै है कबहू शरीरकी अवस्थाकै अनुसार जीव प्रवर्तै है कबहू जीव अन्यथा इच्छारूप प्रवर्तै है पुद्गल अन्यथा अवस्थारूप प्रवर्तै है ऐसैं इस नोकर्मकी प्रवृत्ति जाननी। तहां अनादितैं लगाय प्रथम तौ इस जीवकै नित्यनिगोदरूप शरीरका संबंध पाइए है। तहां नित्यनिगोद-शरीरकौ धरि आयु पूर्ण भए मरि बहुरि नित्यनिगोदशरीरहीकौं धारै है। बहुरि आयु पूर्ण करि मरि नित्यनिगोदशरीरहीकौ धारै है। याही प्रकार अनंतानंत प्रमाण लिए जीवराशि हैं सो अनादितै तहां ही जन्ममरण किया करै हैं। बहुरि तहांतैं छै महिना अर आठ समयविषै छसै आठ जीव निकसै है ते निकसि अन्य पर्यायनिकौं धारै हैं। सो पृथ्वी जल अग्नि पवन प्रत्येकवनस्पतीरूप एकेंद्रिय पर्यायनिविषै वा वेंद्रिय तेइंद्रिय चौइंद्रियरूप पर्यायनिविषै वा नरक तिर्यंच मनुष्य देवरूप पंचें-द्रिय पर्यायनिविषै भ्रमण करै हैं। बहुरि तहां कितेक काल भ्रमण करि बहुरि निगोदपर्यायकौ पावै सो वाका नाम इतरनिगोद है। बहुरि तहां कितेक काल रहै तहांतैं निकसि अन्य पर्याय-निविषै भ्रमण करै है। तहां परिभ्रमण करनेका उत्कृष्ट काल पृथ्वी आदि स्थावरनिविषै असंख्यात कल्पमात्र है। बहुरि द्वींद्रियादि

पंचेंद्रियपर्यंत त्रसनिविषैं साधिक दोयहजार सागर है । अर इतरनिगोदविषै अढाई पुद्गलपरिवर्तनमात्र है सो यह अनंतकाल है। बहुरि इतरनिगोदतैं निकसि कोई स्थावरपर्याय पाय बहुरि निगोद जाय ऐसे एकेंद्रियपर्यायनिविषैं उत्कृष्ट परिभ्रमण काल असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। बहुरि जघन्य सर्वत्र एक अंतर्मुहूर्तकाल है। ऐसे घना तौ एकेंद्रियपर्यायनिका ही धरना है। अन्य पर्याय पावना काकतालीय न्यायवत् जानना। याप्रकार इस जीवकै अनादिहीतैं कर्मबंधनरूप रोग भया है।

इति कर्मबंधनिदानवर्णनम्।

अब इस कर्मबंधनरूप रोगके निमित्ततैं जीवकी कैसी अवस्था होय रही है सो कहिए हैं। प्रथम इस जीवका स्वभाव चैतन्य है सो सबनिका सामान्यविशेषस्वरूपका प्रकाशनहारा है। जो उनका स्वरूप होय सो आपकौं प्रतिभासै है। तिसहीका नाम चैतन्य है। तहां सामान्यस्वरूप प्रतिभासनेका नाम दर्शन है। विशेष स्वरूप प्रतिभासनेका नाम ज्ञान है। सो ऐसे स्वभावकरि त्रिकालवर्ती सर्वगुणपर्यायसहित सर्व पदार्थनिकौं प्रत्यक्ष युगपत् विना सहाय देखै जानै ऐसी आत्माविषै शक्ति सदा काल है परंतु अनादितै ज्ञानावरण दर्शनावरणका संबंध है ताके निमित्ततै इस शक्तिका व्यक्तपना होता नाहीं तिनि कर्मनिका क्षयोपशमतै किंचित् मतिज्ञान वा श्रुतज्ञान पाइए है। अर कदाचित् अवधिज्ञान भी पाइए है। बहुरि अचक्षुदर्शन पाइए है अर कदाचित् चक्षुदर्शन वा अवधिदर्शन भी पाइए है। सो इनिकी भी

प्रवृत्ति कैसैं है सो दिखाइए है। प्रथम तौ मतिज्ञान है सो शरीरके अंगभूत जे जीभ नासिका नेत्र कान स्पर्शन ए द्रव्यइंद्रिय अर हृदयस्थानविषै आठ पाँखडीका फूल्या कमलकै आकार द्रव्य-मन तिनिके सहायहीतै जानै है। जैसैं जाकी दृष्टिमंद होय सो अपने नेत्रकरि ही देखै है परंतु चसमा दीए ही देखै विना चसमैके देखि सकै नाहीं। तैसैं आत्माका ज्ञान मंद है सो अपने ज्ञानहीकरि जानै है परंतु द्रव्यइंद्रिय वा मनका संबंध भए ही जानै तिनि बिना जानि सकै नाहीं। बहुरि जैसै नेत्र तौ जैसाका तैसा है अर चसमाविषै किछू दोष भया होय तौ देखि सकै नाहीं अथवा थोरा दीसै अथवा औरका और दीसै तैसै अपना क्षयोपशम तौ जैसाका तैसा है अर द्रव्यइंद्रिय मनके परमाणु अन्यथा परिणमे होंय तौ जानि सकै नाहीं अथवा थोरा जानै अथवा औरका और जानै। जातैं द्रव्यइंद्रिय वा मनरूप परिमाणूनिके परिणमनकै अनुसार ज्ञानका परिणमण होय है। ताका उदाहरण--जैसै मनुष्यदिककै बाळ वृद्ध अवस्थाविषै द्रव्यइंद्रिय वा मन शिथिल होय तब जानपना भी शिथिल होय। बहुरि जैसै शीत वायु आदिके निमित्ततै स्पर्शनादि इंद्रियनिके वा मनके परमाणु अन्यथा होंय तब जानना न होय वा थोरा जानना होय वा अन्यथा जानना होय। बहुरि इस ज्ञानकै अर वाह्य द्रव्यनिकै भी निमित्तनैमित्तिक संबंध पाइए है ताका उदाहरण-- जैसै नेत्रइंद्रीकै अंधकारके परमाणु वा फूला आदिकके परमाणु पाषाणादिके परमाणु आदि आड़े आय जाएँ तौ देखि न सकै

वहुरि लालकाच आड़ा आवै तौ सब लाल ही दीसै हरितकाच आड़ा आवै तौ हरित दीखै ऐसें अन्यथा जानना होय । बहुरि दूरिवीणि चसमा इत्यादि आड़ा आवै तौ वहुत दीखने लगि जाय प्रकाश जल काच इत्यादिकके परमाणु आड़े आवै तौ भी जैसाका तैसा दीखै ऐसै अन्य इंद्रिय वा मनकै भी यथासंभव-निमित्त नैमित्तिकपणा जानना । बहुरि मंत्रादिक प्रयोगतैं वा मदिरा-पानादिकतैं वा भूतादिकके निमित्ततैं न जानना वा थोरा जानना वा अन्यथा जानना हो है । ऐसैं यह ज्ञान बाह्यद्रव्यकै भी आधीन जानना । बहुरि इस ज्ञानकरि जो जानना हो है सो अस्पष्ट जान-ना हो है । दूरितै कैसा ही जानै समीपतैं कैसा ही जानै तत्काल कै-सा ही जानै जानतै वहुत बार होजाय तब कैसा ही जानै काहूकौ संशयलिए जानै काहूकौं अन्यथा जानै काहूकौं किंचित् जानै इत्या-दि रूपकरि निर्मल जानना होय सकै नाहीं । ऐसै यह मतिज्ञान प-राधीनतालिए इंद्रियमनद्वारकरि प्रवर्तै है । तहां इंद्रियनिकरि तौ जि-तने क्षेत्रका विषय होय तितने क्षेत्रविषै जे वर्तमान स्थूल अपने जान ने योग्य पुद्गलस्कंध होंय तिनहीकौं जानै । तिनिविषै जुदेजुदे इंद्रिय-निकरि जुदे जुदे कालविषै कोई स्कधके स्पर्शादिकका जानना हो है बहुरि मनकरि अपने जानने योग्य किंचिन्मात्र त्रिकालसंबंधी दूरिक्षेत्रवर्ती वा समीपक्षेत्रवर्ती रूपी अरूपी द्रव्य वा पर्याय तिनिकौ अत्यंत अस्पष्टपनै जानै है सो भी इंद्रियनिकरि जाका ज्ञान ना भया होय वा अनुमानादिक जाका किया होय तिसहीकौं जानि सकै है । बहुरि कदाचित् अपनी कल्पनाहीकरि असतकौं

जानै है। जैसैं सुपनेविषै वा जागतैं भी जे कदाचित् कहीं न पाइए ऐसे आकारादिक चिंतवै वा जैसै नाहीं तैसै मानै। ऐसैं मनकरि जानना होय। सो यह इंद्रिय वा मनद्वारकरि जो ज्ञान होय हैं तांका नाम मतिज्ञान है। तहां पृथ्वी जल अग्नि पवन वनस्पतीरूप एकेंद्रियनिकै स्पर्शहीका ज्ञान है। लट शंख आदि वेइंद्रिय जीवनिकै स्पर्श रसका ज्ञान है। कीड़ी मकोड़ा आदि तेइंद्रिय जीवनिकै स्पर्श रस गंधका ज्ञान है। भ्रमर मक्षिका पतंगादिक चौइंद्रिय जीवनिकै स्पर्श रस गंध वर्णका ज्ञान है। मच्छ गऊ कवूतर इत्यादिक तिर्यंच अर मनुष्य देव नारकी यह पंचेंद्रिय है तिनिकै स्पर्श रस गंध वर्ण शब्दनिका ज्ञान है। बहुरि तिर्यंचनिविषै केई संज्ञी है केई असंज्ञी है। तहां संज्ञीनिकै मनजनित ज्ञान है असंज्ञीनिकै नाहीं है। बहुरि मनुष्य देव नारकी संज्ञी है तिनि सवनिकै मनजनित ज्ञान पाईए है ऐसैं मतिज्ञानकी प्रवृत्ति जाननी। बहुरि मतिज्ञानकरि जिस अर्थको जान्या होय ताके संबंधतै अन्य अर्थकौ जाकरि जानिये सो श्रुतज्ञान है सो दोय प्रकार है। अक्षरात्मक १ अनक्षरात्मक २। तहां जैसै 'घट, ए दोय अक्षर सुने वा देखे सो तौ मतिज्ञान भया तिनिके संबंधतैं घटपदार्थका जानना भया सो श्रुतज्ञान भया। ऐसै अन्य भी जानना सो यह तौ अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है। बहुरि जैसै स्पर्शकरि शीतका जानना भया सो तौ मतिज्ञान है ताके संबंधतैं यह हितकारी नाहीं यातैं भागि जाना इत्यादिरूप ज्ञान भया सो श्रुतज्ञान है। ऐसै अन्य भी जानना। यह अनक्षरात्मक

श्रुतज्ञान है। तहां एकेंद्रियादिक असंज्ञी जीवनिकै तौ अनक्षरात्मक ही श्रुतज्ञान है अवशेष संज्ञी पंचेंद्रिकै दोऊ है। सो यह श्रुतज्ञान है, सो अनेकप्रकार पराधीन जो मतिज्ञान ताकै भी आधीन है। वा अन्य अनेक कारणनिकै आधीन है तातैं महा पराधीन जानना। वहुरि अपनी मर्यादाकै अनुसार क्षेत्रकालका प्रमाण लिए रूपी पदार्थनिकौं स्पष्टपनै जाकरि जानिये सो अवधिज्ञान है सो यह देव नारकीनिकै तौ सर्वकै पाइए है। अर संज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यंच अर मनुष्यनिकै भी कोईकै पाइए है। असंज्ञीपर्यंत जीवनिकै यह होता ही नाहीं सो यह भी शरीरादिक पुद्गलनिकै आधीन है। वहुरि अवधिके तीन भेद है देशावधि १ परमावधि २ सर्वावधि ३। सो इनिविषै थोरा क्षेत्रकालकी मर्यादा-लिए किंचिन्मात्र रूपी पदार्थकौ जाननहारा देशावधि है सो कोई जीवकै होय है। वहुरि परमावधि सर्वावधि अर मनःपर्यय ए ज्ञान मोक्षमार्गविषै प्रगटै हैं। केवलज्ञान मोक्षमार्गस्वरूप है। तातैं इस अनादिसंसार अवस्थाविषै इनिका सद्भाव ही नाहीं है ऐसैं ज्ञानकी प्रवृत्ति पाइए है। बहुरि इंद्रिय वा मनके स्पर्शादिकविषय तिनिका संबंध होतै प्रथमकालविषै मतिज्ञानकै पहलै जो सत्तामात्र अवलोकनेरूप प्रतिभास हो है ताका नाम चक्षुदर्शन वा अचक्षुदर्शन तहां नेत्र इंद्रियकरि दर्शन होय ताका नाम तौ चक्षुदर्शन है सो तौ चौइंद्रिय पंचेंद्रिय जीवनिहीकै हो है। वहुरि स्पर्शन रसन घ्राण श्रोत्र इन च्यारि इंद्रिय अर मनकरि दर्शन होय ताका नाम अचक्षुदर्शन है सो यथायोग्य एकेंद्रियादि जीवनिकै हो है बहुरि अवधिके विषय-

निका संबंध होतैं अवधिज्ञानके पहलै जो सत्तामात्र अवलोकनेरूप प्रतिभास होय ताका नाम अवधिदर्शन है सो जिनिकै अवधिज्ञान संभवै तिनिहीकै यह हो है। जो यह चक्षु अचक्षु अवधिदर्शन है सो मतिज्ञान अवधिज्ञानवत् पराधीन जानना। बहुरि केवलदर्शन मोक्ष स्वरूप है ताका यहां सद्भाव ही नाहीं। ऐसैं दर्शनका सद्भाव पाइए है। या प्रकार ज्ञान दर्शनका सद्भाव ज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षयोपशमके अनुसार हो है। जब क्षयोपशम थोरा हो है तब ज्ञानदर्शनकी शक्ति भी थोरी हो है। जब बहुत होय तब बहुत हो है। बहुरि क्षयोपशमतैं शक्ति तौ ऐसी वनी रहै अर परिण· मनकरि एक जीवकै एक कालविषै एक विषयहीका देखना वा जानना हो है। इस परिणमनहीका नाम उपयोग है। तहां एक जीवकै एक कालविषै तौ ज्ञानोपयोग हो है वा दर्शनोपयोग हो है बहुरि एक उपयोगकी भी एक ही भेदकी प्रवृत्ति हो है जैसै मति-ज्ञान होय तब अन्यज्ञान न होय। बहुरि एक भेदविषै भी एक विषयविषै ही प्रवृत्ति हो है। जैसैं स्पर्शकौं जानै तब रसादिककौं न जानै बहुरि एक विषयविषै भी ताके कोऊ एक अंगहीविषै प्रवृत्ति हो है जैसै उष्णस्पर्शकौं जानै तब रूक्षादिककौ न जानै ऐसैं एक जीवकै एक कालविषै एक ज्ञेय वा दृश्यविषै ज्ञान व दर्शनका परिणमन जानना। सो ऐसै ही देखिए है। जब सुनने-विषै उपयोग लग्या होय तब नेत्रके समीप तिष्ठता भी पदार्थ न दीसै ऐसैं ही अन्य प्रवृत्ति देखिए है। बहुरि परिणमनविषै शीघ्रता बहुत है ताकरि काहू कालविषै ऐसा मानिए है युगपत् भी

अनेक विषयनिका जानना वा देखना हो है सो युगपत् होता नाहीं क्रमहीकरि हो है संस्कारवशतै तिनिका साधन रहै है। जैसै कागलेकै नेत्रकै दोय गोल है फूलरी एक है सो फिरै शीघ्र है ताकरि दोऊ गोलकनिका साधन करै है। तैसै ही इस जीवकै द्वार तौ अनेक हैं अर उपयोग एक है सो फिरै शीघ्र है ताकरि सर्व द्वारनिका साधन रहै है। इहां प्रश्न—जो एक कालविषै एक विषयका जानना वा देखना हो है तौ इतना ही क्षयोपशम भया कहौ वहुत काहेकौं कहौ। बहुरि तुम कहो हौ क्षयोपशमतै शक्ति हो है तौ शक्ति तौ आत्माविषै केवलज्ञानदर्शनकी भी पाइए है ताका समाधान—

जैसै काहू पुरुषकै बहुत ग्रामनिविषै गमनकरनेकी शक्ति है। बहुरि ताकौं काहूनै रोक्या अर यह कह्या पांच ग्रामनिविषै जावो परंतु एक दिनविषै एक ही ग्रामकौं जावो। तहां उस पुरुषकै बहुत ग्राम जानेकी शक्ति तौ द्रव्य अपेक्षा पाइए है अन्य काल-विषै सामर्थ्य होय वर्तमान सामर्थ्यरूप नाहीं है परंतु वर्तमान पांच ग्रामनितै अधिक ग्रामनिविषै गमन करि सकै नाहीं। बहुरि पांच ग्रामनिविषै जानेकी पर्यायअपेक्षा वर्तमान सामर्थ्यरूप शक्ति है तातैं इनिविषै गमन करि सकै है। बहुरि व्य ता एक दिनविषै एक ग्रामकौं गमन करनेहीकी पाइए है तैसै इस जीवकै सर्वकौं देखनेकी जाननेकी शक्ति है। बहुरि याकौ कर्मनै रोक्या अर इतना क्षयोपशम भया कि स्पर्शादिक विषयनिकौ जानो वा देखो परंतु एक कालविषै एकहीकौ जानौ वा देखौ। तहां

इस जीवकै सर्वके देखने जाननेकी शक्ति तौ द्रव्यअपेक्षा पाइए है अन्यकालविषै सामर्थ्य होय परंतु वर्तमान सामर्थ्यरूप नाहीं जातै अपनेयोग्य विषयनितै अधिक विषयनिकौं देखि जानि सकै नाहीं। बहुरि अपने योग्य विषयनिकौ देखने जाननेकी पर्याय अपेक्षा वर्तमान सामर्थ्यरूप शक्ति है तातै इनकौ देखि जानि सकै है। बहुरि व्यक्तता एक कालविषै एकहीकौ देखनेकी वा जाननेकी पाइए है। बहुरि इहां प्रश्न—जो ऐसै तौं जान्या परंतु क्षयोपशम तौ पाइए अर बाह्य इंद्रियादिकका अन्यथा निमित्त भए देखना जानना न होय वा थोरा होय वा अन्यथा होय सो ऐसैं होतैं कर्महीका निमित्त तौ न रह्या ? ताका समाधान—

जैसै रोकनहारानैं यह कह्या जो पांच ग्रामनिविषै एक ग्रामकौं एक दिनविषै जावो परंतु इन किंकरनिकौ साथ लेकै जावो तहां वे किंकर अन्यथा परिणमै तौ जाना न होय वा थोरा जाना होय वा अन्यथा जाना होय तैसै कर्मका ऐसा ही क्षयोपशम भया है जो इतने विषयनिविषै एक विषयकौ एक कालविषै देखौ वा जानौ परंतु इतने बाह्य द्रव्यनिका निमित्त भए देखौ जानौ। तहां वे बाह्य द्रव्य अन्यथा परिणमैं तौ देखना जानना न होय वा थोरा होय वा अन्यथा होय ऐसैं यह कर्मके क्षयोपशमके विशेष है तातै कर्महीका निमित्त जानना। जैसै काहूके अंधकारके परमाणु आडे आए देखना न होय। घूघू मार्जारादिकनिकै तिनिकौं आडे आए भी देखना होय सो ऐसा यह क्षयोपशमहीका विशेष है। जैसै जैसैं क्षयोपशम होय तैसै तैसैं ही देखना जानना होय। ऐसैं

इस जीवकै क्षयोपशमज्ञानकी प्रवृत्ति पाइए है। बहुरि मोक्षमार्ग-विषै अवधि मनःपर्यय हो है सो भी क्षयोपशमज्ञान ही है तिनिकी भी ऐसै ही एककालविषै एककौ प्रतिभासना वा परद्रव्यका आधीनपना जानना। बहुरि विशेष है सो विशेष जानना। या प्रकार ज्ञानावरण दर्शनावरणका उदयके निमित्ततै बहुत ज्ञान दर्शनके अंशनिका तौ अभाव है अर तिनके क्षयोपशमतै थोरे अंशनिका सद्भाव पाइए है। बहुरि इस जीवकै मोहके उदयतै मिथ्यात्व वा कषायभाव हो है तहां दर्शनमोहके उदयतै तौ मिथ्यात्वभाव हो है ताकरि यह जीव अन्यथा प्रतीतिरूप अतत्त्व-श्रद्धान करै है। जैसै है तैसै तौ नाहीं मानै है अर जैसै नाहीं है तैसै मानै है। अमूर्त्तीक प्रदेशनिका पुंज प्रसिद्ध ज्ञानादिगुणनिका धारी अनादिनिधन वस्तु आप है अर मूर्त्तीक पुद्गलद्रव्यनिका पिंड प्रसिद्ध ज्ञानादिकनिकरि रहित जिनका नवीनसंयोग भया ऐसैं शरीरादिक पुद्गल पर है इनिका संयोगरूप नानाप्रकार मनुष्य तिर्यंचादि पर्याय हो है, तिन पर्यायनिविषै अहंबुद्धि धारै है, स्वपरका भेद नाहीं करि सकै है जो पर्याय पावै तिसहीकौ आप मानै है, । बहुरि तिस पर्यायविषै ज्ञानादिक है ते तौ आपके गुण है अर रागादिक है ते आपके कर्मनिमित्ततै उपाधिक भाव भए है अर वर्णादिक है ते आपके गुण नाहीं है शरीरादिक पुद्गलके गुण है अर शरीरादिकविषै वर्णादिकनिकी वा परमाणूनिकी नानाप्रकार पलटनि हो है सो पुद्गलकी अवस्था है सो इन सबनिहीकौ आपनौ स्वरूप जानै है स्वभाव परभावका विवेक नाहीं होय सकै है। बहुरि मनु-

ष्यादिक पर्यायनिविषै कुटुंब धनादिकका संबंध हो है ते प्रत्यक्ष आपतै भिन्न है अर ते अपनैं आधीन होय नाहीं परणमै है तथापि तिनिविषै ममकार करै है ए मेरे है वै काहू प्रकार भी अपने होते नाहीं यह ही अपनी मानितै अपने मानै है। बहुरि मनुष्यादि पर्यायनिविषै कदाचित् देवादिकका तत्त्वनिका अन्यथा स्वरूप जो कल्पित किया ताकी तौ प्रतीति करै है अर यथार्थ-स्वरूप जैसै है तैसै प्रतीति न करै है। ऐसै दर्शनमोहके उदय-करि जीवकै अतत्त्वश्रद्धानरूप मिथ्यात्वभाव हो है - जहां तीव्र उदय होय है तहां सत्यश्रद्धानसे घना विपरीत श्रद्धान होय है जब मन्द उदय होय है, तब सत्यश्रद्धानतै थोरा विपरीत-श्रद्धान हो है। बहुरि चारित्रमोहके उदयतैं इस जीवकै कषा-यभाव हो है तब यह देखता जानतासंता परपदार्थनिविषै इष्ट अनिष्टपनौ मानि क्रोधादिक करै है। तहां क्रोधका उदय होतैं पदार्थनिविषै अनिष्टपनौ वा ताका बुरा होना चाहै कोऊ मंदिरादि अचेतन पदार्थ बुरा लागै तब फोरना तोरना इत्यादि रूपकरि वाका बुरा चाहै। बहुरि शत्रुआदि अचेतन सचेतन पदार्थ बुरा लागै तब वाकौ बध बंधादिकरि वा मारनेकरि दुःख उपजाय ताका बुरा चाहै। बहुरि आप वा अन्य सचेतन अचेतन पदार्थ कोइ प्रकार परिणए आपकौ सो परिणमन बुरा लागै तब अन्यथा परिणमावनेकरि तिस परिणमनका बुरा चाहै याप्रकार क्रोधकरि बुरा चाहनेकी इच्छा तौ होय बुरा होना भवितव्य आधीन है। बहुरि मानके उदय होतै पदार्थविषै अनिष्टपनौं मानि ताकौ

नीचा किया चाहै आप ऊंचा भया चाहै मल धूलिआदि अचेतन पदार्थनिविषै घृणा वा निरादरादिककर तिनिकी हीनता आपकी उच्चता चाहै वहुरि पुरुषादिक सचेतन पदार्थनिकौ नमावना अपने आधीन करना इत्यादि रूपकरि तिनिकी हीनता आपकी उच्चता चाहै । वहुरि आप लोकविषै जैसै ऊंचा दीसै तैसै श्रृंगारादि करना वा धन खरचना इत्यादि रूपकरि औरनिकौं हीन दिखाय आप ऊचा होना चाहै । वहुरि अन्य कोई आपतैं ऊंचा कार्य करै ताका कोई उपायकरि नीचा दिखावै अर आप नीचा कार्य करै ताकौ ऊंचा दिखावै या प्रकार मानकरि अपनी महंतताकी इच्छा तौ होय महंतता होनी भवितव्य आधीन है । वहुरि मायाका उदय होतैं कोइ पदार्थकौ इष्ट मानि नानाप्रकार छलनिकरि ताकी सिद्धि किया चाहै रत्न सुवर्णादिक अचेतन पदार्थनिकी वा स्त्री दासी दासादि सचेतन पदार्थनिकी सिद्धिके अर्थि अनेक छल करै ठिगनेके अर्थि अपनी अनेक अवस्था करै वा अन्य अचेतन सचेतन पदार्थनिकी अवस्था पलटावै इत्यादिरूप छलकरि अपना अभिप्राय सिद्ध किया चाहै या प्रकार मायाकरि इष्टसिद्धिके अर्थि छल तौ करै अर इष्टसिद्धि होना भवितव्य आधीन है वहुरि लोभका उदय होतै पदार्थनिकौ इष्ट मानि तिनकी प्राप्ति चाहै वस्त्राभरण धनधान्यादि अचेतन पदार्थनिकी तृष्णा होय वहुरि स्त्री पुत्रादि सचेतन पदार्थनिकी तृष्णा होय, वहुरि आपकै वा अन्य सचेतन अचेतन पदार्थकै कोईपरिणमन होना इष्ट मानि तिनिकौ तिस परिणमनरूप परिणमाया चाहै याप्रकार लोभकरि

इष्टप्राप्तिकी इच्छा तौ होय अर इष्टप्राप्ति होनी भवितव्य आधीन है। ऐसैं क्रोधादिकका उदयकरि आत्मा परिणमै है तहां एकएक कषाय च्यार च्यार प्रकार हैं अनंतानुबंधी १ अप्रत्याख्यानावरण २ प्रत्याख्यानावरण ३ संज्वलन ४ तहां जिनका उदयतैं आत्माकै सम्यक्त्व न होय स्वरूपाचरण चारित्र न होय सकै ते अनंतानुबंधीकषाय है। जिनिका उदय होतैं देशचारित्र न होय तातैं किंचित् त्याग भी न होय सकै ते अप्रत्याख्यानावरण कषाय हैं। बहुरि जिनिका उदय होतै सकलचारित्र न होय तातैं सर्वका त्याग न होय सकै ते प्रत्याख्यानावरण कषाय है। बहुरि जिनिका उदय होतैं सकलचारित्रकौं दोष ऊपज्या करै तातैं यथाख्यातचारित्र न होय सकै ते संज्वलन कषाय हैं। सो अनादि संसारअवस्थाविषै इनि च्यारयूं ही कषायनिका निरंतर उदय पाइए है। परम कृष्णलेश्यारूप तीव्रकषाय होय तहां भी अर शुक्ललेश्यारूप मंद कषाय होय तहां भी निरंतर च्यारयौंहीका उदय रहै है। जातै तीव्रमंदकी अपेक्षा अनंतानुबंधी भेदआदि भेद नाहीं है सम्यक्त्वादि घातनेकी अपेक्षा ए भेद हैं इनिकी प्रकृतिनिका तीव्र अनुभाग उदय होतैं तीव्र क्रोधादिक हो हैं मंद अनुभाग उदय होतैं मंद उदय हो है। बहुरि मोक्षमार्ग भए इनि च्यारौंविषै तीन दोय एकका उदय हो है पीछै च्यारयौंका अभाव हो है बहुरि क्रोधादि च्यारयौं कषायनिविषै एकैकाल एकहीका उदय हो है। इनि कषायनिकै परस्पर कारणकार्यपनौ है। क्रोधकरि मानादिक हो जाय मानकरि क्रोधादिक हो जाय तातै काहूकाल भिन्नता

भासै काहूकाल न भासै है ऐस कषायरूप परिणमन जानना बहुरि चारित्रमोहहीके उदयतै नोकषाय होय है तहां हास्यका उदयकरि कहीं इष्टपनौ मानि प्रफुल्लित हो है हर्ष मानै है बहुरि रतिका उदयकरि काहूंकौ इष्ट मानि प्रीति करै है तहां आसक्त हो। है। बहुरि अरतिका उदयकरि काहूकौ अनिष्ट मानि अप्रीति करै है तहां उद्वेगरूप हो है। बहुरि शोकका उदयकरि कहीं अनिष्ट पनौ मानि दिलगीर हो है विषाद मानै है। बहुरि भयका उदयकरि किसीकौ अनिष्ट मानि तिसतै डरै है वाका संयोग न चाहै है। बहुरि जुगुप्साका उदयकरि काहू पदार्थकौ अनिष्ट मानि ताकी घृणा करै है वाका वियोग चाहै है। ऐसै ए हास्यादिक छह जानने। बहुरि वेदके उदयतै याकै कामपरिणाम हो है तहां स्त्रीवेदके उदयकरि पुरुषसौ रमनेकी इच्छा हो है पुरुषवेदके उदयकरि स्त्रीसौं रमनेकी इच्छा हो है नपुंसकवेदके उदयकरि युगपत् दोऊनिसौं रमनेकी इच्छा हो है ऐसै ए नव तौ नो कषाय है। क्रोधादिसारिखे बलवान ए नाहीं तातै इनिकौ ईषत्कषाय कहैं हैं। यहां नोंशब्द ईषत्वाचक जानना। इनिका उदय तिनि क्रोधादिकनिकी साथि यथासंभव हो है। ऐसै मोहके उदयतैं मिथ्यात्व वा कषायभाव हो हैं सो एही संसारके मूल है। इनि-हीकरि वर्तमानकालविषै जीव दुखी है अर आगामी कर्मबंधनके भी कारन एही हैं। बहुरि इनिहीका नाम राग द्वेष मोह है। तहां मिथ्यात्वका नाम मोह है जातैं तहां सावधानीका अभाव है। बहुरि मायालोभकषाय अर हास्य रति तीन वेदनिका नाम राग

है। जातै तहां इष्टबुद्धिकरि अनुराग पाइए है। बहुरि क्रोधमान-कषाय अर अरति शोक भय जुगुप्सानिका नाम द्वेष है जातैं तहां अनिष्टबुद्धिकरि द्वेष पाइए है। बहुरि सामान्यपनै सबहीका नाम मोह है। जातै इनिविषै सर्वत्र असावधानी पाइए है। बहुरि अंतरायके उदयतैं जीव चाहै सो न होय। दान दिया चाहै देय न सकै। वस्तुकी प्राप्ति चाहै सो न होय। भोग किया चाहै सो न होय। उपभोग किया चाहै सो न होय। अपनी ज्ञानादि शक्तिकौ प्रगट किया चाहै सो प्रगट न होय—ऐसैं अंतरायके उदयतै चाहै सो होय नाहीं। बहुरि तिसहीका क्षयोपशमतैं किंचिन्मात्र चाह्या भी हो है। चाहिये तौ बहुत है परंतु किंचिन्मात्र चाह्या हुआ होय है। बहुत दान देना चाहै है, परन्तु थोड़ा ही दान देय सकै है। बहुत लाभ चाहै है परन्तु थोड़ा ही लाभ हो है। ज्ञानादिक शक्ति प्रगट हो है तहां भी अनेक बाह्य कारन चाहिए। या प्रकार घातिकर्मनिके उदयतैं जीवकै अवस्था हो है। बहुरि अघातिकर्मनिविषै वेदनीयके उदयकरि शरीरविषै बाह्य सुख दुःखका कारन निपजै है। शरीरविषै आरोग्यपनौ रोगीपनौ शक्तिवानपनौ दुर्बलपनौ इत्यादि अर क्षुधा तृषा रोग खेद पीड़ा इत्यादि सुख दुःखनिके कारन हो है। बहुरि बाह्यविषै सुहावना ऋतु पवनादिक वा इष्टस्त्री पुत्रादिक वा मित्र धनादिक असुहावना ऋतु पवनादिक वा अनिष्टस्त्री पुत्रादिक वा शत्रु दरिद्र बध बंधनादिक सुखदुःखके कारन हो है। ए बाह्यकारन कहे तिनिविषै केई कारन तौ ऐसे है जिनिके निमित्तसौं शरीरकी

अवस्था ही सुखदुःखकौं कारन हो है अर वे ही सुख-दुःखकौ कारण हो है। बहुरि केई कारन ऐसे है जे आप ही सुख-दुःखकौ कारण हो है ऐसे कारनका मिलना वेदनीयके उदयतै हो है। तहां सातावेदनीयतै सुखके कारन हो है अर असाता-वेदनीयतै दुःखके कारन मिलैं। सो यहां ऐसा जानना—ए कारन ही तौ सुखदुखकौ उपजावै नाहीं आत्मा मोहकर्मका उदयतै आप सुखदुःख मानै है तहां वेदनीयकर्मका उदयकै अर मोहकर्मका उदयकै ऐसा ही संबंध है। जब सातवेदनीयका निपजाया बाह्य कारन मिलै तब तौ सुखमाननेरूप मोहकर्मका उदय होय अर जब असातावेदनीयका निपजाया बाह्यकारन मिलै तब दुःखमानने-रूप मोहकर्मका उदय होय। बहुरि एक ही कारन काहूकौ सुखका काहूकौ दुखका कारन हो है। जैसे काहूकै सातावेदनीयका उदय होतै मिल्या जैसा वस्त्र सुखका कारन हो है तैसा ही वस्त्र काहूकौ असातावेदनीयका उदय होतैं मिल्या सो दुःखका कारन हो है। तातैं बाह्यवस्तु सुखदुःखका निमित्तमात्र ही है। सुख दुख हो है सो मोहके निमित्ततै हो है। निर्मोही मुनिनिकै अनेक ऋद्धिआदि परिसहादि कारन मिलै तौ भी सुख दुःख न उपजै। मोही जीवकै कारन मिले वा विनाकारन मिले भी अपने संकल्पहीतै सुखदुःख हुवा ही करै है। तहां भी तीव्रमोहीकै जिस कारनकौं मिले तीव्र सुखदुःख होय तिसही कारनकौ मिलें मंदमोहीकै मंद सुखदुःख होय। तातै सुखदुःखका मूल बलवान कारन मोहका उदय है। अन्यवस्तु हैं सो बलवान कारन नाहीं।

परंतु अन्यवस्तुकै अर मोही जीवकै परिणामनिके निमित्तनैमित्तककी मुख्यता पाइए है। ताकरि मोहीजीव अन्य वस्तुहीकौं सुख-दुःखका कारन मानै है। ऐसै वेदनीयकरि सुखदुःखका कारन निपजै है बहुरि आयुकर्मके उदयकरि मनुष्यादिपर्यायनिकी स्थिति रहै है। यावत् आयुका उदय रहै तावत् अनेक रोगादिक कारन मिलै शरीरसौं संबंध न छूटै। बहुरि जब आयुका उदय न होय तब अनेक उपाय किए भी शरीरसौं संबंध रहै नाहीं, तिसहीकाल आत्मा अर शरीर जुदा होय। इस संसारविषै जन्म जीवन मरनका कारन आयुकर्म ही है। जब नवीन आयुका उदय होय तब नवीनपर्यायविषै जन्म हो है। बहुरि यावत् आयुका उदय रहै तावत् तिस पर्यायरूप प्राणनिके धारनतैं जीवना हो है। बहुरि आयुका क्षय होय तब तिस पर्यायरूप प्राण छूटनेंतै मरण हो है। सहज ही ऐसा आयुकर्मका निमित्त है और कोई उपजावनहारा क्षपावनहारा रक्षाकरनहारा है नाहीं ऐसा निश्चय करना। बहुरि जैसै नवीन वस्त्र पहरै कितेक काल पहरैं रहै पीछै ताकौं छोड़ि अन्यवस्त्र पहरै तैसै जीव नवीन शरीर धरै कितेक काल धरैं रहै पीछै ताकौ छोड़ि अन्य शरीर धरै है। तातै शरीरसंबंधअपेक्षा जन्मादिक हैं जीव जन्मादिरहित नित्य ही है। तथापि मोही जीवकै अतीत अनागतका विचार नाहीं तातै पर्याय-पर्याय मात्र ही अपना अस्तित्व मानि पर्यायसंबंधी कार्यनिविषै ही तत्पर होय रह्या है। ऐसैं आयुकरि पर्यायकी स्थिति जाननी। बहुरि नामकर्मकरि यह जीव मनुष्यादिगतिनिविषै प्राप्त हो है

तिस पर्यायरूप अपनी अवस्था हो है। बहुरि तहां त्रस स्थावरादि विशेष निपजे हैं। बहुरि तहां एकेंद्रियादि जातिकौ धारै है। इस जातिकर्मका उदयकै अर मतिज्ञानावरणका क्षयोपशमकै निमित्तनैमित्तिकपना जानना जैसा क्षयोपशम होय तैसी जाति पावै। बहुरि शरीरका संबंध हो है तहां शरीरके परमाणू अर आत्माके प्रदेशनिका एक बंधान हो है अर संकोच विस्ताररूप होय शरीरप्रमाण आत्मा रहै है। बहुरि नोकर्मरूप शरीरविषै अंगोपांगादिकका योग्य स्थान परिमाण लिए हो है। इसहीकरि स्पर्शन रसन आदि द्रव्यइंद्रिय निपजै है वा हृदयस्थानविषै आठ पांखड़ीका फूल्या-कमलकै आकार द्रव्यमन हो है। बहुरि तिस शरीरविषै आकारादिकका विशेष होना अर वर्णादिकका विशेष होना अर स्थूल-सूक्ष्मत्वादिकका होना इत्यादि कार्य निपजे है सो ए शरीररूप परणए परमाणु ऐसै परिणमैं हैं। बहुरि श्वासोच्छ्वास वा स्वर निपजै है सो ए भी पुद्गलके पिंड है अर शरीरकौ एक बंधानरूप हैं। इनविषै भी आत्माके प्रदेश व्याप्त हैं। तहां श्वासोछ्वास तौ पवन है सो जैसै आहारकौ ग्रहै नीहारकौ निकासै तब ही जीवनौ होय तैसैं बाह्यपवनकौं ग्रहै अर अभ्यंतरपवनकौ निकासै तब ही जीवितव्य रहै। तातै श्वासोछ्वास जीवितव्यका कारन है। इस शरीरविषैं जैसै हाड़ मांसादिक है तैसै ही पवन जानना। बहुरि जैसैं हस्तादिकसौ कार्य करिए तैसै ही पवनतैं कार्य करिए है। मुखमै ग्रास धरया ताकौ पवनतैं निगलिए है मलादिक पवनतै ही बाहरि काढिए हैं तैसै ही अन्य जानना। बहुरि नाडी वा वायुरोग

वा बायगोला इत्यादि ए पवनरूप शरीरके अंग जानने । बहुरि स्वर है सो शब्द है, सो जैसैं बीणाकी तांतिकूं हलाए भाषारूपहोने योग्य पुद्गलस्कंध हैं ते साक्षर वा अनक्षर शब्दरूप परिणमै हैं तैसै तालवा होठ इत्यादि अंगनिकौं हिलाएं भाषापर्याप्तिविषै ग्रहे पुद्गलस्कंध है ते साक्षर वा अनक्षर शब्दरूप परिणमै है। बहुरि शुभ अशुभ गमनादिक हो है। इहां ऐसा जानना जैसै दोयपुरुषनिकै इकदंडी बेड़ी है। तहां एक पुरुष गमनादि किया चाहै अर दूसरा भी गमनादि करै तौ गमनादि होय सकै। दोऊनिविषै एक बैठि रहै तौ गमनादि होय सकै नाहीं अर दोऊनिविषै एक बलवान होय तौ दूसरेकौं भी घीसि. ले जाय तैसै आत्माकै अर शरीरादि-करूप पुद्गलकै एकक्षेत्रावगाहरूप बंधान है तहां आत्मा हलन-चलनादि किया चाहै अर पुद्गल तिस शक्तिकरि रहित हुवा हलन चलन न करै वा पुद्गलविषै शक्ति पइए है आत्माकी इच्छा न होय तौ हलनचलनादि न होय सकै। बहुरि इनिविषै पुद्गल बलवा-न होय हालै चालै तौ ताकी साथि विना इच्छा भी आत्मा आदि हालै चालै। ऐसै हलन चलनादि होय सकै। बहुरि याका अपज-सआदि [?] बाह्य निमित्त बनै है। ऐसै ए कार्य निपजै है, तिनकरि मोहके अनुसार आत्मा सुखी दुःखी भी हो है। नामकर्मके उदयतैं स्वयमेव ऐसे नानाप्रकार रचना हो है और कोई करनहारा नाहीं है। बहुरि तीर्थंकरादि प्रकृति यहां है ही नाहीं। बहुरि गोत्रकर्मकरि ऊंचा नीचाकुलविषै उपजना हो है तहां अपना अधिकहीनपना प्राप्त हो है मोहके निमित्ततैं तिनिकरि आत्मा

सुखी दुखी भी हो है। ऐसै अघातिकर्मनिका निमित्ततैं अवस्था हो है। या प्रकार इस अनादि संसारविषै घाति अघातिक कर्मनिका उदयकै अनुसार आत्माकै अवस्था हो है सो हे भव्य अपने अंत-रंगविषै विचारि देखि ऐसैं ही है कि नाहीं सो ऐसा विचार किए ऐसा ही प्रतिभासै है। बहुरि जो ऐसै है तौ तू यह मानि मेरै अनादि संसाररोग पाइए है, ताके नाशका मोकौ उपाय करना। इस विचारतै तेरा कल्याण होगा।

इति श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक नाम शास्त्रविषै संसार अवस्थाका निरूपक द्वितीय अधिकार सम्पूर्ण भया ॥ २ ॥

दोहा

सो निजभाव सदा सुखद, अपनौं करो प्रकाश ॥
जो बहुविधि भवदुखनिकौ, करि है सत्तानाश ॥ १ ॥

अथ इस संसारअवस्थाविषै नानाप्रकार दुःख है तिनिका वर्णन करिए है—जातै जो संसारविषै भी सुख होय तौ संसारतै मुक्त होनेका उपाय काहेकौं करिए। इस संसारविषै अनेक दुःख है, तिसहीतै संसारतै मुक्त होनेका उपाय कीजिए है। बहुरि जैसै वैद्य है सो रोगका निदान अर ताकी अवस्थाका वर्णनकरि रोगीकौं संसाररोगका निश्चय कराय पीछै तिसका इलाज करनेकी रुचि करावै है तैसै यहां संसारका निदान वा ताकी अवस्थाका वर्णनकरि संसारीकौ संसार रोगका निश्चय कराय अब तिनिका उपायकरनेकी रुचि कराइए है। जैसै रोगी रोगतै दुखी होय

रह्या है परंतु ताका मूलकारण जानैं नाहीं सांचा उपाय जानैं नाहीं अर दुःख भी सह्या जाय नाहीं तब आपकौं भासै सो ही उपाय करै तातै दुःख दूरि होय नाहीं। तब तड़फि तड़फि परवशहुवा तिनि-दुःखनिकौं सहै है। परंतु ताका मूल कारण जानै नाहीं। परयाकौं वैद्य दुःखका मूल कारण बतावैं दुःखका स्वरूप बतावें याके किए उपायनिकौ झूठा दिखावै तब सांचा उपाय करनेकीरुचि होय, तैसै ही यह संसारी संसारमै दुःखी होय रह्या है, परंतु तिसका मूल कारण जानै नाहीं अरसांचा उपाय जानै नाहीं अर दुःख भी सह्या जाय नाहीं तब आपको भासै सो ही उपाय करै है। तातै दुःख दूर होय नाहीं तब तड़फि तडफि परवस हुआ दुःखनिकों सहै है। याकौ यहां दुःखका मूलकारन बताइए अर दुःखका स्वरूप बताइए अर तिनि उपायनिकूं झूठे दिखाइए तौ सांचे उपाय करनेकी रुचि होय तातै यह वर्णन इहां करिये है। तहां सर्व दुःखनिका मूलकारन मिथ्यादर्शन अज्ञान असंयम है। जो दर्शनमोहके उदयतै भया अतत्त्वश्रद्धान मिथ्यादर्शन ताकरि वस्तुस्वरूपकी यथार्थ प्रतीति न होय सकै है अन्यथा प्रतीति हो है। बहुरि तिस मिथ्यादर्शनहीके निमित्ततै क्षयोपशमरूपज्ञान है सो कुज्ञान हो रह्या है। ताकरि यथार्थ वस्तुस्वरूपका जानना न हो है अन्यथा जानना हो है। बहुरि चारित्रमोहके उदयतै भया कषायभाव ताका नाम असंयम है ताकरि जैसा वस्तुका स्वरूप है तैसा नाही प्रवर्तै है अन्यथा प्रवर्तै है। ऐसै ये मिथ्यादर्शनादिक है तेई सर्व दुःखनिका मूलकारन है। कैसै सो दिखाइए है—मिथ्यादर्शनादिककरि जीवकै स्वपरविवेक नाही होय

सकै है एक आप आत्मा अर अनंत पुद्गलपरमाणुमय शरीर इनिका संयोगरूप मनुष्यादिपर्याय निपजै है तिस पर्यायहीकौं आपो मानै है। बहुरि आत्माका ज्ञानदर्शनादि स्वभाव है ताकरि किंचित् जानना देखना हो है। अरकर्मउपाधितै भए क्रोधादिक-भाव तिनिरूप परिणाम पाइए हैं। बहुरि शरीरका स्पर्श रस गंध वर्ण स्वभाव है सो प्रगट है अर स्थूल कृषादिक होना वा स्पर्शा दिकका पलटना इत्यादि अनेक अवस्था हो है। इन सवनिकौं अपना स्वरूप जानै है। तहां ज्ञानदर्शनकी प्रवृत्ति इंद्रिय मनके द्वारा हो है तातै यह मानै है त्वचा जीभ नासिका नेत्र कान मन ए मेरे अंग है। इनिकरि मै देखों जानौ हौ ऐसी मांनिने तैं इंद्रियनिविषे प्रीति पाइए है। बहुरि मोहके आवेशतै तिनि इंद्रियनिकै द्वारा विषय ग्रहणकरनेकी इच्छा हो है बहुरि तिनिविषै इनिका ग्रहण भए तिस इच्छाके मिटनेंतै निराकुल हो है तव आनंद मानै है। जैसै कूकरा हाड़ चावै ताकरि अपना लोहू निकसै ताका स्वाद लेय ऐसै मानै यह हाड़का स्वाद है। तैसैं यह जीव विषयनिकौ जानै ताकरि आपना ज्ञान प्रवर्तै ताका स्वाद लेय ऐसै मानै यह विषयका स्वाद है सो विषयमै तौ स्वाद है नाहीं, आप ही इच्छाकरी थी आप ही जानि आप ही आनंद मान्या। परंतु मै अनादि अनंत ज्ञानस्वरूप आत्मा हौ, ऐसा निःकेवल ज्ञानका तौ अनुभव है नाहीं। बहुरि मै नृत्य देख्या राग सुन्या फूल सूंध्या पदार्थ स्पर्शा स्वाद जान्या मोकौ यह जानना इस प्रकार ज्ञेयमिश्रित ज्ञानका अनुभव है ताकरि विषयनिकरि हीं प्रधानता भासे है

ऐसै इस जीवकै मोहके निमित्ततैं विषयनिकी इच्छा पाइए है सो इच्छा तो त्रिकालवर्त्ती सर्वविषयनिके ग्रहण करनेकी है मैं सर्वकौं स्पर्शौं सर्वकौ स्वादौं सर्वकौं सूंघौ सर्वकौ देखौ सर्वकौं सुनौं सर्वकौं जानौं सो इच्छा तो इतनी है अर शक्ति इतनी ही है जो इंद्रियनिकै सन्मुख भया वर्तमान स्पर्श रस गंध वर्ण शब्द तिनिविषै काहूकौ किंचिन्मात्र ग्रहै वा स्मरणादिकतैं मनकरि किछू जानै सो भी बाह्य अनेक कारन मिले सिद्ध होय। तातैं इच्छा कबहूं पूरन होय नाहीं। ऐसी इच्छा तौ केवलज्ञान भएं संपूर्ण होय। क्षयोपशमरूप इंद्रियकरि तौ इच्छा पूर्ण होय नाहीं तातै मोहकै निमित्ततै इंद्रियनिकै अपने अपने विषय ग्रहणकी निरंतर इच्छा रहिवो ही करै ताकरि आकुलित हुवा दुःखी हो रह्या है। ऐसा दुःखी हो रह्या है जो एक कोइ विषयका ग्रहणकै अर्थि अपना मरनको भी नाहीं गिनै है। जैसै हाथीकै कपटकी हथनीका शरीर स्पर्शनेकी अर मच्छकै बड़सीके लग्या मांस स्वादनेकी अर भ्रमरकै कमलसुगंध सूंघनेकी अर पतंगकै दीपकका वर्ण देखनेकी अर हिरणकी राग सुननेकी इच्छा ऐसी हो है जो तत्काल मरन भासै तो भी मरनकौं गिनै नाहीं विषयनिका ग्रहण करै। जातैं मरण होनैतै इंद्रियनिकरि विषयसेवनकी पीड़ा अधिक भासै है। इनि इंद्रियनिकी पीड़ाकरि सर्व जीव पीड़ितरूप निर्विचार होय जैसै कोऊ दुखी पर्वततै गिरि पड़ै तैसै विषयनिविषै झंपापात ले है। नानाकष्टकरि धनकौ उपजावै ताकौ विषयके अर्थि खोवै। बहुरि विषयनिके अर्थि जहां मरन होता जानै तहां भी जाय

नरकादिककौं कारन जे हिंसादिक कार्य तिनिकौं करै वा क्रोधादि कषायनिकौं उपजावै सो कहा करै इंद्रियनिकी पीड़ा सही न जाय तातै अन्य विचार किछू आवता नाहीं। इस पीड़ाहीकरि पीड़ित भये इंद्रादिक है ते भी विषयनिविषै अति आसक्त हो रहे है। जैसे खाजि रोगकरि पीड़ित हुवा पुरुष आसक्त होय खुजावै है पीड़ा न होय तौ काहेकौ खुजावै, तैसे इंद्रियरोगकरि पीड़ित भए इंद्रादिक आसक्त होय विषय सेवन करै है। पीड़ा न होय तौ काहेकौं विषय सेवन करैं? ऐसै ज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षयो-पशमतै भया इंद्रियादिजनित ज्ञान है सो मिथ्यादर्शनादिककै निमित्ततैं इच्छासहित होय दुःखका कारन भया है। अव इस दुः-ख दूरि होनेका उपाय यह जीव कहा करै है सो कहिए है,—

इंद्रियनिकरि विषयनिका ग्रहण भए मेरी इच्छा पूरन होय ऐसा जानि प्रथम तौ नानाप्रकार भोजनादिकनिकरि इंद्रियनिकौ प्रवल करै है अर ऐसै ही जानै है जो इंद्रिय प्रवल रहै मेरै विषय ग्रहणकी शक्ति विशेष हो है। वहुरि तहां अनेक बाह्यकारन चाहिए है तिनिका निमित्त मिलावै है। वहुरि इंद्रिय है ते विष-यकौं सन्मुख भएं ग्रहै तातै अनेक वाह्य उपायकरि विषयनिका अर इंद्रियनिका संयोग मिलावै है नानाप्रकार वस्त्रादिकका वा भोजनादिकका वा पुष्पादिकका वा सुंदर आभूषणादिकका वा गायक वादित्रादिकका संयोग मिलावनेके अर्थि बहुत खेदखिन्न हो है। वहुरि इन इंद्रियनिकै सन्मुख विषय रहै तावत् तिस-विषयका किंचित्स्पष्ट जानपना रहै। पीछै मनद्वारै स्मरणमात्र रहता

जाय। कालव्यतीत होते स्मरण भी मंद होता जाय तातैं तिनि-
विषयनिको अपने आधीन राखनेका उपाय करै। अर शीघ्र शीघ्र
तिनिका ग्रहण किया करै बहुरि इंद्रियनिकै तौ एककालविषै एक
विषयहीका ग्रहण होय अर यह बहुत बहुत ग्रहण किया चाहै,
तातै आखता[1] होय शीघ्र शीघ्र एक विषयकौं छोडि औरकौं ग्रहै।
बहुरि वाकौ छोडि औरकौं ग्रहै। ऐसैं हापटा मारै है। बहुरि जो
उपाय याकौ भासै है सो करै है सो यह उपाय झूठा है। जातैं
प्रथम तो इनि सबनिका ऐसै ही होना अपनै आधीन नाहीं
महाकठिन है। बहुरि कदाचित् उदयअनुसारि ऐसै ही विधि मिलै
तौ इंद्रियनिकौ प्रबल किए किछू विषयग्रहणकी शक्ति बधै नाहीं।
यह शक्ति तौ ज्ञानदर्शन बधे[2] बधै[3]। सो यह कर्मका क्षयोपशमकै
आधीन है। किसीका शरीर पुष्ट है ताकैं ऐसी शक्ति घाटि देखिए
है। काहूकै शरीर दुर्बल है ताकै अधिक देखिए है। तातैं
भोजनादिककरि इंद्रिय पुष्ट किए किछू सिद्धि है नाहीं। कषायादि
घटनेंतै कर्मका क्षयोपशम भए ज्ञानदर्शन बधै तब विषयग्रहणकी
शक्ति बधै है। बहुरि विषयनिका संयोग मिलावै सो बहुतकाल-
ताईं रहता नाहीं अथवा सर्व विषयनिका संयोगमिलताही नाहीं।
तातै यह आकुलता रहिबो ही करै। बहुरि तिनिविषयनिकौ अपने
आधीन राखि शीघ्र शीघ्र ग्रहण करै सो वे आधीन रहते नाहीं।
वे तौ जुदे द्रव्य अपने आधीन परिणमै है, वा कर्मोदयके
आधीन हैं। सो ऐसा कर्मका बंध यथायोग्य शुभभाव भए होय।

---

[1] उतावली. [2] बढ़नेपर. [3] बढ़ै.

फिर पीछै उदय आवै सो प्रत्यक्ष देखिए है । अनेक उपाय करतैं भी कर्मका निमित्त विना सामग्री मिलै नाहीं । वहुरि ऐक विषयकौ छोड़ि अन्यका ग्रहणकौ ऐसै हापटा मारै है । सो कहा सिद्ध हो है। जैसै मणकी भूखवालेकौं कण मिल्या तौ भूख कहा मिटै, तैसै सर्वका ग्रहणकी जाकैं इच्छा ताकै एक विपयका ग्रहण भए इच्छा कैसै मिटै इच्छा मिटै विना सुख होता नाहीं । तातै यह उपाय झूंठा है । कोऊ पूछै कि इस उपायतै केई जीव सुखी हो र देखिए है सर्वथा झूंठ कैसे कहो हो ताका समाधान,—

सुखीतौ न हो है भ्रमतै सुख मानै है । जो सुखी भया तो अन्य विपयनिकी इच्छा कैसै रहैगी । जैसै रोग मिटै अन्य औपध काहेकौ चाहै तैसैं दुःखमिटे अन्य विषयकौ काहेकौ चाहै । तातैं विषयका ग्रहणकरि इच्छा थँभि जाय तौ हम सुख मानै, सो तौ यावत जो विषय ग्रहण न होय तावत् काल तो तिसकी इच्छा रहै अर जिससमय ताका ग्रहण भया तिस ही समय अन्यविषय ग्रहणकी इच्छा होती देखिए है तौ यह सुख मानना कैसैं है जैसैं कोऊ महा क्षुधावान् रंक ताकौ एक अन्नका कण मिल्या ताका भक्षणकरि चैन मानै तैसे यह महातृष्णावान् याकौ एक विषयका निमित्त मिल्याताका ग्रहणकरि सुख मांनै है । परमार्थतै सुख है नाहीं । कोऊकहै जैसै कणकणकरि अपनी भूख मेटै तैसै एक एक विषयका ग्रहणकरि अपनी इच्छा पूरण करै तौ दोष कहा। ताका समाधान, —

जो कण भेले हों तौ ऐसै ही मानै, परंतु जब दूसराकण मिलै

तब तिसकणका निर्गमन होय जाय तौ कैसैं भूख मिटै । तैसैं ही जाननेविषै विषयनिका ग्रहण मेलें होता जाय तौ इच्छा पूरन होय जाय परंतु जब दूसरा विषय ग्रहण करै तब पूर्वविषय ग्रहण किया था ताका जानना रहै नाहीं, तौ कैसै इच्छा पूरन होय ?इच्छा पूरन भये विना सुख कैसै कह्या जाय। बहुरि एक विषयका ग्रहण भी मिथ्यादर्शनादिकका सद्भावपूर्वक करै है । तातैं आगामी अनेक दुखका कारन कर्म बंधै है । जातैं यह वर्त्तमानविषै सुख नाहीं आगामी सुखका कारन नाहीं तातै दुःख ही है । सोई प्रवचनसार-विषै कह्या है,—

"सपरं बाधासहिदं वुच्छीणं बंधकारणं विसमं ।
जं इंदिएहिं लद्धं तं सोक्खं दुक्खमेव वद्धाधा (?) ॥१॥

जो इंद्रियनिकरि पाया सुख सो पराधीन है बाधासहित है विनाशीक है बंधका कारण है विषम है सो ऐसा सुख तैसा दुःख ही है। ऐसैं इस संसारीकरि किया उपाय झूठा जानना । तौ सांचा उपाय कहा ; जब इच्छा तौ दूरि होय अर सर्व विषयनिका युगपत् ग्रहण रह्या करै तब यह दुख मिटै । सो इच्छा तौ मोह गए मिटै और सबका युगपत्ग्रहण केवलज्ञान भए होइ । सो इनका उपाय सम्यग्दर्शनादिक है सोई सांचा उपाय जानना । ऐसैं तौ मोहके निमित्ततै ज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षयोपशम भी दुःख-दायक है ताका वर्णन किया । इहां कोऊ कहै, ज्ञानावरण दर्श-नावरणका उदयतैं जानना न भया ताकूं दु;खका कारण कहौ क्षयोपशमकौ काहेकौं कहौ । ताका समाधान,—

जो जानना न होना दुःखका कारन होय तौ पुद्गलकै भी दुःख ठहरै। तातैं दुःखका मूलकारग तो इच्छा है सो इच्छा क्षयोपशमहीतैं हो है, तातैं क्षयोपशमकौं दुःखका कारन कह्या है परमार्थतैं क्षयोपशप भी दुःखका कारन नाही। जो मोहतैं विषयग्रहणकी इच्छा है सोई दुःखका कारन जानना। बहुरि मोहका उदय है सो दुःखरूप ही है। कैसैं सो कहिए है,—

प्रथम तौ दर्शनमोहके उदयतैं मिथ्यादर्शन हो है ताकरि जैसैं याकै श्रद्धान है' तैसैं तौ पदार्थ है नाही जैसै पदार्थ है तैसैं यह मानै नाही तातै याकै आकुलता ही रहै। जैस बाउलाकौं काहूनै वस्त्र पहराया। वह वाउला तिस वस्त्रकौं अपना अंग जानि आपकूं अर शरीरकौं एक मानै। वह वस्त्र पहरावनेवालेके आधीन है, सो वह कबहू फारै, कबहू जोरै, कबहू खोंसै, कबहू नवा पहरावै इत्यादि चरित्र करै। यह वाउला तिसकौ अपनै आधीन मानै वाकी पराधीन क्रिया होइ तातैं महाखेदखिन्न होय तैसै इस जीवकौं कर्मोदयनैं शरीरसंबंध कराया। यह जीव तिस शरीरकौ अपना अंग जानि आपकौं अर शरीरकौ एक मानै, सो शरीर कर्मके आधीन कबहू कृष होय कबहू स्थूल होय कबहू नष्ट होय कबहू नवीन निपजै इत्यादि चरित्र होय। यह जीव तिसकौ आपके आधीन जानै वाकी पराधीन क्रिया होय तातै महाखेदखिन्न हो है। बहुरि जैसै जहां वाउला तिष्टै था तहां मनुष्य घोटक धनादिक कहींतै आनि उतरै यह वाउला तिनकौ अपने जानै। वे तौ उनहीके आधीन कोऊ आवै कोऊ जावै कोऊ अनेक अवस्थारूप परिणमै। यह

बाउला तिनकौं अपने आधीन मानैं उनकी पराधीन क्रिया होइ तब खेदखिन्न होइ। तैसैं यह जीव जहां पर्याय धरै तहां स्वयमेव पुत्र घोटक धनादिक कहींतै आनि प्राप्त भएं, यह जीव तिनिकौं अपने जानैं सो वे तौ उनहीके आधीन कोऊ आवै कोऊ जावै कोऊ अनेक अवस्थारूप परिणमै। यह जीव तिनकौं अपने आधीन मानै उनकी पराधीन क्रिया होइ तब खेदखिन्न होय इहां कोऊ कहै काहूकालविषै शरीरकी वा पुत्रादिकी इस जीवकै आधीन भी तौ क्रिया होती देखिए है तब तो सुखी हो है। ताका समाधान,——

शरीरादिककी भवितव्यकी अर जीवकी इच्छाकी विधि मिलै कोई एक प्रकार जैसें यह चाहै तैसें परिणमैं तातैं काहू कालविषै वाहीका विचार होतैं सुखकी सी आभासा होइ परंतु सर्व ही तौ सर्वप्रकार यह चाहै तैसें न परिणमैं। तातैं अभिप्राय विषै तौ अनेक आकुलता सदाकाल रहबो ही करै। बहुरि कोई कालविषै कोई प्रकार इच्छअनुसारि परिणमता देखिकरि यह जीव शरीर पुत्रादिकविषै अहंकार ममकार करै है। सो इस बुद्धिकरि तिनिके उपजावनेकी वा बधावनेकी वा रक्षा करनेकी चिंताकरि निरंतर व्याकुल रहै है। नानाप्रकार कष्ट सहकरि भी तिनिका भला चाहै है। बहुरि जो विषयनिकी इच्छा हो है कषाय हो है बाह्य सामग्रीविषै इष्ट अनिष्टपनौ मानै है उपाय अन्यथा करै है सांचा उपायकौं न श्रद्धहै है अन्यथा कल्पना करै है सो इनि सबनिका मूलकारन एक मिथ्यादर्शन है। याका

नाश भए सबनिका नाश होइ जाय तातैं सब दुखनिका मूल यह मिथ्यादर्शन है। बहुरि इस मिथ्यादर्शनके नाशका उपाय भी नाहीं करै है। अन्यथा श्रद्धानकौं सत्यश्रद्धान मानै उपाय काहेकौं करै। बहुरि संज्ञी पंचेंद्रिय कदाचित् तत्त्वनिश्चय करनेका उपाय विचारै। तहां अभाग्यतैं कुदेव कुगुरु कुशास्त्रका निमित्त बनै तौ अतत्त्वश्रद्धान पुष्ट होइ जाय। यह तौ जानै इनतै मेरा भला होगा, वे ऐसा उपाय करैं जाकरि यह अचेत होय जाय। वस्तु-स्वरूपका विचार करनेका उद्यमी भया सो विपरीत विचारविषै दृढ होइ जाय। तब विषयकषायकी वासना बधनैतै अधिक दुःखी होय। बहुरि कदाचित् सुदेव सुगुरु सुशास्त्रका भी निमित्त बनि जाय तौ तहां तिनिका निश्चय उपदेशकौं तौ श्रद्धै नाहीं व्यवहारश्रद्धानकरि अतत्त्वश्रद्धानी ही रहै। तहां मंदकषाय वा विषय इच्छा घटै तौ थोरा दुखी होय पीछै बहुरि जैसाका तैसा होइ जाय। तातै यह संसारी उपाय करै सो भी झूठा ही होय। बहुरि इस संसारीकै एक यह उपाय है जो आपकै जैसा श्रद्धान है तैसैं पदार्थनिकौ परिणमाया चाहै सो वै परिणमै तौ याका सांचा श्रद्धान होइ जाय। परंतु अनादिनिधन वस्तु जुदे जुदे अपनी मर्यादा लिये परिणमै है। कोऊ कोऊकै आधीन नाहीं। कोऊ किसीका परिणमाया परिणमै नाहीं। तिनिकौं परिणमाया चाहै सो उपाय नाहीं। यह तौ मिथ्यादर्शन ही है। तौ सांचा उपाय कहा है! जैसै पदार्थनिका स्वरूप है तैसै श्रद्धान होइ तौ सर्व दुःख दूरि होनेका उपाय है। तैसै मिथ्यादृष्टी होइ पदार्थनिकौं

अन्यथा मानैं अन्यथा परिणमाया चाहै तौ आप ही दुखी हो है। बहुरि उनकौ यथार्थ मानना, अर ए परिणमाए अन्यथा परिणमैंगे नाहीं, ऐसा मानना सो ही तिस दुःखके दूरि होनेका उपाय है। भ्रमजनित दुःखका उपाय भ्रम दूरि करना ही है। सो भ्रम दूरि होनैतै सम्यक्श्रद्धान होय सो ही सत्य उपाय जानना। बहुरि चारित्रमोहके उदयतै क्रोधादि कषायरूप वा हास्यादि नोकषायरूप जीवके भाव हो हैं। तब यह जीव क्लेशवान होइ दुखी होता संता विह्वल होइ नाना कुकार्यनिविषै प्रवर्त्तै है। सोइ दिखाइए है— जब याकै क्रोधकषाय उपजै, तब अन्यका बुरा करनेकी इच्छा होइ। बहुरि ताकेअर्थि अनेक उपाय विचारै। मरमच्छेद गालीप्रदानादिरूप वचन बोलै। अपने अंगनिकरि वा शस्त्रपाषाणादिकरि घात करै। अनेक कष्ट सहनेकरि वा धनादि खर्चनेकरि वा मरणादिकरि अपना भी बुरा करि अन्यका बुरा करनेका उद्यम करै अथवा औरनिकरि बुरा होता जानै तौ औरनिकरि बुरा करावै। वाका स्वयमेव बुरा होय तौ अनुमोदना करै। वाका बुरा भए अपना किछु भी प्रयोजन सिद्धि न होय तौ भी वाका बुरा करै। बहुरि क्रोध होतैं कोई पूज्य वा इष्ट भी बीचि आवै तौ उनकौं भी बुरा कहै। मारने लगि जाय, किछु विचार रहता नाहीं। बहुरि अन्यका बुरा न होय तौ अपने अंतरंगविषै आप ही बहुत संतापवान होइ वा अपने ही अंगनिका घात करै वा विषादिकरि मरि जाय ऐसी अवस्था क्रोध होतैं हो है। बहुरि जब याकै मानकषाय उपजै तब औरनिकौं नीचा वा आपकौं ऊंचा दिखावनेकी इच्छा होइ। बहुरि ताके

अर्थि अनेक उपाय विचारै अन्यकी निंदा करै आपकी प्रशंसा करै। वा अनेक प्रकारकरि औरनिका महिमा मिटावै आपकी महिमा करै। महाकष्टकरि धनादिकका संग्रह किया ताकौ विवाहादि कार्यनिविषै खरचै वा देना करि भी खरचै। मूए पीछै हमारा जस रहैगा ऐसा विचारि अपना मरन करिकै भी अपनी महिमा वधावै। जो अपना सन्मानादि न करै ताकौ भयादिक दिखाय दुःख उपजाय अपना सन्मान करावै बहुरि मान होतैं कोई पूज्य वड़े होहिं तिनिका भी सन्मान न करै किछू विचार रहता नाहीं। बहुरि अन्य नीचा आप ऊंचा न दीसै. तौ अपने अंतरंगविषै आप बहुत संतापवान् होय वा अपने अंगनिका घात करै वा विषादिकरि मरि जाय ऐसी अवस्था मान होतै हो है। बहुरि जब याकै मायाकषाय उपजै तब छलकरि कार्य सिद्ध करनेकी इच्छा होय। बहुरि ताके अर्थि अनेक उपाय विचारै, नानाप्रकार कपटके वचन कहै, कपटरूप शरीरकी अवस्था करै, बाह्य वस्तुनिकौं अन्यथा दिखावै, बहुरि जिनविषै अपना मरन जानै ऐसे भी छल करै बहुरि कपट प्रगट भए अपना बहुत बुरा होइ मरनादिक होइ तिनिकौं भी न गिनै। बहुरि माया होतै कोई पूज्य वा इष्टका भी संबंध बनै तौ उनस्यौं भी छल करै, किछू विचार रहता नाहीं। बहुरि छलकरि कार्यसिद्धि न होइ तौ आप बहुत संतापवान होय, अपने अंगनिका घात करै, वा विषादिकरि मरि जाय। ऐसी अवस्था माया होतैं हो है। बहुरि जब याकै लोभ कषाय उपजै तब इष्टपदार्थका लाभकी इच्छा होय

ताकै अर्थि अनेक उपाय विचारै। ताके साधनरूप वचन बोलै शरीरकी अनेक चेष्टा करै। बहुत कष्ट सहै। सेवा करै विदेशगमन करै जाकरि मरन होता जानै सो भी कार्य करै। घना दुःख जिन-विषै उपजै ऐसा प्रारंभ करै। बहुरि लोभ होतैं पूज्य वा इष्टका भी कार्य होय तहां भी अपना प्रयोजन साधै किछू विचार रहता नाहीं। बहुरि तिस इष्टवस्तुकी प्राप्ति भई है ताकी अनेकप्रकार रक्षा करै है। बहुरि इष्ट वस्तुकी प्राप्ति न होइ वा इष्टका वियोग होइ तौ आप बहुत संतापवान होइ अपने अंगनिका घात करै वा विषदिकरि मरि जाय। ऐसी अवस्था लोभ होतै हो है। ऐसैं विषायनिकरि पीड़ित हुवा इन अवस्थानिविषै प्रवर्त्तै है। बहुरि इनि कषायनिकी साथि नोकषाय हो हैं। जहां जब हास्य कषाय होइ तब आप विकसित होइ प्रफुल्लित होइ सो यह ऐसा जानना जैसा बायवालेका हंसना नाना रोगकरि आप पीड़ित है, कोई कल्पनाकरि हंसने लगि जाय है। ऐसैं ही यह जीव अनेक पीड़ासहित है कोई झूठी कल्पनाकरि आपका सुहावताकार्य मानि हर्ष मानै है। परमार्थतैं दुखी ही है। सुखी तौ कषायरोग मिटैं होगा। बहुरि जब रति उपजै है, तब इष्ट वस्तुविषै अतिआसक्त हो है। जैसै बिल्ली मूंसाकौ पकरि आसक्त हो है। कोऊ मारै तौ भी न छोरै। सो इहां इष्टपना है। बहुरि वियोग होनेका अभिप्रायलिये आसक्तता हो है तातैं दुःख ही है। बहुरि जब अरति उपजै तब अनिष्ट वस्तुका संयोग पाय महा व्याकुल हो है। अनिष्टका संयोग भया सो आपकूं सुहावता नाहीं। सो यह

पीड़ा सही न जाय तातै ताका वियोग करनेको तड़फड़ै है सो यह दुःख ही है। बहुरि जब शोक उपजै है तब इष्टका वियोग वा अनिष्टका संयोग होतै अतिव्याकुल होइ संताप उपजावै रोवै पुकारै असावधान होइ जाय अपना अंगघात करै मरि जाय। किछू सिद्धि नाहीं तौ भी आप ही महादुःखी हो है। बहुरि जब भय उपजै है तब काहूको इष्टवियोग अनिष्टसंयोगका कारन जानि डरै अतिविह्वल होइ भागै वा छिपै वा सिथिल होइ जाइ कष्ट होनेके ठिकानै प्राप्त होइ वा मरि जाय सो यह दुःखरूप ही है। बहुरि जुगुप्सा उपजै है तब अनिष्ट वस्तुकौं घृणा करै। ताका तौ संयोग भया आप घृणाकरि भाग्या चाहै खेदखिन्न होइ महादुःखकौं पावै है। बहुरि तीनूं वेदनिकरि जब काम उपजै है तब पुरुषवेदकरि स्त्रीसहित रमनेकी अर स्त्रीवेदकरि पुरुषसहित रमनेकी अर नपुंसकवेदकरि दोऊनिस्यौं रमनेकी इच्छा हो है। तिसकरि अति व्याकुल हो है आताप उपजै है निर्लज्ज हो है धन खर्चै है। अपजसकौं न गिनै है। परंपरा दुःख होइ वा दंडादिक होइ ताकौं न गिनै है। काम पीड़ातै बाउला हो है। मरि जाय है। सो रसग्रंथनिविषै कामकी दश दशा कही है। तहां बाउला होना मरन होना लिख्या है। वैद्यकशास्त्रनिमै ज्वरके भेदनिविषै कामज्वर मरनका कारन लिख्या है। प्रत्यक्ष कामकरि मरनपर्यंत होते देखिए है। कामांधकै किछू विचार रहता नाहीं। पिता, पुत्री वा मनुष्य तिर्यंचणी इत्यादितै रमने लगि जायहै। ऐसी कामकी पीड़ा माहादुख स्वरूप है। या प्रकार कषाय वा नोकषा

यनिकरि-अवस्था हो है । इहां ऐसा विचार आवै है जो इनि अवस्थानिविषै न प्रवर्त्तै तौ क्रोधादिक पीड़ैं अर इनि अवस्थानिविषै प्रवर्त्तै तौ मरनपर्यंत कष्ट होइ। तहां मरनपर्यंत कष्ट तौ कबूल करिए है, अर क्रोधादिककी पीड़ा सहनी कबूल न करिए है। तातै यह निश्चय भया जो मरनादिकतै भी कषायनिकी पीड़ा अधिक है। बहुरि जब याकै कषायका उदय होइ, तब कषाय किए विना रह्या जाता नाहीं। बाह्य कषायनिके कारन आय मिलैं तौ उनकै आश्रय कषायकरै। न मिलैं तौ आप कारन बनावै। जैसैं व्यापारादि कषायनिका कारन न होइ तौ जूआ खेलना वा अन्य क्रोधादिकके कारन अनेक ख्याल खेलना वा दुष्टकथा कहनी सुननी इत्यादिक कारन बनावै है। बहुरि काम क्रोधादि पीड़ै शरीरविषै तिनिरूप कार्य करनेकी शक्ति न होइ तौ औषधि बनावैं अन्य अनेक उपाय करै। बहुरि कोइ कारन बनै नाहीं तौ अपने उपयोगविषै कषायनिकौ कारणभूत पदार्थनिका चिंतवनि-करि आप ही कषायरूप परिणमैं। ऐसै यह जीव कषायभावनिकरि पीड़ित हुवा महान् दुःखी हो है। बहुरि जिस प्रयोजनकौ लियें कषायभाव भया है तिस प्रयोजनकी सिद्धि होय तौ यह मेरा दुख दूरि होय अर मोकूं सुख होइ। ऐसै विचारि तिस प्रयोजनकी सिद्धि होनेकै अर्थि अनेक उपाय करना सो तिस दुःख दूरि होनेका उपाय मानै है। सो इहां कषायभावनितै जो दुःख हो है, सो तो सांचा ही है। प्रत्यक्ष आप ही दुखी हो है। बहुरि यह उपाय करै है सो झूंठा है। काहेतै सो कहिए है—क्रोधविषै तौ

अन्यका बुरा करना, मानविषै औरनिकूं नीचा करि आप ऊंचा होना, मायाविषै छलकरि कार्यसिद्धि करना, लोभविषै इष्टका पावना, हास्यविषै विकसित होनेका कारन बन्या रहना, रतिविषै इष्टसंयोगका बन्या रहना, अरतिविषै अनिष्टका दूरि होना, शोक-विषै शोकका कारन मिटना, भयविषै भयका मिटना, जुगुप्साविषै जुगुप्साका कारन दूरि होना, पुरुषवेदविषै स्त्रीस्यों रमना, स्त्रीवेद-विषै पुरुषस्यों रमना, नपुंसकवेदविषै दोऊनिस्यों रमना, ऐसै प्रयो-जन पाइए है। सो इनिकी सिद्धि होय तौ कषाय उपशमनेतैं दुःख दूरि होइ जाइ सुखी होइ परंतु इनिकी सिद्धि इनके किए उपायनिके आधीन नाहीं, भवितव्यके आधीन है। जातै अनेक उपाय करते देखिये है अर सिद्धि न हो है। बहुरि उपाय बनना भी अपने आधीन नाहीं, भवितव्यके आधीन है। जातै अनेक उपाय करना विचारै और एक भी उपाय न होता देखिए है। बहुरि काकतालीय न्यायकरि भवितव्य ऐसा ही होइ जैसा अपका प्रयोजन होइ तैसा ही उपाय होइ अर तातै कार्यकी सिद्धि भी होइ जाइ, तौ तिस कार्यसंबंधी कोई कषायका उपशम होइ परंतु तहां थंभाव होता नाहीं। यावत् कार्यसिद्ध न भया तावत् तौ तिसकार्यसंबंधी कषाय था। जिस समय कार्यसिद्ध भया तिस ही समय अन्य कार्यसंबंधी कषाय होइ जाय। एक समयमात्र भी निराकुल रहै नाहीं। जैसै कोऊ क्रोधकरि काहूका बुरा विचारै था वाका बुरा होय चुक्या, तब अन्यस्यौं क्रोधकरि वाका बुरा चाहनै लग्या अथवा थोरी शक्ति थी तब छोटेनिका बुरा चाहै

था, घनी शक्ति भई तब बड़ेनिका बुरा चाहने लग्या। ऐसै ही मानमायालोभादिककरि जो कार्य विचारै था सो सिद्ध होइ चुक्या तब अन्यविषै मानादिक उपजाय तिसकी सिद्धि किया चाहै। थोरी शक्ति थी तब छोटे कार्यकी सिद्धि किया चाहै था, घनी शक्ति भई तब बड़े कार्यकी सिद्धि करनेका अभिलाष भया। कषायनिविषै कार्यका प्रमाण होइ तौ तिसकार्यकी सिद्धि भए सुखी होइ जाय. सो प्रमाण है नाहीं। इच्छा बधती ही जाय। सोई आत्मानुशासनविषै कह्या है—

"आशागर्त्तः प्रतिप्राणि यस्मिन्विश्वमणूपमम्।
कस्मिन् किं कियदायाति वृथा वो विषयैषिता॥ १॥"

याका अर्थ— आशारूपी खाड़ा प्राणी प्राणी प्रति पाइए है। अनंतानंत जीव हैं तिनि सबनिकै ही आशा पाइए है। बहुरि वह आशारूपी खाड़ा कैसा है, जिस एक ही खाड़ेविषै समस्तलोक अणुसमान है। अर लोक एक ही, सो अब इहां कौन कौनकै कहा कितना [1]वटवारै आवै। तुम्हारै यह विषयनिकी इच्छा है सो वृथा ही है। इच्छा पूर्ण तौ होती ही नाहीं। तातै कोई कार्य-सिद्धि भए भी दुःख दूरि न होय अथवा कोई कषाय मिटै तिस ही समय अन्य कषाय होइ जाय। जैसै काहूकौ मारनेवाले बहुत होंय जब कोई वाकूं न मारै तब अन्य मारने लगि जाय। तैसै जीवकौ दुःख द्यावनेवाले अनेक कषाय हैं। जब क्रोध न होय, तब मानादिक होइ जाय। जब मान न होइ, तब क्रोधादिक होइ

---

१ बांटमें---हिस्में।

जांय । ऐसैं कषाय सद्भाव रह्या ही करै। कोइ एक समय भी कषायरहित होय नाहीं। तातैं कोई कषायका कोई कार्य सिद्ध भए भी दुःख दूर कैसें होइ । बहुरि याकै अभिप्राय तौ सर्वकषायनिका सर्व प्रयोजन सिद्ध करनेका है। सो होइ तौ सुखी होइ। सो तौ कदाचित् होइ सकै नाहीं। तातैं अभिप्रायविषै शास्वता दुःखी ही रहै है। तातैं कषायनिका प्रयोजनकौं साधि दुःख दूरि करि सुखी भया चाहै है, सो यह उपाय झूंठा ही है । तौ सांचा उपाय कहा है? सम्यग्दर्शनज्ञानतैं यथावत् श्रद्धान वा जानना होइ, तब इष्ट अनिष्टबुद्धि मिटै। बहुरि तिनहीके बलकरि चारित्रमोहका अनुभाग हीन होइ ऐसैं होतें कषायनिका अभाव होइ, तब तिनिकी पीड़ा दूरि होय तब प्रयोजन भी किछू रहै नाहीं निराकुल होनेतैं महासुखी होइ। तातैं सम्यग्दर्शनादिक ही इस दुःख मेटनेका साचा उपाय है । बहुरि अंतरायका उदयतैं जीवकै मोहकरि दान लाभ भोग उपभोग वीर्य शक्तिका उत्साह उपजै परंतु होइ सकै नाहीं। तब परम आकुलता होइ सो यह दुःखरूप है ही। याका उपाय यह करै है, जो विघ्नके बाह्य कारन सूझैं तिनिके दूरि करनेका उद्यम करै सो यह झूंठा उपाय है। उपाय किये भी अंतरायका उदय होतैं विघन होता देखिए है । अंत-रायका क्षयोपशम भए, विना उपाय भी विघन न हो है । तातैं विघनका मूलकारन अंतराय है। बहुरि जैसैं कूकराकै पुरुषकरि वाही हुई लाठीकी लागी। वह कूकरा लाठीस्यौं वृथा ही द्वेष करै है। तैसैं जीवकै अंतरायकरि निमित्तभूत क्रिया बाह्य चेतन

अचेतन द्रव्यकरि विघन भया। यह जीव तिनि बाह्य द्रव्यनिस्यौं वृथा खेद करै है। अन्य द्रव्य याकै विघन किया चाहै अर याकै न होइ। बहुरि अन्य द्रव्य विघन किया न चाहै अर याकै होइ। तातैं जानिए है अन्यद्रव्यका किछू वश नाहीं, तिनिस्यौं काहेको लरियै। तातैं यह उपाय झूठा है। तौ सांचा उपाय कहा है? मिथ्यादर्शनादिकतैं इच्छाकरि उत्साह उपजै था सो सम्यग्दर्शनादिककरि दूरि होय अर सम्यग्दर्शनादिकहीकरि अंतरायका अनुभाग घटै तब इच्छा तौ मिटि जाय शक्ति बधि जाय तब वह दुःख दूरि होइ निराकुलसुख उपजै। तातैं सम्यग्दर्शनादिक ही सांचा उपाय है। बहुरि वेदनीयके उदयतैं दुखसुखके कारकनि संयोग हो है। तहां केई तौ शरीरविषै ही अवस्था हो है। केई शरीरकी अवस्थाकौं निमित्तभूत बाह्य संयोग हो है। केई बाह्य ही वस्तुनिका संयोग हो है। तहां असाताके उदयकरि शरीरविषै तौ क्षुधा तृषा उच्छ्वास पीड़ा रोग इत्यादि हो है। बहुरि शरीरकी अनिष्ट अवस्थाकौं निमित्तभूत बाह्य अतिशीत उष्ण पवन बंधनादिकका संयोग हो है॥ बहुरि बाह्य शत्रु कुपुत्रादिक वा कुवर्णादिक सहित स्कंधनिका संयोग हो है। सो मोहकरि इनिविषै अनिष्टबुद्धि हो है। जब इनिका उदय होय तब मोहका उदय ऐसा ही आवै जाकरि परिणामनिमैं महाव्याकुल होइ इनिको दूर किया चाहै। यावत् ए दूरि न होंय तावत् दुखी हो है सो इनिकौ होतै तौ सर्व ही दुख मानै है। बहुरि साताके उदयकरि शरीरविषै आरोग्यवानपनौ बलवानपनौ इत्यादि हो है। बहुरि शरीरकी

इष्ट अवस्थाकौं निमित्तभूत बाह्य खानपानादिक वा सुहावना पवना-
दिकका संयोग हो है। बहुरि बाह्य मित्र सुपुत्र स्त्री किंकर हस्ती
घोटक धन धान्य मंदिर वस्त्रादिकका संयोग हो है सो मोहकरि
इनिविषै इष्टबुद्धि हो है। जब इनिका उदय होय तब मोहका
उदय ऐसा ही आवै जाकरि परिणामनिमैं चैन मानै। इनिकी
रक्षा चाहै। यावत रहै तावत् सुख मानै। सो यह सुख मानना
ऐसा है जैसैं कोऊ घनें रोगनिकरि बहुत पीड़ित होय रह्या था
ताकै कोइ उपचारकरि कोइ एक रोगकी कितेक काल किछू
उपशांतता भई तब वह पूर्व अवस्थाकी अपेक्षा आपकौं सुखी
कहै, परमार्थतैं सुख है नाहीं। बहुरि याकौ असाताका उदय होतैं
जो होय ताकरि तौ दुख भासै है। तातैं ताकै दूरि करनेका
उपाय करै हैं। अर साताका उदय होतैं जो होइ ताकरि सुख भासै
है तातैं ताकौं होनेका उपाय करै है। सो यह उपाय झूठा है।
प्रथम तौ याका उपाय याकै आधीन नाहीं वेदनीयकर्मका उदयकै
आधीन है। असाताके मेटनैके अर्थि साताकी प्राप्तिके अर्थि तौ
सर्वहीकै यत्न रहै परंतु काहूकै थोरा यत्न किए भी वा न
किए भी सिद्ध होइ जाय, काहूके बहुत यत्न किए भी सिद्धि
न होइ तातै जानिए है याका उपाय याकै आधीन नाहीं। बहुरि
कदाचित् उपाय भी करै अर तैसा ही उदय आवै तौ थोरै काल
किंचित् काहूप्रकारकी असाताका कारन मिटै अर साताका कारण
होइ तहां भी मोहके सद्भावतै तिनिकौ भोगनेकी इच्छाकरि
आकुलित होइ। एक भोग्यवस्तुकौं भोगनेकी इच्छा होइ, वह

यावत् न मिले तावत् तौ वाकी इच्छाकरि आकुल होइ। अर वह मिल्या अर उसही समय अन्यकौं भोगनेकी इच्छा होइ जाय, तब ताकरि आकुल होइ। जैसैं काहूकौं स्वाद लेनेकी इच्छा भई थी वाका अस्वाद जिस समय भया तिस ही समय अन्य वस्तुका स्वाद लेनेकी वा स्पर्शनादि करनेकी इच्छा उपजै है। अथवा एक ही वस्तुकौं पहिले अन्य प्रकार भोगनेकी इच्छा होइ वह यावत् न मिलै तावत् वाकी आकुलता रहै। अर वह भोग भया अर उस ही समय अन्यप्रकार भोगनेकी इच्छा होइ। जैसैं स्त्रीको देख्या चाहै था जिस समय अवलोकन भया उस ही समय रमनेकी इच्छा हो है। बहुरि ऐसैं भोग भोगतैं भी तिनिके अन्य उपाय करनेकी आकुलता हो है तौ तिनिकौ छोरि अन्य उपाय करनेकौं लागै है। तहां अनेक प्रकार आकुलता हो है। देखो एक धनका उपाय करनेमैं व्यापारादिक करतै बहुरि वाकी रक्षा करनेमैं सावधानी करतै केती आकुलता हो है। बहुरि क्षुधा तृषा शीत उष्ण मल श्लेष्मादि असाताका उदय आया ही करै ताका निराकरणकरि सुख मानै सो काहेका सुख है। यह तौ रोगका प्रतीकार है। यावत् क्षुधादिक रहै तावत् तिनिका मिटावनेकी इच्छाकरि आकुलता होइ, वह मिटै तब कोई अन्य इच्छा उपजै ताकी आकुलता होइ। बहुरि क्षुधादिक होइ तब उनकी आकुलता होइ आवै। ऐसै याकै उपाय करतैं कदाचित् असाता मिटि साता होइ तहां भी आकुलता रह्या ही करै तातैं दुःख ही रहै है। बहुरि ऐसै भी रहना तौ होता नाहीं आपकौ उपाय करतैं करतैं ही कोई

असाताका उदय ऐसा आवे ताका किछू उपाय बनि सकै नाहीं । अर ताकी पीड़ा वहुत होय सही जाय नाहीं । तब ताकी आकुलताकरि विहल होइ जाइ तहां महादुखी होय। सो इस संसारमें साताका उदय तौ कोइ पुण्यका उदयकरि काहूकै कदाचित् ही पाइए है घणे जीवनिकै वहुत काल असाताहीका उदय रहै है । तातै उपाय करै सो झूंठा है। अथवा बाह्य सामग्रीतै सुख दुख मानिए है सो ही भ्रम है। सुख दु:ख तौ साता असाताका उदय होतै मोहका निमित्ततैं हो है। सो प्रत्यक्ष देखिये है। लक्षधनका धनीकै सहस्रधनका व्यय भया तव वह तौ दुखी हो है अर शत धनका धनीकै सहस्रधन भया तब वह सुख मानै है । बाह्य सामग्री तौ वाकै यातै निन्याणवै गुणी है । अथवा लक्षधनका धनीकै अधिक धनकी इच्छा है तो वह दुखी है अर शत धनका धनीकै संतोष है तो वह सुखी है । वहुरि समान वस्तु मिले कोऊ सुख मानै है कोऊ दुख मानै है। जैसै काहूकौ मोटा वस्त्रका मिलना दुखकारी होइ काहूकौं सुखकारी होइ । बहुरि शरीरविषै क्षुधा आदि पीडा वा बाह्य इष्टका वियोग अनिष्टका संयोग भए काहूकै वहुत दुख होइ काहूकै थोरा होइ काहूकै न होइ । तातै सामग्रीकै आधीन सुख दुख नाहीं। साता असाताका उदय होतै मोहपरिणामनकै निमित्ततै ही सुखदुख मानिए है । इहां प्रश्न — जो बाह्य सामग्रीकी तौ तुम कहौ हो, तैसै हो है परंतु शरीरविषै तौ पीड़ा भए दुखी ही होइ अर पीड़ा न भए सुखी होइ सो यह तौ शरीरअवस्थादिकै आधीन सुख दुख भासै है । ताका समाधान,—

आत्माका तौ ज्ञान इन्द्रियाधीन है। अर इंद्रिय शरीरका अंग है। सो यामैं जो अवस्था वीतै ताका जाननैरूप ज्ञान परिणमैं ताकी साथि ही मोहभाव होइ। ताकरि शरीर अवस्थाकरि सुख-दुख विशेष जानिए है। बहुरि पुत्राधनादिकस्यौ अधिक मोह होइ तौ अपना शरीरका कष्ट सहै ताका थोरा दुख मानै उनकौ दुःख भए वा संयोग मिटै बहुत दुःख मानै। अर मुनि है सो शरीरका पीड़ा होतै भी किंछू दुख मानते नाहीं। तातै सुख दुख मानना तौ मोहहीकै आधीन है। मोहकै अर वेदनीयकै निमित्तनैमित्तिक संबंध है, तातै साता असाताका उदयतैं सुख दुखका होना भासै है बहुरि मुख्यपनै केतीक सामग्री साताके उदयतैं हो है केतीक असाताका उदयतैं हो है तातैं सांमग्रीनिकरि सुख दुख भासै है। परंतु निर्द्धार किंए मोहहीतै सुख दुखका मानना हो है औरनिकरि सुख दुख होनेका नियम नाहीं। केवलीकै साता असाताका भी उदय है अर सुख दुखकौ कारण सामग्रीका भी संयोग है। परंतु मोहका अभावतै किंचिन्मात्र भी सुख दुख होता नाहीं। तातैं सुख दुख मोहजनित ही मानना। तातै तू सामग्रिके दूरकरनेका वा होनेका उपायकरि दुःख मेट्या चाहै सुखी भया चाहै सो यह उपाय झूंटा है, तौ सांचा उपाय कहा है? सम्यग्द-र्शनादिकतै भ्रम दूरि होय तब सामग्रीतै सुख दुख भासै नाहीं अपने परिणामहीतै भासै बहुरि यथार्थ विचारका अभ्यासकरि अपने परिणाम जैसै सामग्रीके निमित्ततै सुखी दुखी न होइ तैसैं साधन करै। बहुरि सम्यग्दर्शनादि भावनाहीतै मोह मंद होयजाय

तब ऐसी दशा होइ जाय जो अनेक कारण मिलै आपकौ सुख-दुख होइ नाहीं। जब एक शांतदशारूप निराकुल होइ सांचा सुखकौं अनुभवै तब सर्व दुख मिटै सुखी होइ। यह सांचा उपाय है। बहुरि आयुकर्मके निमित्ततै पर्यायका धारना सो जीवितव्य है पर्याय छूटना सो मरन है। बहुरि यह जीव मिथ्यादर्शनादिकतै पर्यायहीकौं आपो अनुभवै है। तातैं जीवितव्य रहै अपना अस्तित्व मानै है। मरन भये अपना अभाव होना मानै है इसही कारणतै सदाकाल याकै मरनका भय रहै है। तिस भयकरि सदा आकुलता रहै है। जिनिकौ मरनका कारन जानै तिनिस्यौं बहुत डरै। कदाचित् उनका संयोग बणै तौ महाविह्वल होइ जाय ऐसै महा दुखी रहै है। ताका उपाय यह करै है जो मरनके कारननिकौं दूर राखै है वा उनस्यौं आप भागै है। बहुरि औषधादिकका साधन करै है गढ़ कोट आदिक बनावै है इत्यादि उपाय करै है। सो यह उपाय झूंठा है जातै आयु पूर्ण भए तौ अनेक उपाय करै है अनेक सहाई होंय तौ भी मरन होइ ही होइ। एक समयमात्र भी न जीवै। अर यावत् आयु पूर्ण न होइ तावत् अनेक कारन मिलौ सर्वथा मरन न होइ तातै उपाय किए मरन मिटता नाहीं। बहुरि आयुकी स्थिति पूर्ण होइ ही होइ। तातै मरन भी होइ ही होइ। याका उपाय करना झूंठा ही है। तौ सांचा उपाय कहा है? सम्यग्दर्शनादिकतैं पर्यायविषै अहंबुद्धि छूटै अनादिनिधन आप चैतन्यद्रव्य है तिसविषै अहंबुद्धि आवै। पर्यायकौ स्वांग समान जानै तब मरनका भय रहै नाहीं। बहुरि सम्यग्दर्शनादिकहीतै

सिद्धपद पावै तब मरनका अभाव ही होइ। तातैं सम्यग्दर्शनादिक ही सांचा उपाय है।

बहुरि नामकर्मके उदयतैं गति जाति शरीरादिक निपजै है तिनिविषै पुण्यके उदयतै जे हो है ते तौ सुखके कारन हो है। पापके उदयतैं हो हैं ते दुखके कारण हो है। सो इहां सुख मानना भ्रम है। बहुरि यह दुखके कारन मिटावनेका सुखके कारन होनेका उपाय करै सो झूंठा हैं। सांचा उपाय सम्यग्दर्शनादिक हैं सो जैसै वेदनीयका कथन करतै निरूपण किया तैसैं ही इहां भी जानना। वेदनीय अर नामकै सुख दुखका कारनपनाकी समानतातै निरूपणकी समानता जाननी। बहुरि गोत्र कर्मके उदयतैं नीच ऊंचकुलविषै उपजै है। तहां ऊंच कुलविषै उपजैं आपकौं ऊंचा मानै है अर नीच कुलविषै उपजैं आपकौं नीचा मानै है। सो कुल पलटनेका उपाय तौ याकूं भासै नाहीं। तातै जैसा कुल पाया तैसा ही कुलविषै आपो मानै है। सो कुल अपेक्षा आपकौं ऊंचा नीचा मानना भ्रम है। ऊंचा कुलका कोइ निंद्य कार्य करै तौ वह नीचा होइ जाय। अर नीचा कुलविषै कोइ श्लाघ्य कार्य करै तौ वह ऊंचा होइ जाय। लोभादिकतै नीच कुलवालेकी उच्चकुलवाला सेवा करने लगि जाय। बहुरि कुल कितेक काल रहै? पर्याय छूटैं कुलकी पलटनि होइ जाय। तातैं ऊंचा नीचा कुलकरि आपकूं ऊंचा नीचा मानैं। ऊंचाकुलवालाकौ नीचा होनेके भयका अर नीचाकुलवालाकौं पाएहुए नीचपनैका दुख ही है। तो याका सांचा उपाय कहा है?

सो-कहिए है। सम्यग्दर्शनादिकतैं ऊंच नीच कुलविषै हर्ष विषाद न मानै। बहुरि तिनिहीतैं जाकी बहुरि पलटनि न होय-ऐसा सर्वतैं ऊंचा सिद्ध पद पावै तब सर्व दुख मिटै सुखी होइ तातै सम्यग्द-र्शनही दुख मेटनेका अर सुखकरनेका सांचा उपाय है। या प्रका-र कर्मके उदयकी अपेक्षा मिथ्यादर्शनादिकके निमित्ततैं संसारविषैं दुख ही दुख पाइए है ताका वर्नन किया। अब इस दुःखकौं पर्या-य अपेक्षाकरि वर्नन करिए है —

इस संसारविषै बहुत काल तौ एकेन्द्रिय पर्यायहीविषै वीतै है। तातैं अनादिहीतै तौ नित्यनिगोदविषै रहना, बहुरि तहांतैं निकसना ऐसा जैसैं भारभूनतै चणाका उछटि जाना सो तहांतैं निकसि अन्य पर्याय धरै तौ त्रसविषै तौ बहुत थोरे ही काल रहै। एकेंद्रीहीविषै बहुत काल व्यतीत करै है। तहां इतरनिगोद-विषै बहुत रहना होइ। अर कितेक काल पृथिवी अप तेज वायु प्रत्येक वनस्पतीविषै रहना होय। नित्यनिगोदतैं निकसे पीछैं त्रसविषै तौ रहनेका उत्कृष्ट काल साधिक दोहजार सागर ही है। एकेन्द्रियविषै उत्कृष्ट रहनेका काल असंख्यात पुद्गलपरावर्तन मात्र है अर पुद्गलपरावर्तन काल ऐसा है जाके अनंतवाँ भागविषै भी अनंते सागर हो हैं। तातैं इस संसारीकै मुख्यपनैं एकेन्द्रिय पर्यायविषै ही काल व्यतीत हो है। तहां एकेन्द्रियकै ज्ञानदर्शनकी शक्तितौ किंचिन्मात्र ही रहै है। एक स्पर्शन इंद्रि-यके निमित्ततैं भया मतिज्ञान अर ताके निमित्ततैं भया श्रुतज्ञान अर स्पर्शनइंद्रियजनित अचक्षुदर्शन जिनकरि शीत उष्णादिकको

किंचित् जानै देखै है । ज्ञानावरण दर्शनावरणके तीव्र उदयकरि यातैं अधिक ज्ञानदर्शन न पाइए है । अर विषयनिकी इच्छा पाइए है तातैं महा दुःखी है । बहुरि दर्शनमोहके उदयतैं मिथ्यादर्शन हो है तातैं पर्यायहीकौ आपो श्रद्है है । अन्यविचार करनेकी शक्ति ही नाहीं । बहुरि चारित्र मोहके उदयतैं तीव्र क्रोधादि कषायरूप परिणमै हैं जातैं उनकै केवली भगवानने कृष्ण नील कापोत ए तीन अशुभ लेश्या ही कही हैं । सो ए तीव्र कषाय होतैं ही हो हैं सो कषाय तौ बहुत अर शक्ति सर्वप्रकारकरि महा हीन तातैं बहुत दुःखी होय रहे हैं । किछू उपाय कर सकते नाहीं । इहां कोऊ कहै–ज्ञान तौ किंचित् मात्र ही रह्या है वै कहा कषाय करै ? ताका समाधान—

जो ऐसा तौ नियम है नाहीं जेता ज्ञान होइ तेता ही कषाय होय । ज्ञान तौ क्षयोपशम जेता होय तेता हो है । सो जैसैं कोऊ आंधा बहरा पुरुषकै ज्ञान थोरा होतै भी बहुत कषाय होते देखिए है तैसैं एकेन्द्रियकै ज्ञान थोरा होतै भी बहुत कषायका होना माना है । बहुरि बाह्य कषाय प्रगट तब हो है जब कषायकै अनुसार किछू उपाय करैं सो वै शक्तिहीन हैं तातैं उपाय करि सकते नाहीं तातैं उनकी कषाय प्रगट नाहीं हो है । जैसैं कोऊ पुरुष शक्तिहीन है ताकै कोई कारणतैं तीव्र कषाय होइ परंतु किछू करि सकै नाहीं । तातैं वाका कषाय बाह्य प्रगट नाहीं होय यूं ही अतिदुःखी होइ । तैसैं एकेन्द्रिय जीव शक्तिहीन हैं । तिनिकै कोई कारणतैं कषाय हो है परंतु किछू कर सकते

नाहीं तातैं उनका कषाय बाह्य प्रगट नाहीं हो है वै ही आप दूखी हो हैं। बहुरि ऐसा जानना जहां कषाय बहुत होय अर शक्तिहीन होय तहां घना दुख हो है बहुरि जैसे कषाय घटता जाय शक्ति वधती जाय तैसैं दु:ख घटता हो है। सो एकेंद्रियनिकै कषाय बहुत अर शक्ति हीन तातै एकेंद्रिय जीव महा दुखी हैं। उनके दुख वे ही भोगवे है। अर केवली जानै हैं। जैसै सन्निपातीका ज्ञान घटि जाय अर बाह्य शक्तिके हीनपनैंनैं अपना दुख प्रगट भी न करि सकै परंतु वह महादुखी है, तैसैं एकेंद्रियका ज्ञान थोरा है अर बाह्य शक्तिहीनपनातैं अपना दुखकौ प्रगट भी न करि सकै है परंतु महदुखी है। बहुरि अंतरायके तीव्र उदयकरि चाह्या होता नाहीं। तातै भी दुखी ही है। बहुरि अघातिकर्मनिविषै विशेषपनै पापप्रकृतिका उदय है तहां असातावेदनीयका उदय होतैं तिसके निमित्ततैं महादुखी हो है। पवनतैं टूटै है। बहुरि वनस्पती है सो शीत उष्णकरि सूकि जाय है, जल न मिलैं सूकि जाय है, अगनिकरि बलै है ताकौ कोऊ छेदै है भेदै है मसलै है खाय है तोरै है इत्यादि अवस्था हो है। ऐसै ही यथासंभव पृथ्वी आदिविषै अवस्था हो है। तिनि अवस्थाकौ होतैं वे महादु:खी हो है जैसै मनुष्यकै शरीरविषै ऐसी अवस्था भए दुख हो है तैसैं ही उनकै हो है। जातैं इनिका जानपना स्पर्शन इंद्रियतै होइ सो वाकै स्पर्शनइंद्रिय है ही, ताकरि उनकौ जानि मोहके वशतैं महाव्याकुल हो है। परंतु भागनैकी वा लरनैकी वा पुकारनैकी शक्ति नाहीं तातैं अज्ञानीलोक उनके दुखकौं जानते नाहीं। बहुरि

कदाचित् किंचित् साताका उदय होइ सो वह बलवान् होता नाहीं। बहुरि आयुकर्मतैं इनि एकेंद्रिय जीवनिविषै जे अपर्याप्त हैं तिनिकै तौ पर्यायकी स्थिति उश्वासके अठारहवै भाग मात्र ही है। अर पर्याप्तनिकी अंतर्मुहूर्त आदि कितेकवर्ष पर्यंत है। सो आयु थोरा तातैं जन्ममरण हुवा ही करै ताकरि दुखी है। बहुरि नामकर्म विषै तिर्यंचगति आदि पापप्रकृतिनिका ही उदय विशेषपनै पाइए है। कोई ही पुण्यप्रकृतिका उदय होइ ताका बलवानपना नाहीं तातैं तिनिकरि भी मोहके वशतैं दुखी हो है। बहुरि गोत्रकर्म-विषै नीच गोत्रहीका उदय है ताकरि महंतता होय नाहीं। तातैं भी दुखी ही है। ऐसैं एकेंद्रिय जीव महादुःखी है अर इस संसार-विषै जैसैं पाषाण आधारविषै तौ बहुत काल रहै है निराधार आकाशविषै तौ कदाचित् किंचितमात्रकाल रहै है, तैसैं जीव एकें-द्रिय पर्यायविषै बहुतकाल रहै है अन्य पर्यायविषै तौ कदाचित् किंचिन्मात्र काल रहै है। तातैं यह जीव संसारविषै महादुखी है। बहुरि बेंद्रिय तेन्द्रिय चौइन्द्रिय असंज्ञिपंचेंद्रिय पर्यायनिकौ जीव धरै तहां भी एकेंद्रियवत् दुख जानना। विशेष इतना—इहां क्रमते एक एक इंद्रियजनित ज्ञानदर्शनकी वा किछू शक्तिकी अधिकता भई है बहुरि बोलने चालनेकी शक्ती भई है। तहां भी जे अपर्याप्त हैं वा पर्याप्त भी हीनशक्तीके धारक हैं छोटे जीव हैं तिनिकी शक्ती प्रगट होती नाहीं। बहुरि केई पर्याप्त बहुत शक्तिके धारक बड़े जीव हैं, तिनिकी शक्ती प्रगट हो है। तातैं ते जीव विषयनिका उपाय करै हैं दुख दूरि होनैका उपाय करै है

क्रोधादिककरि काटना मारना लरना छलकरना अन्नादिक संग्रह करना भागना इत्यादि कार्य करै हैं। दुखकरि तड़फड़ाट करना पुकारना इत्यादि क्रिया करै हैं। तातै तिनिका दुख किछू प्रगट भी हो है। सो लट कीड़ी आदि जीवनिकै शीत उष्ण छेदन भेदनादिकतै वा भूख तृषा आदितै परम दुख देखिए है। जो प्रत्यक्ष दीसै ताका विचार करि लैना इहां विशेष कहा लिखै। ऐसै बेइन्द्रियादिक जीव भी महादुखी ही जानने।

बहुरि संज्ञीपंचेंद्रियनिविषै नारकी जीव है ते तौ सर्व प्रकार घने दुखी हैं। ज्ञानादिक शक्ति किछू है परंतु विषयनिकी इच्छा बहुत अर इष्टविषयनिकी सामग्री किंचित् भी न मिलै तातै तिस शक्तिके होनेकरि भी घने दुखी है बहुरि क्रोधादि कषायका अति तीव्रपना पाइए है। जातै उनकै कृष्णादि अशुभ लेश्या ही है। तहां क्रोधमानकरि परस्पर दुख देनेका निरंतर कार्य पाइए है। जो परस्पर मित्रता करै तौ यह दुख मिटि जाय अर अन्यकौं दुख दिए किछू उनका कार्य भी होता नाहीं परंतु क्रोधमानका अति तीव्रपना पाइए है ताकरि परस्पर दुख देनैहीकी बुद्धि रहै है। विक्रियाकरि अन्यकौ दुखदायक शरीरके अंग बनावै वा शस्त्रादि बनावै तिनिकरि अन्यकौं आप पीड़ैं अर आपकौं कोइ अन्य पीड़ै। कदाचित् कषाय उपशांत होय नाहीं। बहुरि माया लोभकी भी अति तीव्रता है परंतु कोई इष्टसामग्री तहां दीखै नाहीं। तातै तिनि कषायनिका कार्य प्रगट करि सकते नाहीं। तिनिकरि अंतरंगविषै महादुखी है। बहुरि कदाचित् किंचित् कोई

प्रयोजन पाइ तिनिका भी कार्य हो है। बहुरि हास्य रति कषाय है परंतु बाह्यनिमित्त नाहीं तातै प्रगट होते नाही कदाचित् किंचित् किंचित् किसी कारणतै हो है। बहुरि अरति शोक भय जुगुप्सा इनिके बाह्य कारण बनि रहे है तातैं ए कषाय प्रगट तीव्र होइ है। बहुरि वेदनिविषै नपुंसक वेद है। सो इच्छा तौ बहुत और स्त्री पुरुषस्यौ रमनेका निमित्त नाही तातै महापीड़ित हैं। ऐसैं कषायनिकरि अति दुखी हैं। बहुरि वेदनीयविषै असाताहीका उदय है ताकरि तहां अनेक वेदनाका निमित्त है। शरीरबिषै कोढ कास स्वासादि अनेक रोग युगपत् पाइए है अर क्षुधा तृषा ऐसी है जो सर्वका भक्षण पान किया चाहै है। अर तहांकी माटीका भोजन मिलै है सो माटी भी ऐसी है जो इहां आवै तौ ताकी दुर्गंधतै केई कोशनिके मनुष्य मरि जाएं। अर शीत उष्ण तहाँ ऐसा है जो लक्षयोजनका लोहका गोला होइ सो भी तिनिकरि भस्म होइ जाय। कहीं शीत है कहीं उष्ण है। बहुरि पृथिवी तहां शस्त्रनितै भी महातीक्ष्ण कंटकनिकरि सहित है। बहुरि तिस पृथिवीविषै वन है सो शस्त्रकी धार समान पत्रादि सहित है। नदी है सो ताका स्पर्श भए शरीर खंड खंड होइ जाय ऐसे जल सहित है। पवन ऐसा प्रचंड है जाकरि शरीर दग्ध हुवा जाय है। बहुरि नारकी नारकीकौं अनेक प्रकार पीड़ै घाणीमें पेलैं खंड खंड करै हांडीमें रांधै कोरडा मारै तप्त लोहादिकका स्पर्श करावै। इत्यादि वेदना उपजावैं। तीसरी पृथिवी पर्यंत असुरकुमार देव जाएं ते आप पीड़ा दें वा परस्पर लरावैं।

ऐसी वेदना होतैं शरीर छूटै नाहीं पारावत् खंड खंड होइ जाई तौ भी मिलि जाय। ऐसी महा पीड़ा है। बहुरि साताका निमित्त तौ किछु है नाहीं। कोई अंश कदाचित् कोईकै अपनी मानितै कोई कारण अपेक्षा साताका उदय है सो बलवान् नाहीं। बहुरि आयु तहां बहुत, जघन्य दशहजार वर्ष उत्कृष्ट तेतीस सागर। इतने काल ऐसे दुख तहां सहनै होंय। बहुरि नामकर्मकी सर्वपापप्रकृति-निहीका उदय है एक भी पुन्यप्रकृतिका उदय नाहीं तिनिकरि महादुखी है बहुरि गोत्रविषै नीच गोत्रहीका उदय है ताकरि महं-तता न होइ तातैं दुखी ही है। ऐसै नरकगतिविषै महादुख जाननै।

बहुरि तिर्यंचगतिविषै बहुत लब्धि अपर्याप्त जीव हैं तिनिका तौ उश्वासकै अठारवैं भाग मात्र आयु है। बहुरि केई पर्याप्त भी छोटे जीव है। सो इनिकी शक्ति प्रगट भासै नाहीं। तिनिकै दुख एकेंद्रियवत् जानना। ज्ञानादिकका विशेष है सो विशेष जानना। बहुरि बडे पर्याप्त जीव केई सम्मूर्छन है। केई गर्भज है। तिनिविषै ज्ञानादिक प्रगट हो है। सो विषयनिकी इच्छाकरि आकुलित है। बहुतकौ तौ इष्टविषयकी प्राप्ति नाहीं है काहूकौं कदाचित् किंचित् हो है। बहुरि मिथ्यात्व भावकरि अतत्त्व श्रद्धानी होय रहे हैं। बहुरि कषाय मुख्यपनै तीव्र ही पाइए है। क्रोध मानकरि परस्पर लरै है भक्षण करै हैं दुख दे हैं माया लोभ-करि छल करै हैं वस्तुकौ चाहै हैं हास्यादिककरि तिनिकषायनिका कार्यनिविषै प्रवर्त्तैं हैं। बहुरि काहूकै कदाचित् मंदकषाय हो है परंतु थोरे जीवनिकै हो है तातै मुख्यता नाहीं। बहुरि

वेदनीयविषै मुख्य असाताका उदय है ताकरि रोग पीड़ा क्षुधा तृषा छेदन भेदन बहुत भारवहन शीत उष्ण अंगभंगादि अवस्था हो है ताकरि दुखी होते प्रत्यक्ष देखिए है। तातैं बहुत न कह्या है। काहूकै कदाचित् किंचित् साताका भी उदय हो है परंतु थोरे जीवनिकै हो है। मुख्यता नाहीं। बहुरि आयु अंत-र्मुहूर्त आदि कोटिवर्ष पर्यंत है। तहां घने जीव स्तोक आयुके धारक हो है, तातै जन्म मरनका दुःख पावै है। बहुरि भोगभूमि यांकी बड़ी आयु है। अर उनकै साताका भी उदय है सो वै जीव थोरे है। बहुरि नामकर्मकी मुख्यपनै तौ तिर्यंचगति आदि पापप्रकृतिनिका ही उदय है। काहूकै कदाचित् केइ पुण्यप्रकृति-निका भी उदय हो है परंतु थोरे जीवनिकै थोरा हो है मुख्यता नाहीं। बहुरि गोत्रविषै नीचगोत्रहीका उदय है तातै हीन होय रहे हैं। ऐसै तिर्यंचगतिविषै महादुःख जाननै। बहुरि मनुष्य-गतिविषै असंख्याते जीव तौ लब्धिअपर्याप्त है ते सम्मूर्छन ही है तिनिकी तौ आयु उश्वासके अठारावै भागमात्र है। बहुरि कोई जीव गर्भमै आय थोरै ही कालमैं मरन पावै है। तिनिकी तौ शक्ति प्रगट भासै नाहीं है। तिनिकै दुख एकेंद्रियवत् जनना। विशेष है सो विशेष जानना। बहुरि गर्भजनिकै कितेक काल गर्भमैं रहना पीछै बाह्य निकसना हो है। सो तिनिका दुखका वर्नन कर्मअपेक्षा पूर्वै वर्नन किया है तैसैं जानना वह सर्व वर्नन गर्भज मनुष्यनिकै संभवै है अथवा तिर्यंचनिका वर्णन किया है तैसै जानना। विशेष यह है इहां कोई शक्तिविशेष पाइए

हैं वा राजादिकनिकै विशेष साताका उदय है वा क्षत्रियादिकनिकै उच्चगोत्रका भी उदय हो है। बहुरि धन कुटुंबादिकका निमित्त विशेष पाइए है इत्यादि विशेष जानना। अथवा गर्भ आदि अवस्थाके दुख प्रत्यक्ष भासै है जैसैं विष्टाविषै लट उपजै तैसैं गर्भमें शुक्र शोणितका बिंदुकौं अपना शरीररूपकरि जीव उपजै। पीछैं तहां क्रमतैं ज्ञानादिककी वा शरीरकी वृद्धि होई। गर्भका दुख बहुत हैं संकोचरूप अधोमुखपना क्षुधातृषादिसहित तहां काल पूरण करै बहुरि बाह्य निकसै तब बाल्यअवस्थामें महा दुख हो हैं कोउ कहै बाल्यअवस्थामें दुख थोरा है, सो नाहीं है शक्ति थोरी है तातै व्यक्त न होय सकै है पीछे व्यापारादि वा विषयइच्छाआदि करि दुखनिकी प्रगटता हो है इष्ट अनिष्ट जनित आकुलता रहबो ही करै पीछैं वृद्ध होइ तब शक्तिहीन होइ जाइ। तब परमदुखी हो है। सो ए दुख प्रत्यक्ष होते देखिए है। हम बहुत कहा कहैं। प्रत्यक्ष जाकौं न भासै सो कहा कैसै सुनै। काहूकै कदाचित् किंचित् साताका उदय हो है सो आकुलतामय है। अर तीर्थंकरादि पद मोक्षमार्ग प्राए विना होंय नाहीं। ऐसैं मनुष्य पर्यायविषै दुःख ही हैं। एक मनुष्य पर्यायविषै कोई आपना भला होनेका उपाय करै तौ होय सकै है। जैसै कांणा साठाकी[1] जड़ वा बांड़[2] तौ चूसने योग्य ही नाहीं। अर वीचिकी पेली कांणी सो भी चूंसी जाय नाहीं कोई स्वादका

१ गन्ना। २ गन्नेके ऊपरका फीका भाग।

लोभी वाकूं विगारै तौ विगारौ। अर जो वाकौं बोइ दे तौ वाके बहुत सांठे होंइ तिनिका स्वाद बहुत मीठा आवै। तैसै मनुष्य-पर्यायका बालवृद्धपना तौ सुख भोगने योग्य नाहीं। अर बीचिकी अवस्था सो रोग क्लेशादिकरि युक्त तहां सुख होइ सकै नाहीं। कोई विषयसुखका लोभी याकौं विगारौ तौ विगारो। अर जो याकौं धर्मसाधनविषै लगावै तौ बहुत ऊंचे पदकौ पावै। तहां सुख बहुत निराकुल पाइए। तातैं इहां अपना हित साधना, सुख होनैका भ्रमकरि वृथा न खोवना। बहुरि देवपर्यायविषै ज्ञानादिककी शक्ति किछू औरनितैं विशेष है। मिथ्यात्वकरि अतत्त्वश्रद्धानी होय रहे हैं। बहुरि तिनिकै कषाय किछू मंद हैं। तहां भवनवासी व्यंतर ज्योतिष्कनिकै कषाय बहुत मंद नाहीं अर उपयोग तिनिका चंचल बहुत अर किछू शक्ति भी है सो कषायनिके कार्यनिविषैं प्रवर्त्तै है। कुतूहल विषयादि कार्यनिविषै लगि रहे हैं। सो तिस आकुलताकरि दुःखी ही हैं। बहुरि वैमानिकनिकै ऊपरिऊपरि विशेष मंदकषाय है अर शक्ति विशेष है तातैं आकुलता घटनैतैं दुःख भी घटता है। इहां देवनिकै क्रोधमान कषाय है परंतु कारन थोरा है। तातैं तिनिके कार्यकी गौणता है। काहूका बुरा करना काहूका हीन करना इत्यादि कार्य निकृष्ट देवनिकै तौ कौतूहलादिकरि हो है। अर उत्कृष्ट देवनिकै थोरा हो है मुख्यता नाहीं। बहुरि माया लोभ कषायनिके कारण पाइए हैं। तातैं तिनिके कार्यकी मुख्यताहैं। तातैं छल करना विषय-सामग्रीकी चाहि करनी इत्यादि कार्य विशेष हो है। सो भी

ऊंचे ऊंचे देवनिकैं थोरि है। बहुरि हास्य रति कषायके कारन घने पाइए है। तातै इनिके कार्यनिकी मुख्यता है। बहुरि अरति शोक भय जुगुप्सा इनिके कारन थोरे है तातैं इनिके कार्यनिकी गौणता हैं। बहुरि स्त्रीवेद पुरुषवेदका उदय है अर रमनेका भी निमित्त है सो कामसेवन करैं हैं। ए भी कषाय ऊपरि ऊपरि मंद हैं। अहमिंद्रनिके वेदनिकी मंदताकरि कामसेवनका अभाव है। ऐसैं देवनिकै कषायभाव हैं सो कषायहीतैं दुःख है। अर इनिकै कषाय जेता थोरा है तितना दुख भी थोरा है तातै औरनिकी अपेक्षा इनिकौ सुखी कहिए है। परमर्थतै कषाय भाव जीवै है ताकरि दुखी ही हैं। बहुरि वेदनीयविषै साताका उदय बहुत है। तहां भवनत्रिककै थोरा है वैमानिकनिकै ऊपरि ऊपरि विशेष है। इष्ट शरीरकी अवस्था स्त्रीमंदिरादि सामग्रीका संयोग पाइए है। बहुरि कदाचित् किंचित् असाताका भी उदय-कोई कारणकरि हो है। तहां निकृष्टदेवनिकै किछू प्रगट भी है। अर उत्कृष्ट देवनिकै विशेष प्रगट नाहीं है। बहुरि आयु बड़ी है। जघन्य दशहजारवर्ष उत्कृष्ट तेतीस सागर है यातै अधिक आयुका धारी मोक्षमार्ग पाए बिना होता नाहीं। सो इतना काल विषयसुखमैं मगन रहै हैं। बहुरि नामकर्मकी देवगति आदि सर्व पुण्यप्रकृतिनिहीका उदय है। तातै सुखका कारन है। अर गोत्र-विषै उच्चगोत्रहीका उदय है तातै महंतपदकौ प्राप्त है ऐसैं इनिकै पुण्यउदयकी विशेषताकरि इष्ट सामग्री मिली है। अर

---

१ कम है।

कषायनिकरि इच्छा पाइए है। तातैं तिनिके भोगवनेविषै आसक्त होइ रहे हैं। परंतु इच्छा अधिक ही रहै है तातैं सुखी होते नाहीं। ऊंचे देवनिकै उत्कृष्ट पुण्यका उदय है कषाय बहुत मंद है तथापि तिनिकै भी इच्छाका अभाव होता नाहीं तातै परमार्थतैं दुखी ही हैं। ऐसै सर्वत्र संसारविषै दुख ही दुख पाइए है। ऐसैं पर्यायअपेक्षा दुख वर्नन किया, अब इस सर्व दुखका सामान्य-स्वरूप कहिए है-दुखका लक्षण आकुलता है सो आकुलता इच्छा होतैं हो है। सोई संसारीकै इच्छा अनेक प्रकार पाइए है। एक तौ इच्छा विषयग्रहणकी है सो देख्या जान्या चाहै। जैसैं वर्ण देखनेकी राग सुननेकी अव्यक्तकौं जानने इत्यादिकी इच्छा हो है सो तहां अन्य किछू पीड़ा नाहीं। परंतु यावत् देखै जानै नाहीं तावत् महाव्याकुल होइ। इस इच्छाका नाम विषय है। बहुरि एक इच्छा कषायभावनिके अनुसारि कार्य करनेकी है सो कार्य किया चाहै। जैसैं बुरा करनेकी हीन करनेकी इत्यादि इच्छा हो है। सो इहां भी अन्य कोई पीड़ा नाहीं। परंतु यावत् वह कार्य न होइ तावत् महा व्याकुल होय। इस इच्छाका नाम कषाय है। बहुरि एक इच्छा पापके उदयतैं शरीरविषै वा बाह्य अनिष्ट कारण मिलैं तब उनके दूरि करनेकी हो है। जैसैं रोग पीड़ा क्षुधा आदिका संयोग भए उनके दूर करनेकी इच्छा हो है सो इहां यह ही पीड़ा मानै है। यावत् वह दूरि न होइ तावत् महाव्याकुलता रहै। इस इच्छाका नाम पापका उदय है। ऐसैं इनि तीनप्रकारकी इच्छा होतैं सर्व ही दुख मानै है सो दुख ही है। बहुरि एक

इच्छा बाह्य निमित्ततैं बनै है सो इनि तीनप्रकार इच्छानिके अनुसारि प्रवर्त्तनेकी इच्छा हो है। सो तीनि प्रकार इच्छा-निविषै एक एक प्रकारकी इच्छा अनेक प्रकार है। तहां केई प्रकारकी इच्छा पूरन करनेका कारन पुण्यउदयतै मिलै। तिनिका साधन युगपत् होइ सकै नाहीं। तातै एककौ छोड़ि अन्यकौ लागै आगैं भी वाकौं छोड़ि अन्यकौ लागै। जैसैं काहूकै अनेक सामग्री मिली है। वह काहूकौं देखै है वाकौ छोड़ि राग सुनै है वाकौं छोड़ि काहूका बुरा करने लगि जाय वाकौं छोड़ि भोजन करै है अथवा देखनेविषै ही एककौ देखि अन्यकौं देखै है। ऐसै ही अनेक कार्यनिकी प्रवृत्तिविषै इच्छा हो है सो इस इच्छाका नाम पुण्यका उदय है। याकौं जगत सुख मानै है सो सुख है नाहीं दुख ही है। काहेतैं—प्रथम तौ सर्वप्रकार इच्छा पूरन होनेके कारन काहूकै भी न बनैं अर केई प्रकार इच्छा पूरन करनेके कारन बनैं तौ युगपत् तिनिका साधन न होइ। सो एकका साधन जावत् न होइ तावत् वाकी आकुलता रहै वाका साधन भए उसही समय अन्यका साधनकी इच्छ हो है तब वाकी आकुलता हो है। एक समय भी निराकुल न रहै तातै दुखी ही है। अथवा तीनप्रकारके इच्छारोग मिटावनेका किंचित् उपाय करै है तातै किंचित् दुख घाटि हो है सर्व दुखका तौ नाश न होइ तातै दुख ही है। ऐसैं संसरी जीवनिकै सर्व प्रकार दुख ही है। बहुरि इहां इतना जानना,—तीनप्रकार इच्छानिकरि सर्व जगत पीडित है अर चौथी इच्छा है सो पुण्यका उदय आए होइ

सो पुण्यका बंध धर्मानुरागतै होई अर धर्मानुरागविषै जीव थोरा लागै। जीव तौ बहुत पापक्रियानिविषै ही प्रवर्त्तै है। तातैं चौथी इच्छा कोई जीवकै कदाचित् कालविषै हो है। बहुरि इतना जानना,—जो समान इच्छावान् जीवनिकी अपेक्षा तौ चौथी इच्छा-वालाकै किछू तीनप्रकार इच्छाके घटनैतैं सुख कहिए है। बहुरि चौथी इच्छावालाकी अपेक्षा महान् इच्छावाला चौथी इच्छा होतैं भी दुखी ही है। काहूकै बहुत बिभूति है अर वाकै इच्छा बहुत है तौ वह बहुत आकुलतावान है। अर वाकै थोरी विभूति है अर वाकै इच्छा थोरी है तौ वह थोरा आकुलतावान् हैं। अथवा कोऊकै अनिष्ट सामग्री मिली है वाकै उसके दूर करनेकी इच्छा थोरी है तौ वह थोरा आकुलतावान् है। बहुरि काहूकै इष्ट सामग्री मिली है परंतु ताकै उनके भोगवनेकी वा अन्य सामग्रीकी इच्छा बहुत है तौ वह जीव घना आकुलतावान् है। तातैं सुखी दुखी होना इच्छाके अनुसार जानना बाह्य कारनकै आधीन नाहीं है। नारकी दुखी अर देव सुखी कहिए है सो भी इच्छाहीकी अपेक्षा कहिए है। जातैं नारकीनिकै तीव्रकषायतैं इच्छा बहुत है। देवनिकै मंद कषायतैं इच्छा थोरी है। बहुरि मनुष्य तिर्यंच भी सुखी दुखी इच्छाहीकी अपेक्षा जानना। तीव्रकषायतैं जाकै इच्छा बहुत ताकौं दुखी कहिए है। मंदकषायतैं जाकै इच्छा थोरी ताकौ सुखी कहिए है। परमार्थतैं दुख ही घना वा थोरा, सुख नाहीं है। देवादिककौं भी सुखी मानै हैं सो भ्रम ही है। उनकै चौथी इच्छाकी मुख्यता है तातैं आकुलित हैं। या

प्रकार जो इच्छा है सो मिथ्यात्व अज्ञान असंमयतै हो है। बहुरि इच्छा है सो आकुलतामय है अर आकुलता है सो दुख है। ऐसैं सर्व संसारी जीव नानाप्रकारके दुखनिकरि पीड़ित ही होइ रहे है। अब जिन जीवनिकौं दुखनितै छूटना होय सो इच्छा दूरि करनेका उपाय करो। बहुरि इच्छा दूरि तब ही होइ जब मिथ्यात्व अज्ञान असंज-मका अभाव होइ अर सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी प्राप्ति होय। तातैं इस ही कार्यका उद्यम करना योग्य है। ऐसा साधन करतै जेती जेती इच्छा मिटै तेता ही दुख दूरि होता जाय। बहुरि जब मोहके सर्वथा अभावतै सर्वथा इच्छाका अभाव होइ तब सर्व दुख मिटै सांचा सुख प्रगटै। बहुरि ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतरायका अभाव होइ तब इच्छाका कारण क्षयोपशम ज्ञान दर्शनका वा शक्तिहीनपनाका भी अभाव होइ अनंतज्ञानदर्शनवीर्यकी प्राप्ति होइ। बहुरि केतेक काल पीछै अघाति कर्मनिका भी अभाव होइ तब इच्छाके बाह्य कारन तिनिका भी अभाव होइ। सो मोह गए पीछै एकै काल किछू इच्छा उपजावनेकौं समर्थ थे नाहीं मोह होतै कारण थे तातैं कारन कहे हैं सो इनिका भी अभाव भया। तब सिद्धपदकौं प्राप्त हो है। तहां दुखका वा दुखके कारननिका सर्वथा अभाव होनैतै सदाकाल अनौपम्य अखंडित सर्वोत्कृष्ट आनंदसहित अनंतकाल विराजमान रहै हैं। सोई दिखाइए है— ज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षयोपशम होतैं वा उदय होतैं मोहकरि एक एक विषय देखने जाननेकी इच्छाकरि महाव्याकुल होता था सो अब मोहका अभावतैं इच्छाका भी अभाव भया। तातैं

दुखका अभाव भया है। बहुरि ज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षय होनैते सर्व इंद्रियनिकौं सर्वविषयनिका युगपत् ग्रहण भया तातैं दुखका कारन भी दूरि भया है सोई दिखाइए है-जैसैं नेत्रकरि एक विषयकौं देख्या चाहै था अब त्रिकालवर्त्ती त्रिलोकके सर्व वर्णनिकौं युगपत् देखै है। कोऊ विना देख्या रह्या नाहीं जाके देखनेकी इच्छा उपजै। ऐसैं ही स्पर्शनादिककरि एक एक विषयकौं ग्रह्या चाहै था अब त्रिकालवर्ती त्रिलोकके सर्व स्पर्श रस गंध शब्दनिकौं युगपत् ग्रहै है कोऊ विना ग्रह्या रह्या नाहीं जाके ग्रहणकी इच्छा उपजै। इहां कोऊ कहै शरीरादिक विनाग्रहण कैसैं होइ? ताका समाधान—

इंद्रियज्ञान होतैं तौ द्रव्यइंद्रियादिविना ग्रहण न होता था। अब ऐसा स्वभाव प्रगट भया जो विना ही इंद्रिय ग्रहण हो है। इहां कोऊ कहै जैसैं मनकरि स्पर्शादिककौं जानिए है तैसैं जानना होता होगा त्वचा जीभ आदिकरि ग्रहण हो है तैसैं न होता होगा। सो ऐसैं नाहीं है। मनकरि तौ स्मरणादि होतैं अस्पष्ट जानना किछू हो है। इहां तौ स्पर्शरसादिककौं जैसैं त्वचा जीभ इत्यादिकरि स्पर्शै स्वादै सूंघै देखै सुनै जैसा स्पष्ट जानना हो है तिसतैं भी अनंत गुणा स्पष्ट जानना तिनिकै हो है। विशेष इतना भया है-वहां इंद्रियविषयका संयोग होतैं ही जानना होता था इहां दूर रहे भी वैसा ही जानना हो है। सो यह शक्तिकी महिमा है। बहुरि मनकरि किछू अतीत अनागतकौं अव्यक्तकौं जान्या चाहै था अब सर्व ही अनादितैं अनंतकालपर्यंत जे सर्व

पदार्थनिके द्रव्यक्षेत्र काल भाव तिनिकौं युगपत् जानै है कोऊ विना जान्या रह्या नाहीं जाके जाननेकी इच्छा उपजै। ऐसैं इन दुख और दुखनिके कारण तिनिका अभाव जानना। बहुरि मोहके उदयतैं मिथ्यात्व वा कषायभाव होते थे तिनिका सर्वथा अभाव भया तातैं दुखका अभाव भया। बहुरि इनिके कारणनि-का अभाव भया तातैं दुखके कारणका भी अभाव भया। सो कारणका अभाव दिखाइए है–

सर्व तत्त्व यथार्थ प्रतिभासैं अतत्त्वश्रद्धानरूप मिथ्यात्व कैसैं होइ। कोऊ अनिष्ट रह्या नाहीं निंदक स्वयमेव अनिष्ट पावै ही हैं आप क्रोध कौनसौं करै? सिद्धनितैं ऊंचा कोई है नाहीं। इंद्रादिक आपहीतैं नमै है इष्ट पावैं हैं कौनस्यों मान करै? सर्व भवितव्य भास गया कार्य रह्या नाहीं काहूस्यो प्रयोजन रह्या नाहीं काहेका लोभ करै? कोऊ अन्य इष्ट रह्या नाहीं। कौन कारनतैं हास्य होइ? कोऊ अन्य इष्ट प्रीतिकरने योग्य है नाहीं। इहां कहा रति करै? कोऊ दुखदायक संयोग रह्या नाहीं, कहां अरति करै? कोऊ इष्टअनिष्ट संयोगवियोग होता नाहीं, काहेकौं शोक करै? कोऊ अनिष्ट करनेवाला कारन रह्या नाहीं, कौनका भय करै? सर्व वस्तु अपने स्वभाव लिए भासै आपकौ अनिष्ट नाहीं कहां जुगुप्सा करै? कामपीड़ा दूर होनैतैं स्त्रीपुरुष उभयस्यौं रमनेका किछू प्रयोजन रह्या नाहीं, काहेकौं पुरुष स्त्री नपुंसक-वेद रूप भाव होइ? ऐसैं मोह उपजनैका कारणनिका अभाव जानना। बहुरि अंतरायके उदयतैं शक्ति हीनपनाकरि पूरन

न होती थी। अब ताका अभाव भया तातैं दुखका अभाव भया। बहुरि अनंत शक्ति प्रगट भई तातैं दुःखके कारणका भी अभाव भया। इहां कोऊ कहै, दान लाभ भोग उपभोग करते नाहीं इनकी शक्ति कैसै प्रगट भई। ताका समाधान,——

ए कार्य रोगके उपचार थे। जब रोग ही नाहीं तब उपचार काहेकौ करै। तातैं इनकार्यनिका सद्भाव तौ नाहीं। अर इनिका रोकनहारे कर्मका अभाव भया तातैं शक्ति प्रगटी कहिए है। जैसै कोऊ नाहीं गमन किया चाहै ताकौ काहूनै रोक्या था तब दुखी था। जब वाकै रोकना दूरि भया अर जिह कार्यकै अर्थि गया चाहे था सो कार्य न रह्या तब गमन भी न किया। तब वाकै गमन न करतै भी शक्ति प्रगटी कहिए। तैसै ही इहां जानना। बहुरि ज्ञानादिका शक्तिरूप अनंतवीर्य प्रगट उनकै पाइए है। बहुरि अघाति कर्मनिविषै मोहतै पापप्रकृतिनिका उदय होतै दुख मानै था। पुण्यप्रकृतिका उदयकौं सुख मानै था। परमार्थतै आकुलताकरि सर्व दुख ही था। अब मोहके नाशतैं सर्व आकुलता दूरि होनेतै सर्व दुःखका नाश भया। बहुरि जिन कारननिकरि दुख मानै था ते तौ कारन सर्व नष्ट भये। अर जिनिकरि किंचित् दुख दूरि होनेतैं सुख मानै था सो अब मूलहीमैं दुख रह्या नाहीं। तातैं तिनि दुखके उपचारनिका किछू प्रयोजन रह्या नाहीं जो तिनिकरि कार्यकी सिद्धि किया चाहे। ताकी स्वयमेय ही सिद्धि होइ रही है। इसहीका विशेष दिखाइए है—वेदनीयविषै असाताके उदयतैं दुखके कारन शरीरविषै रोग क्षुधादिक होते थे।

अब शरीर ही नाहीं तब कहां होय। अर शरीरकी अनिष्ट अवस्थाकौं कारन आतापादिक थे सो अब शरीर विना कौनकौं कारन होय? अर बाह्य अनिष्ट निमित्त बनै था सो अब इनिकै अनिष्ट रह्या नाहीं। ऐसैं दुखका कारनका तौ अभाव भया। बहुरि साताके उदयतै किंचित दुख मेटनेके कारन औषधि भोजनादिक थे तिनिका प्रयोजन रह्या नाहीं। अर इष्ट कार्य पराधीन रह्या नाहीं तातै बाह्य भी मित्रादिककौं इष्ट माननेका प्रयोजन रह्या नाहीं। इनिकरि दुख मेट्या चाहै था वा इष्ट किया चाहै था सो अब संपूर्ण दुख नष्ट भया अर संपूर्ण इष्ट पाया। बहुरि आयुके निमित्ततै मरण जीवन था तहां मरणकरि दुःख मानै था सो अविनाशी पद पाया तातैं दुखका कारन रह्या नाहीं। बहुरि द्रव्य प्राणनिकौ धरै कितेक काल जीवनै मरनेतै सुख मानै था तहां भी नरकपर्यायविषै दुःखकी विशेषताकरि तहां जीवना न चाहै था सो अब इस सिद्धपर्यायविषै द्रव्यप्राणविना ही अपने चैतन्य प्राणकरि सदाकाल जीवै है। अर तहां दुखका लवलेश भी न रह्या है। बहुरि नामकर्मतै अशुभ गति जाति आदि होतैं दुख मानै था सो अब तिनि सबनिका अभाव भया, दुख कहांतै होय? अर शुभगति जाति आदि होतै किंचित् दुख दूरि होनेतैं सुख मानै था, सो अब तिनि विना ही सर्व दुखका नाश अर सर्वसुखका प्रकाश पाइए है। तातैं तिनिका भी किछू प्रयोजन रह्या नाहीं। बहुरि गोत्रके निमित्ततैं नीचकुल पाए दुख मानै था सो ताका अभाव होनेतैं दुखका कारन रह्या नाहीं। बहुरि उच्च-

कुल पाए सुख मानै था सो अब उच्चकुल विना ही त्रैलोक्यपूज्य उच्चपदकौ प्राप्त है। या प्रकार सिद्धनिकै सर्व कर्मके नाश होनेतैं सर्व दुखका नाश भया है। दुखका तौ लक्षण आकुलता है सो आकुलता तब ही हो है जब इच्छा होइ। सो इच्छाका वा इच्छाके कारणनिका सर्वथा अभाव भया तातैं निराकुल होय सर्व दुखरहित अनंत सुखकौं अनुभवै है। जातैं निराकुलपना ही सुखका लक्षण है। संसारविषै भी कोऊ प्रकार निराकुल होइ तब ही सुख मानिए है। जहां सर्वथा निराकुल भया तहां सुख संपूरन कैसैं न मानिए? याप्रकार सम्यग्दर्शनादि साधनतैं सिद्धपद पाए सर्व दुखका अभाव हो है। सर्व सुख प्रगट हो है।

अब इहां उपदेश दीजिए है। —हे भव्य हे भाई जो तोकूं संसारके दुख दिखाए ते तुझविषै बीतैं हैं कि नाहीं सो विचारि। अर तू उपाय करै है ते झूठे दिखाए सो ऐसैं ही है कि नाहीं सो विचारि। अर सिद्धपद पाए सुख होइ कि नाहीं सो विचारि। जो तेरै प्रतीति जैसै कहिए है तैसैं ही आवै है तौ तूं संसारतैं छूटि सिद्धपद पावनेका हम उपाय कहै है सो करि। विलंब मति करै। इह उपाय किया तेरा कल्याण होगा।

इति श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक नाम शास्त्रविषै संसारदुखका वा मोक्षसुखका निरूपक तृतीय अधिकार सम्मपूर्ण भया ॥३॥

दोहा ।

इस भवके सब दुखानिके, कारन मिथ्याभाव ।
तिनिकी सत्ता नाश करि, प्रगटै मोक्षउपाव ॥ १ ॥

अब इहां संसार दुखनिके बीजभूत मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञान मिथ्याचारित्र हैं तिनिका स्वरूप विशेष निरूपण कीजिए है। जैसै वैद्य है सो रोगके कारननिका विशेष कहै तौ रोगी कुपथ्य सेवन न करै तब रोगरहित होय, तैसै इहां संसारके कारननिका विशेप निरूपण करिए है। जातैं संसारी मिथ्यात्वादिकका सेवन न करै तब संसाररहित होय तातै मिथ्यादर्शनादिकनिका विशेष कहिए है,—

यह जीव अनादितैं कर्मसंबंधसहित है। याकै दर्शनमोहके उदयतैं भया जो अतत्त्वश्रद्धान ताका नाम मिथ्यादर्शन है। जातैं तद्भाव जो श्रद्धान करने योग्य अर्थ है ताका जो भाव स्वरूप ताका नाम तत्त्व है। अर तत्त्व नाहीं ताका नाम अतत्त्व है। अर अतत्त्व है सो असत्य है तातै इसहीका नाम मिथ्या है। बहुरि यह ऐसै ही है, ऐसा प्रतीतिभाव ताका नाम श्रद्धान है। इहां श्रद्धानहीका नाम दर्शन है। यद्यपि दर्शनशब्दका अर्थ सामान्य अवलोकन है तथापि इहां प्रकरणके वशतै इस ही धातुका अर्थ श्रद्धान जानना। सो ऐसै ही सर्वार्थसिद्धिनाम सूत्रकी टीका– विषै कह्या है। जातैं समान्यअवलोकन संसारमोक्षकौं कारण होइ नाहीं। श्रद्धान ही संसार मोक्षकौं कारण है तातैं संसारमोक्षका कारणविषै दर्शनका अर्थ श्रद्धान ही जानना। बहुरि मिथ्यारूप

जो दर्शन कहिए श्रद्धान ताका नाम मिथ्यादर्शन है। जैसैं वस्तुका स्वरूप नाहीं तैसै मानना, जैसै है तैसैं न मानना ऐसा विपरीताभिनिवेश कहिए विपरीत अभिप्राय ताकौ लिए मिथ्यादर्शन हो है। इहां प्रश्न,-जो केवलज्ञान विना सर्वपदार्थ यथार्थ भासैं नाहीं अर यथार्थ भास विना यथार्थ श्रद्धान न होइ। तातैं मिथ्यादर्शनका त्याग कैसैं बनै? ताका समाधान,—

पदार्थनिका जानना न जानना अन्यथा जानना तौ ज्ञानावरणके अनुसारि है। बहुरि प्रतीति हो है सो जाने ही हो है। विना जाने प्रतीति कैसैं आवै? यह तौ सत्य है। परंतु जैसै कोऊ पुरुष है सो जिनस्यौं प्रयोजन नाहीं तिनिकौ अन्यथा जानै वा यथार्थ जानै बहुरि जैसै जानै तैसै ही मानै, किछू वाका बिगार सुधार है नाहीं, तातैं बाउला स्याणा नाम पावै नाही। बहुरि जिनस्यौ प्रयोजन पाइए है तिनिकौ जो अन्यथा जानै अर तैसैं ही मानै तौ बिगाड़ होय तातै बाकौं बाउला कहिए। बहुरि तिनिकौं जो यथार्थ जानै अर तैसै ही मानै तौ सुधार होइ। तातैं वाकौं स्याणा कहिए। तैसै ही जीव है सो जिनस्यौं प्रयोजन नाहीं तिनिकौं अन्यथा जानौ वा यथार्थ जानौ। बहुरि जैसैं जानौ तैसै श्रद्धान करो किछू याका बिगार सुधार नाहीं। तातैं मिथ्यादृष्टी सम्यग्दृष्टी नाम पवै नाहीं। बहुरि जिनिस्यौं प्रयोजन पाइए हैं तिनिकौं जो अन्यथा जानै अर तैसैं ही श्रधान करै तौ बिगाड़ होइ। तातैं याकौं मिथ्यादृष्टी कहिए। बहुरि तिनिकौं जो यथार्थ जानै अर तैसैं श्रद्धान करै तौ सुधार होइ। तातैं

याकौं सम्यग्दृष्टी कहिए। इहां इतना जानना कि अप्रयोजनभूत वा प्रयोजनभूत पदार्थनिका न जानना वा यथार्थ अयथार्थ जानना जो होइ तामैं ज्ञानकी हीनता अधिकता होना इतना जीवका बिगार सुधार है। ताका निमित्त तौ ज्ञानावरण कर्म है। बहुरि तहां प्रयोजनभूत पदार्थनिकौं अन्यथा वा यथार्थ श्रद्धान किए जीवका किछू और भी बिगार सुधार हो है। तातैं याका निमित्त दर्शनमोह नामा कर्म है। इहां कोऊ कहै कि जैसा जानै तैसा श्रद्धान करै तातैं ज्ञानावरणहीकै अनुसारि श्रद्धान भासै है इहां दर्शनमोहका विशेष निमित्त कैसे भासै? ताका समाधान,—

प्रयोजनभूत जीवादि तत्त्वनिका श्रद्धान करनेयोग्य ज्ञानावरणका क्षयोपशम तौ सर्व संज्ञी पंचेंद्रियनिकै भया है। परंतु द्रव्यलिंगी मुनि ग्यारह अंग पर्यंत पढ़ै वा ग्रैवेयकके देव अवधिज्ञानादियुक्त हैं तिनिकै ज्ञानावरणका क्षयोपशम बहुत होतैं भी प्रयोजनभूत जीवादिकका श्रद्धान न होइ। अर तिर्यंचादिककै ज्ञानावरणका क्षयोपशम थोरा होतैं भी प्रयोजनभूत जीवादिकका श्रद्धान होइ तातैं जानिए है ज्ञानावरणहीकै अनुसारि श्रद्धान नाहीं। कोऊ जुदा कर्म है सो दर्शनमोह है। याकै उदयतैं जीवकै मिथ्यादर्शन हो है, तब प्रयोजनभूत जीवादितत्त्वनिका अन्यथा श्रद्धान करै है। इहां कोऊ पूछै कि प्रयोजनभूत अप्रयोजनभूत तत्त्व कौन है? ताका समाधान,—

इस जीवके प्रयोजन तौ एक यह ही है दुःख न होय सुख होय। अन्य किछू भी कोई ही जीवकै प्रयोजन है नाहीं। बहुरि

दुखका न होना सुखका होना एक ही है जातैं दुखका अभाव सोई सुख है। सो इस प्रयोजनकी सिद्धि जीवादिकका सत्य श्रद्धान किए हो है। कैसै सो कहिए है,—

प्रथम तो दुःख दूरि करनेविषै आपापरका ज्ञान अवश्य चाहिए जो आपापरका ज्ञान नाहीं होय तौ आपकौं पहिचाने विना अपना दुख कैसैं दूरि करै। अथवा आपापरकौं एक जानि अपना दुखदूरि करनेकै अर्थि परका उपचार करै तौ अपना दुख दूरि कैसै हो। अथवा आपतैं पर भिन्न अर यह परविषै अहंकार ममकार करै तातैं दुख ही होय। आपापरका ज्ञान भए दुख दूरि हो है। बहुरि आपापरका ज्ञान जीव अजीवका ज्ञान भए ही होइ तातैं आप जीव है शरीरादिक अजीव हैं। जो लक्षणादिककरि जीव अजीवकी पहिचान होइ तौ आपापरकौं भिन्नपनौं भासै। तातैं जीव अजीवकौं जानना अथवा जीव अजीवका ज्ञान भये जिन पदार्थनिका अन्यथा श्रद्धानतैं दुख होता था तिनिका यथार्थ ज्ञान होनेतैं दुख दूरि होय। तातैं जीव अजीवकौं जानना। बहुरि दुखका कारन तौ कर्मबंधन है। अर ताका कारन मिथ्यात्वादिक आस्रव हैं। सो इनिकौं न पहिचानै इनिकौं दुखका मूलकारन न जानै तौ इनिका अभाव कैसैं करै। अर इनिका अभाव न करै तब कर्मबंध होइ तातैं दुख ही होइ। अथवा मिथ्यात्वादिक भाव हैं सो ए दुखमय हैं। सो इनकौं जैसेके तैसे न जानै, तौ इनिका अभाव न करै। तब दुख ही रहै। तातैं आस्रवकौं जानना। बहुरि समस्त दुखका कारण कर्मबंधन है सो याकौं न जानै तब यातैं मुक्त

होनेका उपाय न करै। तव ताके निमित्ततैं दुखी होइ। तातैं बंधकौ जानना। वहुरि आस्रवका अभाव करना सो संवर है। याका स्वरूप न जानै तौ याविषै न प्रवर्त्तै तब आस्रव ही रहै तातै वर्त्तमान वा आगामी दुख ही होइ। तातैं संवरकौं जानना। वहुरि कथंचित् किंचित्कर्मबंधका अभाव ताका नाम निर्जरा है सो याकौं न जानै तव याकी प्रवृत्तिका उद्यमी न होइ तब सर्वथा वंध ही रहै तातैं दुख ही होइ। तातैं निर्जराकौ जानना। वहुरि सर्वथा सर्व कर्मवंधका अभाव होना ताका नाम मोक्ष है। सो याकौं न पहिचानै तौ याका उपाय न करै तब संसारविषै कर्मबंधतैं निपजे दुखनिहीकौं सहै तातै मोक्षकौ जानना। ऐसैं जीवादि सप्त तत्व जानने। वहुरि शास्त्रादिकरि कदाचित् तिनिकौ जानै अर ऐसैं ही है ऐसी प्रतीति न आई तौ जानै कहा होय तातैं तिनिका श्रद्धान करना कार्यकारी है। ऐसै जीवादि तत्वनिका सत्यश्रद्धान किए ही दुख होनेका अभावरूप प्रयोजनकी सिद्धि हो है। तातैं जीवादिक पदार्थ है ते ही प्रयोजनभूत जानने। वहुरि इनिके विशेषभेद पुण्यपापादिकरूप तिनिका भी श्रद्धान प्रयोजनभूत है। जातै सामान्यतैं विशेष बलवान् है। ऐसै ये पदार्थ तौ प्रयोजनभूत है तातै इनका यथार्थ श्रद्धान किए तौ दुख न होइ सुख होय अर इनिकौ यथार्थ श्रद्धान किए विना दुख हो है सुख न हो है। वहुरि इनि विना अन्य पदार्थ है ते अप्रयोजनभूत है। जातै तिनिकौ यथार्थश्रद्धान करो वा मति करो उनका श्रद्धान किछू सुखदुखकौ कारन नाहीं। इहां प्रश्न उपजै है, जो पूर्वै जीव अजीव

पदार्थ कहे तिनिविषै तौ सर्व पदार्थ आय गए तिनि विना अन्य पदार्थ कौन रहे जिनिकौं अप्रयोजनभूत कहे। ताका समाधान,—

पदार्थ तौ सर्व जीव अजीवविषै ही गर्भित है परंतु तिन जीव अजीवके विशेष बहुत है। तिनिविषै जिन विशेषनिकरि सहित जीव अजीवको यथार्थ श्रद्धान किए स्वपरका श्रद्धान होय रागादिक दूर करनेका श्रद्धान होय तातैं सुख उपजै। अयथार्थ श्रद्धान किए स्वपरका श्रद्धान न होइ रागादिक दूरि करनेका श्रद्धान न होइ तातै दुख उपजै। तिनिविशेषनिकरि सहित जीव अजीव पदार्थ तौ प्रयोजनभूत जानने। बहुरि तिन विशेषनिकरि सहित जीव अजीवकौं यथार्थ श्रद्धान किए स्वपरका श्रद्धान न होय वा होय अर रागादिक दूर करनेका श्रद्धान होइ वा न होइ किछू नियम नाहीं। तिनिविशेषनिकरि सहित जीव अजीव पदार्थ अप्रयोजनभूत जानने। जैसै जीव अर शरीरका चैतन्य मूर्त्तत्वादिविशेषनिकरि श्रद्धान करना तौ प्रयोजनभूत है। अर मनुष्यादि पर्यायनिका वा घटपटादिका अवस्था आकारादिविशेषनिकरि श्रद्धान करना अप्रयोजनभूत है। ऐसै ही अन्य जानने। याप्रकार कहे जे प्रयोजनभूत जीवादिक तत्व तिनिका अयथार्थ श्रद्धान ताका नाम मिथ्यादर्शन जानना। अब संसारी जीवनिकै मिथ्यादर्शनकी प्रवृत्ति कैसैं पाइए है। सो कहिए है। इहां वर्णन तौ श्रद्धानका करना है परंतु जानै तब श्रद्धान करै तातै जाननेकी मुख्यताकरि वर्णन करिए है॥

अनादितै जीव है सो कर्मके निमित्ततै अनेक पर्याय धरै है तहां पूर्व पर्यायकौं छोड़ै नवीन पर्याय धरै। बहुरि वह पर्याय

है सो एक तौ आप आत्मा अर अनंत पुद्गलपरमाणुमय शरीर तिनिका एक पिंड बंधानरूप है। बहुरि जीवकै तिसपर्यायविषै यह मै हों ऐसै अहंबुद्धि हो है। बहुरि आप जीव है ताका स्वभाव तौ ज्ञानादिक है अर विभाव क्रोधादिक है। अर पुद्गल परमाणूनिके वर्ण गंध रस स्पर्शादि स्वभाव है तिनि सबनिकौं अपना स्वरूप मानै है। ए मेरे है ऐसै ममबुद्धि हो है। बहुरि आप जीव है ताकौ ज्ञानादिककी वा क्रोधादिककी अधिकहीन तारूप अवस्था हो है। अर पुद्गलपरमाणूनिकी वर्णादि पलटनेरूप-अवस्था हो है तिनिसबनिका अपनी अवस्था मानै है। ए मेरी अवस्था है। ऐसै ममबुद्धि करै है। बहुरि जीवकै अर शरीरकै निमित्तनैमित्तिक संबंध है तातैं जो क्रिया हो है ताकौ अपनी मानै है। अपना दर्शनज्ञानस्वभाव है ताकी प्रवृत्तिकौ निमित्त मात्र शरीरका अंगरूपस्पर्शनादि द्रव्यइंद्रिय है। यह तिनिकौ एकमानि ऐसैं मानैहै जो हस्तादि स्पर्शनकरि मै स्पर्श्या जीभकरि चाख्या नासिकाकरि सूंघ्या नेत्रकरि देख्या, कानकरि सुन्या ऐसै मानै है। मनोवर्गणारूप आठपांखुडीका फूल्या कमलकै आकारि हृदय-स्थानविषै द्रव्य मन है दृष्टिगम्य नाहीं ऐसा है सो शरीरका अंग है ताका निमित्त भए स्मरणादिरूप ज्ञानकी प्रवृत्ति हो है। यह द्रव्य मनकौ अर ज्ञानकौं एक मानि ऐसैं मानै है कि मैं मनकरि जान्या। बहुरि अपने बोलनेकी इच्छा हो है तब अपने प्रदेश-निकौं जैसै बोलना बनै तैसैं हलावै तब एकक्षेत्रावगाहसंबंधतैं शरीरके अंग ही ताके निमित्ततैं भाषावर्गणारूप पुद्गलवचनरूप

परिणमै । यह सबकौं एक मानि ऐसैं मानै जो मैं बोलौं हौं ।
वहुरि अपने गमनादिक क्रियाकी वा वस्तुग्रहणादिककी इच्छा होय
तव अपने प्रदेशनिकौं जैसैं कार्य बनै तैसैं हलावै तब एक क्षेत्रा-
वगाहतै शरीरके अंग हालैं तब वह कार्य बनै । अथवा अपनी
इच्छाविना शरीर हालै तव अपने प्रदेश भी हालैं । यह सबकौं
एक मानि ऐसैं मानै, मैं गमनादिक कार्य करौं हौं वा वस्तु ग्रहौं हौं।
वा मैं किया है इत्यादिरूप मानै है । वहुरि जीवकै कषायभाव
होय तव शरीरकी चेष्टा ताकै अनुसार होय जाय । जैसैं क्रोधा
दिक भए रक्तनेत्रादि हो जांय । हास्यादि भए प्रफुल्लित वदनादि
होय जाय । पुरुषवेदादि भए लिंगकाठिन्यादि होय जाय । यह
सवकौं एक मानि ऐसा मानै कि ए कार्य सर्व मैं करौं हौं ।
वहुरि शरीरविषै शीत उष्ण क्षुधा तृषा रोग आदि अवस्था हो है
ताके निमित्ततैं मोहभावकरि आप सुखदुख मानै इन सबनिकौं
एक जानि शीतादिककौं वा सुखदुखकौं अपने ही भए मानै हैं
वहुरि शरीरका परमाणूनिका मिलना विछुरनादि होनेकरि वा
तिनिकी अवस्था पलटनेकरि वा शरीरस्कंधका खंडादि होनेकरि
स्थूल कृशादिक वा वाल वृद्धादिक वा अंगहीनादिक होय । अर
ताकै अनुसार अपने प्रदेशनिका संकोच विस्तार होइ यह सबकौं
एक मानि मैं स्थूल हौं मैं कृश हौं मैं वालक हौ मै वृद्ध हौं मेरे
इनि अंगनिका भंग भया है इत्यादि रूप मानै है । यह शरीरकी
अपेक्षा गतिकुलादिक होइ तिनिकौं अपने मानि मैं मनुष्य हौं मैं
तिर्यंच हौं मैं क्षत्रिय हौं मैं वैश्य हौं इत्यादिरूप मानै है . वहुरि

शरीर संयोग होने छूटनेकी अपेक्षा जन्म मरण होय तिनिकौं अपना जन्म मरण मानि मैं उपज्या, मैं मरूंगा ऐसा मानै है। बहुरि शरीरहीकी अपेक्षा अन्यवस्तुनिस्यौं नाता मानै है। जिन करि शरीर निपज्या तिनिकौं आपके माता पिता मानैं हैं। जो शरीरकौं रमावै ताकौं अपनी रमणी मानैं हैं। जो शरीरकरि निपज्या ताकौं अपना पुत्र मानै है। जो शरीरकौं उपगारी ताकौं मित्र मानै है जो शरीरका बुरा करैं ताकौं शत्रु मानै हैं इत्यादिरूप मानि हो हैं। बहुत कहा कहिए जिसतिसप्रकारकरि आप अर शरीरका एक ही मानैं हैं। इंद्रियादिकका नाम तौं इहां कह्या है याकूं तौं किछू गम्य नाहीं। अचेत हुवा पर्यायविषैं अहंबुद्धि धारैं है। सो कारन कहा है, सो कहिए है,--इस आत्माकै अनादितैं इंद्रियज्ञान है ताकरि आप अमूर्त्तीक है सो तौ भासै नाहीं अर शरीर मूर्त्तीक है सो ही भासै। अर आत्मा काहूकौ आपौ जानि अहंबुद्धि धारै ही धारै सो आप जुदा न भास्या तब तिनिका समुदायरूप पर्यायविषैं ही अहंबुद्धि धारै है। बहुरि आपकै अर शरीरकै निमित्त नैमित्तिक संबंध घना ताकरि भिन्नता भासै नाहीं। बहुरि जिसविचारकरि भिन्नता भासै सो मिथ्यादर्शनके जोरतैं होइ सकै नाहीं। तातैं पर्यायहीविषै अहंबुद्धि पाइए है। बहुरि मिथ्यादर्शनकरि यह जीव कदाचित् बाह्यसामग्रीका संयोग होतैं तिनिकौं भी अपनी मानै है। पुत्र स्त्री धन धान्य हाथी घोरे मंदिर किंकरादिक प्रत्यक्ष आपतैं भिन्न अर सदाकाल अपने आधीन नाहीं ऐसे आपकौं भासैं तौ भी तिनविषै ममकार करै है।

पुत्रादिकविषै ए हैं, सो मैं ही हौं ऐसी भी कदाचित् भ्रमबुद्धि हो है। बहुरि मिथ्यादर्शनतै शरीरादिकका स्वरूप अन्यथा ही भासै है। अनित्यकौं नित्य मानै है भिन्नकौं अभिन्न मानै दुखके कारनकौं सुखके कारन मानै दुखकौं सुख मानै इत्यादि विपरीत भासै है। ऐसै जीव अजीवतत्वनिका अयथार्थ ज्ञान होतै अयथार्थ श्रद्धान हो है। तिनकौं अपना स्वभाव मानै है। कर्म उपाधितै भए न जानै है। दर्शन ज्ञान उपयोग अर ए आस्रवभाव तिनकौं एक मानै है। जातै इनका आधारभूत तौ एक आत्मा अर इनिका परिणमन एकै काल होइ तातैं याकौं भिन्नपनौ न भासै अर भिन्नपनौ भासनेका कारन जो विचारै है सो मिथ्यादर्शनके बलतैं होइ सकै नाहीं। बहुरि ए मिथ्यात्व कषायभाव आकुलतालिए हैं, तातैं वर्त्तमान दुखमय है। अर कर्मबंधके कारन है, तातैं आगामी दुख उपजावैगे तिनिकौ ऐसै न मानै है आप भला जानि इन भावनिरूप होइ प्रवर्तै है। बहुरि यह दुखी तौ अपने इन मिथ्यात्वकषायभावनितै होइ अर वृथा ही औरनिकौ दुख उपजावनहारे मानै। जैसैं दुखी तौ मिथ्यात्वश्रद्धानतैं होइ अर अपने श्रद्धानके अनुसार जो पदार्थ न प्रवर्त्तै ताकौं दुखदायक मानैं। बहुरि दुखी तौं क्रोधतैं हो है अर जासौं क्रोध किया होय ताकौ दुखदायक मानै। दुखी तौ लोभतैं होइ अर इष्ट वस्तुकी अप्राप्तिकौं दुखदायक मानै ऐसें अन्यत्र जानना। बहुरि इनि भावनिका जैसा फल लागै तैसा न भासै है इनकी तीव्रताकरि नरकादिक हो हैं। मंदकरि स्वर्गादिक हो है। तहां घनी थोरी

आकुलता हो है सो भासै नाहीं तातैं बुरे न लागे हैं। कारन कहा है कि ए आपके किए भासैं तिनकौं बुरे कैसे मानै। बहुरि ऐसैं ही आस्रव तत्त्वका अयथार्थ ज्ञान होतैं अयथार्थ श्रद्धान हो है। बहुरि इनि आस्रवभावनिकरि ज्ञानावरणादिकर्मनिका बंध हो है। तिनिका उदय होतैं ज्ञानदर्शनका हीनपना होना, मिथ्यात्वकषायरूप परिणमनि, चाह्या न होना, सुखदुखका कारन मिलना, शरीरसंयोग रहना, गतिजातिशरीरादिकका निपजना, नीचा ऊंचा कुल पावना होइ। सो इनिके होनेविषै मूलकारन कर्म है। ताकौं तौ पहिचानैं नाहीं जातैं वह सूक्ष्म है याकौं सूझता नाहीं। अर आपकौं इनि कार्यनिका कर्त्ता दीखै नाहीं तातैं इनिके होनेविषै कै तौ आपकौं कर्त्ता मानैं कै काहू औरकौं कर्त्ता मानैं। अर आपका वा अन्यका कर्त्तापना न भासै तौ गहलरूप होय भवितव्य मानै। ऐसैं ही बंधतत्त्वका अयथार्थ ज्ञान होतैं अयथार्थ श्रद्धान हो है। बहुरि आस्रवका अभाव होना सो संवर है। जो आस्रवकौं यथार्थ न पहिचानै ताकै संवरका यथार्थश्रद्धान कैसे होइ? जैसैं काहूकै अहित आचरण है। वाकौं वह अहित न भासै तौ ताके अभावकौं हितरूप कैसे मानैं। तैसैं ही जीवकै आस्रवकी प्रवृत्ति है। याकौं वह अहित न भासै तौ ताके अभावरूप संवरकौं कैसे हित मानै। बहुरि अनादितैं इस जीवकै आस्रवभाव ही भया संवर कबहू न भया तातैं संवरका होना भासै नाहीं। संवर होतैं सुख हो है सो भासै नाहीं। संवरतैं आगामी दुख न होसी सो भासै नाहीं। तातैं आस्रवका तौ संवर करै नाहीं, अर तिनि

अन्य पदार्थनिका दुखदायक मानै है। तिनिहीकै न होनेका उपाय करै है सो अपने आधीन नाहीं। वृथा ही खेद खिन्न होय। ऐसैं संवरतत्वका अयथार्थ ज्ञान होतैं अयथार्थ श्रद्धान हो हैं। बहुरि बंधका एकदेश अभाव होना सो निर्जरा है। जो बंधकौं यथार्थ न पहिचानै ताकै निर्जराका यथार्थ श्रद्धान कैसैं होय? जैसै भक्षण किया हुवा विषआदिकतै दुख होता न जानै तौ ताकै उषालका[1] उपायकों कैसैं भला जानै। तैसैं बंधन-रूप किए कर्मनितै दुख होना न जानै तौ तिस निर्जराका उपायकौ कैसैं भला जानै। बहुरि इस जीवकै इंद्रियनितैं सूक्ष्मरूप कर्मनिका तौ ज्ञान होता नाहीं। बहुरि तिनविषै दुखकौ कारनभूत शक्ति है ताका ज्ञान नाहीं तातै अन्य पदार्थनिहीके निमित्तकौं दुखदायक जानि तिनिकेई अभाव करनेका उपाय करै हैं। सो अपनें आधीन नाहीं। बहुरि कदाचित् दुख दूरि करनेके निमित्त कोई इष्ट संयोगादि कार्य बनै है सो वह भी कर्मके अनुसार बनै है। तातैं तिनिका उपायकरि वृथा ही खेद करै है। ऐसे निर्जरातत्वका अयथार्थ ज्ञान होतै अयथार्थ श्रद्धान हो है। बहुरि सर्व कर्मबं-धका अभाव ताका नाम मोक्ष है। जो बंधकौं वा बंधजनित सर्व दुखनिकौ नाहीं पहिचानै ताकै मोक्षका यथार्थ श्रद्धान कैसे होइ। जैसैं काहूकै रोग है वह तिस रोगकौं वा रोगजनित दुखनिकौं न जानै तौ सर्वथा रोगके अभावकौ कैसैं भला जानै? बहुरि इस जीवकै कर्मका वा तिनकी शक्तिका तौ ज्ञान नाहीं तातैं बाह्यपदा

---

[1] नष्ट करनेके।

र्थनिकौं दुखका कारन जानि तिनकै सर्वथा अभाव करनेका उपाय करै है। अर यह तौ जानै सर्वथा दुःखदूरि होनेका कारण इष्ट सामग्रीनिकौ मिलाय सर्वथा सुखी होना सो कदाचित् होय सकै नाहीं। यह वृथा खेद करै है। ऐसै मिथ्यादर्शनतै मोक्षतत्त्वका अयथार्थ ज्ञान होनेतैं अयथार्थ श्रद्धान हो है। या प्रकार यह जीव मिथ्यादर्शनतै जीवादि सप्ततत्त्व प्रयोजनभूत हैं तिनिका अयथार्थ श्रद्धान करै है। बहुरि पुण्यपाप हैं ते इनिके विशेष है। सो इन पुण्य पापनिकी एक जाति है तथापि मिथ्यादर्शनतैं पुण्यकौ भला जानै है। पापकौ बुरा जानै है पुण्यकरि अपनी इच्छाके अनुसार किंचित् कार्य बनै है ताकौ भला जानै है। पापकरि इच्छाके अनुसार कार्य न बनै ताकौ बुरा जानै है सो दोन्यौं ही आकुलताके कारण है तातै बुरे ही हैं। बहुरि यह अपनी मानितै तहां सुखदुख मानै है। परमार्थतैं जहां आकुलता है तहां दुःख ही है। तातै पुण्यपापके उदयकौ भला बुरा जानना भ्रम ही है। बहुरि केई जीव कदाच्चित पुण्यपापके कारन जे शुभ अशुभ भाव तिनिकौ भले बुरे जानै है सो भी भ्रम है। जातै दोऊ ही कर्मबंधके कारन हैं। ऐसैं पुण्यपापका अयथार्थज्ञान होतैं अयथार्थश्रद्धान हो है। याप्रकार अतत्वश्रद्धानरूप मिथ्यादर्शनका स्वरूप कह्या। यह असत्यरूप है तातैं याहीका नाम मिथ्यात्व है। बहुरि यह सत्यश्रद्धानतै रहित है तातैं याहीका नाम अदर्शन ह। अब मिथ्याज्ञानका स्वरूप कहिए है,—

प्रयोजनभूत जीवादि तत्वनिका अयथार्थ जानना ताका नाम

मिथ्याज्ञान है। ताकरि तिनिके जाननेविषै संशय विपर्यय अनध्य-वसाय हो है। 'तहां ऐसैं है कि ऐसैं है' ऐसा जो परस्पर विरुद्धता लिए दोयरुप ज्ञान ताका नाम संशय है। जैसे 'मै आत्मा हौं कि शरीर हौं ऐसा जानना। बहुरि ऐसैं ही है ऐसा वस्तुस्वरूपतैं विरुद्धतालिए एकरूप ज्ञान ताका नाम विपर्यय है। जैसे मैं शरीर हौं' ऐसा जानना। बहुरि 'किछू है' ऐसा निर्द्धाररहित विचार ताका नाम अनध्यवसाय है। जैसै 'मैं कोई हौं, ऐसा जानना। याप्रकार प्रयोजनभूत जीवादि तत्वनिविषै संशय विपर्यय अनध्यवसायरूप जो जानना होय ताका नाम मिथ्याज्ञान है। बहुरि अप्रयोजनभूत पदार्थनिकौं यथार्थ जानै ताकी अपेक्षा मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञान नाम नाहीं है। जैसैं मिथ्यादृष्टि जेवरीकौं जेवरी जानै तौ सम्यग्ज्ञान नाम न होय। अर सम्यग्दृष्टि जेवरीकौं सांप जानै तौ मिथ्याज्ञान नाम न होय। इहां प्रश्न,—जो प्रत्यक्ष सांचा झूठा ज्ञानकौं सम्यग्ज्ञान मिथ्याज्ञान कैसै न कहिए! ताका समाधान—जहां जाननेहीका– सांच झूठ निर्द्धार करनेहीका प्रयोजन होय तहां तौ कोई पदार्थ ताका सांचा झूठा जाननेकी अपेक्षा ही मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञान नाम पावै है। जैसैं प्रत्यक्ष परोक्षप्रमाणका वर्णनविषै कोई पदार्थ होय ताका सांचा जाननेरूप सम्यग्ज्ञानका ग्रहण किया है। संशयादिरूप जाननेकौ अप्रमाणरूप मिथ्याज्ञान कह्या है। बहुरि इहां संसार मोक्षके कारणभूत सांचा झूठा जाननेका निर्द्धार करना है सो जेवरी सर्पादिकका यथार्थ वा अन्यथा ज्ञान संसार मोक्षका कारन नाहीं। तातैं तिनिकी अपेक्ष

इहां मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञान न कह्या। इहां प्रयोजनभूत जीवादिक तत्त्वनिका जाननेकी अपेक्षा मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञान कह्या है। इस ही अभिप्रायकरि सिद्धांतविषै मिथ्यादृष्टीका तौ सर्व जानना मिथ्याज्ञान ही कह्या अर सम्यग्दृष्टीका सर्व जानना सम्यग्ज्ञान कह्या। इहां प्रश्न,—जो मिथ्यादृष्टीकै जीवादि तत्त्वनिका अयथार्थ जानना है ताकौं मिथ्याज्ञान कहौ। जेवरी सर्पादिकके यथार्थ जाननेकौं तौ सम्यग्ज्ञान कहौ। ताका समाधान—

मिथ्यादृष्टी जानै है तहां वाकै सत्ता असत्ताका विशेष नाहीं है। तातैं कारणविपर्यय वा स्वरूपविपर्यय वा भेदाभेदविपर्ययकौं उपजावै है। तहां जाकौं जानै है ताका मूल कारणकौं न पहिचानै। अन्यथा कारण मानै सो तो कारणविपर्यय है। बहुरि जाकौं जानै ताका मूलवस्तुस्वरूप स्वरूप ताकौं न पहिचानै अन्यथास्वरूप मानै सो स्वरूपविपर्यय है। बहुरि जाकौं जानै ताकौं ए इनतैं भिन्न है ए इनतैं अभिन्न है ऐसा न पहिचानै अन्यथा भिन्न अभिन्नपनौ मानै सो भेदाविपर्यय है। ऐसै मिथ्यादृष्टीकै जाननेविषै विपरीतता पाइए है। जैसे मतवाला माताकौ भार्या मानै भार्याकौ माता मानै तैसे मिथ्यादृष्टीकै अन्यथा जानना है। बहुरि जैसे काहूकालविषै मतवाला माताकौं माता वा भार्याकौं भार्या भी जानै तौ भी वाकै निश्चयरूप निर्द्धारकरि श्रद्धान लिए जानना न हो है। तातैं ताकै यथार्थज्ञान न कहिए। तैसै मिथ्यादृष्टी काहू-कालविषै किसी पदार्थकौं सत्य भी जानै तौ भी वाकै निश्चयरूप निर्द्धारकरि श्रद्धानलिए जानना न हो है। अथवा सत्य भी जानै

परंतु तिनकरि अपना प्रयोजन जो अयथार्थ ही साधै है तातैं वाकै सम्यग्ज्ञान न कहिए। ऐसा मिथ्यादृष्टीकै ज्ञानकौं मिथ्याज्ञान कहिए है। इहां प्रश्न,–जो इस मिथ्यातका कारन कौन है ? ताका समाधान,—

मोहके उदयतैं जो मिथ्यात्वभाव होय सम्यक्त्व न होय सो इस मिथ्याज्ञानका कारण है। जैसै विषके संयोगतैं भोजन भी विषरूप कहिए तैसैं मिथ्यात्वके संबंधतैं ज्ञान है सो मिथ्याज्ञान नाम पावै। इहां कोऊ कहै ज्ञानावरणका निमित्त क्यौं ना कहौ? ताका समाधान,—

ज्ञानावरणके उदयतैं तौ ज्ञानका अभावरूप अज्ञानभाव हो है। बहुरि क्षयोपशमतैं किंचित् ज्ञानरूप मतिज्ञानआदि ज्ञान हो हैं। जो इनिविषै काहूकौं मिथ्याज्ञान काहूकौं सम्यग्ज्ञान कहिए तौ दोऊंहीका भाव मिथ्यादृष्टी वा सम्यग्दृष्टीकै पाइए है तातैं तिनि दोऊंनिकै मिथ्याज्ञान वा सम्यग्ज्ञानका सद्भाव होय जाय सो सिद्धांतविरुद्धहै। तातैं ज्ञानावरणका निमित्त बनै नाहीं। बहुरि इहां कोऊ पूछै कि जेवरी सर्पादिकका अयथार्थज्ञानका कौन कारन है तिसहीकौं जीवादितत्त्वनिका अयथार्थ यथार्थज्ञानका कारन कहौ, ताका उत्तर,—

जो जाननेविषै जेता अयथार्थपना हो है तेता तौ ज्ञानावरणका उदयतैं हो है। अर यथार्थपना हो है तेता ज्ञानावरणके क्षयोपशमतैं हो है। जैसैं जेवरीकौं सर्प जान्या सो यथार्थ जाननेकी शक्तिका कारन उदय है तातैं अयथार्थ जानै है। बहुरि

जेवरीकौं जेवरी जानी सो यथार्थ जाननेकी शक्तिका कारन क्षयोपशम है तातैं यथार्थ जानै है। तैसै ही जीवादि तत्वनिका यथार्थ जाननेकी शक्ति न होने वा होनेविषै ज्ञानावरणहीका निमित्त है परंतु जैसै काहूपुरुषकै क्षयोपशमतैं दुखकौ वा सुखकौ कारणभूत पदार्थनिकौ यथार्थ जाननेकी शक्ति होय तहां जाकै असातावेदनीका उदय होय सो दुखकौ कारनभूत जो होय तिसहीकौ वेदै सुखका कारनभूत पदार्थनिकौ न वेदै अर जो वेदै तौ सुखी हो जाय। सो असाताका उदय होतै होय सकै नाहीं। तातै इहां दुखकौ कारनभूत अर सुखकौं कारनभूत पदार्थ वेदनैविषै ज्ञानावरणका निमित्त नाहीं असाता साताका उदय ही कारणभूत है। तैसैं ही जीवकै प्रयोजनभूत जीवादिकतत्व अप्रयोजनभूत अन्य तिनिकै यथार्थ जाननेकी शक्ति होइ। तहां जाकै मिथ्यात्वका उदय होइ सो जे अप्रयोजनभूत होइ तिनिहीकौ वेदै जानै प्रयोजनभूतकौं न जानै। जो प्रयोजनभूतकौं जानै तौ सम्यग्ज्ञान होय जाय सो मिथ्यात्वका उदय होतैं होय सकै नाहीं। तातै इहां प्रयोजनभूत अप्रयोजनभूत पदार्थ जाननेविषै ज्ञानावरणका निमित्त नाहीं। मिथ्यात्वका उदय अनुदय ही कारनभूत है। इहा ऐसा जानना- जहां एकेंद्रियादिककै जीवादि तत्त्वनिका यथार्थ जाननेकी शक्ति ही न होय तहां तौ ज्ञानावरणका उदय अर मिथ्यात्वका उदयतै भया मिथ्यादर्शन इन दोऊनिका निमित्त है। बहुरि जहां संज्ञी मनुष्यादिकै क्षयोपशमादि लब्धि होतै शक्ति होय अर नैं जानै तहां मिथ्यात्वके उदयहीका निमित्त जानना। याहीतै

मिथ्याज्ञानका मुख्य कारण ज्ञानावरण न कह्या मोहका उदयतैं भया भाव सो ही कारण कह्या है। बहुरि इहां प्रश्न-जो ज्ञान भए श्रद्धान हो है तातैं पहिलै मिथ्याज्ञान कहौ पीछैं मिथ्यादर्शन कहौ ताका समाधान,—

है तौ ऐसै ही, जाने विना श्रद्धान कैसै होय परंतु मिथ्या अर सम्यक् ऐसी संज्ञा ज्ञानकै मिथ्यादर्शन सम्यग्दर्शनकै निमित्ततैं हो है। जैसैं मिथ्यादृष्टी वा सम्यग्दृष्टी सुवर्णादि पदार्थकौ जानै तौ समान है परंतु सो ही जानना मिथ्यादृष्टिकै मिथ्याज्ञान नाम पावै सम्यग्दृष्टीकै सम्यग्ज्ञान नाम पावै। ऐसैं ही सर्व मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञानकौं कारन मिथ्यादर्शन सम्यग्दर्शन जानना। तातैं जहां सामान्यपनै ज्ञान श्रद्धानका निरूपण होय तहां तौ ज्ञान कारणभूत है ताकौं पहिलै कहना अर श्रद्धान कार्यभूत है ताकौ पीछैं। बहुरि जहां मिथ्या सम्यग्ज्ञान श्रद्धनका निरूपण होय तहां श्रद्धान कारनभूत है ताकौं पहिलै कहना, ज्ञान कार्यभूत है ताकौ पीछैं कहना। बहुरि प्रश्न--जो ज्ञान श्रद्धान तौ युगपत् हो है इनविषै कारण कार्यपना कैसै कहौ हौ? ताका समाधान,—

वह होय तौ वह होय इस अपेक्षा कारणकार्यपना हो है। जैसैं दीपक अर प्रकाश युगपत् हो है तथापि दीपक होय तौ प्रकाश होय तातैं दीपक कारण है प्रकाश कार्य है। तैसै ही ज्ञान श्रद्धान है वा मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञानकै वा सम्यग्दर्शन ज्ञानकै कारणकार्यपना जानना। बहुरि प्रश्न,--जो मिथ्यादर्शनके संयोगतैं

ही मिथ्याज्ञान नाम पावै है तौ एक मिथ्यादर्शन ही संसारका कारण कहना इहां मिथ्याज्ञान जुदा काहेकौ कह्या ? ताका समाधान,--

ज्ञानहीकी अपेक्षा तौ मिथ्यादृष्टी वा सम्यग्दृष्टीकै क्षयोप शमतै भया यथार्थ ज्ञान तामै किछू विशेष नाहीं। अर यहज्ञान केवलज्ञान विषै भी जाय मिलै है, जैसै नदी समुद्रमै मिलै है। यामैं कछू दोष नाहीं परंतु क्षयोपशम ज्ञान जहां लागै तहां एक ज्ञेयविषै लागै सो यह मिथ्यादर्शनके निमित्ततै अन्य ज्ञेयनिविषै तौ ज्ञान लागै अर प्रयोजनभूत जीवादि तत्वनिका यथार्थ निर्णय करनेविषै न लागै सो यह ज्ञानविषै दोष भया। याकौ मिथ्याज्ञान कह्या। बहुरि जीवादितत्वनिका यथार्थ श्रद्धान न होय सो यह श्रद्धानविषै दोष भया याकौ मिथ्यादर्शन कह्या। ऐसै लक्षणभेदतै मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञान जुदा कह्या। याप्रकार मिथ्याज्ञानका स्वरूप कह्या। इसहीकौं तत्वज्ञानके अभावतै अज्ञान कहिए है। अपना प्रयोजन न सधै तातै याहीकौं कुज्ञान कहिए है। अब मिथ्याचारित्रका स्वरूप कहिए है,--

चारित्र मोहके उदयतै कषायभाव होय. तिसका नाम मिथ्याचा· रित्र है वहां अपनी स्वभावरूप प्रवृत्ति नाही यह दुखी है ऐसी झूठी परस्वभावरूप प्रवृत्ति किया चाहै सो बनै नाहीं तातै याका नाम मिथ्याचारित्र है। सो दिखाइए है- अपना स्वभाव तौ दृष्टा ज्ञाता है सो आप केवल देखनहारा जाननहारा तौ रहै

नाहीं। जिन पदार्थनिकौं देखै जानैं तिनविषै इष्ट अनिष्टपनौं मानै तातैं रागी द्वेषी होय काहूका सद्भावकौं चाहै काहूका अभावकौं चाहै। सो उनका सद्भाव अभाव याका किया होता नाहीं। जातैं कोई द्रव्य कोई द्रव्यका कर्त्ता है नाहीं। सर्व द्रव्य अपने अपने स्वभावरूप परिणमै हैं। यह वृथा ही कषायभावकरि आकुलित हो है बहुरि कदाचित् जैसै आप चाहै तैसैं ही पदार्थ परिणमैं तौ अपना परिणमाया तौ परिणम्या नाहीं। जैसैं गाडा चालै है अर वाकौं बालक धकोयकरि ऐसा मानै कि याकौ मैं चलाउं हूं सो वह असत्य मानै है। जो वाका चलाया चालै है तौ वह न चालै तब क्यौ न चलावै! तैसैं पदार्थ परिणमैं हैं अर उनकौं यह जीव अनुसारि होयकरि ऐसा मानैं जो याकौ मैं ऐसैं परिणमावौं हौं सो यह असत्य मानै है। जो याका परिणमाया परिणमै तौ वै तैसैं न परिणमै तब क्यौ न परिणमावै; सो जैसैं आप चाहै तैसैं तौ पदार्थका परिणमन कदाचित् ऐसैं ही बनाव बनै तब हो है। बहुतपरिणमन तौ आप न चाहैं तैसैं ही होते देखिए है। तातै यह निश्चय है अपना किया काहूका सद्भाव अभाव होता नाहीं। कषायभाव करनेतैं कहा होय केवल आप ही दुखी होय। जैसै कोऊ विवाहादि कार्यविषै जाका किछू कह्या न होय अर वह आप कर्त्ता होय कषाय करै तौ आपही दुखी होय तैसैं जानना। तातैं कषायभाव करना ऐसा है जैसा जलका बिलोवना किछू कार्यकारी नाहीं। तातैं इनि कषायनिकी प्रवृत्तिकौ मिथ्याचारित्र कहिए है अर कषायभाव हो

हैं, सो पदार्थनिकै इष्ट अनिष्ट माननेतैं हो हैं. सो इष्ट अनिष्ट मानना मिथ्या है । जातै कोई पदार्थ इष्ट अनिष्ट है नाहीं कैसै सो कहिए है—

जो आपकौं सुखदायक उपकारी होय ताकौं इष्ट कहिए अर जो आपकौं दुखदायक अनुपकारी होय ताकौ अनिष्ट कहिए। सर्व लोकमै सर्व पदार्थ अपने २ स्वभावके कर्त्ता है । कोऊ काहुकौं सुखदायक दुखदायक उपकारी अनुपकारी है नाहीं। यह जीव अपने परिणामनिविषै तिनिकौ सुखदायक उपकारी जानि इष्ट जानै अथवा दुखदायक अनुपकारी जानि अनिष्ट मानै है जातै एक ही पदार्थ काहूकौ इष्ट लागै है काहूकौं अनिष्ट लागैं है। जैसैं जाकौं वस्त्र न मिलै ताकौ मोटा वस्त्र इष्ट लागैं अर जाकौ महीन वस्त्र मिलै ताकौ अनिष्ट लागैं है। सूकरादिककौ विष्ठा इष्ट लागै है। देवादिककौ अनिष्ट लागै है। काहूकौ मेघवर्षा इष्ट लागै है काहूकौं अनिष्ट लागै है। ऐसै ही अन्य जानने। बहुरि याही प्रकार एक जीवकौं भी एक ही पदार्थ काहूकालविषै इष्ट लागै है काहूकालविषै अनिष्ट लागै है। बहुरि यह जीव जाकौ मुख्यपनै इष्ट मानै सो भी अनिष्ट होता देखिए है । इत्यादि जाननै । जैसै शरीर इष्ट है सो रोगादिसहित होय तब अनिष्ट होइ जाय। पुत्रादिक इष्ट हैं सो कारनपाय अनिष्ट होते देखिए हैं । इत्यादि जानने। बहुरि यह जीव जाकौं मुख्यपनै अनिष्ट मानै सो भी इष्ट होता देखिये है। जैसै गाली अनिष्ट लागै है सो सासरैमैं इष्ट लागै है। इत्यादि जानने । ऐसै पदार्थनिविषै इष्ट अनिष्ट-

पनौ है नाहीं । जो पदार्थविषै इष्ट अनिष्टपनौ होतौ, तौ जो पदार्थ इष्ट होता सो सर्वको इष्ट ही होता । जो अनिष्ट होता सो अनिष्ट ही होता । सो है नाहीं । यह जीव आप ही कल्पनाकरि तिनकौ इष्ट अनिष्ट मानै है । सो यह कल्पना झूंठी है । बहुरि पदार्थ है सो सुखदायक उपकारी वा दुखदायक अनुपकारी हो है सो आपहीतै नाहीं हो है पुण्यपापका उदयके अनुसारि हो है। जाकै पुण्यका उदय हो है ताकै पदार्थनिका संयोय सुखदायक उपकारी हो है । जाकै पापका उदय हो है ताकै पदार्थनिका संयोग दुखदायक अनुपकारी हो है । सो प्रत्यक्ष देखिये हैं । काहूकै स्त्रीपुत्रादिक सुखदायक हैं काहूकै दुखदायक हैं। व्यापार कीए काहूकै नफा हो है। काहूकै टोटा हो है । काहूकै शत्रु भी किंकर हो है। काहूकै पुत्र भी अहितकारी हो है । तातै जानिए है पदार्थ आप ही इष्ट अनिष्ट होते नाहीं । कर्म उदयके अनुसार प्रवर्त्तै हैं। जैसैं काहूकै किंकर अपने स्वामीके अनुसारि किसी पुरुषकौं इष्ट अनिष्ट उपजावैं तौ किछू किंकरनिका कर्त्तव्य नाहीं उनके स्वामीका कर्त्तव्य है। जो किंकरनिहीकौं इष्ट अनिष्ट मानै सो झूठ है । तैसै कर्मके उदयतैं प्राप्त भए पदार्थ कर्मके अनुसार जीवकौं इष्ट अनिष्ट उपजावैं तौ किछू पदार्थनिका कर्त्तव्य नाहीं । कर्म का कर्तव्य है जो पदार्थनिकौं इष्ट अनिष्ट मानै सो झूंठ है । तातैं यह बात सिद्ध भई कि पदार्थनिकौं इष्ट अनिष्ट मानि तिनविषै राग द्वेष करना मिथ्या है। इहां कोऊ कहै कि बाह्य वस्तुनिका संयोग कर्मनिमित्ततै बनै है तौ कर्मनिविषै तौ राग द्वेष करना । ताका

समाधान,—

कर्म तौ जड हैं उनकै किछू सुखदुख देनैकी इच्छा नाहीं। बहुरि वै स्वयमेव कर्मरूप परिणमै नाहीं। याके भावनिका निमित्ततैं कर्मरूप हो हैं। जैसै कोऊ अपने हाथ भाटा[1] लेय अपना सिर फोरै तौ भाटाका कहा दोष है। तैसैं ही जीव अपना रागादिक भावनिकरि पुद्गलकौं कर्मरूप परिणामाय अपना बुरा करै तौ कर्म के कहा दोष है। तातैं कर्मसौं भी रागद्वेष करना मिथ्या है। या प्रकार परद्रव्यनिकौं इष्ट अनिष्ट मानि रागद्वेष करना मिथ्या है। जो परद्रव्य इष्ट अनिष्ट होता अर तहां रागद्वेष करता, तो मिथ्या नाम न पावता। वह तौ इष्ट अनिष्ट नाहीं। अर यह इष्ट अनिष्ट मानि रागद्वेष करै तातैं इनि परिणानिकौं मिथ्या कह्या है। मिथ्यारूप जो परिणमन ताका नाम मिथ्या-चरित्र है। अब इस जीवके रागद्वेष होय है ताका विधान वा विस्तार दिखाइए है-

प्रथम तौ इस जीवके पर्यायविषै अहंबुद्धि है सो आपकौ वा शरिरकौं एक जानि प्रवर्तै है। बहुरि इस शरीरविषै आपकौ सुहावै ऐसी इष्ट अवस्था हो है, तिसविषै राग करै है। आपकौ न सुहावै ऐसी अनिष्ट अवस्था है तिसविषै द्वेष करै है। बहुरि शरीरकी इष्ट अवस्थाके कारणभूत बाह्य पदार्थनिविषै तौ राग करै है अर ताके घातकनिविषै द्वेष करै है। बहुरि शरीरकी अनिष्ट अवस्थाके कारणभूत बाह्य पदार्थनिविषै तौ द्वेष करै है

---

1 पत्थर।

अर ताके घातकनिविषै राग करै । है । बहुरि इनिविषै जिन बाह्य पदार्थनिसौं राग करै है तिनिके कारनभूत अन्य पदार्थनिविषै राग करै है तिनिके घातकनिविषै द्वेष करै है । बहुरि जिन बाह्य पदार्थनिसौं राग करै है तिनिके करणभूत अन्य पदार्थनिविषै द्वेष करैहै तिनिके घातक निविषै राग करै है । बहुरि इनिविषै भी जिनसौ राग करै तिनिके कारन घातक अन्य पदार्थ-निविषै राग वा द्वेषकरै है । अर जिनसौं द्वेष है तिनिके कारण वा घातक अन्यपदार्थनिविषै द्वेष वा राग करै है । ऐसैं ही राग द्वेषकी परंपरा प्रवर्तै है । बहुरि केई बाह्यपदार्थ शरीरकी अव-स्थाकों कारण नाहीं तिनिविषै भी रागद्वेष करै है । जैसैं गऊ आदिके पुत्रादिकतै किछू शरीरका इष्ट होय नाहीं तथापि तहां राग करै है । जैसैं कूकरा आदिक के बिलाई आवतैं किछू शरीरका अनिष्ट होय नाहीं तथापि तहां द्वेष करै है । बहुरि केई वर्ण गंध शब्दादिकके अवलोकनादिकतैं शरीरका इष्ट होता नाहीं तथापि तिनिविषै राग करै हैं । केई वर्णादिकके अवलोकनादिकतैं शरीरका अनिष्ट होता नाहीं तथापि तिनिविषै द्वेष करै है । ऐसैं भिन्न भिन्न बाह्य पदार्थनिविषै रागद्वेष हो है बहुरि इनिविषै भी जिनिसौ राग करै हे तिनिके कारण अर घातक अन्यपदार्थनिविषै राग वा द्वेष करै है । अर जिनस्यौं द्वेष करै है तिनिके कारण वा घातक अन्यपदार्थ तिनिविषै द्वेष वा राग करै है । ऐसै ही इहां भी रागद्वेषकी परंपरा प्रवर्तै है । इहां प्रश्न--जो अन्यपदार्थनिविषै तौ रागद्वेष करनेका प्रयोजन जान्या परंतु प्रथम तौ मूलभूत

शरीरकी अवस्थाविषै वा शरीरकी अवस्थकौ कारण नाहीं तिन पदार्थनिविषै इष्ट अनिष्ट माननैका प्रयोजन कहा है ? ताका समधान,–

जो प्रथम मूलभूत शरीरकी अवस्था आदिक है तिनिविषै भी प्रयोजन विचारि राग करै तौ मिथ्याचारित्र काहेकौं नाम पावै। तिनिविषै विना ही प्रयोजन रागद्वेष करै है। अर तिनिहीके अर्थि अन्यसौं रागद्वेष करै तातै सर्व रागद्वेषपरिणतिका नाम मिथ्या-चारित्र कह्या है। इहां प्रश्न-जो शरीरकी अवस्था वा बाह्यपदार्थ-निविषै इष्ट आनिष्ट माननेका प्रयोजन तौ भासै नाहीं अर इष्ट अनिष्ट मानेविना रह्या जाता नाहीं, सो कारण कहा है। ताका समाधान,–

इस जीवकै चारित्रमोहका उदयतै रागद्वेष भाव होय सो ए भाव कोई पदार्थका आश्रयविना होय सकै नाहीं। जैसै राग होय सो कोई पदार्थविषै होय। द्वेष होय सो कोई पदार्थविषै ही होय। ऐसै तिनिपदार्थनिकै अर रागद्वेषकै निमित्तनैमित्तिक संबंध है। तहां विशेष इतना जो केई पदार्थ तौ मुख्यपनै रागकौ कारन हैं। केई पदार्थ मुख्यपनै द्वेषकौ कारण है। केई पदार्थ काहूकौ काहूकालविषै रागके कारन हो है काहूकौ काहूकालविषै द्वेषके कारण हो है। इहां इतना जानना,-एक कार्य होनैविषै अनेक कारण चाहिए सो रागादिक होनैविषै अंतरंग कारण मोहका उदय है, सो वलवान् है। अर बाह्य कारण पदार्थ है सो वलवान् नाहीं है। महामुनिकै मोह मंद होतै बाह्य पदार्थनिका

निमित्त होतै भी रागद्वेष उपजते नाहीं। पापी जीवनकै मोह तीव्र होतै वाह्यकारण न होतै भी तिनिका संकल्पहीकरि रागद्वेष हो है। तातै मोहका उदय होतै रागादिक हो है। तहां जिस वाह्यपदार्थका आश्रयकारि रागभाव होना होय तिसविषै विना ही प्रयोजन वा किछू प्रयोजनलिए इष्टबुद्धि हो है। वहुरि जिस पदार्थका आश्रयकरि द्वेषभाव होना होय तिसविषै विना ही प्रयोजन वा किछू प्रयोजनलिए अनिष्टवुद्धि हो है। तातैं मोहका उदयतैं पदार्थनिकौं इष्ट अनिष्ट माने विना रह्या जाता नाहीं। ऐसैं पदार्थनिकैविषै इष्टअनिष्टवुद्धि होतैं रागद्वेषरूप परिणमन होय ताका नाम मिथ्याचारित्र जानना। वहुरि इनि रागद्वेषनिहीके विशेप क्रोध, मान, माया, लोभ हास्य, रति, अरति शोक भय, जुगुप्सा,स्त्रीवेद, पुरुषवेद नपुंसकवेदरूप कषायभाव हैं ते सर्व इस मिथ्याचारित्रके भेद जानने। इनिका वर्णन पूर्वैं किया ही है। वहुरि इस मिथ्याचारित्रविषैं स्वरूपाचरणरूप चारित्रका अभाव है तातैं याका नाम अचारित्र भी कहिए। वहुरि इहां परिणाम मिटै नाहीं अथवा विरक्त नाहीं तातैं याहीका नाम असंयम कहिए है वा अविरत कहिए है। जातैं पांच इंद्रिय अर मनके विपयनि विषैं वहुरि पंचस्थावर त्रसकी हिंसाविषै स्वच्छंदपणा हो है अर इनिके त्यागरूप भावा न होय सो ही असंयम वा अविरत वारह प्रकार कह्या है। सो कषायभाव भए ऐसे कार्य हो हैं। तातैं मिथ्याचारित्रका नाम असंयम वा अविरत जानना। वहुरि इस-हीका नाम अव्रत जानना। जातैं हिंसा अनृत स्तेय अब्रह्म परिग्रह

इनि पापकार्यनिविषै प्रवृत्तिका नाम अव्रत है। सो इनका मूलकारण प्रमत्तयोग कह्या है। प्रमत्तयोग है सो कषायमय है तातैं मिथ्याचारित्रका नाम अव्रत भी कहिए है। ऐसैं मिथ्या- चारित्रका स्वरूप कह्या। या प्रकार इस संसारी जीवकै मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञान मिथ्याचारित्ररूप परिणमन अनादितैं पाइए है। सो ऐसा परिणमन एकेंद्रिय आदि असंज्ञीपर्यंत तौ सर्व जीवनिकै पाइए है। वहुरि संज्ञी पंचेंद्रियनिविषै सम्यग्दृष्टी विना अन्य सर्व जीवनिकै ऐसा ही परिणम पाइए है। परिणमनविषै जैसा जहां संभवै तैसा तहां जानना जैसैं एकेंद्रियादिककै इंद्रियादि— कनिकी हीनता अधिकता पाइए है वा धन पुत्रादिकका संबंध मनुष्यादिककै ही पाइए है सो इनिकै निमित्ततै मिथ्यादर्शनादिकका वर्णन किया है। तिसविषै जैसा विशेष संभवै तैसा जानना। वहुरि एकेंद्रियादिक जीव इंद्रिय शरीरादिका नाम जानै नाहीं है। परंतु तिस नामका अर्थरूप जो भाव है तिसविषै पूर्वोक्त प्रकार परिणमन पाइए है। जैसै मैं स्पर्शकरि स्परसौं हौ शरीर मेरा है ऐसा नाम न जानै है तथापि इसका अर्थरूप जो भाव है तिसरूप परिणमै है। वहुरि मनुष्यादिक केई नाम भी जानै हैं अर ताके भावरूप परिणमै हैं। इत्यादि विशेष संभवै सो जान लेना। ऐसैं ए मिथ्यादर्शनादिकभाव जीवकै अनादितै पाइए है नवीन ग्रहे नाहीं। देखो याकी महिमा कि जो पर्याय धरै है तहां विना ही सिखाए मोहके उदयतै स्वयमेव ऐसा ही परिणमन हो है। वहुरि मनुष्यादिककैं सत्य विचार होनैके

कारण मिलैं तौ भी सम्यक् परिणमन होय नाहीं। श्रीगुरूके उपदेशका निमित्त बनै, वह वारंवार समझावै यह किछू विचार करै नाहीं। बहुरि आपकौं भी प्रत्यक्ष भासै सो तौ न मानै अर अन्यथा ही मानै। कैसै, सो कहिए है—मरण होतैं शरीर आत्मा प्रत्यक्ष जुदा हो है। एक शरीरकौं छोरि आत्मा अन्य शरीर धरै है सो व्यंतरादिक अपने पूर्व भवका संबंध प्रगट करते देखिए है। परंतु याकै शरीरतै भिन्नबुद्धि न होय सकै। स्त्रीपुत्रादिक अपने स्वार्थके सगे प्रत्यक्ष देखिए है। उनका प्रयोजन न साधै तब ही विपरीत होते देखिए है। यह तिनिविषै ममत्व करै है। अर तिनिकै अर्थि नरकादिकविषै गमनकौं कारण नाना पाप उपजावै है। धनादिक सामग्री अन्यकी अन्यकै होती देखिए है यह तिनिकौं अपनी मानै है। बहुरि शरीरकी अवस्था वा बाह्यसामग्री स्वयमेव होती विनशती देखिए है। यह वृथा आप कर्त्ता हो है। तहां जो अपने मनोरथ अनुसारि कार्य होय ताकौं तौ कहै मैं किया। अर अन्यथा होय ताकौं कहै मैं कहा करौ? ऐसैं ही होना था वा ऐसैं क्यौं भया। ऐसा मानै, सो कै तौ सर्वका कर्त्ता ही होना था कै अकर्त्ता रहना था। सो विचार नाहीं। बहुरि मरण अवश्य होगा ऐसा जानै परंतु मरणका निश्चयकरि किछू कर्त्तव्य करै नाहीं। इस पर्यायसंबंधी ही जतन करै है। बहुरि मरणका निश्चयकरि कबहू तौ कहै, मैं मरूंगा शरीरकौं जलावैंगे। कबहूं कहै मोकौं जलावैंगे। कबहू कहै जस रहा तौ हम जीवते ही हैं। कबहू कहै पुत्रादिक रहैंगे तौ मैं ही जीवौंगा। ऐसैं

बाउलाकीसी नाईं बकै है किछू सावधानी नाहीं। बहुरि आपकौं परलोकविषै प्रत्यक्ष जाता जानै ताका तौ इष्ट अनिष्टका किछू उपाय नाहीं। अर इहां पुत्र पोता आदि मेरी संततिविषै घनेकाल ताईं इष्ट रह्या करै अनिष्ट न होय। ऐसैं अनेक उपाय करै है। काहूका परलोक भए पीछै इस लोककी सामग्रीकरि उपकार भया देख्या नाहीं परंतु याकै परलोक होनेका निश्चय भए भी इस लोककी सामग्रीहीका यतन रहै है। बहुरि विषयकषायकी प्रवृत्तिकरि वा हिंसादि कार्यकरि आप दुखी होय, खेदखिन्न होय औरनिका वैरी होय, इस लोकविषै निंद्य होय परलोकविषै बुरा होय सो प्रत्यक्ष आप जानै तथापि तिनिहीविषै प्रवर्त्तै। इत्यादि अनेक प्रकार प्रत्यक्ष भासै ताकौ भी अन्यथा श्रद्दहै जानै आचरै सो यह मोहका माहात्म्य है ऐसैं यह मिथ्यादर्शनज्ञान चारित्ररूप अनादितैं जीव परिणमै है। इस ही परिणमनकरि संसारविषै अनेक प्रकार दुख उपजावनहारे कर्मनिका संबंध पाइए है। एई भाव दुःखनिके बीज हैं अन्य कोई नाहीं। तातैं हे भव्य जो दुखतैं मुक्त भया चाहै तौ इनि मिथ्यादर्शनादिक विभावनिका अभाव करना यह ही कार्य है इस कार्यके किए तेरा परम कल्याण होगा।

इति श्री मोक्षमार्गप्रकाशक नाम शास्त्रविषै मिथ्यादर्शनज्ञान चारित्रका निरूपणरूप चौथा अधिकार सम्पूर्ण भया ॥ ४ ॥

दोहा।

बहुविधि मिथ्यागहनकरि, मलिनभए निज भाव।
ताकौ हेतु अभाव है, सहजरूप दरसाव॥ १॥

अथ यह जीव पूर्वोक्तप्रकारकरि अनादितैं मिथ्यादर्शन ज्ञानचारित्ररूप परिणमै है ताकरि संसारविषै दुख सहतो संतो कदाचित् मनुष्यादिपर्यायनिविषै विशेष श्रद्धानादि करनेकी शक्तिकौं पावै। तहां विशेष मिथ्याश्रद्धानादिकके कारणनिकरि तिनि मिथ्याश्रद्धानादिककौं पोषै तौ तिस जीवका दुखतैं मुक्त होना अति दुर्लभ हो है। जैसैं कोई पुरुष रोगी है किछू सावधानीकौं पाय कुपथ्य सेवै तौ उस रोगीका सुलजना कठिन ही होय। तैसैं यह जीव मिथ्यात्वादि सहित है सो किछू ज्ञानादि शक्तिकौं पाय विशेष विपरीत श्रद्धानादिककै कारणनिका सेवन करै तौ इस जीवका मुक्त होना कठिन ही होय। तातैं जैसैं वैद्य कुपथ्यनिका विशेष दिखाय तिनिके सेवनकौं निषैधैं, तैसैं ही इहां विशेष मिथ्याश्रद्धानादिकके कारणनिका विशेष दिखाय तिनिका निषेध करिए है। इहां अनादितैं जे मिथ्यात्वादि भाव पाइए हैं ते तौ अगृहीतमिथ्यात्वादि जानने। जातैं ते नवीन ग्रहे नाहीं। बहुरि इनके पुष्ट करनेके कारणनिकरि विशेष मिथ्यात्वादि भाव होंय ते गृहीतमिथ्यात्वादि जानने। तहां अगृहीतमिथ्यात्वादिकका वर्णन तौ पूर्वै किया है सो जानना अर गृहीतमिथ्यात्वादिकका अब निरूपण करिए है सो जानना,—

कुदेव कुगुरु कुधर्म अर कल्पित तत्त्वनिका श्रद्धान सो तौ

मिथ्यादर्शन है। बहुरि जिनिकैविषै विपरीत निरूपणकरि रागादि पोषै होय ऐसे कुशास्त्र तिनिविषै श्रद्धानपूर्वक अभ्यास सो मिथ्याज्ञान है। बहुरि जिस आचरणविषै कषायनिका सेवन होय अर ताकौं धर्मरूप अंगीकार करै सो मिथ्याचारित्र है। अब इनका विशेष दिखाइए है,—इंद्र लोकपालइत्यादि। अद्वैतब्रह्म राम कृष्ण महादेव बुद्ध पीर पैगंबर इत्यादि। बहुरि हनुमान भैरूं क्षेत्रपाल देवी दिहाड़ी सती इत्यादि। बहुरि शीतला चौथि सांझी गणगोरि होली इत्यादि। बहुरि सूर्य चंद्रमा ग्रह ऊत पितर व्यंतर इत्यादि. बहुरि गऊ सर्प इत्यादि। बहुरि अग्नि जल वृक्ष इत्यादि। बहुरि शस्त्र दवात वासण इत्यादि अनेक तिनिका अन्यथा श्रद्धानकरि तिनिकौं पूजै। बहुरि तिनकरि अपना कार्य सिद्ध किया चाहै सो वै कार्य सिद्धिके कारन नाहीं तातैं ऐसे श्रद्धान गृहीतमिथ्यात्व कहिए है। तहां तिनिका अन्यथा श्रद्धान कैसैं हो है सो कहिए है,—

अद्वैतब्रह्मकौ सर्वव्यापी सर्वका कर्ता मानै सो कोई है नाहीं। मिथ्या कल्पना करै है। प्रथम वाकौं सर्वव्यापी मानै सो सर्व पदार्थ तौ न्यारे न्यारे प्रत्यक्ष हैं वा तिनिके स्वभाव न्यारे न्यारे देखिए हैं इनिकौ एक कैसैं मानिए है। एक मानना तौ इनि प्रकारनिकरि है--एक प्रकार तौ यह है जो सर्व न्यारे न्यारे हैं तिनिके समुदायकौ कल्पनाकरि ताका किछू नाम धरिए। जैसैं घोटक हस्ती इत्यादि भिन्न भिन्न हैं तिनिके समुदायका नाम सेना है। तिनितैं जुदा कोई सेना वस्तु नाहीं। सो इस प्रकार

सर्वपदार्थनिका नाम ब्रह्म है तौ ब्रह्म कोई जुदा वस्तु तौ न ठहऱ्या कल्पना मात्र ही ठहऱ्या। बहुरि एक प्रकार यह है— जो व्यक्ति अपेक्षा तौ न्यारे न्यारे हैं तिनिकौं जाति अपेक्षा कल्पनाकरि एक कहिए है। जैसैं सै घोटक (घोड़ा) हैं ते व्यक्तिअपेक्षा तौ जुदे जुदे सै ही हैं तिनिके आकारादिककी समानता देखि कल्पनाकरि एक जाति कहैं सो वह जाति तिनतैं जुदी तौ कोई है नाहीं। सो इस प्रकारकरि जो सबनिकी कोई एक जाति अपेक्षा एक ब्रह्म मानिए है तौ ब्रह्म जुदा तौ कोई न ठहरया। इहां भी कल्पनामात्र ही ठहरया। बहुरि एक प्रकार यह है जो पदार्थ न्यारे २ हैं तिनिके मिलापतैं एक स्कंध होय ताकौं एक कहिए। जैसैं जलके परमाणु न्यारे न्यारे हैं तिनिका मिलाप भए समुद्रादि कहिए अथवा जैसैं पृथवीके परमाणुनिका मिलाप भए घट आदि कहिए। सो यहां समुद्रादि वा घटादिक हैं ते तिन परमाणुनितैं भिन्न कोई जुदा तौ वस्तु नाहीं। सो इस प्रकारकरि जो सर्व पदार्थ न्यारे न्यारे हैं परंतु कदाचित् मिलि एक हो जाय हैं सो ब्रह्म है; ऐसैं मानिए तौ इनितैं जुदा तौ कोइ ब्रह्म न ठहरया। बहुरि एक प्रकार यह है कि अंग तौ न्यारे न्यारे हैं अर जाके अंग है सो अंगी एक है। जैसैं नेत्र हस्त पादादिक भिन्न भिन्न हैं अर जाकैं ए हैं सो मनुष्य एक है सो इस प्रकार जो सर्व पदार्थ तो अंग हैं अर जाकै ए है सो अंगी ब्रह्म है। यह सर्व लोक विराट्स्वरूप ब्रह्मका अंग है, ऐसैं मानिए तौ मनुष्यकै हस्तपादादिक अंगनिकै परस्पर अंतराल भए तौ

एकपना रहता नाहीं। जुड़े रहे ही एक शरीर नाम पावै। सो लोकविषै तौ पदार्थनिकै अंतराल परस्पर भासै है। याका एकत्वपना कैसै मानिए? अंतराल भए भी एकत्व मानिए तौ भिन्नपना कहां मानिए। इहां कोऊ कहै कि समस्त पदार्थनिके मध्यविषै सूक्ष्मरूप ब्रह्मके अंग हैं तिनिकरि सर्व पदार्थ जुड़ि रहे हैं ताकौ कहिए है;—

जो अंग जिस अंगतै जुरया है तिसहीतै जुरया रहै है कि टूटि टूटि अन्य अन्य अंगनिसौं जुरया करै है। जो प्रथम पक्ष ग्रहण करैगा तौ सूर्यादिक गमन करै है, तिनिके साथि जिन सूक्ष्म अंगनितै वे जुरे रहैं ते भी गमन करै। बहुरि तिनिकौं गमन करते सूक्ष्म अंग अन्य स्थूल अंगनितैं जुरे रहैं ते भी गमन करै हैं सो ऐसै सर्व लोक अस्थिर होय जाय। जैसै शरीरका एक अंग खींचे सर्व अंग खींचे जांय, तैसै एक पदार्थकौं गमनादि करतैं सर्व पदार्थनिका गमनादि होय सो भासै नाहीं। बहुरि जो द्वितीय पक्ष ग्रहैगा, तौ अंग टूटनैतैं भिन्नपना होय जाय तब एकपना कैसै रह्या? तातैं सर्वलोकका एकत्वकौं ब्रह्म मानना भ्रम ही है। बहुरि एक प्रकार यह है, जो पहिले एक था पीछै अनेकभया बहुरि एक होय जाय तातै एक है। जैसैं जल एक था सो वासणनिमैं जुदा जुदा भया बहुरि मिलै तब एक होय जाय तातैं एक है। वा जैसै सोनाका [1]गदा एक था सो कंकण कुंडलादिरूप भया बहुरि मिलिकरि सोनाका एक गदा होय

---

[1] डला वा पांसा।

जाय । तैसैं ब्रह्म एक था पीछैं अनेकरूप भया बहुरि एक होयगा तातैं एक ही है। इस प्रकार एकत्व मानै है तौ जब अनेकरूप भया तब जुरया रह्या कि भिन्न भया। जोजुरया कहैगा तौ पूर्वोक्त दोष आवैगा। भिन्न भया कहैगा तो तिसकाल तौ एकत्व न रह्या। बहुरि जल सुवर्णादिककौं भिन्न भए भी एक कहिए है सो तौ एकजातिअपेक्षा कहिए है। सर्व पदार्थनिकी एक जाति भासै नाहीं। कोऊ चेतन है कोऊ अचेतन है इत्यादि अनेकरूप है तिनकी एक जाति कैसैं कहिए। बहुरि जाति-अपेक्षा एकत्व मानना कल्पनामात्र पूर्वैं कह्या ही है। बहुरि पहिले एक था पीछै भिन्न भया मानै है तौ जैसैं एक पाषाणादि फूटि टुकडे होय जाय है तैसैं ब्रह्मके खंड होय गए बहुरि तिनिका एकठा होना मानै है तौ तहां तिनिका स्वरूप भिन्न रहै है कि एक होय जाय है। जो भिन्न रहै है तौ तहां अपने अपने स्वरूपकरि भिन्न ही है। अर एक होय जाय तौ जड भी चेतन होय जाय वा चेतन जड होय जाय। तहां अनेक वस्तुनिका एक वस्तु भया तब काहू कालविषै अनेक वस्तु काहू कालविषै एक वस्तु ऐसा कहना बनै। अनादि अनंत एक ब्रह्म है ऐसा कहना बनै नाहीं। बहुरि जो कहैगा लोकरचना होतैं वा न होतैं ब्रह्म जैसाका तैसा ही रहै है तातैं ब्रह्म अनादि अनंत है। सो हम पूछैं हैं लोकविषै पृथिवी जलादिक देखिए हैं ते जुदे नवीन उत्पन्न भए है कि ब्रह्म ही इन स्वरूप भया है? जो जुदे नवीन उत्पन्न भए है तो ए न्यारे भए ब्रह्म न्यारा रहा सर्वव्यापी

अद्वैतब्रह्म न ठहरया। बहुरि जो ब्रह्म ही इन स्वरूप भया तौ कदाचित् लोक भया कदाचित ब्रह्म भया तौ जैसाका तैसा कैसैं रह्या? बहुरि वै कहै हैं जो सब ही ब्रह्म तौ लोकस्वरूप न हो है वाका कोई अंश ही है। ताकौं कहिए है--जैसैं समुद्रका एक बिंदु विषरूप भया तहां स्थूलदृष्टिकरि तौ गम्य नाहीं परंतु सूक्ष्मदृष्टि दिए तौ एकबिंदुअपेक्षा समुद्रकै अन्यथापना भया। तैसै ब्रह्मका एक अंश भिन्न होय लोकरूप भया। तहां स्थूलविचारकरि तौ किछू गम्य नाहीं परंतु सूक्ष्मविचार किया तौ एकअंशअपेक्षा ब्रह्मकै अन्यथापना भया। यह अन्यथापना और तौ काहूकै भया नाहीं। ऐसैं सर्वरूप ब्रह्मकौ मानना भ्रम ही है।

बहुरि एक प्रकार यह है,--जैसै आकाश सर्वव्यापी है तैसै सर्व व्यापी है। सो इसप्रकार मानै है तौ आकाशवत् बडा ब्रह्मकौं मानि वा जहां घटपटादिक है तहां जैसै आकाश है तैसै तहां ब्रह्म भी है ऐसा भी मानि। परंतु जैसैं घटपटादिककौ अर आकाशकौं एक ही कहिए तौ कैसैं बनै तैसै लोककौ अर ब्रह्मकौ एक मानना कैसैं संभवै? बहुरि आकाशका तौ लक्षण सर्वत्र भासै है तातैं ताका तौ सर्वत्र सद्भाव मानिए है। ब्रह्मका तौ लक्षण सर्वत्र भासता नाहीं तातै ताका सर्वत्र सद्भाव कैसै मानिए? ऐसै या प्रकारकरि भी सर्वरूप ब्रह्म नाहीं है। ऐसै ही विचारकरतैं किसी भी प्रकारकरि एक ब्रह्म संभवै नाहीं। सर्व पदार्थ भिन्न भिन्न ही भासैं है। इहां प्रतिवादी कहै है--जो सर्व एक ही है परंतु तुम्हारै भ्रम है तातै तुमकौं एक भासै नाहीं। बहुरि तुम युक्ति

कही सो ब्रह्मका स्वरूप युक्तिगम्य नाहीं। वचन अगोचर है, एक भी है अनेक भी है। जुदा भी है मिल्या भी है। वाकी महिमा ऐसी ही है। ताकौं कहिए है,—

जो प्रत्यक्ष तुजकौं वा सबनिकौं भासै ताकौं तौ तू भ्रम कहै। अर युक्तिकरि अनुमान करिए सो तू कहै है कि सांचा स्वरूप युक्तिगम्य है नाहीं। बहुरि कहै सांचास्वरूप वचनअगोचर है तौ वचन विना कैसैं निर्णय करै? बहुरि तू कहै एक भी है अनेक भी है जुदा भी है मिल्या भी है सो तिनकी अपेक्षा बतावै नाहीं बाउलेकीसी नांई ऐसैं भी है ऐसैं भी है ऐसा कहि याकौं महिमा बतावै सो जहां न्याय न होय है तहां झूठे ऐसैं ही वाचालपना करै है सो करो। न्याय तौ जैसैं सांचा है तैसैं ही होगा बहुरि अब तिस ब्रह्मकौं लोकका कर्त्ता मानै है ताकौं मिथ्या दिखाइए है,—

प्रथम तौ ऐसा मानै है जो ब्रह्मकै ऐसी इच्छा भई कि—'एकोऽहं बहुस्यां, कहिए मैं एक हौं सो बहुत होस्यों। तहां पूछिए है—पूर्वअवस्थामैं दुःखी होय, तब अन्य अवस्थाकौं चाहै। सो ब्रह्म एकरूप अवस्थातैं बहुतरूप होनेकी इच्छा करी सो तिस एकरूप अवस्थाविषै कहा दुःख था? तब वह कहै है जो दुःख तौ न था ऐसा ही कौतूहल उपज्या। ताकौं कहिए है जो पूर्वैं थोरा सुखी होय अर कुतूहल किए घना सुखी होय सो कुतूहल करना विचारै। सो ब्रह्मकै एक अवस्थातैं बहुत अवस्थारूप भये घना सुख होना कैसैं संभवै? बहुरि जो पूर्वैं ही संपूर्ण सुखी

होय, तौ अवस्था काहेकौं पलटै। प्रयोजन विना तौं कोई किछू कर्तव्य करै नाहीं। बहुरि पूर्वै भी सुखी होयगा इच्छा अनुसार कार्य भए भी सुखी होगा परंतु इच्छा भई तिसकाल तौ दुखी होय। तब वह कहै है ब्रह्मकैं जिसकाल इच्छा हो है तिसकाल ही कार्य हो है तातैं दुःखी न हो है। तहां कहिए है, —स्थूल-कालकी अपेक्षा तौ ऐसैं मानौं परंतु सूक्ष्मकालकी अपेक्षा तौ इच्छाका और कार्यका होना युगपत् संभवै नाहीं। इच्छा तौ तब ही होय, जब कार्य न होय। कार्य होय, तब इच्छा न होय। तातैं सूक्ष्मकालमात्र इच्छा रही तब तौ दुःखी भया होगा। जातैं इच्छा है सो हीं दुःख है और कोई दुःखका स्वरूप है नाहीं। तातैं ब्रह्मकै इच्छाकी कल्पना करिए है सोमिथ्या है।

बहुरि वह कहै है इच्छा होतैं ब्रह्मकी माया प्रगट भई सो ब्रह्मकै माया भई तब ब्रह्म भी मायावी भया शुद्धस्वरूप कैसै रह्या। बहुरि ब्रह्मकै अर मायाकै दंडी दंडवत् संयोगसंबंध है कि अग्नि उष्णवत् समवायसंबंध है। जो संयोगसंबंध है तौ ब्रह्म भिन्न है माया भिन्न है अद्वैत ब्रह्म कैसैं रह्या? बहुरि जैसे दंडी दंडकौं उपकारी जानि ग्रहै है तैसैं ब्रह्म मायाकौ उपकारी जानै है तौ ग्रहै है, नाहीं तौ काहेकौं ग्रहै? बहुरि जिस मायाकौ ब्रह्म ग्रहै ताका निषेध करना कैसैं संभवै वह तौ उपादेय भई। बहुरि जो समवायसंबंध है तौ जैसै अग्निका उष्णत्व स्वभाव है तैसै ब्रह्मका मायास्वभाव ही भया। जो ब्रह्मका स्वभाव है ताका निषेध करना कैसैं संभवै। यह तौ उत्तम भई।

बहुरि वह कहै है कि–ब्रह्म तौ चैतन्य है माया जड़ है सो समवायसंबंधविषै ऐसे दोय स्वभाव संभवैं नाहीं। जैसैं प्रकाश और अंधकार एकत्र कैसैं संभवैं? बहुरि वह कहै है,–माया करि ब्रह्म आप तौ भ्रमरूप होता नाहीं ताकी मायाकरि जीव भ्रमरूप हो हैं। ताकौं कहिए है,-जैसैं कपटी अपने कपटकौं आप जानै सो आप भ्रमरूप न होय वाके कपटकरि अन्य भ्रमरूप होय जाय। तहां कपटी तौ वाहीकौं कहिए जानै कपट किया। ताकै कपटकरि अन्य भ्रमरूप भए तिनिकौं तौ कपटी न कहिए। तैसै ब्रह्म अपनी मायाकौं आप जानै सो आप तौ भ्रमरूप न होय वाकी मायाकरि अन्य जीव भ्रमरूप होय हैं। तहां मायावी तौ ब्रह्मकौं कहिए ताकी मायाकरि अन्य जीव भ्रमरूप भए तिनकौं मायावी काहेकौं कहिए।

बहुरि पूछिए है कि वे जीव ब्रह्मतैं एक हैं कि न्यारे हैं। जो एक हैं तौ जैसैं कोऊ आप ही अपने अंगनिकौं पीड़ा उपजावै तौ ताकौं बाउला कहिए है। तैसैं ब्रह्म आप ही आपतैं भिन्न नाहीं ऐसे अन्य जीवनिकौं मायाकरि दुखी करै है तौ याकौं कहा कहोगे, बहुरि जो न्यारे हैं तौ जैसैं कोऊ प्रयोजनभूत विना ही औरनिकौं भ्रम उपजावै पीड़ा देवै तौ ताकौं निकृष्ट ही कहिए। तैसैं ब्रह्म विना ही प्रयोजन अन्य जीवनिकौं माया उपजाय पीड़ा उपजावै तौ वाकौं कहा कहोगे। ऐसैं माया ब्रह्मकी कहिए है, सो भी भ्रम ही है।

बहुरि वै कहै हैं---जुदे जुदे बहुत पात्रनिविषै जल भर्‌या है

तिन सबनिविषै चंद्रमाका प्रतिबिंब जुदा जुदा पड़ै है । चंद्रमा एक है । तैसै जुदे जुदे बहुत शरीरनिविषै ब्रह्मका चैतन्य प्रकाश जुदा जुदा पाइए है । ब्रह्म एक है । तातै जीवनिकै चेतना है सो ब्रह्महीकी है । सो ऐसा कहना भी भ्रम ही है । जातै शरीर जड़ है याविषै ब्रह्मका प्रतिबिंबतै चेतना भई तौ घटपटादि जड़ है तिनविषै ब्रह्मका प्रतिबिंब क्यौं न पड़्या अर चेतना क्यौं न भई । बहुरि वै कहै है शरीरकौ तौ चैतन्य नाहीं करै है जीवकौं करै है । तब वाकौं पूछिए है कि जीवका स्वरूप चेतन है कि अचेतन है । जो चेतन है तौ चेतनका चेतन कहा करैगा । जो अचेतन है तौ शरीरकी वा घटादिककी वा जीवकी एक जाति भई । बहुरि वाकौं पूछिए है—ब्रह्मकी अर जीवनिकी चेतना एक है कि भिन्न है । जो एक है तौ ज्ञानका अधिक हीनपना कैसैं देखिए है । बहुरि ए जीव परस्पर वह वाकी जानीकौं न जानै वह वाकी जानीकौ न जानै सो कारण कहा ? जो तू कहैगा यह घट उपाधिका भेद है तो चेतना भिन्न भिन्न ठहरी । घट उपाधि मिटैं याकी चेतना ब्रह्ममैं मिलेगी कै नाश हो जायगी ? जो नाश हो जायगी तौ यह जीव अचेतन रह जायगा अर तू कहैगा जीव ही ब्रह्ममैं मिलि जाय है तौ तहां ब्रह्मविषै मिलै याका अस्तित्व रहै है कि नाहीं रहै है । जो अस्तित्व रहै है तौ यह रह्या याकी चेतना याकै रही ब्रह्मविषै कहा मिल्या ? अर जो अस्तित्व न रहै है तौ याका नाश भया ब्रह्मविषै कौन मिल्या ? बहुरि जो तू कहैगा ब्रह्मकी अर जीवकी चेतना भिन्नभिन्न है

तौ ब्रह्म अर सर्वजीव आप ही भिन्न भिन्न भिन्न ठहरे। ऐसैं जीवनिकै चेतना है सो ब्रह्मकी है ऐसा मानना भ्रम है।

शरीरादि मायाके कहो सो माया ही हाड मांसादिरूप हो है कि मायाके निमित्ततैं और कोई तिनरूप हो है। जो माया ही होय है तौ मयाके वर्ण गंधादिक पूर्वैं ही थे कि नवीन भए। जो पूर्वैं थे तौ पूर्वैं तौ माया ब्रह्मकी थी अर ब्रह्म अमूर्त्तीक है तहा वर्णादि कैसैं सभवैं। बहुरि जो नवीन भए तौ अमूर्त्तीकका मूर्त्तीक भया तब अमूर्त्तीक स्वभाव शाश्वता ठहरया। बहुरि जो कहैगा मायाके निमित्ततैं और कोई हो है तौ और पदार्थ तौ तू ठहरावता ही नाहीं भया कौन जो तू कहेगा नवीन पदार्थ निपजे, तौ ते मायातैं भिन्न निपजे कि अभिन्न निपजे मायातैं भिन्न निपजे तौ मायामयी शरीरादिक काहेकौं कहौ। ते तौ तिनपदार्थमय भये अर अभिन्न निपजे तौ माया ही तद्रूप भई नवीन पदार्थ निपजे काहेकौं कहौ। ऐसैं शरीरादिक माया स्वरूप हैं ऐसा कहना भ्रम है।

बहुरि वह कहै है मायातैं तीन गुण निपजे—राजस तामस सात्विक। सो यह भी कहना मिथ्या है। जातैं मानादि कषायरूप भावकौं राजस कहिए है, क्रोधादिक कषायरूप भावकौं तामस कहिए है, मंदकषायरूप भावकौं सात्विक कहिए है। सो ए तौ भाव चेतनामई प्रत्यक्ष देखिए है। अर मायाका स्वरूप जड़ कहो हो, सो जड़तैं ए भाव कैसैं निपजैं। जो जड़कै भी होंय तौ पाषाणादिकके भी होंय। सो तो चेतनास्वरूप जीव तिनिहीकै ए

भाव दीसै हैं। तातैं ए भाव मायातैं निपजे नाहीं जो मयाकौं चेतन ठहरावै तौ मानैं। सो मायाकौं चेतन ठहराए शरीरादिक मायातैं भिन्न भिन्न निपजे कहैगा तौं न मानैंगे। तातैं निर्द्धार कर भ्रमरूप मानैं नफा कहा है।

वहुरि वह कहै है तिनिगुणनितैं ब्रह्मा विष्णू महेश ए तीन देव प्रगट भए सो यह भी मिथ्या ही है। जातैं गुणीतैं तौ गुण होय गुणतैं गुणी कैसैं निपजै। पुरुषतैं तौ क्रोध होय क्रोधतैं पुरुष कैसैं निपजे। वहुरि इनि गुणनिकी तौ निंदा करिए हैं इनकरि निपजे ब्रह्मादिक तिनिकौं पूज्य कैसैं मानिए है। वहुरि गुण तौ मायामय अर इनकौं ब्रह्माके अवतार कहिए है सो ए तौ मायाके अवतार भए इनकौ ब्रह्माके अवतार कैसैं कहिए है। वहुरि ए गुण जिनमैं थोरे भी पाइए तिनिकौ तौ छुडावनेका उपदेश दीजिए अर जो इनिहींकी मूर्त्ति तिनिकौं पूज्य मानिए। यह तौ बड़ा भ्रम है। वहुरि तिनिका कर्त्तव्य भी इनमयी भासै है। कुतूहलादिक वा युद्धादिक वा स्त्रीसेवनादिक कार्य करैं हैं सो तिनि राजसादि गुणनिकरि ही ए क्रिया हो है। इनिकै राजसादिक पाइए है ऐसैं कहौ। इनिकौं पूज्य कहना परमेश्वर कहना तौ वनै नाहीं। जैसैं अन्य संसारी है तैसैं ए भी है। वहुरि कदाचित् तू कहैगा संसारी तौ मायाके आधीन हैं सो विना जाने तिन कार्यनिकौं करै हैं। ब्रह्मादिककै माया आधीन है सो ए जानकर इनि कार्यनिकौं करै हैं। सो यह भी भ्रम है। जातैं मायाके आधीन भए तौ काम क्रोधादि निपजै हैं और कहा हो है। सो इन

ब्रह्मादिकनिकै तो कामक्रोधादिककी तीव्रता पाइए हैं। कामकी तीव्रताकरि स्त्रीनिके वशीभूत भए नृत्य गानादि करते भए, विह्वल होते भए, नानाप्रकार कुचेष्टा करते भए बहुरि क्रोधके वशीभूत भए अनेक युद्धादि कार्य करते भए, मानके वशीभूत भए आपकी उच्चता प्रगट करनेके अर्थि अनेक उपाय करते भए, मायाके वशीभूत भए अनेक छल करते भए, लोभके वशीभूत भए परिग्रहका संग्रह करते भए इत्यादि बहुत कहा कहिए। ऐसैं वशीभूत भए चीरहरणादि निर्लज्जनिकी क्रिया और दधि लूटनादि चौरनिकी क्रिया अर रुंडमाला धारणादि बाउलेनिकी क्रिया, बहुरूपधारणादि भूतनिकी क्रिया, गौचरावणादि नीच कुलवालोंकी क्रिया इत्यादि जे निंद्यक्रिया तिनिकौं तौ करत भए, यातैं अधिक मायाके वशीभूत भए कहा क्रिया हो है सो जानी न परी। जैसैं कोऊ मेघपटलसहित आमावस्याकी रातकौं अंधकार रहित मानै तैसैं बाह्य कुचेष्टासहित तीव्र काम क्रोधादिकनिके धारी ब्रह्मादिकनिकौं मायारहित मानना है।

बहुरि वह कहै कि इनिकौं कामक्रोधादि व्याप्त नहीं होता यह भी परमेश्वरकी लीला है। ताकौं कहिए है-ऐसे कार्य करै है ते इच्छाकरि करै है कि विना इच्छा करै हैं। जो इच्छाकरि करै है तौ स्त्रीसेवनकी इच्छाहीका नाम काम है युद्ध करनेकी इच्छहीका नाम क्रोध है इत्यादि ऐसैं ही जानना। बहुरि जो विना इच्छा हो है तौ आप जाकौं न चाहै ऐसा कार्य तौ परवश भए ही होय सो परवशपना कैसैं संभवै। बहुरि

तू लीला बतावै है सो परमेश्वर अवतार धरि इन कार्यनिविषै लीला करै है तौ अन्य जीवनिकौ इनि कार्यनितै छुड़ाय मुक्त करनेका उपदेश काहेकौ दीजिए है। क्षमा संतोष शील संयमादिकका उपदेश सर्व झूंठा भया।

बहुरि वै कहै है कि परमेश्वरकौं तौ किछू प्रयोजन नाहीं लोकरीतिकी प्रवृत्तिके अर्थि वा भक्तनिकी रक्षा दुष्टनिका निग्रह तिनिके अर्थि अवतार धरै है। याकौ पूछिए है—प्रयोजन विना चिंवटी हू कार्य न करै परमेश्वर काहेकौ करै। बहुरि प्रयोजन भी कहा लोकरीतिकी प्रवृत्तिके अर्थि करै है। सो जैसै कोई पुरुष आप कुचेष्टाकरि अपने पुत्रनिकौ सिखावै बहुरि वै तिस चेष्टारूप प्रवर्त्तै तब उनकौ मारै तौ ऐसे पिताकौ भला कैसैं कहिए। तैसै ब्रह्मादिक आप कामक्रोधरूप चेष्टाकरि अपने निपजाए लोकनिकै प्रवृत्ति करावै। बहुरि वे लोक तैसैं प्रवर्तैं तब उनकौ नरकादिकविषै डारैं। नरकादिक इनिही भावनिका फल शास्त्रविषै लिख्या है सो ऐसे प्रभुकौं भला कैसैं मानिए बहुरि तैं यह प्रयोजन कह्या कि भक्तनिकी रक्षा दुष्टनिका निग्रह करना सो भक्तनिकौ दुखदायक जे दुष्ट भए ते परमेश्वरकी इच्छाकरि भए कि विना इच्छाकरि भए। जो इच्छाकरि भए तौ जैसैं कोऊ अपने सेवककौं आप ही काहूकौ कहकरि मरावै बहुरि तिस मारनेवालेकौ आप मारै सो ऐसे स्वामीकौं भला कैसै कहिए। तैसै ही जो अपने भक्तनिकौ आप ही इच्छाकरि दुष्टनिकरि पीडित करावै। अर पीछै तिनि दुष्टनि

कौं आप अवतार धारि मारै तौ ऐसे ईश्वरकौं भला कैसैं मानिए। बहुरि जो तू कहैगा कि विना इच्छा दुष्ट भए तौ कै तौ परमेश्वरकै ऐसा आगामी ज्ञान न होगा जो दुष्ट मेरे भक्तनिकौं दुख देवैंगे कै पहिले ऐसे शक्ति न होगी जो इनिका ऐसे न होने देता। बहुरि वाकौं पूछिए है जो ऐसे कार्यके अर्थि अवतार धारया सो कहा विना अवतार धारे शक्ति थी कि नाहीं। जो थी तौ अवतार काहेकौं धारे अर न थी तौ पीछै सामर्थ्य होनेका कारण कहा भया। तब वह कहै है ऐसैं किए विना परमेश्वरकी महिमा कैसैं प्रगट होय। वाकौं पूछिये है कि — अपनी महिमाके अर्थि अपने अनुचरनिका पालन करै प्रतिपक्षीनिका निग्रह करै सो ही रागद्वेष है। सो रागद्वेष तो संसारी जीवका लक्षण है। जो परमेश्वरके भी रागद्वेष पाइए है तौ अन्य जीवनिकौं रागद्वेष छोरि समता भाव करनेका उपदेश काहेकौं दीजिए। बहुरि रागद्वेषके अनुसार कार्य करना विचारया सो कार्य थोरे वा बहुत काल लागे विना होय नाही तावत् काल आकुलता भी परमेश्वरकै होती होसी बहुरि जैसैं जिस कार्यकौं छोटा आदमी ही कर सकै तिस कार्यकौं राजा आप करै तौ किछू राजाकी महिमा होती नाहीं निंदा ही होय। तैसैं जिस कार्यकौं राजा वा व्यंतरदेवादिक करि सकैं तिस कार्यकौं परमेश्वर आप अवतार धारि करै ऐसा मानिये तौ किछू परमेश्वरकी महिमा होती नाहीं निंदा ही है। बहुरि महिमा तौ कोई और होय ताकौं दिखाइए है। तू तौ

अद्वैत ब्रह्म मानै है कैानकैा महिमा दिखावै है। अर महिमा दिखानैका फल तैा स्तुति करावना है तैा कैानपै स्तुति कराया चाहै है। वहुरि तू तैा कहै है सर्व जीव परमेश्वरकी इच्छा अनुसार प्रवर्तैं है अर आपकै स्तुति करावनेकी इच्छा है तैा सबकैा अपनी स्तुतिरूप प्रवर्त्तावै तैा काहेकैं अन्य कार्य करना परै। तातैं महिमाके अर्थि भी कार्य करना न वनै।

वहुरि वै कहै है—परमेश्वर इनि कार्यनिकैा करता संता भी अकर्त्ता है याका निर्द्धार होता नाहीं। याकौ कहिए है--तू कहैगा इह मेरी माता भी है अर बांझ भी है तो तेरा कह्या कैसै मानैंगे। जो कार्य करै ताकौं अकर्त्ता कैसैं मानिए। अर तू कहै निर्द्धार होता नाहीं सो निर्द्धार विना मान लेना ठहरया तौ आकाशके फूल गधेके सींग भी मानौ सो ऐसा कहना युक्त नाहीं। ऐसै ब्रह्मा विष्णू महेशका होना कहै हैं, सो मिथ्या जानना।

वहुरि वै कहै है—ब्रह्मा तैा सृष्टिकैा उपजावैहै, विष्णु रक्षा करै है महेश संहार करै है। सो ऐसा कहना भी मिथ्या है। जातै इनि कार्यनिकैा करतैं कोऊ किछू किया चाहै कोऊ किछू किया चाहै तब परस्पर विरोध होय। अर जो तू कहेगा ए तौ एक परमेश्वरका ही स्वरूप है विरोध काहेकौं होय। तौ आप ही उपजावै आप ही क्षिपावै ऐसे कार्यमैं कौन फल है। जो सृष्टि आपकौं अनिष्ट हैं तैा काहेकौ उपजाई अर इष्ट है तौ काहेकौ खपाई। जो पहिले इष्ट लागी तब उपजाई पीछै अनिष्ट लागी

तब खपाई ऐसैं है तौ परमेश्वरका स्वभाव अन्यथा भया कि सृष्टिका स्वरूप अन्यथा भया। जो प्रथम पक्ष ग्रहैगा तौ परमेश्वरका एक स्वभाव न ठहऱ्या। सो एक स्वभाव न रहनेका करण कौन है सो बताय, विनाकारण स्वभावकी पलटनि काहेकौं होय। अर द्वितीय पक्ष ग्रहैगा तौ सृष्टि तौ परमेश्वरके आधीन थी वाकौं ऐसी काहेकौं होनै दीनी जो आपकौं अनिष्ट लागै।

बहुरि हम पूछै है — ब्रह्मा सृष्टि उपजावै है सो कैसैं उपजावै हैं। एक तौ प्रकार यह है जैसैं मंदिर चुननेवाला चूनापत्थर आदि सामग्री एकठीकरि आकारादि बनावै है। तैसै ही ब्रह्मा सामग्री एकठीकरि सृष्टि रचना करै है तौ ए सामग्री जहातैं ल्याय एकठी करि सो ठिकाना बताय। अर एक ब्रह्मा ही एती रचना बनाई सो पहिले पीछै बनाई होगी के अपने शरीरके हस्तादि बहुत किए होंगे सो कैसैं है सो बताय। जो बतावैगा तिसहीमैं विचार किए विरुद्ध भासेगा।

बहुरि एक प्रकार यह है जैसे राजा आज्ञा करै ताके अनुसार कार्य होय तैसैं ब्रह्मकी आज्ञाकरि सृष्टि निपजै है तौ आज्ञा कौनकौं दई। अर जिनिकौं यह आज्ञा दई वे कहांतै सामग्री पाय कैसै रचना करै है; सो बताय।

बहुरि एक प्रकार यह है जैसैं ऋद्धिधारी इच्छा करै ताके अनुसारि कार्य स्वयमेव बनै तैसैं ब्रह्मा इच्छा करै ताकै अनुसारि सृष्टि निपजै है, तौ ब्रह्मा तौ इच्छाहीका कर्त्ता भया। लोक तौ स्वयमेव ही निपज्या। बहुरि इच्छा तौ परमब्रह्म कीन्ही थी

ब्रह्माका कर्तव्य कहा भया जातै ब्रह्माकौ सृष्टिका निपजावनहारा कह्या। बहुरि तू कहैगा परमब्रह्म भी इच्छा करी अर ब्रह्मा भी इच्छा करी तब लोक निपज्या तौ जानिए है केवल परमब्रह्मकी इच्छा कार्यकारी नाहीं। तहां शक्तिहीनपना आया।

बहुरि हम पूछै हैं जो केवल बनाया हुवा लोक बनै है तौ बनावनहारा तौ सुखके अर्थि बनावै सो इष्ट ही रचना करै। इस लोकविषै तौ इष्ट पदार्थ थोरे देखिए है अनिष्ट घने देखिए है। जीवनिविषै देवादिक बनाए सो तौ रमनेके अर्थि वा भक्ति करावनेके अर्थि बनाए परंतु लट कीड़ी कूकरे सूअर सिंहादिक बनाये सो किस अर्थि बनाए। ए तौ रमणीक नाहीं। सर्व प्रकार अनिष्ट ही हैं। बहुरि दरिद्री दुखी नारकीनिकौ देखे आपकौ जुगुप्सा ग्लानि आदि दुख उपजै ऐसे अनिष्ट काहेकौं बनाए। तहां वह कहै है,—ए जीव अपने पापकरि लट कीड़ी दरिद्री नारकी आदि पर्याय भुगतै है। याकौ पूछिए है कि पीछै तौ पापहीका फलतै ए पर्याय भए कहो परंतु पहिले लोकरचना करते ही इनकौ बनाए सो किस अर्थि बनाए। बहुरि जीव पीछै पापरूप परिणए तौ कैसै परिणए। जो आप ही परिणए कहोगे तौ जानिए है ब्रह्मा पहिलै तौ निपजाए पीछैं वाकै आधीन न रहे इसकारणतै ब्रह्माकौ दुख ही भया। बहुरि कहोगे-- ब्रह्माके परिणमाए परिणमै है तौ तिनिकौ पापरूप काहेकौ परिणमाए। जीव तौ आपके निपजाए थे उनका बुरा किस अर्थि किया। तातै ऐसै भी न बनै। बहुरि अजीवनिविषै सुवर्ण सुगंधादि सहितवस्तु बनाए

सो तौ रमणैके अर्थि बनाए कुवर्ण दुर्गंधादिसहित दुखदायक वस्तु बनाए सो किस अर्थि बनाए । इनिका दर्शनादिकरि ब्रह्मकै किछू सुख तौ नाहीं उपजता होगा । बहुरि तू कहैगा, पापी जीवनिकौं दुख देनेके अर्थि बनाए, तौ आपहीके निपजाए जीव तिनिस्यौं ऐसी दुष्टता काहेकौं करी जो तिनिकौं दुखदायक सामग्री पहिले ही बनाई । बहुरि धूलि पर्वतादिक केतीक वस्तु ऐसी हैं जे रमणीक भी नाहीं अर दुखदायक भी नाहीं । तिनिकौं किस अर्थि बनाए । स्वयमेव तौ जैसैं तैसैं ही होय अर बनावनहारा बनावै सो प्रयोजनलिए ही बनावै । तातैं 'ब्रह्म सृष्टिका कर्त्ता है ।' यह मिथ्यावचन है ।

बहुरि विष्णुकौं लोकका रक्षक कहै हैं सो भी मिथ्या है । जातै रक्षक होय सो तौ दोय ही कार्य करै । एक तौ दुख उपजावनेके कारण न होनै दे अर एक विनसनेका कारण न होनै दे । सो तौ लोकविषै दुखहीके उपजनैके कारण जहां तहां देखिए है । अर तिनिकरि जीवनिकौं दुख ही देखिए है । क्षुधा तृषादिक लग रहे हैं । शीत उष्णादिक करि दुख हो है । जीव परस्पर दुख उपजावै हैं । शस्त्रादि दुखके कारण बनि रहे हैं । बहुरि विनसनेके कारण अनेक बनि रहे हैं । जीवनीकै रोगादिक वा अग्नि विष शस्त्रादिक पर्यायके नाशके कारण देखिए है । अर जीवनिकै भी परस्पर विनसनेका कारण देखिए है । सो ऐसैं दोय प्रकारहीकी रक्षा की नाहीं तौ विष्णु रक्षक होय कहा किया । वै कहै हैं,।—विष्णु रक्षक ही है देखो

क्षुधा तृषादिकके अर्थि अन्न जलादिक किए हैं कीडीकौं कण कुंजरकौं मण पहुचावै हैं। संकटमैं सहाय करै है। मरणके कारण बने [1]टीटोड़ीकी नांई उबारै है। इत्यादि प्रकारकरि विष्णु रक्षा करै है। याकौं कहिए है,---ऐसै है तौ जहां जीवनिकौं क्षुधातृषादिक बहुत पीड़ै अर अन्न जलादिक मिलै नाहीं संकट पड़ै सहाय न होय किंचित कारण पाय मरण होय जाय, तहां विष्णु की शक्ति ही न भई कि वाकौं ज्ञान न भया। लोकविषै वहुत ऐसैं ही दुखी हो हैं मरण पावै हैं विष्णु रक्षा काहेकौं न करी। तब वै कहै हैं, यह जीवनिके अपने कर्त्तव्यका फल है। तब वाकौं कहिए है कि, जैसै शक्तिहीना लोभी झूठा वैद्य काहूकै किछू भला होइ ताकौं तौ कहै मेरा कियाभया है। अर जहां बुरा होय मरण होय, तब कहै याका ऐसा ही होनहार था। तैसै ही तू कहै है कि, भला भया तहां तौ विष्णु का किया भया अर बुरा भया सो जीवनिके कर्त्तव्यका फल भया। ऐसैं झूठी कल्पना काहेकौ कीजिए। कै तौ बुरा भला दोऊ विष्णुका किया कहौ कै अपने कर्तव्यका फल कहो। जो विष्णुका किया भया तौ घने जीव दुखी अर शीघ्र मरते देखिए है सों ऐसा करै ताकौ रक्षक कैसै कहिए। बहुरि अपने

---

१ (टिटहरी) एक प्रकारका पक्षी एक समुद्र किनारे रहती थी। उसके अंडे समुद्र वहा ले जाता था, सो उसने दुखी होकर गरुड पक्षीकी मारफत विष्णुसे अर्ज की, तौ उन्होंने समुद्रसे अंडे दिलवा दिये। ऐसी पुराणोंमें कथा है।

कर्त्तव्यका फल है तौ करैगा सो पावैगा विष्णु कहा रक्षा करैगा। तब वै कहै हैं; जे विष्णुके भक्त हैं तिनिकी रक्षा करै है। वाकौ कहिए है कि जो ऐसा है तौ कीड़ी कुंजर आदि भक्त नाहीं उनकै अन्नादिक पहुचावनैविषै वा संकटमैं सहाय होनैविषै वा मरण होनैविषै विष्णुका कर्त्तव्य मानि सर्वका रक्षक काहेकौं मानैं। भक्त भक्तहीका रक्षक मानि। सो भक्तनिका भी रक्षक दीसता नाहीं। जातै अभक्त भी भक्त पुरुषनिकौं पीड़ा उपजावते देखिए है। तब वह कहै है,---घनी ही जायगा (जगह) प्रह्लादादिककी सहाय करी है। वाकौं कहै है,--जहां सहाय करी तहां तौ तू तैसै ही मानि। परंतु हम तौ प्रत्यक्ष म्लेच्छ मुसलमान आदि अभक्त पुरुषनिकरि भक्त पुरुष पीड़ित होते देखि वा मंदिरादिकौं विघ्न करते देखि पूछै है, कि इहां सहाय न करै है सो विष्णुकी शक्ति ही नाहीं कि खबरि नहीं। जो शक्ति नाहीं तौ इनितैं भी हीनशक्तिका धारक भया। जो खबरि नाहीं तौ जाकौं एती भी खबर नाहीं सो अज्ञान भया। अर जो तू कहैगा, शक्ति भी है अर जानै भी है इच्छा ऐसी ही भई, तौ फिर भक्तवत्सल काहेकौं कहै। ऐसै विष्णुकौं लोकका रक्षक मानना मिथ्या है।

बहुरि वै कहै है—महेश संहार करै है, सो भीं मिथ्या है। प्रथम तौ महेश संहार करै है सो सदा ही करै है कि महाप्रलय हो है तब ही करै है। जो सदा करै है तौ जैसैं विष्णुकी रक्षा करनेकरि स्तुति कीनी तैसैं याकी संहार करनेकरि निंदा करो।

जातैं रक्षा अर संहार प्रतिपक्षी हैं। बहुरि यह संहार कैसैं करै है। जैसै पुरुष हस्तादिककरि काहूकौ मारै वा काहूकरि मरावै तैसै महेश अपने अंगनिकरि संहार करै है वा काहूकौं आज्ञाकरि मरावै है। जो अपने अंगनिकरि संहार करै है, तो । क्षण क्षणमै संहार तौ घने जीवनिका सर्व लोकमै हो है यह कैसैं अंगनिकरि वा कौन कौनकौं आज्ञा देय युगपत् कैसैं संहार करै है। जो कहै कि महेश तौ इच्छा ही करै अर याहीकी इच्छातैं स्वयमेव उनका संहार हो है। तौ याकै सदा काल मारनेरूप दुष्टपरिणाम ही रह्या करते होंगे। अर अनेकजीवनिकौं युगपत मारनेकी इच्छा कैसैं होती होगी। बहुरि जो महा प्रलय होतैं संहार करै है तौ परमब्रह्मकी इच्छा भए करै है कि वाकी विना इच्छा ही करै है। जो इच्छा भए करै है तौ परमब्रह्मकै ऐसा क्रोध कैसैं भया जो सर्वका प्रलय करनेकी इच्छा भई। जातै कोई कारण विना नाश करनेकी इच्छा होय नाहीं। अर नाश करनेकी इच्छा ताहीका नाम क्रोध है, सो कारण बताय। बहुरि विनाकारण इच्छा हो है, तौ बावले-कीसी इच्छा भई। बहुरि तू कहैगा परमब्रह्म यह ख्याल (खेल) बनाया था बहुरि दूरि किया कारन किछू भी नाहीं, तौ ख्याल बनानैवालाकौं भी ख्याल इष्ट लागै है तब बनावै है। अनिष्ट लागै है तब दूरि करै है। जो याकौ यह लोक इष्ट अनिष्ट लागै है, तौ याकै लोकसौ रागद्वेष तौ भया। साक्षीभूत परब्रह्मका स्वरूप काहेकौ कहो। साक्षीभूत तौ वाका नाम है जो स्वयमेव जैसैं होय तैसै देख्या जान्या करै। जो इष्ट अनिष्ट मानि उपजावै नष्ट करै

ताकौं साक्षीभूत कैसैं कहिए, जातैं, साक्षीभूत रहना अर कर्त्ता हर्ता होना ए दोऊ परस्पर विरोधी है। एककैं दोऊ संभवै नाहीं। बहुरि परमब्रह्मकै पहिलै तौ इच्छा यह भई थी कि "मैं एक हों सो बहुत होस्यों" तब बहुत भया था। अब ऐसी इच्छा भई होगी जो "मैं बहुत हों सो एक होस्यों" सो जैसैं कोऊ भोलपतैं कारज करि पीछैं तिस कार्यकौं दूरि किया चाहै तैसैं परमब्रह्म भी बहुत होय एक होनेकी इच्छा करी सो जानिये है कि बहुत होनेंका कार्य किया सो भोलपहीतैं किया था आगामी ज्ञानकरि किया होता तौ काहेकौं ताके दूरि करनेकी इच्छा होती।

बहुरि जो परमब्रह्मकी इच्छा विना ही महेश संहार करै है तौ यह परमब्रह्मका वा ब्रह्माका विरोधी भया। बहुरि पूछैं हैं कि महेश लोककौ कैसैं संहार करै है। अपने अंगनि करि संहार करै है कि इच्छा होतैं स्वयमेव ही संहार हो है। जो अपने अंगनिकरि संहार करै है तो सर्वका युगपत् संहार कैसैं करै हैं बहुरि याकी इच्छा होतै स्वयमेव संहार हो है तौ इच्छा तौ परमब्रह्म कीन्ही थी यानैं संहार कहा किया।

बहुरि हम पूछै हैं कि संहार भए सर्व लोकविषै जीव अजीव थे ते कहां गए। तब वै कहै है—जीवनिविषै भक्त तौ ब्रह्मविषै मिले अन्य मायाविषै मिले। अब याकूं पूछिए है कि माया ब्रह्मतैं जुदी रहै है कि पीछैं एक होय जाय है। जो जुदी रहै तौ ब्रह्मवत् माया भी नित्य भई। तब अद्वैतब्रह्म न रह्या। अर माया ब्रह्मसैं एक होय जाय है तौ जे जीव मायामै मिले थे ते भी मायाके

साथि ब्रह्ममैं मिलि गए। जब महाप्रलय होतैं सर्वका परमब्रह्ममैं मिलना ठहरया ही तौ मोक्षका उपाय काहेकौं करिए। बहुरि जे जीव मायामैं मिले ते बहुरि लोकरचना भए वै ही जीव लोकविषै आवैंगे कि वै तौ ब्रह्ममैं मिलगए थे नए उपजैंगे। जो वे ही आवैंगे तौ जानिए है जुदे जुदे रहै है मिले काहेकौ कहे। अर न उपजैंगे तौ जीवका अस्तित्व थोरा कालपर्यंत ही रहै है काहेकौ मुक्त होनेका उपाय कीजिए है। बहुरि वै कहै है कि पृथिवी आदिक हैं ते मायाविषै मिलै हैं सो माया अमूर्त्तीक सचेतन है कि मूर्त्तीक अचेतन है। जो अमूर्त्तीक सचेतन है तौ यामैं मूर्त्तीक अचेतन कैसैं मिलैं। अर मूर्त्तीक अचेतन है तौ यह ब्रह्ममैं मिलै है कि नाहीं। जो मिलै है तौ याके मिलनेतै ब्रह्म भी मूर्त्तीक अचेतनकरि मिश्रित भया। अर न मिलै है तौ अद्वैतता न रही। अर तू कहैगा ए सर्व अमूर्त्तीक चेतन होइ जाय है तौ आत्मा अर शरीरादिककी एकता भई सो यह संसारी एकता मानै ही है याकौं अज्ञानी काहेकौ कहिए। बहुरि पूछैं हैं,—लोकका प्रलय होतैं महेशका प्रलय हो है कि नाहीं। जो हो है तौ युगपत् हो है कि आगै पीछैं हो है। युगपत् हो है तौ आप नष्ट होता लोककौं नष्ट कैसैं करै। अर आगै पीछै हो है तौ महेश लोककौ नष्टकरि आप कहां रह्या आप भी तो सृष्टिविषै ही था, ऐसैं महेशकौं सृष्टिका संहारकर्त्ता मानै है सो असंभव है। या प्रकारकरि वा अन्य अनेकप्रकारकरि ब्रह्मा विष्णु महेशकौ सृष्टिका उपजावनहारा, रक्षा करनेवाला, संहार करनहारा मानना मिथ्या जानि

लोककौं अनादिनिधन मानना। इस लोकविषै जे जीवादि पदार्थ हैं ते न्यारे न्यारे अनादिनिधन हैं। बहुरि तिनिकी अवस्थाकी पलटनि हुवा करै है तिस अपेक्षा उपजते विनशते कहिए है। वहुरि स्वर्ग नरक द्वीपादिक हैं ते अनादितैं ऐसैं ही हैं अर सदा-काल ऐसैं ही रहैंगे। कदाचित् तू कहैगा विना बनाए ऐसे आकारादिक कैसैं संभवैं होंय तौं वनाए ही होंय। सो ऐसा नाहीं है जातैं अनादितैं ही जे पाइए तहां तर्क कहा। जैसैं तू परब्रह्मका स्वरूप अनादिनिधन मानै तैसैं ए भी हैं। तू कहै जीवादिक वा स्वर्गादिक कैसैं भए। हम कहैंगे परब्रह्म कैसैं भया। तू कहैगा इनकी रचना ऐसी कौन करी। हम कहैंगे परब्रह्मकौ ऐसा कौन वनाया। तू कहैगा परब्रह्म स्वयंसिद्ध है। हम कहैंगे जीवादिक वा स्वर्गादिक स्वयंसिद्ध है। तू कहैगा इनकी अर परब्रह्मकी समानता कैसैं संभवै। तौ संभवनेविषैं दूषण बताय। लोककौं नवा उपजावना ताका नाश करना तिसविषैं तौ हम अनेक दोष दिखाए। लोककौं अनादिनिधन माननेतैं कहा दोष है सो तू वताय। जो तू परब्रह्म मानै है सो जुदा ही कोई है नाहीं। ए संसारविषै जीव हैं ते ही यथार्थ ज्ञानकरि मोक्षमार्ग साधनतैं सर्वज्ञ वीतराग हो हैं।

इहां प्रश्न—जो तुम तौ न्यारे न्यरे जीव अनादिनिधन कहो हौ मुक्त भए पीछैं तो निराकार हो हैं तहां न्यारे न्यारे कैसैं संभवैं। ताका समाधान—जो मुक्त भए पीछैं सर्वकौं दीसै है कि नाहीं दीसै है। जो दीसैं है तौ किछू आकार दीसता ही होगा। बिना आकार देखे कहा देख्या। अर न दीसैं है तौ कै तौ

वस्तु ही नाहीं कै सर्वज्ञ नहीं। तातैं इंद्रियगम्य आकार नाहीं तिस अपेक्षा निराकार है अर सर्वज्ञ ज्ञानगम्य है तातैं आकारवान् है। जब आकारवान् ठहरया तब जुदा जुदा होय तौ कहा दोष लागै। वहुरि जो तू जाति अपेक्षा एक कहै तौ हम भी मानैं है। जैसैं गेहूं भिन्नभिन्न हैं तिनकी जाति एक है ऐसै एक मानैं तौ किछू दोष है नाहीं या प्रकार यथार्थ श्रद्धानकरि लोकविषै सर्व पदार्थ अकृत्रिम जुदे जुदे अनादिनिधन मानने। बहुरि जो वृथा ही भ्रमकरि सांच झूंठका निर्णय न करै तौ तू जानै तेरे श्रद्धानका फल तू पावेगा।

बहुरि वे ही ब्रह्मतैं पुत्रपौत्रादिकरि कुलप्रवृत्ति कहै हैं। बहुरि कुलनिविषै राक्षस मनुष देव तिर्यचनिकै परस्पर प्रसूतिभेद बतावै हैं। तहां देवतैं मनुष्य वा मनुष्यतैं देव वा तिर्यचतैं मनुष्य इत्यादि कोई माता कोई पितातै पुत्रपुत्रीका उपजना बतावैं सो कैसैं संभवै। वहुरि मनहीकरि वा पवनादिकरि वा वीर्य सूंघने आदि करि प्रसूति होनी बतावै है, सो प्रत्यक्षविरुद्ध भासै है। ऐसैं होतैं पुत्रपौत्रादिकका नियम कैसैं रह्या। बहुरि बड़ेबड़ेनिकौं अन्य अन्य माता पितातै भए कहै है। सो महंतपुरुष कुशीली मातापितातै कैसैंउपजै। यह लोकविषै गालि है। ऐसा कहि उनकी महंतता काहेकौं कहिए है। बहुरि गणेशादिककी मैल आदिकरि उत्पत्ति बतावै हैं। वा काहूका अंग काहूकै जुरै बतावै है। इत्यादि अनेक प्रत्यक्ष विरुद्ध कहै है। बहुरि चौईस अवतार भए कहै हैं, तहां केई अवतारनिकौ पूर्णावतार कहै हैं। केईनिकौ अंशावतार कहै

हैं। सो पूर्णावतार भए तब ब्रह्म अन्यत्र व्यापि रह्या कि न रह्या जो रह्या तौ इनि अवतारनिकौं पूर्णावतार काहेकौं कहौ। जो व्यापि न रह्या तौ एतावन्मात्र ही ब्रह्म रह्या। बहुरि अंश अवतार भए तहां ब्रह्मका अंश तौ सर्वत्र कहौ हौ इनविषै कहा अधिकता भई। बहुरि कार्य तौ तुच्छ तिसकै वास्तै आप ब्रह्म अंशावतार धार्या कहै सो जानिये है विना अवतार धारे ब्रह्मकी शक्ति तिस कार्यके करनेकी न थी। जातैं जो कार्य स्तोक उद्यमतैं होय तहां बहुत उद्यम काहेकौं करिए। बहुरि अवतारनिविषै मच्छ कच्छादि अवतार भए सो किंचित् करनेके अर्थि हीन तिर्यंच पर्यायरूप भए सो कैसैं संभवै। बहुरि प्रहलादके अर्थि नरसिंह-अवतार भए सो हरिणाकुशकौं ऐसा काहेकौं होनै दिया। अर कितनेक काल अपने भक्तकौं काहेकौं दुख दिया। बहुरि विड्रूप स्वांग काहेकौं धरया। बहुरि नाभिराजाकै वृषभावतार भया बतावै हैं सो नाभिकौं पुत्रपनेका सुख उपजावनेकौं अवतार धरयां। घोरतपश्चरण किस अर्थि किया। उनकौं तौ कुछ साध्य था ही नहीं। अर कहैगा जगतके दिखावनैकौं किया तौ कोई अवतार तौ तपश्चरण दिखावै। कोई अवतार भोगादिक दिखावै। जगत किसकौं भला जानि लागै। यह तौ बहुरूपियाकासा स्वांग किया।

बहुरि वह कहै है-एक अरहंत नामका राजा भया, सो वृषभावतारका मत अंगीकारकरि जैनमत प्रगट किया सो जैनविषै कोई एक अरहंत भया नाहीं। जो सर्वज्ञपद पाय पूजने योग्य होय

ताहीका नाम अर्हत् है । बहुरि राम कृष्ण इनि दोय अवतार-निकौं मुख्य कहै हैं सो रामावतार कहा किया । सीताके अर्थि विलापकरि रावणसौं लरि वाकूं मारि राज किया । अर कृष्णावतार पहिले गुवालिया होय परस्त्री गोपिकानिके अर्थि नाना विपरीत चेष्टाकरि पीछै जरासिंधु आदिकौं मारि राज किया । सो ऐसे कार्य करनेमैं कहा सिद्धि भई । बहुरि रामकृष्णादिकका एक स्वरूप कहै । सो वीचिमै इतने काल कहां रहे । जो ब्रह्मविषै रहे तौ जुदे रहे कि एक रहे । जुदे रहे तौ जानिए है ए ब्रह्मतै जुदे रहे । एक रहे तौ राम ही कृष्ण भया सीता ही रुक्मिणी भई इत्यादि कैसै कहिए है । बहुरि रामावतारविषै तौ सीताकौ मुख्य कहै अर कृष्णावतारविषै सीताकौ रुक्मिणी भई कहै ताकूं तौ प्रधान न कहैं राधिका कुमारी ताकूं मुख्य कहै । बहुरि पूछै तब कहैं कि राधिका भक्त थी, सो निजस्त्री कौं छोरि दासीका मुख्य करना कैसै बनै । बहुरि कृष्णकै तौ राधिकासहित परस्त्री सेवनके सर्व विधान भए । सो यह भक्ति कैसी करी । ऐसे कार्य तौ महानिंद्य है । बहुरि रुक्मिणीकूं छोरि राधाकौ मुख्य करी सो परस्त्रीसेवनकौ भला जानि करी होसी । बहुरि एक राधाहीविषै आसक्त न भया अन्य गोपिका कुब्जा आदि अनेक परस्त्रीविषै भी आसक्त भया । सो यह अवतार ऐसे ही कार्यका अधिकारी भया । बहुरि कहै—लक्ष्मी वाकी स्त्री है बहुरि धनादिककौं लक्ष्मी कहैं सो ए तौ पृथ्वी आदिविषै जैसै पाषाण धूलि है तैसै ही रत्न सुवर्णादि देखिए है । जुदी ही लक्ष्मी कौन जाका भर्त्तार नारायण

है। बहुरि सीतादिकौं मायाका स्वरूप कहैं सो इनिविषै आसक्त भए तब मायाविषै आसक्त कैसैं न भए। कहां ताईं कहिए जो निरूपण करैं सो विरुद्ध करैं। परंतु जीवनकौं भोगादिककी वार्त्ता सुहावै तातैं तिनिका कहना वल्लभ लागै है। ऐसैं अवतार कहे हैं इनिकौं ब्रह्मस्वरूप कहै है। बहुरि औरनिसौं भी ब्रह्मरूप कहै हैं। एक तौ महादेवकौं ब्रह्मस्वरूप मानै हैं। ताकूं योगी कहै हैं, सो योग किस अर्थि ग्रह्या। बहुरि मृगछाला भस्मी धारै है सो किस अर्थि धारी है। बहुरि रुंडमाला पहरै हैं सो हाड़ांका छीवना भी निंद्य है ताकूं गलेमैं किस अर्थि धारै है। सर्पादि सहित हैं सो यामैं कौन बड़ाई है। आक धतूरा खाय है लो यामैं कौन भलाई है। त्रिशूलादि राखै है सो कौनका भय है। बहुरि पार्वती संग लिए हैं सो योगी होय स्त्री राखै है सो ऐसा विपरीतपना काहेकौं किया। कामासक्त था तौ घरहीमें रह्या होता। बहुरि वानै नानाप्रकार विपरीत चेष्टा कीन्हीं ताका प्रयोजन तौ किछू भासै नाहीं। बाउलेकासा कर्त्तव्य भासै ताकौं ब्रह्मस्वरूप कहैं।

बहुरि कृष्णकौं याका सेवक कहै है कबहू याकौं कृष्णका सेवक कहैं कबहू दोउनिकौं एक ही कहैं सो किछू ठिकाना नाहीं। बहुरि सूर्य्यादिककौं ब्रह्मका स्वरूप कहैं। बहुरि ऐसा कहैं जो विष्णु कह्या सो धातूनिविषै सुवर्ण, वृक्षनिविषै कल्पवृक्ष जूवाविषै झूठ इत्यादिमैं मैं ही हौं। सो किछू पूर्वापर विचारै नाहीं। कोई एक अंगकरि संसारी जीवकौं महंत मानै ताहीकौं ब्रह्मका स्वरूप कहैं। सो ब्रह्म सर्वव्यापी है ऐसा विशेषण काहेकौं

किया । अर सूर्यादिविषै वा सुवर्णादिविषै ही ब्रह्म है तौ सूर्य उंजाला करै है सुवर्ण धन है इत्यादि गुणनिकरि ब्रह्म मान्या सो सूर्यवत् दीपादिक भी उजाला करै है सुवर्णवत् रूपा लोहा आदि भी धन है इत्यादि गुण अन्य पदार्थनिविषै भी है तिनिकौं भी ब्रह्म मानौ । बड़ा छोटा मानौ परंतु जाति तौ एक भई । सो झूंठी महंतता ठहरावनेके अर्थि अनेकप्रकार युक्ति बनावै हैं ।

बहुरि अनेक ज्वालामालिनी आदि देवीनिकौं मायाका स्वरूप कहि हिंसादिक पाप उपजाय पूजना ठहरावै है सो माया तौ निंद्य है ताका पूजना कैसै संभवै । अर हिंसादिक करतां कैसैं भला होय । बहुरि गऊ सर्पादि पशु अभक्ष्यभक्षणादिसहित तिनिकौं पूज्य कहैं । अग्नि पवन जलादिककौं देव ठहराय पूज्य कहै । वृक्षादिककौं युक्ति बनाय पूज्य कहै । बहुरि कहा कहिए पुरुषलिंगी नाम सहित जे होंय तिनिविषै ब्रह्मकी कल्पना करैं अर स्त्रीलिंगी नाम सहित होय तिनिविषै मायाकी कल्पनाकरि अनेक वस्तूनिका पूजन ठहरावै है । इनके पूजे कहा होयगा सो विचार किछू नाहीं । झूंठे लौकिक प्रयोजनके कारन ठहराय जगतकौ भ्रमावै है बहुरि कहै है —विधाता शरीरकौं घड़ै है, यम मारै है, मरते समय यमके दूत लेनैं आवै है, मूए पीछैं मार्गविषै बहुतकाल लागै है तहां पुण्य पापका लेखा हो है, तहां दंडादिक देवै हैं । सो ए कल्पित झूठी युक्ति है । जीव तौ समय समय अनंते उपजै मरै हैं तिनिका युगपत् कैसै इसप्रकार संभवै अर ऐसै माननेका कोई कारण भी भासै नाहीं । बहुरि मूए पीछै श्राद्धादिककरि वाका भला

होना कहैं सो जीवतां तौ काहूके पुण्यपापकरि कोई सुखी दुखी होता दीखै ही नाही मूए पीछैं कैसैं होय। ए युक्ति मनुष्यनिकौं भ्रमाय अपने लोभ साधनेकै अर्थि बनावै हैं। कीडी पतंग सिंहादिक जीव भी तौ उपजैं मरैं हैं सो उनकौं प्रलयके जीव ठहरावैं। तहां जैसै मनुष्यादिककै जन्म मरण होते देखिए है, तैसे ही उनके होते देखिए है। झूठी कल्पना किए कहा सिद्धि है। बहुरि वै शास्त्रनिविषै कथादिक निरूपै हैं तहां विचार किए विरुद्ध भासै है। बहुरि यज्ञादिक करना धर्म ठहरावै हैं। तहां बडे जीवनिका होम करै हैं, अन्नादिकका महा आरंभ करै हैं, तहां जीवघात हो है. सो उनहीके शास्त्रविषै वा लोकविषै हिंसाका निषेध है परंतु ऐसे निर्दय हैं किछू गिनै नाहीं। अर कहैं—"**यज्ञार्थं पशवाः सृष्टाः**" ए यज्ञहीकै अर्थि पशु बनाए हैं। तहां घातकरनेका दोष नाहीं। बहुरि मेघादिकका होना शत्रु आदिका विनशना इत्यादि फल दिखाय अपने लोभके अर्थि राजादिकनिकौं भ्रमावैं। जैसें कोइ विषतै जीवना कहै सो प्रत्यक्ष विरुद्ध है तैसैं हिंसा किए धर्म अर कार्यसिद्धि कहना प्रत्यक्ष विरुद्ध हैं। परंतु जिनिकी हिंसा करनी कही, तिनिकी तौ किछू शक्ति नाहीं अर उनकी काहूकौ पीरि नाहीं। जो किसी शक्तिवानका इष्टका होम करना ठहराया होता, तौ ठीक पड़ता। पापका भय नाहीं तातैं दुर्बलके घातक होय अपने लोभके अर्थि अपना वा अन्यका बुरा करनेविषैं तत्पर प्ररूपै हैं। तहां प्रथम ही भक्तियोगकरि मोक्षमार्ग कहैं हैं, ताका स्वरूप कहिए है,—

तहां भक्ति निर्गुण सगुण भेदकरि दोयप्रकार कहै हैं। तहां अद्वैत परब्रह्मकी भक्ति करनी सो निर्गुणभक्ति है। सो ऐसै कहै है,– तुम निराकार हो, निरंजन हो, मन वचनकै अगोचर हो, अपार हो, सर्वव्यापी हो, एक हो सर्वके प्रतिपालक हो, अधमउधारक हो सर्वके कर्त्ता हर्त्ता हो, इत्यादि विशेपणनिकरि गुण गावै हैं। सो इनिविषै केई तौ निराकारादि विशेषण हैं सो अभावरूप हैं तिनिकौ सर्वथा मानै अभाव ही भासै। जातैं आकारादि वस्तु विना कैसैं भासै। वहुरि केई सर्वव्यापी आदि विशेषण असंभव है सो तिनिका असंभवपना पूर्वै दिखाया ही है। वहुरि ऐसा कहैं–जीवबुद्धिकरि मैं तिहारा दास हौं, शास्त्रदृष्टिकरि तिहारा अंश हौं तत्त्वबुद्धिकरि 'तू ही मैं हुं, सो ए तीनौं ही भ्रम हैं। यह भक्तिकरनहारा चेतन है कि जड़ है। तहां जो चेतन है तौ चेतन ब्रह्मकी है कि इसहीकी है। जो ब्रह्मकी है तौ मै दास हौ ऐसा मानना चेतनाहीकै हो है सो चेतना ब्रह्मका स्वरूप ठहर्‍या। अर स्वभाव स्वभावीकै तादात्म्यसंबंध है। तहां दास अर स्वामीका संबंध कैसै बने। दासस्वामीका संबंध तौ भिन्न–पदार्थ होय तब ही बनै। वहुरि जो यह चेतना इसहीकी है तौ यह अपनी चेतनाका धनी जुदा पदार्थ ठहर्‍या तौ मै अंश हौं वा 'जो तू है सो मैं हूं' ऐसा कहना झूंठा भया। बहुरि जो भक्ति करनहारा जड़ है, तौ जड़कै बुद्धिका होना असंभव है ऐसी बुद्धि कैसैं भई। तातैं 'मै दास हौ, ऐसा कहना तब ही बनै है जब जुदा पदार्थ होय। अर 'तेरा मैं अंश हौ, ऐसा कहना बनै ही नाहीं।

जातैं 'तू' अर 'मैं' ऐसा तौ भिन्न होय तब ही बनै सो अंश अंशी भिन्न कैसैं होय। अंशी तौ कोई जुदा वस्तु है नाहीं, अंशनिका समुदाय सो ही अंशी है। अर 'तू है सो मै हूं' ऐसा वचन ही विरुद्ध है। एक पदार्थविषै आपो भी मानै अर पर भी मानै सो कैसैं संभवै। तातैं भ्रम छोड़ि निर्णय करना। बहुरि केई नाम ही जपै हैं। सो जाका नाम जपै ताका स्वरूप पहचानेविना केवल नामहीका जपना कैसै कार्यकारी होय। जो तू कहैगा नामहीका अतिशय है तौ जो नाम ईश्वरका है सो ही नाम किसी पापी-पुरुषका धर्‍या तहां दोऊनिका नाम उच्चारणविषै फलकी समानता होय सो कैसै बनै। तातै स्वरूपका निर्णयकरि पीछै भक्तिकरने-योग्य होय ताकी भक्ति करनी। ऐसै निर्गुणभक्तिका स्वरूप दिखाया।

बहुरि जहां काम क्रोधादिकरि निपजे कार्यनिका वर्णनकरि स्तुत्यादि करिए ताकौं सगुणभक्ति कहै है। सो तहां सगुणभक्ति-विषै लौकिकश्रृंगार वर्णन जैसैं नायक नायिकाका करिए तैसैं ठाकुरठकुरानीका वर्णन करैं हैं। स्वकीय परकीया स्त्रीसंबंधी संयो-गवियोगरूप सर्वव्यवहार तहां निरूपैं हैं। बहुरि स्नान करती स्त्री-निका वस्त्र चुरावना, दधि लूटना, स्त्रीनिकै पंगा परना, स्त्रीनिकै आगै नाचना इत्यादि जिन कार्यनिकौं करते संसारी जीव लज्जित होंय तिनि कार्यनिका करना ठहरावै हैं। सो ऐसा कार्य अतिकामपी डित भए ही बनै। बहुरि युद्धादिक किए कहैं सो ए क्रोधके कार्य हैं। अपनी महिमा दिखावनैके अर्थि उपाय किए कहैं सो

मानके कार्य है। अनेक छल किए कहैं सो मायाके कार्य हैं।
विषयसामग्रीकी प्राप्तिके अर्थि यत्न किए कहै सो लोभके कार्य
हैं। कुतूहलादिक किए कहै सो हास्यादिकके कार्य है । ऐसै ए
सब कार्य क्रोधादिकरि युक्त भए ही बनै। याप्रकार कामक्रोधा-
दिकरि निपजे कार्यनिकौ प्रगटकरि कहै हम स्तुति करै हैं । सो
काम क्रोधादिके कार्य ही स्तुतियोग्य भए तौ निंद्य कौन ठहरैंगे।
जिनकी लोकविषै शास्त्रविषै अत्यंत निंदा पाईए तिनि कार्यनिका
वर्णनकरि स्तुति करना तौ हस्तचुगलकासा कार्य है। हम पूछै हैं-
कोऊ किसीका नाम तौ कहै नाहीं अर ऐसे कार्यनिहीका निरूपण
करि कहै कि किसीनै ऐसे कार्य किए है, तब तुम वाकौ भला
जानौ कै बुरा जानौ ; जो भला जानौ तौ पापी भले भए। बुरा
कौन भया। अर बुरे जानौ तौ ऐसे कार्य कोई करौ सो ही बुरा
भया। पक्षपातरहित न्याय करौ। जो पक्षपातकरि कहौगे ठाकुरका
ऐसा वर्णन करना भी स्तुति है तौ ठाकुर ऐसे कार्य किस अर्थि
किए। ऐसे निंद्यकार्य करनेमै कहा सिद्धि भई। कहौगे, प्रवृत्ति
चलानेके अर्थि किए, तौ परस्त्रीआदिसेवन निंद्यकार्यनिकी
प्रवृत्ति चलावनेमै आपकै वा अन्यकै कहा नफा भया । तातै
ठाकुरकै ऐसे कार्य करना संभवै नाहीं। बहुरि जो ठाकुर कार्य
नाहीं किए तुम ही कहो हौ तौ जामै दोष न था ताकौ दोष
लगाया तातैं ऐसा वर्णन करना तौ निंदा है स्तुति नाहीं। बहुरि
स्तुति करते जिन गुणनिका वर्णन करिए तिस रूप ही परिणाम
होंय वा तिनिहीविषै अनुराग आवै। सो काम क्रोधादि कार्यनिका

वर्णन करतैं आप भी कामक्रोधादिरूप होय अथवा कामक्रोधादि विषै अनुरागी होय तौ ऐसे भाव तौ भले नाहीं। जो कहोगे, भक्त ऐसा भाव न करै हैं तौ परिणाम भए विना वर्णन कैसैं किया। अनुराग भए विना भक्ति कैसैं करी। जो ए भाव ही भले होंय तौ ब्रह्मचर्यकौं वा क्षमादिककौं भले काहेकौं कहिए। इनिकै तौ परस्पर प्रतिपक्षीपना है। बहुरि सगुणभक्तिकरनेके अर्थि राम कृष्णादिककी मूर्ति भी श्रृंगारादि किए वक्रत्वादिसहित स्त्रीआदि संगलिए बनावै हैं जाकौं देखते ही कामक्रोधादि भाव प्रगट होय आवैं। बहुरि महादेवके लिंगहीका आकार बनावै हैं। देखो विटंबना, जाका नाम लिए ही लाज आवै जगत् जिसकौ ढक्या राखै ताका आकारका पूजन करावै हैं। अन्य अंग कहा वाकै न थे। परंतु घनी विटंबना ऐसे ही किए प्रगट होय। बहुरि सगुणभक्तिकै अर्थि नानाप्रकार विषयसामग्री भेली करैं तहां नाम तौ ठाकुरका करैं अर आप भोगवैं भोजनादि बनावैं बहुरि ठाकुरकौं भोग लगाया कहैं पीछैं आपही प्रसादकी कल्पनाकरि ताका भक्षणादि करैं। सो यहां पूछिए है, प्रथम तौ ठाकुरकै क्षुधा तृषादिककी पीड़ा होयगी। जो न होय तौ ऐसी कल्पना कैसैं संभवै। अर क्षुधादिकरि पीड़ित होय सो व्याकुल होय तब ईश्वर दुखी भया औरका दुःख दूरि कैसैं करै। बहुरि भोजनादि सामग्री आप तौ उनकै अर्थि अर्पण करी सो करी पीछैं प्रसाद तौ ठाकुर देवै तब होय आपहीका तौ किया न होय। जैसैं कोऊ राजाकौं भेटकरै पीछैं राजा बकसैं तौ वाकौं ग्रहण करना योग्य अर राजा तौ किछू

कहै नाहीं, आप ही 'राजा मोकूं बकसी' ऐसैं कहि वाकौं अंगीकार करै तौ यह ख्याल (खेल) भया। तैसैं यहां भी ऐसैं किए भक्ति तौ भई नाहीं हास्यकरना भया। बहुरि ठाकुर अर तू दोय हो कि एक हो। दोय हो तौ तैनैं भेट करी पीछैं ठाकुर बकसै सो ग्रहण कीजै। आपही काहेकौं ग्रहण करै है। अर तू कहैगा ठाकुरकी तौ मूर्ति है तातैं मै ही कल्पना करूं हूं तौ ठाकुरके करनेका कार्य तैनैं ही किया तब तू ही ठाकुर भया। बहुरि जो एक हो, तौ भेट करनी प्रसाद करना झूंठा भया। एक भए यह व्यवहार संभवै नाहीं। तातैं भोजनासक्त पुरुषनिकरि ऐसी कल्पना करिए है। बहुरि ठाकुरकै अर्थि नृत्य गीतादि करावना, शीत ग्रीष्म वसंत आदि ऋतुनिविषै संसारीकै संभवती ऐसी विषयसामग्री भेली करनी इत्यादि कार्य करैं। तहां नाम तौ ठाकुरका लेना अर इंद्रियविषय अपने पोषने। सो विषयासक्त जीवनिकरि ऐसा उपाय किया है। बहुरि जन्म विवाहादिककी वा सोवना जागना इत्यादि-ककी कल्पना तहां करै हैं सो जैसैं लड़की गुड्डा गुड्डीका ख्याल बनायकरि कुतूहल करैं तैसै यह भी कुतूहल करना है। किछू परमार्थरूप गुण है नाहीं। बहुरि बालक ठाकुरका स्वांग बनाय चेष्टा दिखावै। ताकरि अपने विषय पोषैं अर कहै यह भी भक्ति है। इत्यादि कहा कहिए ऐसी अनेक विपरीतता सगुण-भक्तिविषै पाईए है। ऐसैं दोय प्रकार भक्तिकरि मोक्षमार्ग कहै हैं सो ताका स्वरूप मिथ्या जानना। अब अन्यमतके ज्ञानयोगकरि मोक्षमार्गका स्वरुप दिखाइए—

एक अद्वैत सर्वव्यापी परब्रह्मकौं जानना ताकौं ज्ञान कहै हैं सो ताका मिथ्यापना तौ पूर्वै कह्या ही है। बहुरि आपकौं सर्वथा शुद्ध ब्रह्मस्वरूप मानना काम क्रोधादिक वा शरीरादिककौं भ्रम जानना ताकौ ज्ञान कहै हैं सो यह भ्रम है। जो आप शुद्ध है तौ मोक्षका उपाय काहेकौं करै हैं। आप शुद्धब्रह्म ठहरया, तब कर्तव्य कहा रह्या। बहुरि प्रत्यक्ष आपकै काम क्रोधादिक होते देखिए अर शरीरादिकका संयोग देखिए हैं सो इनिका अभाव होगा तब होगा वर्त्तमानविषै इनिका सद्भाव मानना भ्रम कैसैं भया। बहुरि कहै हैं, मोक्षका उपाय करना भी भ्रम है। जैसे जेवरी तौ जेवरी ही है ताकौ सर्प जानै था सो भ्रम था—भ्रम मिटे जेवरी ही है। तैसै आप तौ ब्रह्म ही है आपकौं अशुद्ध मानै था सो भ्रम था भ्रम मिटे आप ब्रह्म ही है। सो ऐसा कहना मिथ्या है। जो आप शुद्ध होय अर ताकौं अशुद्ध जानै तौ भ्रम, अर आप कामक्रोधादिसहित अशुद्ध होय रह्या ताकौं अशुद्ध जानै तौं भ्रम काहेका। झूठा भ्रम-करि आपकौं शुद्ध मानें कहा सिद्धि है। बहुरि तू कहैगा ए काम क्रोधादिक तौ मनके धर्म हैं ब्रह्म न्यारा है तौ पूछिए है--मन है सो तेरा स्वरूप है कि नाहीं। जो है तौ काम क्रोधादि भी तेरें ही भए। अर नाहीं है तौ पूछिए है जो तू ज्ञानस्वरूप है कि जड़ है। जो ज्ञानस्वरूप है तौ तेसैं तौ ज्ञान मन वा इंद्रियद्वारा ही होता दीखै है। इनि विना कोई ज्ञान बतावै तौ ताकौं जुदा तेरा स्वरूप मानै सो भासता नाहीं। बहुरि **'मन ज्ञाने'** धातुतैं मन शब्दनिपजे है सो मन तौ ज्ञानस्वरूप है। यह ज्ञान किसका है

ताकौं बताय। सो जुदा कोऊ भासै नाहीं। बहुरि जो तू जड है तौ ज्ञान विना अपने स्वरूपका विचार कैसै करै है। यह बनै नाहीं बहुरि तू कहै है ब्रह्म न्यारा है सो वह न्यारा ब्रह्म तू ही है कि और है। जो तू ही है तौ तेरे 'मै ब्रह्म हौं' ऐसा माननेवाला ज्ञान है सो तौ मनस्वरूप ही है मनतै जुदा नाहीं। आपा मानना आपहीविषै होय। जाकौं न्यारा जानै तिसविषै आपा मान्या जाय नाहीं। सो मनतै न्यारा ब्रह्म है तौ मनरूप ज्ञान ब्रह्मविषै आपा काहेकौं मानै है। बहुरि जो ब्रह्म और ही है तौ तू ब्रह्मविषै आपा काहेकौं मानै। तातैं भ्रम छोड़ि ऐसा मानि कि जैसे स्पर्शनादि इंद्रिय तौ शरीरका स्वरूप है सो जड है याकै द्वारि जो जानपनौ हो है सो आत्माका स्वरूप है। तैसैं ही मन भी सूक्ष्म परमाणूनिका पुंज है सो शरीरहीका अंग है। ताकै द्वारि जानपना हो है वा कामक्रोधादि भाव हो है सो सर्व आत्माका स्वरूप है विशेष इतना जो जानपना तौ निज स्वभाव है काम क्रोधादिक उपाधिक भाव है तिसकरि आत्मा अशुद्ध है। बहुरि जब कालपाय क्रोधादिक मिटैंगे अर जानपनाकै मन इंद्रियका आधीनपना मिटैगा तब केवल ज्ञानस्वरूप आत्मा शुद्ध होगा। ऐसै ही बुद्धि अहंकारादिक भी जानि लेने। जातै मन अर बुद्ध्यादिक एकार्थ है अर अहंकारादिक हैं ते काम क्रोधादिकवत् उपाधिक भाव है। इनकौं आपतैं भिन्न जानना भ्रम है। इनकौं अपने जानि उपाधिक भाव निके अभाव करनेका उद्यम करना योग्य है। बहुरि जिनितै इनिका अभाव न होय सकै अर अपनी महंतता चाहैं ते जीव

अपने इन भावनिकौं न ठहराय स्वच्छंद प्रवर्त्तैं हैं। काम क्रोधादिक भावनिकौं बधाय विषयसामग्रीविषै वा हिंसादिकार्यनिविषै तत्पर हो हैं। बहुरि अहंकारादिकका त्यागकौं भी अन्यथा मानै है। सर्वकौं परब्रह्म मानना कहीं आपा न मानना ताकौं अहंकारका त्याग बतावैं सो मिथ्या है। जातैं कोई आप है कि नाहीं। जो है तौ आपविषै आपा कैसैं न मानिए अर न है तौ सर्वकौं ब्रह्म कौन मानै है। तातै शरीरादि परविषै अहंबुद्धि न करनी। तहां करता न होना सो अहंकारका त्याग है। आपविषै अहंबुद्धि करनेका दोष नाहीं। बहुरि सर्वकौ समान जानना कोई बिषै भेद न करना ताकौ राग द्वेषका त्याग बतावै हैं सो भी मिथ्या है। जातै सर्व पदार्थ समान नाहीं हैं। कोई चेतन हैं कोई अचेतन हैं कोई कैसा है कोई कैसा है। तिनिकौं समान कैसैं मानिए। तातैं परद्रव्यनिकौं इष्ट अनिष्ट न मानना सो रागद्वेषका त्याग है। पदार्थनिका विशेष जाननेमै तौ किछू दोष है नाहीं। ऐसैं ही अन्य मोक्षमार्गरूप भावनिकी अन्यथा कल्पना करै हैं। बहुरि ऐसी कल्पनाकरि कुशील सेवै हैं अभक्ष्य भखै हैं वर्णादि भेद नाहीं करै हैं हीन क्रिया आचरै हैं इत्यादि विपरीतरूप प्रवर्त्तैं हैं। जब कोऊ पूछै तव कहै हैं, यह तौ शरीरका धर्म है अथवा जैसी प्रालब्धि है तैसैं होय है अथवा जैसैं ईश्वरकी इच्छा हो है तैसैं हो है। हमकौं तौ विकल्प न करना। सो देखो आप जानि जानि प्रवर्त्तैं ताकौं तौ शरीरका धर्म बतावै। आप उद्यमी होय कार्य करै ताकौं प्रालब्धि कहै। आप इच्छाकरि सेवै ताकौं

ईश्वरकी इच्छा बतावै। विकल्प करै अर कहै हमकौं तौ विकल्प न करना। सो धर्मका आश्रय लेय विषयकषाय सेवने तातै ऐसी झूंठी युक्ति बनावै है। जो अपने परिणाम किछू भी न मिलावैं तौ हम याका कर्त्तव्य न मानै। जैसैं आप ध्यान धरै तिष्ठै अर कोऊ अपने ऊपरि वस्त्र गेरि आवै तहां आप किछू सुखी न भया तहां तौ ताका कर्त्तव्य नाहीं सो साचा, अर आप वस्त्रकौं अंगीकारकरि पहरै अपनी शीतादिक वेदना मिटाय सुखी होय तहां जो अपना कर्त्तव्य न मानै सो कैसै बनै। बहुरि कुशील सेवना अभक्ष्य भक्षणा इत्यादि कार्य तौ परिणाम मिलै विना होते ही नाहीं। तहां अपना कर्त्तव्य कैसै न मानिए। तातै जो काम क्रोधादिका अभाव ही भया होय तो तहां किसी क्रियानिविषै प्रवृत्ति संभवै ही नाहीं। अर जो कामक्रोधादि पाईए है तौ जैसैं ए भाव थोरे होंय तैसैं प्रवृत्ति करनी। स्वच्छंद होय इनिकौं वधावना युक्त नाहीं। बहुरि केई जीव पवनादिकका साधनकरि आपकौं ज्ञानी मानै हैं। तहां इडा पिंगला सुषुम्णारूप नासिकाद्वारकरि पवन निकसै, तहां वर्णादिक भेदनितैं पवनहीकौं पृथ्वी तत्त्वादिकरूप कल्पना करै हैं। ताका विज्ञानकरि किछू साधनतै निमित्तका ज्ञान होय तातैं जगतकौं इष्ट अनिष्ट बतावै आप महंत कहावै सो यह तौ लौकिक कार्य है किछू मोक्षमार्ग नाहीं। जीवनिकौं इष्ट अनिष्ट बताय उनकै राग द्वेष वधावै अर अपनै मान लोभादिक निपजावै यामैं कहा सिद्धि है। बहुरि प्राणायामादिका साधनकरि पवनकौं चढाय समाधि लगाई कहैं, सो यह तौ जैसै नट साधनतै हस्तादिक क्रिया करै तैसैं

यहां भी साधनतैं पवनकरि क्रिया करी। हस्तादिक अर पवन यह तौ शरीरहीके अंग हैं। इनिके साधनतैं आत्महित कैसैं सधै। बहुरि तू कहैगा—तहां मनका विकल्प मिटै है सुख उपजै है यमकै वशीभूतपना न हो है सो मिथ्या है जैसैं निद्राविषै चेतनाकी प्रवृत्ति मिटै है तैसैं पवन साधनेतैं यहां चेतनाकी प्रवृत्ति मिटै है। तहां मनकौं रोकि राख्या है किछू वासना तौ मिटी नाहीं। तातैं मनका विकल्प मिट्या न कहिए। चेतनाविना सुख कौन भोगवै है ; तातैं सुख उज्या न कहिए। अर इस साधनवाले तौ इस क्षेत्रविषै भए हैं तिनिविषै कोई अमर दीखता नाहीं। अग्नि लगाए ताका मरण होता दीखै है तातै यमकै वशीभूत नाहीं यह झूठी कल्पना है। बहुरि जहां साधनविषै किछू चेतना रहै अर तहां साधनतैं शब्द सुनै, ताकौं अनहद शब्द बतावैं। सो जैसैं बीणादिकके शब्द सुननेतैं सुख मानना तैसैं तिसके सुननेतैं सुख मनना है। यह तौ विषयपोषण भया परमार्थ तौ किछू नाहीं ठहरया। बहुरि पवनके निकसैन पैठनैविषै 'सोहं' ऐसे शब्दकी कल्पनाकरि ताकौं 'अजपा जाप' कहै हैं। सो जैसैं तीतरके शब्दविषै 'तू ही, शब्दकी कल्पना करै हैं किछू तीतर अर्थ अवधारि ऐसा शब्द कहता नाहीं तैसैं यहां। 'सोहं' शब्दकी कल्पना है। किछू पवन अर्थ अवधारि ऐसा शब्द कहता नाहीं। बहुरि शब्दके जपने सुनिनेतैं ही तौ किछू फलप्राप्ति नाहीं। अर्थ अवधारे फल-प्राप्ति हो है। सो 'सोहं' शब्दका तौ यह अर्थ है 'सो हूं छूं' यहां ऐसी अपेक्षा चाहिए है, 'सो' कौन? तब ताका निर्णय किया चाहिए।

जातैं तत् शब्दकै अर यत् शब्दकै नित्यसंबंध है। तातैं वस्तुका निर्णयकरि ताविषै अहंबुद्धि धारने विषै' सोहं शब्द बनै तहां भी। आपकौं आप अनुभवै तहां तौ 'सोहं' शब्द संभवै नाहीं। परकौं अपने स्वरूप बतावनेविषै 'सोहं, शब्द संभवै है। जैसैं पुरुष आपकौं आप जानैं तहां'सो हूं छूं, ऐसा काहेकौ विचारै। कोई अन्यजीव आपकौं न पहचानता होय अर कोई अपना लक्षण न पहचानता होय, तब वाकौं कहिए 'जो ऐसा है सो मैं हूं' तैसै ही यहां जानना। बहुरि केई ललाट भंवरा नासिकाके अग्रभाग देखनेका साधनकरि त्रिकुटी आदिका ध्यान भया कहि परमार्थ मानै, सो नेत्रकी पूतरी फिरे मूर्त्तीक वस्तु देखी, यामैं कहा सिद्धि है। बहुरि ऐसे साधननितै किंचित् अतीत अनागतादिकका ज्ञान होय वा वचन सिद्धि होय वा पृथ्वी आकाशादिविषै गमनादिककी शक्ति होय वा शरीरविषै आरोग्यादिक होय तौ ए तौ सर्व लौकिक कार्य हैं। देवादिककै स्वयमेव ऐसी ही शक्ति पाइए है। इनितै किछू अपना भला तौ होता नाहीं, भला तौ विषयकषायकी वासना मिटे होय। सो ए तौ विषयकषाय पोषनेके उपाय है। तातैं ए सर्व साधन किछू हितकारी है नाहीं। इनिविषै कष्ट बहुत है मरणादि पर्यंत होय अर हित सधै नाहीं। तातैं ज्ञानी ऐसा खेद न करै है। कषायी जीव ही ऐसे साधनविषै लागैं हैं। बहुरि काहूकौ बहुत तपश्चरणादिककरि मोक्षका साधन कठिन बतावै हैं काहूकौं सुगमपनैं ही मोक्षभया कहैं। उद्धवादिककौं परम भक्ति कहै तिनकौं तौ तपका उपदेश दिया कहैं अर वेश्यादिककै विना परिणाम केवल

नामादिकहीतैं तिरना बतावैं किछू थल है नाहीं। ऐसैं मोक्षमार्गकौं अन्यथा प्ररूपै हैं।

बहुरि मोक्षस्वरूपकौं भी अन्यथा प्ररूपै हैं। तहां मोक्ष अनेक प्रकार बतावैं हैं। एक तौ मोक्ष ऐसा कहै हैं—जो वैकुंठधामविषै ठाकुर ठकुरानीसहित नानाभोगविलास करै हैं तहां जाय प्राप्त होय अर तिनिकी टहल किया करै सो मोक्ष है। सो यह तौ विरुद्ध है। प्रथम तौ ठाकुर भी संसारीवत् विषयासक्त होय रह्या है। तौ जैसा राजादिक हैं तैसा ही ठाकुर भया। बहुरि अन्य पासि टहल करावनी हुई तब ठाकुरकै पराधीनतापना भया। बहुरि यह मोक्षकौं पाय तहां टहल किया करै तौ जैसैं राजाकी चाकरी करनी तैसैं यह भी चाकरी भई। तहां पराधीन भए सुख कैसैं होय। यह भी बनै नाहीं।

बहुरि एक मोक्ष ऐसा कहै हैं—ईश्वरकै समान आप हो है सो भी मिथ्या है। जो उनकै समान और भी जुदा हो है तौ बहुत ईश्वर भए लोकका कर्त्ता हर्त्ता कौन ठहरै। भिन्न २ इच्छा भए परस्पर विरोध होय। एक ही है तौ समानता न भई। न्यून है ताकै नीचापनेकरि उच्चता होनेकी आकुलता रही तब सुखी कैसैं होय। जैसैं छोटा राजा बड़ा राजा संसारविषै हो हैं तैसैं छोटा बड़ा ईश्वर भी मुक्तिविषै भया सो बनै नाहीं।

बहुरि एक मोक्ष ऐसा कहै हैं—जो वैकुंठविषै दीपककीसी ज्योति है। तहां ज्योतिविषै ज्योति जाय मिलै है। सो यह भी मिथ्या है। दीपककी ज्योति तौ मूर्त्तीक अचेतन है,ऐसी ज्योति तहां कैसैं

संभवै। बहुरि ज्योतिमैं ज्योति मिलै यह ज्योति रहै है कि बिनसि जाय है। जो रहै है तौ ज्योति वधती जायगी। तब ज्योति विषै हीनाधिकपना होगा। अर विनसि जाय है तौ आपकी सत्ता नाश होय ऐसा कार्य उपादेय कैसै मानिए। तातैं ऐसै भी बनै नाहीं।

बहुरि एक मोक्ष ऐसा कहै हैं--जो आत्मा ब्रह्म ही है मायाका आवरण मिटे मुक्ति ही है। सो यह भी मिथ्या है। यह मायाका आवरणसहित था तब ब्रह्मसौं एक था कि जुदा था। जो एक था तौ ब्रह्म ही मायारूप भया अर जुदा था तौ माया दूरि भए ब्रह्मविषै मिलै है तब याका अस्तित्व रहै है कि नाहीं रहै है, जो रहै है तौ सर्वज्ञकौ तौ याका अस्तित्व जुदा भासै तब संयोग होनेतैं मिल्या कहो परंतु परमार्थतैं तौ मिल्या नाहीं। बहुरि अस्तित्व नाहीं रहै है तौ आपका अभाव होना कौन चाहै तातैं यह भी न बनै।

बहुरि एक प्रकार मोक्षका स्वरूप ऐसा भी केई कहै हैं--जो बुद्ध्यादिकका नाश भए मोक्ष हो है। सो शरीरके अंगभूत मन इंद्रिय तिनिकै आधीन ज्ञान न रह्या। ऐसै कहना तौ काम क्रोधादिक दूरि भए बनै है अर तहां चेतनताका भी अभाव भया मानिए तौ पाषाणादि समान जड़ अवस्थाकौं कैसै भली मानिए। बहुरि भला साधन करतै तौ जानपना बधै है भला साधन किए जानपनेका अभाव होना कैसै मानिए। बहुरि लोक विषै ज्ञानकी महंततातैं जड़पनाकी महंतता नाहीं तातै यह भी बनै नाहीं। ऐसैं ही अनेक प्रकार कल्पनाकरि मोक्षकौं बतावैं सो किछू यथार्थ

तौ जानै नाहीं संसार अवस्थाकी मुक्ति अवस्थाविषै कल्पनाकरि अपनी इच्छा अनुसारि बकै हैं। याप्रकार वेदांतादि मतनिविषै अन्यथा निरूपण करै हैं।

बहुरि ऐसैं ही मुसलमानोंके मतविषै अन्यथा निरूपन करिए है जैसैं वै ब्रह्मकौं सर्वव्यापी निरंजन सर्वका कर्त्ता हर्त्ता मानै हैं तैसैं ए खुदाकौ मानै है। बहुरि जैसैं वै अवतार भए मानैं है तैसैं ए पैगंबर भए मानैं हैं। जैसैं वै पुण्य पापका लेखा लेना यथा—योग्य दंडादिक देना ठहरावै हैं तैसैं ए खुदाकै ठहरावै हैं। बहुरि जैसैं वै गऊ आदिकौं पूज्य कहै हैं, तैसैं ए सूकर आदिकौं कहै है। ए सब तिर्यंचादिक हैं। बहुरि जैसै वै ईश्वरकी भक्तितैं मुक्ति कहै है तैसै ए खुदाकी भक्तितैं कहै हैं। बहुरि वै कहीं दया पोषैं कहीं हिंसा पोषैं, तैसै ए भी कहीं रहम करना पोषैं कहीं जिबहकरना पोषै हैं। बहुरि जैसैं वै कहीं तपश्चरण करना पोषैं कहीं विषयसेवना पोषैं तैसै ही ए भी पोषै है। बहुरि जैसैं वै कहीं मांस मदिरा शिकार आदिका निषेध करैं कहीं उत्तम पुरुषनिकरि तिनिका अंगीकार करना बतावैं तैसैं ए भी तिनिका निषेध वा अंगीकार करना बतावैं हैं। ऐसैं अनेकप्रकारकरि समानता पाइए है। यद्यपि नामादिक और और हैं तथापि प्रयोजनभूत अर्थका एकता पाईए है बहुरि ईश्वर खुदा आदि मूल-श्रद्धानकी तौ एकता है अर उत्तरश्रद्धानविषै घने ही विशेष हैं। तहां उनकैं भी विपरीतरूप विषय कषाय हिंसादि पापके पोषक प्रत्यक्षादि प्रमाणतै विरुद्ध निरूपण करैं हैं। तातैं मुसलमानोंका

मत महाविपरीतरूप जानना। याप्रकार इस क्षेत्र कालविषै जिनिकी प्रचुर प्रवृत्ति है ताका मिथ्यापना दिखाया। यहां कोऊ कहै जो ए मत मिथ्या है तौ बड़े राजादिक वा बड़े विद्यावान् इनि मतनिविषै कैसै प्रवर्तै है, ताका समाधान,–

जीवनिकै मिथ्यावासना अनादितै है सो इनिविषै मिथ्यात्वहीका पोषण है। बहुरि जीवनिकै विषयकषायरूप कार्यनिकी चाहि वर्त्तै है सो इनमै विषयकषायरूप कार्यनिहीका पोषण है। बहुरि राजादिकोंका विद्यावानोंका ऐसे धर्मविषै विषयकषायरूप प्रयोजन सिद्ध होय है। बहुरि जीव तौ लोकनिंद्यपनाकौ भी उलंघि वा पाप भी जानि जिन कार्यनिकौ किया चाहै तिनि कार्यनिकौ करतै धर्म बतावै तौ ऐसे धर्मविषै कौन न लागै। तातै इनि धर्मनिकी विशेष प्रवृत्ति है। बहुरि कदाचित् तू कहैगा,—इनि धर्मनिविषै विरागता दया इत्यादि भी तौ कहै है, सो जैसै झोल दिए विना खोटा द्रव्य चालै नाहीं तैसं सांच मिलाए विना झूंठ चालै नाहीं। परंतु सर्वके हित प्रयोजनविषै विषयकषायका ही पोषण किया है जैसै गीताविषै उपदेश देय रारि (युद्ध) करावनेका हीं प्रयोजन प्रगट किया। वेदान्तविषै शुद्ध निरूपणकरि स्वच्छंद होनेका प्रयोजन दिखाया। ऐसैं ही जानना। बहुरि यह काल तौ निकृष्ट है सो इसविषै तौ निकृष्ट धर्महीकी प्रवृत्ति विशेष हो है देखो इस कालविषै मुसलमान बहुत प्रधान हो गए हिंदू घटि गए। हिंदूनिविषै और बधि गए जैनी घटि गए। सो यह कालका दोष है। ऐसै यहां अबार मिथ्याधर्मकी प्रवृत्ति बहुत

पाईए है। अब पंडितपनाके बलकरि कल्पितयुक्तिकरि नाना मत स्थापित भए हैं तिनिविषै जे तत्वादिक मानिए है तिनिका निरूपण कीजिए है। तहां सांख्यमतविषै पचीस तत्त्व माने हैं सो कहिए है,—

सत्व रजः तमः यह तीन गुण कहै हैं तहां सत्वकरि प्रसाद हो है रजोगुणकरि चित्तकी चंचलता हो है तमोगुणकरि मूढ़ता हो है इत्यादि लक्षण कहै हैं। इनिरूप अवस्था ताका नाम प्रकृति है। बहुरि तिसतैं बुद्धि निपजै है याहीका नाम महत्तत्व है। बहुरि तिसतै अहंकार निपजै है। बहुरि तिसतैं सोलहमात्रा हो हैं। तहां पांच तौ ज्ञानइंद्रिय हो है——स्पर्शन रसन, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र। बहुरि एक मन हो है। बहुरि पांच कर्मेंद्रिय हो है-वचन, चरन, हस्त, गुदा, लिंग। बहुरि पांच तन्मात्रा हो हैं-रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द बहुरि रूपतैं अग्नि, रसतैं जल, गंधतैं पृथ्वी, स्पर्शतैं पवन शब्दतैं आकाश, ऐसैं भया कहै हैं। ऐसैं चौवीस तत्त्व तौ प्रकृतिस्वरूप है। इनितै भिन्न निर्गुण कर्त्ता भोक्ता एक पुरुषहै। ऐसैं पचीस तत्त्व कहै हैं। सो ए कल्पित हैं। जातैं राजसादिक गुण आश्रयविना कैसैं होंय। इनिका आश्रय तौ चेतनद्रव्य ही संभवै है। बहुरि बुद्धि इनितै भई कहैं सो बुद्धि नाम तौ ज्ञानका है। कोई ज्ञानगुणका धारी पदार्थविषै ए होते देखिए है। इनितैं ज्ञान भया कैसैं मानिए। कोई कहै,-बुद्धि जुदी है ज्ञान जुदा है तौ मन तौ आगै षोड़शमात्राविषै कह्या अर ज्ञान जुदा कहोगे तौ बुद्धि किसका नाम ठहरैगा। बहुरि तिसतैं अहंकार भया कह्या,

सो परवस्तुविषैं 'मै करूं हूं' ऐसैं माननेका नाम अहंकार है। साक्षीभूत जाननेकरि तौ अहंकार होता नाहीं। ज्ञानकरि उपज्या कैसैं कहिए है। बहुरि अहंकारकरि षोड़श मात्रा उपजी कही। तिनिविषै पांच ज्ञानइंद्रिय कहीं। सो शरीरविषै नेत्रादि आकाररूप द्रव्येंद्रिय हैं सो तौ पृथ्वी आदिवत् देखिए है। अन्य वर्णादिकके जाननेरूप भावइंद्रिय हैं सो ज्ञानरूप है। अहंकारका कहा प्रयोजन है। अहंकार बुद्धिरहित कोऊ काहूकूं दीखै है। तहां अहंकारकरि निपजना कैसै संभवै। बहुरि मन कह्या, सो इंद्रियवत् ही मन है। जातै द्रव्यमन शरीररूप है, भावमन ज्ञानरूप है। बहुरि पांच कर्मेंद्रिय कहीं, सो ए तौ शरीरके अंग हैं। मूर्तीक है। अहंकार अमूर्त्तीकतै इनिका उपजना कैसैं मानिए। बहुरि कर्मइंद्रिय पांच ही तौ नाहीं। शरीरके सर्व अंग कार्यकारी हैं। बहुरि वर्णन तौ सर्व जीवाश्रित है, मनुष्याश्रित ही तौ नाहीं, तातै सूंड़ि पूंछ इत्यादि अंग भी कर्मइंद्रिय है। पांचहीकी संख्या कैसै कहिए है। बहुरि स्पर्शादिक पांच तन्मात्रा कहीं, सो रूपादि किछू जुदे वस्तु नाहीं ए तौ परमाणूनिसौं तन्मय गुण हैं ए जुदे कैसैं निपजै। बहुरि अहंकार तौ अमूर्त्तीक जीवका परिणाम है। तातै ए मूर्त्तीकगुण कैसैं निपजे मानिए। बहुरि इनि पांचनितैं अग्नि अदि निपजे कहैं, सो प्रत्यक्ष झूंठा है। रूपादिक अग्न्यादिककै तौ सहभूत गुणगुणी संबंध है। कहने मात्र भिन्न हैं वस्तुविषै भेद नाहीं। किसीप्रकार कोऊ भिन्न होता भासै नाहीं, कहने मात्रकरि भेद उपजाइए है। तातैं रूपादिकरि अग्न्यादि कैसैं उपजे

मानिए। कहनेविषै भी गुणीविषै गुण हैं। गुणतै गुणी निपज्या कैसैं मानिए। बहुरि इनितै भिन्न एक पुरुष कहै हैं, सो वाका स्वरूप अवक्तव्य कहि प्रत्युत्तर नाहीं करते। जो पूछिए कि कैसा है, कहा है, कैसं कर्त्ता हर्त्ता है, सो बतावते नाहीं जो बतावैं तौ ताहीमै विचार किए अन्यथापनो भासै। ऐसैं सांख्यमतकरि काल्पित तत्व मिथ्या जानेन। बहुरि पुरुषकौं प्रकृतितैं भिन्न जाननेका नाम मोक्षमार्ग कहै हैं। सो प्रथम तौ प्रकृतिपुरुष कोई है ही नाहीं। बहुरि केवल जानेहीतै तौ सिद्धि होती नाहीं। जानिकरि रागादिक मिटाए सिद्धि होय, सो ऐसैं जाने किछू रागादिक घटै नाहीं। प्रकृतिका कर्त्तव्य माने आप अकर्त्ता रहै, तब काहेकौं आप रागादिक घटावै। तातैं यह मोक्षमार्ग नाहीं है। बहुरि प्रकृति पुरुषका जुदा होना मोक्ष कहै हैं। सो पचीस तत्वनिविषैं चौईस तत्व तौ प्रकृतिसंबंधी कह्या, एक पुरुष भिन्न कह्या। सो ए तौ जुदे ही हैं अर जीव कोई पदार्थ पचीस तत्वनिविषै कह्या ही नाहीं। अर पुरुषहीकौ प्रकृतिसंयोग भए जीवसंज्ञा हो है, तौ पुरुष न्यारे न्यारे प्रकृतिसहित हैं पीछैं साधनकरि कोई पुरुष रहित हो हैं, ऐसा सिद्ध भया-पुरुष एक न ठहरया। बहुरि प्रकृति पुरुषकी भूलि है कि कोई व्यंतरीवत् जुदी ही है सो जीवकौं आनि लागै है। जो याकी भूलि है, तौ प्रकृतितैं इंद्रियादिक तत्त्व उपजे कैसैं मानिए। अर जुदी है तौ वै भी एक वस्तु है सर्व कर्त्तव्य वाका ठहरया। पुरुषका किछू कर्त्तव्य रह्या ही नाहीं काहेकौं उपदेश दीजिए है। ऐसैं यह

मोक्षमार्गपना मानना मिथ्या है । बहुरि तहां प्रत्यक्ष अनुमान आगम ए तीन प्रमाण कहै है, सो तिनिका सत्य असत्यका निर्णय जैनके न्याय ग्रंथनितैं जानना । बहुरि इस सांख्यमतविषै कोई ईश्वरकौं न मानै है । कोई एक पुरुषकौ ईश्वर मानै हैं । कोई शिवकौ देव मानै हैं । कोई एक पुरुषकौ मानै है । अपनी इच्छा अनुसार कल्पना करै है किछू निश्चय है नाहीं । बहुरि इस मतविषै केई जटा धारै हैं, केई चोटी राखैं हैं, केई मुंडित हो हैं, केई काथे वस्त्र पहरै है, इत्यादि अनेकप्रकार भेष धारि तत्त्वज्ञानका आश्रयकरि महंत कहावैं हैं । ऐसैं सांख्यमतका निरूपण किया ।

बहुरि शिवमतविषै दोय भेद हैं—नैयायिक वैशेषिक । तहां नैयायिकविषै सोळह तत्त्व कहै हैं । प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टांत, सिद्धांत, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितंडा, हेत्वाभास, छल, जाति, निग्रहस्थान । तहां प्रमाण च्यार प्रकार कहै हैं । प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, उपमा । बहुरि आत्मा, देह अर्थ, बुद्धि इत्यादि प्रमेय कहै हैं । बहुरि 'यह कहा है' ताका नाम संशय है । जाकै अर्थि प्रवृत्ति होय, सो प्रयोजन है । जाकौं वादी प्रतिवादी मानै सो दृष्टांत है । दृष्टांतकरि जाकौं ठहराईए सो सिद्धांत है । बहुरि अनुमानके प्रतिज्ञा आदि पंच-अंग ते अवयव है । संशय दूरि भए किसी विचारतै ठीक होय, सो तर्क है । पीछै प्रतीतिरूप जानना सो निर्णय हैं । आचार्य शिष्यकै पक्ष प्रतिपक्षकरि अभ्यास सो वाद है । जानेकी इच्छा-

रूप कथाविषै जो छल जाती आदि दूषण सो जल्प है। प्रतिपक्ष-रहित वाद सो वितंडा है। सांचे हेतु नाहीं ते असिद्ध आदि भेद लिए हेत्वाभास है। छललिए वचन सो छल है। सांचे दूषण नाहीं ऐसे दूषणाभास सो जाति है। जा करि परवादीका निग्रह होय सो निग्रहस्थान है या प्रकार संशयादि तत्त्व कहे, सो ए कोई वस्तुस्वरूप तौ तत्त्व हैं नाहीं। ज्ञानके निर्णय करनेकौं वा वादकरि पांडित्य प्रगट करनेकौं कारणभूत विचाररूप तत्त्व कहे, सो इनितैं परमार्थ कार्य कैसैं होय। काम क्रोधादि भावकौं मैटि निराकुल होना सो कार्य है। सो तौ यहां प्रयोजन किछू दिखाया ही नाहीं। पंडिताईकी नाना युक्ति बनाई सो यह भी एक चातुर्य्य है, तातैं ये तत्त्वभूत नाहीं। बहुरि कहोगे इनिकौं जाने विना प्रयोजनभूत तत्वका निर्णय न करि सकै, तातैं ए तत्व कहे हैं। सो ऐसै परंपरा तौ व्याकरणवाले भी कहै हैं। व्याकरण पढ़ें अर्थ निर्णय होय, वा भोजनादिकके अधिकारी भी कहै हैं कि भोजन किए शरीरकी स्थिरता भए तत्वनिर्णय करनेकौं समर्थ होय सो ऐसी युक्ति कार्यकारी नाहीं बहुरि जो कहोगे व्याकरण भोजनादिक तौ अवश्य तत्वज्ञानकौं कारण नाहीं लौकिक कार्यसाधनैकौं कारण है सो जैसैं ए हैं तैसै ही तुम तत्व कहे सो भी लौकिक कार्य साधनेकों कारण हैं जैसैं इंद्रियादिकके जाननेकौं प्रत्यक्षादि प्रमाण कहे वा स्थाणु पुरुषादिविषै संशयादिकका निरूपण किया। तातैं जिनिंकौं जाने अवश्य काम क्रोधादि दूरि होंय निराकुलता उपजै, वै ही तत्त्व

कार्यकारी हैं। बहुरि कहोगे, जो प्रमेय तत्वविषै आत्मादिकका निर्णय हो है सो कार्यकारी है। सो प्रमेय तौ सर्व ही वस्तु हैं। प्रमितिका विषय नाहीं ऐसा कोई भी नाहीं, तातैं प्रमेय तत्व काहेकौं कह्या। आत्मा आदि तत्त्व कहने थे। बहुरि आत्मादिकका भी स्वरूप अन्यथा प्ररूपण किया, सो पक्षपातरहित विचार किए भासै है। जैसैं आत्माके भेद दोय कहै है—परमात्मा जीवात्मा तहां परमात्माकौं सर्वका कर्त्ता बतावै है। तहां ऐसा अनुमान करै हैं जो यह जगत् कर्त्ताकरि निपज्या है। जातैं यह कार्य है। जो कार्य है सो कर्त्ताकरि निपज्या है। जैसैं घटादिक। सो यह अनुमानाभास है। जातै यहां अनुमानांतर संभवै है। यह जगत् सर्व कर्त्ताकरि निपज्या नाहीं। जातै याविषै केई अकार्यरूप पदार्थ भी है जो अकार्य है, सो कर्त्ताकरि निपज्या नाहीं। जैसै सूर्य्यबिंबादिक। जातैं अनेक पदार्थनिका समुदायरूप जगत् तिसविषै कोई पदर्थ कृत्रिम हैं सो मनुष्यादिककरि किए होय है। कोई अकृत्रिम हैं सो ताका कर्त्ता नाहीं। यह प्रत्यक्षादि प्रमाणके अगोचर है तातैं ईश्वरकौ कर्त्ता मानना मिथ्या है। बहुरि जीवात्माकौ प्रतिशरीर भिन्न कहै है। सो यह सत्य है। परंतु मुक्त भए पीछै भी भिन्न ही मानना योग्य है। विशेष पूर्वं कह्या ही है। ऐसै ही अन्य तत्त्वनिकौं मिथ्या प्ररूपै हैं। बहुरि प्रमाणादिकका भी स्वरूप अन्यथा कल्पै हैं, सो जैनग्रंथनितै परीक्षा किए भासै है। ऐसैं नैयायिकमतविषै कहे तत्त्व कल्पित जानने।

बहुरि वैशेषिकमतविषै छह तत्त्व कहे हैं। द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय। तहां द्रव्य नवप्रकार पृथ्वी, जल, अग्नि, पवन, आकाश, काल, दिशा, आत्मा, मन। तहां पृथ्वी जल अग्निके परमाणु भिन्न भिन्न हैं। ते परमाणु नित्य हैं। तिनिकरि कार्यरूप पृथ्वी हो है सो अनित्य है। सो ऐसा कहना प्रत्यक्षादितैं विरुद्ध है। ईंधनरूप पृथ्वी आदिके परमाणु अग्निरूप होते देखिए है। अग्निके परमाणु राखरूप पृथ्वी होते देखिए है। जलके परमाणु मुक्ताफल (मोती) रूप पृथ्वी होते देखिए हैं बहुरि जो तू कहैगा, वै परमाणु जाते रहै है और ही परमाणु तिनिरूप हो है सो प्रत्यक्षकौ असत्य ठहरावै है। कोई ऐसी प्रबलयुक्ति कहै तौ ऐसैं ही मानै, परंतु केवल कहेतैं ही तौ ऐसैं ठहरै नाहीं जातैं सब परमाणूनिकी एक पुद्गलरूप जाति है, सो पृथ्वी आदि अपने अवस्थारूप परिणमै है। बहुरि इन पृथ्वी आदिकका कहीं जुदा शरीर ठहरावै है, सो मिथ्या ही है। जातैं वाका कोई प्रमाण नाहीं। अर पृथ्वी आदि तौ परमाणुपिंड हैं। इनिका शरीर अन्यत्र ए अन्यत्र ऐसा संभवै नाहीं। तातैं यह मिथ्या है। बहुरि जहां पदार्थ अटकै नाहीं, ऐसी जो पोलि ताकौं आकाश कहै हैं। क्षण पल आदिकौं काल कहै हैं। सो ए दोन्यूं ही अवस्तु हैं। सत्तारूप ए पदार्थ नाहीं। पदार्थनिका क्षेत्रपरिणमनादिकका पूर्वापरविचार करनेके अर्थि इनिकी कल्पना कीजिए है। बहुरि दिशा किछू हैं नाहीं। आकाशविषै खंड कल्पनाकरि दिशा मानिए है। बहुरि आत्मा दोय प्रकार कहै हैं, सो पूर्वैं निरूपण किया ही

हैं। बहुरि मन कोई जुदा पदार्थ नाहीं। भावमन तौ ज्ञानरूप है, सो आत्माका स्वरूप है। द्रव्यमन परमाणूनिका पिंड है, सो शरीरका अंग है। ऐसै ये द्रव्य कल्पित जानने। बहुरि गुण चोईस कहे हैं—स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, शब्द, संख्या, विभाग, संयोग, परिमाण, पृथक्त्व, परत्व, अपरत्व, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, धर्म, अधर्म, प्रयत्न, संस्कार, द्वेष, स्नेह, गुरुत्व, द्रव्यत्व, । सो इनिविषै स्पर्शादिक गुण तौ परमाणूनिविषै पाईए हैं। परंतु पृथ्वीकौं गंधवती ही कहनी, जलकौं शीतस्पर्शवान् कहना इत्यादि मिथ्या है। जातै कोई पृथ्वीविषै गंधकी मुख्यता न भासै है। कोई जल उष्ण देखिए है। इत्यादि प्रत्याक्षादितै विरूद्ध है। बहुरि शब्दकौं आकाशका गुण कहै। सो भी मिथ्या है। शब्द भींति इत्यादितैं रुकै है, तातै मूर्त्तीक है। आकाश अमूर्त्तीक सर्वव्यापी है। भींतिविषै अकाश रहै शब्दगुण न प्रवेशकरि सकै, यह कैसैं बनै। बहुरि संख्यादिक है सो वस्तुविषै तौ किछू है नाहीं, अन्य पदार्थ अपेक्षा अन्य पदार्थके हीनाधिक जाननेकौ अपने ज्ञानविषै संख्यादिककी कल्पनाकरि विचार कीजिए हैं। बहुरि बुद्धिआदि है, सो आत्माका परिणमन है। तहां बुद्धि नाम ज्ञानका है तौ आत्माका गुण है अर मनका नाम है तौ द्रव्यनिविषै कह्या ही था, यहां गुण काहेकौं कह्या। बहुरि सुखादिक है, सो आत्माविषै कदाचित् पाईए है तातैं आत्माके लक्षणभूत तौ ए गुण है नाहीं, अव्याप्तपनेतै लक्षणाभास हैं। बहुरि स्नेहादि पुद्गलपरमाणुविषै पाईए हैं, सो स्निग्धगुरुत्व इत्यादि तौ स्पर्शन इंद्रियकरि जानिए

तातैं स्पर्शगुणविषै गर्भित भए जुदे काहेकौं कहे । बहुरि द्रव्यत्वगुण जलविषै कह्या, सो ऐसै तौ अग्निआदिविषै ऊर्ध्वगमनत्व आदि पाईए है । कै तौ सर्व कहने थे, कै समान्यविषै गर्भित कहने थे। ऐसै ए गुण कहे ते भी कल्पित है । बहुरि कर्म पांचप्रकार कहैं हैं—उत्क्षेपण, अवक्षेपण, आकुंचन, प्रसारण, गमन । सो ए तौ शरीरकी चेष्टा हैं । इनिकौं जुदा कहनेका अर्थ कहा । बहुरि ए ती ही चेष्टा तौ होती नाहीं, चेष्टा तौ घनी ही प्रकारकी हो हैं । बहुरि जुदी ही इनिकौ तत्त्वसंज्ञा कही, सो कै तौ जुदा पदार्थ होय तौ ताकौ जुदा तत्व कहना था, कै काम क्रोधादि मेटनेकौं विशेष प्रयोजनभूत होय तौ तत्व कहना था, सो दोऊ ही नाहीं । अर ऐसै ही कहि देना तौ पाषाणादिककी अनेक अवस्था हो है सो कह्या करो किछू साध्य नाहीं । बहुरि सामान्य दोय प्रकार है— पर अपर । सो पर तौ सत्तारूप है अपरप द्रव्यत्वरूप है । बहुरि नित्यद्रव्यविषै प्रवृत्ति जिनिकी होय ते विशेष हैं । बहुरि अयुत-सिद्धसंबंधका नाम समवाय है । सो सामान्यादिक तौ बहुतनिकौ एकप्रकारकरि वा एकवस्तुविषै भेदकल्पनाकरि वा भेदकल्पना अपेक्षा संबंध माननेकरि अपने विचारहीविषै हो है कोई जुदा पदार्थ तौ नाहीं । बहुरि इनिके जाने कामक्रोधादि मेटनेरूप विशेष प्रयोजनकी भी सिद्धि नाहीं, तातैं इनिकौ तत्त्व काहेकौं कहे । अर ऐसै ही तत्त्व कहने थे, तौ प्रमेयत्वादि वस्तुके अनंत-धर्म हैं वा संबंध आधारादिक कारकनिके अनेक प्रकार वस्तुविषै संभवै है । कै तौ सर्व कहने थे, कै प्रयोजन जानि कहने थे ।

तातै ए सामान्यादिक तत्त्व भी वृथा ही कहे। ऐसे वैशेषिकनि-
करि कहे कल्पित तत्त्व भी जानने। बहुरि वैशेपिक दोय ही प्रमाण
मानै है–प्रत्यक्ष, अनुमान। सो इनिका सत्य असत्यका निर्णय
जैनन्यायग्रंथनितैं जानना।

बहुरि नैयायिक तौ कहै है-विपय, इंद्रिय, बुद्धि, शरीर, सुख,
दुःख, इनिका अभावतैं आत्माकी स्थिति सो मुक्ति है। अर
वैशेपिक कहै है—चौईस गुणनिविषै बुद्धि आदि नवगुणनिका
अभाव सो मुक्ति है। सो यहां बुद्धिका अभाव कह्या सो बुद्धि नाम
ज्ञानका है तौ ज्ञानका अधिकरणपणा आत्माका लक्षण कह्या था,
अब ज्ञानका अभाव भए लक्षणका अभाव होतैं लक्ष्यका भी अभाव
होय, तब आत्माकी स्थिति कैसै रही। अर जो बुद्धि नाम मनका
है, तो भावमन तौ ज्ञानरूप है ही अर द्रव्यमन शरीररूप है सो
मुक्त भए द्रव्यमनका संबन्ध छूटै ही छूटै। सो द्रव्यमन जड़ ताका
नाम बुद्धि कैसै होय। बहुरि मनवत् ही इंद्रिय जानने। बहुरि
विपयका अभाव होय। सो स्पर्शादि विषयनिका जानना मिटै है,
तौ ज्ञान काहेका नाम ठहरैगा। अर तिनि विषयनिका ही अभाव
होयगा, तौ लोकका अभाव होयगा। बहुरि सुखका अभाव कह्या
सो सुखहीकै अर्थ उपाय कीजिए है ताका जहां अभाव होय सो
उपादेय कैसै होय। बहुरि जो आकुलतामय इंद्रियजनित सुखका
तहां अभाव भया कहै, तौ यह सत्य है। निराकुलता लक्षण अतीं-
द्रियसुख तौ तहां संपूर्ण संभवै है तातै सुखका अभाव नाहीं।
बहुरि शरीर दुःख द्वेपादिकका तहां अभाव कहै सो सत्य ही है।

बहुरि शिवमतविषै कर्त्ता निर्गुण ईश्वर शिव है ताकौं देव मानै हैं। सो याके स्वरूपका अन्यथापना पूर्वोक्त प्रकार जानना। बहुरि यहां भस्मी, कोपीन, जटा, जनेऊ इत्यादि चिन्हसहित भेष हो हैं सो आचारादि भेदतैं च्यार प्रकार है—शैव, पाशुपत्, महाव्रती कालमुख। सो ए रागादि सहित हैं तातैं सुलिंग नाहीं। ऐसैं शिव-मतका निरूपण किया। अब मीमांसक मतका स्वरूप कहिए है—

मीमांसक दोय प्रकार हैं— ब्रह्मवादी कर्मवादी तहां ब्रह्मवादी तौ सर्व यह ब्रह्म है दूसरा कोऊ नाहीं ऐसा वेदान्तविषै अद्वैत ब्रह्मको निरूपै हैं बहुरि आत्माविषै लय होना सो मुक्ति कहै हैं। सो इनिका मिथ्यापना पूर्वै दिखाया है, सो विचारना। अर कर्मवादी क्रिया आचार यज्ञादिक कार्यनिका कर्तव्यपना प्ररूपै हैं, सो इन क्रियानिविषै रागादिकका सद्भाव पाईए है, तातैं ए कार्य किछू कार्यकारी नाहीं। बहुरि तहां,'भट्ट' तौ अर 'प्रभाकर' करि करी हुई दोय पद्धति हैं। तहां, भट्ट तौं छह प्रमाण मानै है—प्रत्यक्ष, अनुमान, वेद, उपमा, अर्थापत्ति, अभाव। बहुरि प्रभाकर अभाव बिना पांच ही प्रमाण मानै है। सोइनका सत्यासत्यपना जैन-शास्त्रनितैं जानना। बहुरि तहां षट्कर्मसहित ब्रह्मसूत्रके धारक शूद्रअन्नादिकके त्यागी ते गृहस्थाश्रम है नाम जिनिका ऐसे भट्ट हैं। बहुरि वेदान्तविषै यज्ञोपवीतरहित विप्रअन्नादिकके ग्राही भागवत् है नाम जिनिका ऐसे च्यारि प्रकार हैं-कुटीचर, बहूदक हंस परमहंस। सो ए किछू त्यागकरि संतुष्ट भए हैं, परंतु ज्ञान

श्रद्धानका मिथ्यापना अर रागादिकका सद्भाव इनिकै पाईए है। तातैं ए भेष कार्यकारी नाहीं।

बहुरि यहां जैमिनीयमत है, सो ऐसैं कहै है, —

सर्वज्ञदेव कोई है नाहीं। वेदवचन नित्य है, तिनितैं यथार्थ निर्णय हो है। तातैं पहलें वेदपाठकरि क्रियाप्रति प्रवर्त्तना सो तौ चोदना सोई है लक्षण जाका ऐसा धर्म ताका साधन करना। जैसैं कहै है "स्वः कामोऽग्निं यजेत्" स्वर्गाभिलाषी अग्निकौं पूजै इत्यादि निरूपण करै हैं। यहां पूछिए है,--शैव, सांख्य, नैयायिकादिक सर्व ही वेदकौं मानै है तुम भी मानो हौ। तुम्हारै अर उन सबनिकै तत्त्वादिनिरूपणविषै परस्पर विरुद्धता पाईए है सो कहा है। जो वेदहीविषै कहीं किछू कहीं किछू निरूपण किया है, तौ वाकी प्रमाणता कैसी रही। अर जो मतवाले ही ऐसै निरूपण करैं है तौ तुम परस्पर झगरि निर्णयकरि एककौ वेदका अनुसारी अन्यकौं वेदतैं पराङ्मुख ठहरावो। सो हमकौ तौ यह भासै है वेदहीविषै पूर्वापरविरुद्धतालिए निरूपण है। तिसतैं ताका अपनी अपनी इच्छा अनुसारि अर्थ ग्रहणकरि जुदे जुदे मतके अधिकारी भए हैं। सो ऐसे वेदकौं प्रमाण कैसे कीजिए। बहुरि अग्नि पूजे स्वर्ग होय, सो अग्नि मनुष्यतैं उत्तम कैसे मानिए प्रत्यक्षविरुद्ध है। बहुरि वह स्वर्गदाता कैसै होय। ऐसै ही अन्य वेदवचन प्रमाण–विरुद्ध हैं। बहुरि वेदविषै ब्रह्म कह्या है, सर्वज्ञ कैसै न मानै है। इत्यादि प्रकारकरि जैमिनीयमत कल्पित जानना।

अब बौद्धमतका स्वरूप कहिए है,--

बौद्धमतविषै च्यारितत्त्व प्ररूपै हैं । दुःख, आयतन, समुदाय, मार्ग । तहां संसारीकै बंधरूप सो दुःख है । सो पांच प्रकार है—विज्ञान, वेदना, संज्ञा, संस्कार, रूप । तहां रूपादिकका जानना सो विज्ञान है, सुख दुःखका अनुभवना सो वेदना है. मनका जानना सो संज्ञा है, पढ़्या था ताका जानना सो संस्कार है, रूपका धारना सो रूप है । सो यहां विज्ञानादिककौं दुःख कह्या सो मिथ्या है । दुःख तौ काम क्रोधादिक है । ज्ञान दुःख नाहीं । यह तौ प्रत्यक्ष देखिए है । काहूकै ज्ञान थोरा है अर क्रोध लोभादिक बहुत हैं सो दुखी है । काहूकै ज्ञान बहुत है काम क्रोधादि स्तोक हैं वा नाहीं हैं सो सुखी है । तातैं विज्ञानादिक दुःख नाहीं हैं । बहुरि आयतन बारह कहे हैं । पांच तौ इंद्रिय अर तिनिके शब्दादिक पांच विषय, एक मन, एक धर्मायतन । सो ये आयतन किस अर्थि कहे । क्षणिक सबकौं कहै, इनिका कहा प्रयोजन है । बहुरि जातैं रागादिकका कारण निपजै ऐसा आत्मा अर अत्मीय यह है नाम जाका सो समुदाय है । तहां अहंरूप आत्मा अर मनरूप आत्मीय जानना, सो क्षणिक मानै इनिका भी कहनेका किछू प्रयोजन नाहीं । बहुरि सर्व संस्कार क्षणिक हैं, ऐसी वासना सो मार्ग है । सो प्रत्यक्ष बहुतकाल-स्थायी केई वस्तुअवलोकिए है । तू कहैगा एक अवस्था न रहै है, तौ यह हम भी मानै हैं । सूक्ष्मपर्याय क्षणस्थायी है । बहुरि तिस वस्तुहीका नाश मानै तौ यह होता न दीसै है हम कैसैं मानै । बहुरि बाल वृद्धादि अवस्थाविषै एक आत्माका अस्तित्व भासै है ।

जो एक नाहीं है तौ पूर्व उत्तर कार्यका एक कर्त्ता कैसैं मानै हैं। जो तू कहैगा संस्कारतैं हैं, तौ संस्कार कौनकै है। जाकै है सो नित्य है कि क्षणिक है। नित्य है तौ सर्व क्षणिक कैसे कहे है। क्षणिक है तौ जाका आधार ही क्षणिक तिस संस्कारकी परंपरा कैसै कहै है। बहुरि सर्वक्षणिक भया, तब आप भी क्षणिक भया, तू ऐसी वासनाकौं मार्ग कहै है सो इस मार्गका फलकौ आप तौ पावै ही नाहीं काहेकौं इस मार्गविषै प्रवर्तै। बहुरि तेरे मतविषै निरर्थक शास्त्र काहेकौ किए। उपदेश तौ किछू कर्त्तव्यकरि फल-पावै तिसकै अर्थ दीजिए है। ऐसै यह मार्ग मिथ्या है। बहुरि रागादिक ज्ञानसंतानवासनाका उच्छेद जो निरोध, ताकौ मोक्ष कहै है। सो क्षणिक भया तब मोक्ष कौनकै कहै है। अर रागा-दिकका अभाव होना तौ हम भी मानै है। अर ज्ञानादिक अपने स्वरूपका अभाव भए तौ आपका अभाव होय ताका उपाय करना कैसै हितकारी होय। हिताहितका विचार करनेवाला तौ ज्ञान ही है। सो आपका अभावकौं ज्ञानी हित कैसै मानै। बहुरि बौद्ध-मतविषै दोय प्रमाण मानै हैं—प्रत्यक्ष, अनुमान। सो इनिके सत्या-सत्यका निरूपण जैन शास्त्रनितैं जानना। बहुरि जो यह दोय ही प्रमाण है, तौ इनिके शास्त्र अप्रमाण भए तिनिका निरूपण किस अर्थि किया। प्रत्यक्ष अनुमान तौ जीव आप ही करि लेंगे, तुम शास्त्र काहेकौं किए। बहुरि तहां सुगतकौ देव मानै है सो ताका स्वरूप नग्न वा विक्रियारूप स्थापै है सो विटंबनारूप है। बहुरि कमंडलु रक्तांबरके धारी पूर्वाह्नविषै भोजन करैं इत्यादि लिंगरूप

बौद्धमतके भिक्षुक हैं, सो क्षणिककौं भेष धरनैका कहा प्रयोजन। परंतु महंतताकै अर्थि कल्पित निरूपण करना वा भेष धरना हो है। ऐसे बौद्ध है, ते च्यारि प्रकार है—वैभाषिक, सौत्रांतिक, योगाचार, मध्यम। तहां वैभाषिक तौ ज्ञानसहित पदार्थकौ मानै है। सौत्रांतिक प्रत्यक्ष यह देखिए है सो ही है परैं किछू नाहीं ऐसैं मानै है। योगाचारनिकै आचारसहित बुद्धि पाईए है। मध्यम हैं ते पदार्थका आश्रयविना ज्ञानहीकौं मानै है। सो अपनी अपनी कल्पना करै हैं। विचार किए किछू ठिकाणाकी बात नाहीं। ऐसै बौद्धमतका निरूपण किया।

अब चार्वाक मत कहिए है,—

कोई सर्वज्ञदेव धर्म अधर्म मोक्ष है नाहीं। अर परलोक नाहीं वा पुण्यपापका फल नाहीं। यह इंद्रियगोचर जितना है सो ही लोक है। ऐसैं चार्वाक कहै है। तहां वाकौ पूछिए है—सर्वज्ञदेव इस काल क्षेत्रविषै नाहीं कि सर्वदा सर्वत्र नाहीं। इस कालक्षेत्र विषै तौ हम भी नाहीं मानै है। अर सर्वकालक्षेत्रविषै नाहीं ऐसा सर्वज्ञविना जानना किसकै भया। जो सर्व कालक्षेत्रकी जानै सो ही सर्वज्ञ अर न जानै है तौ निषेध कैसैं करै है। बहुरि धर्म अधर्म लोकविषै प्रसिद्ध है। जो ए कल्पित होंय तौ सर्वजन प्रसिद्ध कैसैं होय। बहुरि धर्म अधर्मरूप परणति होती देखिए है—ताकरि वर्तमानहीमैं सुखी दुखी होते देखिए है। इनिकौ कैसैं न मानिए। अर मोक्षका होना अनुमानविषै आवै है। क्रोधादिक दोष काहूकै हीन है काहूकै अधिक हैं सो जानिए है काहूकै

इनिकी नास्ति भी होती होगी अर ज्ञानादिक गुण काहूकै हीन काहूकै अधिक भासै है, सो जानिए है काहूकै संपूर्ण भी होते होंयगे। ऐसै जाकै समस्तदोषनिकी हानि गुणनिकी प्राप्ति होय सो ही मोक्ष अवस्था है। बहुरि पुण्य पापका फल भी देखिए है। कोऊ उद्यम करै तौ भी दरिद्री रहै। कोउकै स्वयमेव लक्ष्मी होय। कोउ शरीका यत्न करै, तौ भी रोगी रहै काहूके विना ही यत्न नीरोगता रहै। इत्यादि प्रत्यक्ष देखिए है। सो याका कारण कोई तौ होगा। जो याका कारण सो पुण्य पाप। बहुरि परलोक भी प्रत्यक्ष अनुमानतै भासै है। व्यंरादिक है ते अवलोकिए है। मै अमुक था सो देव भया हूं। बहुरि तू कहैगा यह तौ पवन है तातै हम तौ 'मै हौ' इत्यादि चेतनाभाव जाकै आश्रय पाईए ताहीकौ आत्मा कहै है सो तूं वाका नाम पवन कहि परंतु पवन तौ भींति आदिकरि अटकै है आत्मा मूंद्या बन्द किया हुवा भी अटकै नाहीं, तातै पवन कैसै मानिए। बहुरि जितना इंद्रियगोचर है तितना ही लोक कहै है। सो तेरी इंद्रियगोचर तौ थोरेसे भी योजनका दूरिवर्त्ती क्षेत्र अर थोरासा अतीत अनागत काल ऐसा क्षेत्रकालवर्त्ती भी पदार्थ नाहीं होय सकै। अर दूरि देशकी वा बहुतकालकी वातै परंपरातै सुनिए ही है, तातैं सबका जानना तेरै नाहीं तू इतना ही लोक कैसै कहै है। बहुरि चार्वाकमतविषै कहै है पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश-मिले चेतना होय आवै है। सो मरतैं पृथ्वी आदि यहां रही चेतनावान् पदार्थ गया सो व्यंतरादि भया प्रत्यक्ष जुदे जुदे

देखिए है। बहुरि एक शरीरविषै पृथ्वी आदि तौ भिन्न भिन्न भासै हैं चेतना एक भासै है। जो पृथ्वी आदिकै आधार चेतना होय तौ लोही उस्वासादिककै जुदी जुदी ही चेतना होय अर हस्तादिक काटे जैसैं वर्णादि रहै हैं तैसैं चेतना भी रहै है। बहुरि अहंकार बुद्धि तौ चेतनाकै है सो पृथिवी आदि रूप शरीर तौ यहां ही रह्या व्यंतरादि पर्यायविषै पूर्वपर्यायका अहंपना मानना देखिए है सो कैसैं हो है। बहुरि पूर्वपर्यायका गुह्य समाचार प्रगट करै सो यह जानना किसके साथि गया, जाकी साथि जानना गया सो ही आत्मा है। बहुरि चार्वाकमतविषै खान पान भोग विलास इत्यादि स्वच्छंद वृत्तिका उपदेश है सो ऐसै तौ जगत् स्वयमेव ही प्रवर्त्तै है। तहां शास्त्रादि बनाय कहा भला होनेका उपदेश दिया। बहुरि तू कहैगा तपश्चरण शील संयमादि छुड़ावनेकै अर्थि उपदेश दिया तौ इनि कार्यनिविषै तौ कषाय घटनेतै आकुलता घटै है तातै यहां ही सुखी होना हो है यश आदि हो है तू इनिकौं छुड़ाय कहा भला करै है। विषयासक्त जीवनिकौ सुहावती बातैं कहि अपना वा औरनिका बुरा करनेका भय नाहीं। स्वच्छंद होय विषयसेवनके अर्थि ऐसी झूंठी युक्ति बतावै है। ऐसैं चार्वाकमतका निरूपण किया।

इस ही प्रकार अन्य अनेक मत हैं ते झूंठी युक्ति बनाय विषयकषायासक्त पापी जीवनिकरि प्रगट किए है। तिनिका श्रद्धानादिकरि जीवनिका बुरा हो है। बहुरि एक जिनमत है सो ही सत्यार्थका प्ररूपक है। सर्वज्ञ वीतरागदेवकरि भाषित है।

तिसका श्रद्धानादिक करि ही जीवनिका भला हो है । सो जिन-मतविषै जीवादि तत्त्व निरूपण किए हैं । प्रत्यक्ष परोक्ष दोय प्रमाण किए हैं । सर्वज्ञ वीतराग अर्हंत देव हैं । बाह्य आभ्यंतर परिग्रहरहित निर्गंथ गुरु है । सो इनिका वर्णन इस ग्रंथविषै आगैं विशेष लिखैंगे सो जानना यहां कोऊ कहै--तुहारै राग-द्वेष है तातैं तुम अन्य मतका निषेधकरि अपने मतकौ स्थापो हौ, ताकौं कहिए है—

यथार्थ वस्तुके प्ररूपण करनेविषै रागद्वेष नाहीं । किछू अपना प्रयोजन विचारि अन्यथा प्ररूपण करै, तौ राग द्वेष नाम पावै । बहुरि वह कहै है - जो रागद्वेष नाहीं, तौ अन्यमत बुरे जैनमत भला ऐसा कैसैं कहो हौ । साम्य भाव होय तौ सर्वकौं समान जानौं मतपक्ष काहेकौ करो हौ । ताकौं कहिए है—बुराकौं बुरा कहैं हैं भलाकौं भला कहैं हैं, यामैं रागद्वेष कहा किया । बहुरि बुरा भलाकौं समान जानना तौ अज्ञानभाव है, साम्यभाव नाहीं । बहुरि वह कहै है—जो सर्व मतनिका प्रयोजन तौ एक ही है, तातैं सर्वकौ समान जानना । ताकौं कहिए है—प्रयोजन एक ही होय तौ नानामत काहेकौं कहिए । एक मतविषै तौ एक प्रयोजन लिए अनेकप्रकार व्याख्यान हो है, ताकौ जुदा मत कौन कहै है । परंतु प्रयोजन ही भिन्न भिन्न हो हैं, सो ही दिखाईए है--जैनमतविषैं एक वीतरागभाव पोषनेका प्रयोजन हैं, सो कथानिविषै वा लोका-दिक निरूपणविषै वा आचरणविषै वा तत्त्वनिविषै जहां तहां वीतरागताहीकौं पुष्टता करी है । बहुरि अन्य मतनिविषै सराग-

भाव पोषनेका प्रयोजन है। जातैं कल्पित रचना तौ कषायी जीव करैं, सो अनेक युक्ति बनाया कषायभावहीकौं पोषैं। जैसैं अद्वैत ब्रह्मवादी सर्वकौं ब्रह्म माननेकरि, अर सांख्यमती सर्व कार्य प्रकृतिका मानि आपकौं शुद्ध अकर्त्ता माननेकरि, अर शिवमति तत्त्व जाननेहीतैं सिद्धि होना माननेकरि, मीमांसक कषायजनित आचरणकौं धर्म माननेकरि, बौद्ध क्षणिक माननेकरि; चार्वाक परलोकादि न माननेकरि विषयभोगादिरूप कषायकार्यनिविषै स्वच्छंद होना ही पोषैं हैं। यद्यपि कोई ठिकानै कोई कषाय घटावनेका भी निरूपण करैं, तौ उस छलकरि अन्य कषायकौ पोषण करै है। जैसैं गृहकार्य छोरि परमेश्वरका भजन करना ठहराया अर परमेश्वरका स्वरूप सरागी ठहराय उनकै आश्रय अपने विषय कषाय पोषै है। बहुरि जैनधर्मविषै देव गुरु धर्मादिकका स्वरूप वीतराग ही निरूपणकरि केवल वीतरागताहीकौ पोषै है, सो यह प्रगट है।

हम कहा कहैं, अन्यमती भर्तृहरि ताहूनै वैराग्यप्रकरणविषै[1] ऐसाकह्या है

[2]एको रागिषु राजते प्रियतमादेहार्द्धधारी हरो
नीरागेषु जिनो विमुक्तललनासङ्गो न यस्मात्परः।
दुर्वारस्मरबाणपन्नगविषव्यासक्तमुग्धो जनः
शेषः कामविडंबितो हि विषयान् भोक्तुं न मोक्तुं क्षमः ॥१॥

---

१ वैराग्यप्रकरणमें नहीं किन्तु शृंगारप्रकरण (शतक) में यह ९७ नं० का श्लोक है। न जाने यहां वैराग्यप्रकरण कैसे लिखा गया है।

२ रागी पुरुषोंमें तो एक महादेव शोभित होता है, जिसने अपनी प्रियतमा :—

याविषै-सरागीनिविषै महादेवकौं प्रधान कह्या अर वीतरागीनिविषै जिनदेवकौं प्रधान कह्या है । बहुरि सराग भाव वीतरागभावनिविषै परस्पर प्रतिपक्षीपना है, सो यह दोऊ भले नाहीं । इनिविषै एक ही हितकारी है, सो वीतराग ही हितकारी है जाके होतें तत्काल आकुलता मिटै, स्तुतियोग्य होय । आगामी भला होना सर्व कहै । अर सरागभाव होते तत्काल आकुलता होय, निंदनीक होय, आगामी बुरा होना भासै, तातैं जामैं वीतरागभावका प्रयोजन ऐसा जैनमत सो ही इष्ट है । जिनमैं सरागभावके प्रयोजन प्रगट किए हैं ऐसे अन्यमत अनिष्ट हैं । इनिकौं समान कैसैं मानिए । तब वह कहै है-- यह तौ सांच, परंतु अन्यमतकी निंदा किए अन्यमती दुःख पावै, औरनिसौं विरोध उपजै, तातैं काहेकौं निंदा करिए । तहां कहिए है--जो हम कषायकरि निंदा करै वा औरनिकौं दुःख उपजावैं तौ हम पापी ही हैं । अन्यमतके श्रद्धानादिककरि जीवनिकै अतत्त्वश्रद्धान दृढ़ होय, ताकरि संसारविषै जीव दुखी होय, तातैं करुणाभावकरि यथार्थ निरूपण किया है । कोई विनादोष ही दुःख पावै, विरोध उपजावै, तौ हम कहा करैं । जैसैं मदिराकी वात किए कलाल दुःख पावै, कुशीलकी निंदा किए वेश्यादिक दुःख पावै, खोटा खरा पहिचाननेकी परीक्षा बतावतै ठिग दुःख पावै, तौ कहा करिए । ऐसैं जो पापीनिके भयकरि धर्मोपदेश न

पार्वतीको आधे शरीरमें धारणकर रक्खा है और विरागियोंमें जिनदेव शोभित होते हैं, जिनके समान स्त्रियोंका संग छोडनेवाला दूसरा कोई नहीं है । शेष लोग तो दुर्निवार कामदेवके बाणरूप सर्पोंके विषसे मूर्च्छित हुए हैं, जो कामकी विडम्बनासे न तो विषयोंको भलीभांति भोग ही सकते हैं और न छोड ही सकते हैं ।

दीजिए, जीवका भला कैसैं होय । ऐसा तौ कोई उपदेश नाहीं जा करि सर्व ही चैन पावैं । बहुरि वह विरोध उपजावै, सो विरोध तौ परस्पर हो है । हम लरैं नाहीं, वै आप ही उपशांत हो जांयगे । हमकौं तौ हमारे परिणामौंका फल होगा । बहुरि कोऊ कहै—प्रयोजनभूत जीवादिक तत्त्वनिका अन्यथा श्रद्धान किए मिथ्यादर्शनादि हो हैं, अन्यमतनिका श्रद्धान किए कैसैं मिथ्यादर्शनादिक होंय, ताका समाधान—

अन्यमतनिविषै विपरीत युक्ति बताय जीवादिक तत्त्वनिका स्वरूप यथार्थ न भासै यह उपाय किया है, सो किस अर्थि किया है । जीवादि तत्त्वनिका यथार्थ स्वरूप भासै, तौ वीतरागभाव भए ही महंतपनौ भासै । बहुरि जे जीव वीतरागी नाहीं अर अपनी महंतता चाहैं, तिनि सरागभाव होतैं महंतता मनावनेके अर्थि कल्पित युक्तिकरि अन्यथा निरूपण किया है । सो अद्वैतब्रह्मादिकका निरूपणकरि जीव अजीवका अर स्वच्छंदवृत्ति पोषनेकरि आस्रव-संवरादिकका अर सकषायीवत् वा अचेतनवत् मोक्षकहनेकरि मोक्षका अयथार्थ श्रद्धानकौं पोषै हैं । जातैं अन्यमतनिका अन्यथापना प्रगट किया है । इनिका अन्यथापना भासै, तौ तत्त्वश्रद्धानविषै रुचिवंत होय उनकी युक्तिकरि भ्रम न उपजै । ऐसैं अन्यमतनिका निरूपण किया ।

अब अन्यमतनिके शास्त्रनिहीकी साक्षीकरि जिनमतकी समीचीनता वा प्राचीनता प्रगट कीजिए है,—

बड़ा योगवाशिष्ठ छत्तीस हजार श्लोक प्रमाण, ताका प्रथम

वैराग्यप्रकरण तहां अहंकार निषेधाध्यायविषै वशिष्ठ अर रामका संवादविषै ऐसा कह्या है, —

रामोवाच—

" नाहं रामो न मे वांक्षा भावेषु च न मे मनः ।
शांतिमास्थातुमिच्छामि स्वात्मन्येव जिनो यथा ॥ १ ॥

या विषै रामजी जिन समान होनेकी इच्छा करी, तातै रामजीतैं जिनदेवका उत्तमपना प्रगट भया अर समीचीनपना प्रगट भया । बहुरि 'दक्षिणामूर्त्ति-सहस्रनाम' विषै कह्या है -

शिवोवाच-

'जैनमार्गरतो जैनो जितक्रोधो जितामयः ॥'

यहां भगवतका नाम जैनमार्गविषै रत अर जैन कह्या, सो यामै जैनमार्गकी प्रधानता वा प्राचीनता प्रगट भई । बहुरि 'वैशंपायन-सहस्रनाम, विषै कह्या है,

' कालनेमिनिहा वीरः शूरः शौरिर्जिनेश्वरः ।'

यहां भगवानका नाम जिनेश्वर कह्या, तातै जिनेश्वर भगवान् हैं । बहुरि दुर्वासाऋषिकृत ' महिम्नस्तोक ' विषै ऐसा कह्या है,-

"तत्तद्दर्शनमुख्यशक्तिरिति च त्वं ब्रह्मकर्मेश्वरी ।
कर्त्तार्हन् पुरुषो हरिश्च सविता बुद्धः शिवस्त्वं गुरुः" ॥१॥

यहां ' अरहंत तुम हो ' ऐसैं भगवंतकी स्तुति करी, तातैं

---

१ अर्थात -मैं राम नहीं हू, मेरी कुछ इच्छा नहीं है और भावों वा पदार्थों में मेरा मन नहीं है । मैं तो अपनी जिनदेवके समान आत्मामे ही शान्ति स्थापना करन चहता हू ।

अरहंतकै भगवंतपनैा प्रगट भयो । बहुरि हनुमन्नाटकविषै ऐसैं कह्या है,—

"[1]यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनः
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटवःकर्त्तेति नैयायिकाः ।
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः
सोऽयं वो विदधातु वांछितफलं त्रैलोक्यनाथः प्रभुः॥ १॥

यहां छहों मतविषै ईश्वर एक कह्या, तहां अरहंतदेवकै भी ईश्वरपना प्रगट किया। यहां कोऊ कहै, जैसे यहां सर्वमतविषै एक ईश्वर कह्या तैसैं तुम भी मानौ। ताकौं कहिए है – तुमने यह कह्या है, हम तौ न कह्या। तातैं तुम्हारे मतविषै अरहंतकौं ईश्वरपना सिद्ध भया। हमारे मतविषै भी ऐसैं ही कहैं तौ हम भी शिवादिककौं ईश्वर मानैं। जैसे कोई व्यापारी सांचा रत्न दिखावै कोई झूंठा रत्न दिखावै। तहां झूठा रत्नवाला तौ सर्व रत्नका समान मोल लेनेकै अर्थि समान कहै सांचा रत्नवाला कैसैं समान मानै। तैसैं जैनी सांचा देवादिककौं निरूपैं अन्यमती झूंठा निरूपै तहां अन्यमती अपनी महिमाकै अर्थि सर्वकौं समान कहैं– जैनी कैसैं कहैं। बहुरि रुद्रयामलतंत्र विषै भवानीसहस्रनामविषै ऐसैं कह्या है,—

---

1 यह हनुमन्नाटकके मंगलाचरणका श्लोक है। इसका अभिप्राय यह है कि, जिसको शैव लोग शिव कहकर, वेदान्ती ब्रह्म कहकर, बौद्ध बुद्धदेव कहकर, नैयायिक कर्त्ता कहकर, जैनी अर्हन् कहकर और मीमांसक कर्म कहकर उपासना करते हैं, वह त्रैलोक्यनाथ प्रभु तुम्हारे मनोरथोंको सफल करे।

कुंडासना जगद्धात्री बुद्धमाता जिनेश्वरी।
जिनमाता जिनेन्द्रा च शारदा हंसवाहिनी ॥ १ ॥"

यहां भावनीके नाम जिनेश्वरी इत्यादि कहे, तातै जिनका उत्तमपना प्रगट भया। बहुरि 'गणेशपुराण' विषै ऐसैं कह्या है,—

"जैनं पाशुपतं सांख्यं"

बहुरि व्यासकृत सूत्रविषै ऐसा कह्या है—

"जैना एकस्मिन्नेव वस्तुनि उभये प्ररूपयन्ति।"

इत्यादि तिनिके शास्त्रनिविषै जैन निरूपण है, तातै जैनमतका प्राचीनपना भासै है। बहुरि भागवतका पंचमस्कंधविषै ऋषभावतारका वर्णन है। तहां इनिकौ करुणामय तृष्णादिरहित ध्यान-मुद्राधारी सर्वाश्रमकरि पूजित कह्या है ताकै अनुसारि अरहंत राजा प्रवृत्ति करी ऐसा कहै हैं। सो जैसै रामकृष्णादि अवतार-निकै अनुसारि अन्यमत, तैसै ऋषभावतारकै अनुसारि जैनमत, ऐसैं तुह्मारे मतहीकरि जैन प्रमाण भया। यहां इतना विचार और किया चाहिए—कृष्णादि अवतारनिकै अनुसारि विषयकषाय-निकी प्रवत्ति हो है। ऋषभावतारकै अनुसारि वीतराग साम्य-भावकी प्रवृत्ति हो है। यहां दोऊ प्रवृत्ति समान माने धर्म अध-र्मका विशेष न रहै अर विशेष माने, भली होय जो अंगीकार करनी। बहुरि दशावतारचरित्रविषै—**"बध्द्वा पद्मासनं यो नयन-युगमिदं न्यस्य नासाग्रदेशे"** इत्यादि बुद्धावतारका स्वरूप अरहंत देव सारिखा लिख्या है, सो ऐसा स्वरूप पूज्य है तौ अरहंतदेव पूज्य सहज ही भया।

बहुरि काशीखंडविषै दिवोदास राजानैं संबोधि राज्य छुड़ायो। तहां नारायण तौ विनयकीर्ति जती भया, लक्ष्मीकौं विनयश्री अर्जिका करी, गरुड़कौं श्रावक किया, ऐसा कथन है। सो जहां संबोधन करना भया, तहां जैनी भेष बनाया। तातैं जैन हितकारी प्राचीन प्रतिभासै है। बहुरि 'प्रभासपुराण' विषै ऐसा कह्या है—

"भवस्य पश्चिमे भागे वामनेन तपः कृतम्।
तेनैव तपसाकृष्टः शिवः प्रत्यक्षतां गतः ॥ १ ॥"
"पद्मासनसमासीनः श्याममूर्तिर्दिगम्बरः।
नेमिनाथः शिवोथैवं नाम चक्रेऽस्य वामनः ॥ २ ॥
"कलिकाले महाघोरे सर्वपापप्रणाशकः।
दर्शनात्स्पर्शनादेव कोटियज्ञफलप्रदः ॥ ३ ॥"

यहां वामनकौं पद्मासन दिगंबर नेमिनाथका दर्शन भया कह्या। वाहीका नाम शिव कह्या। बहुरि ताके दर्शनादिकतैं कोटियज्ञका फल कह्या सो ऐसा नेमिनाथका स्वरूप तौ जैनी प्रत्यक्ष मानै हैं, सो प्रमाण ठहरया। बहुरि प्रभासपुराणविषैं कह्या है,—

रैवताद्रौ जिनो नेमिर्युगादिर्विमलाचले।
ऋषीणामाश्रमादेव मुक्तिमार्गस्य कारणम् ॥ १ ॥"

यहां नेमिनाथकौं जिनसंज्ञा कही, ताके स्थानकौं ऋषिका आश्रम मुक्तिका कारण कह्या, अर युगादिके स्थानकौं भी ऐसा ही कह्या, तातै उत्तम पूज्य ठहरे। बहुरि 'नगरपुराण' विषै भवावतार-रहस्यविषैं ऐसा कह्या है,—

"अकारादिहकारान्तं मूर्द्धाधोरेफसंयुतम् ।
नादबिन्दुकलाक्रान्तं चन्द्रमण्डलसन्निभम् ॥ १ ॥
एतद्देवि परं तत्त्वं यो विजानाति तत्त्वतः ।
संसारबन्धनं छित्त्वा स गच्छेत्परमां गतिम् ॥ २ ॥"

यहां 'अर्हं' ऐसे पदकौं परमतत्त्व कह्या । याके जाने परमगतिकी प्राप्ति कही, सो 'अर्हं' पद जैनमतउक्त है । बहुरि नगरपुराणविषै कह्या है,—

"दशभिर्भोजितैर्विप्रैः यत्फलं जायते कृते ।
मुनेरर्हत्सुभक्तस्य तत्फलं जायते कलौ ॥ १ ॥"

यहां कृतयुगविषै दश ब्राह्मणौंकौ भोजन करानेका जेता फल कह्या, तेताफल कलियुगविषै अर्हतभक्तमुनिके भोजन कराएका कह्या । तातैं जैनी मुनि उत्तम ठहरे । बहुरि 'मनुस्मृति, विषै ऐसा कह्या है,—

"कुलादिबीजं सर्वेषां प्रथमो विमलवाहनः ।
चक्षुष्मान् यशस्वी वाभिचंद्रोऽथ प्रसेनजित् ॥१॥
मरुदेवीच नाभिश्च भरते कुलसत्तमाः ।
अष्टमो मरुदेव्यां तु नाभेर्जात उरुक्रमः ॥ २ ॥
दर्शयन् वर्त्म वीराणां सुरासुरनमस्कृतः ।
नीतित्रितयकर्त्ता यो युगादौ प्रथमो जिनः ॥ ३ ॥

यहां विमलवाहनादिक मनु कहे, सो जैनविषै कुलकरनिके ए नाम कहे हैं अर यहां प्रथम जिन युगकी आदिविषै मार्गका दर्शक अर सुरासुरकरि पूजित कह्या, सो ऐसै ही है तौ जैनमत युगकी

आदिहीतैं है अर प्रमाणभूत कैसैं न कहिए। बहुरि ऋग्वेदविषै ऐसा कह्या है,-

"ॐ त्रैलोक्यप्रतिष्ठितान् चतुर्विंशतितीर्थंकरान् ऋषभाद्यवर्द्धमानान्तान् सिद्धान् शरणं प्रपद्ये। ॐ पवित्रं नग्नमुपस्पृसामहे एषां नग्ना (नग्नये) जातिर्येषां वीरा।" इत्यादि

बहुरि यजुर्वेदविषै ऐसा कह्या है,-

ॐ नमो अर्हतो ऋषभो ॐ ऋषभ पवित्रं पुरुहूतमध्वरं यज्ञेषु नग्नं परमं माहसंस्तुतं वरं शत्रुं जयंतं पशुरिंद्रमाहुतिरिति स्वाहा। ॐ त्रातारमिंद्रं ऋषभं वदन्ति अमृतारमिंद्रं हवे सुगतं सुपार्श्वमिदं हवे शक्रमजितं तद्वर्द्धमानपुरुहूतमिंद्रमाहुरिति स्वाहा। ॐ नग्नं सुधीरं दिग्वाससं ब्रह्मगर्भं सनातनं उपैमि वीरं पुरुषमर्हंतमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् स्वाहा। ॐ [1]स्वस्तिन इंद्रो वृद्धश्रवा स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः स्वस्तिनस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु। दीर्घायुस्त्वायुबलायुर्वा शुभजातायु ॐ रक्ष रक्ष अरिष्टनेमिः स्वाहा॥ वामदेव शान्त्यर्थमनुविधीयते सोऽस्माकं अरिष्टनेमिः स्वाहा।

यहां जैनतीर्थंकरनिके जे नाम हैं तिनिका पूजन कह्या। बहुरि यहां यह भास्या, जो इनिकै पीछैं वेदरचना भई है। ऐसैं

---

1 ऋग्वेद अष्ट 1 अ० 6 वर्ग 16।

अन्यमतनिकी साक्षीतैं भी जिनमतकी उत्तमता अर प्राचीनता दृढ भई। अर जिनमतकौं देखै वै मत कल्पित ही भासैं। तातैं अपना हितका इच्छक होय, सो पक्षपात छोरि सांचा जैनधर्मकौं अंगीकार करो। बहुरि अन्य मतनिविषै पूर्वापरविरोध भासै है। पहले अवतार वेदका उद्धार किया। तहां यज्ञादिकविषै हिंसादिक पोषे। अर बुद्धावतार यज्ञका निंदक होय, हिंसादिक निषेधे वृषभावतार वीतराग संयमका मार्ग दिखाया। कृष्णावतार परस्त्री रमणादि विषय कषायादिकनिका मार्ग दिखाया। सो अब यह संसारी कौंनका कह्या करै कौंनकै अनुसारि प्रवर्त्तै अर इन सब अवतारनिकौं एक बतावैं सो एक ही कदाचित् कैसैं कदाचित कैसै कहै वा प्रवर्त्तै तौ याकै उनके कहनेकी वा प्रवर्त्तनेकी प्रतीति कैसैं आवै। बहुरि कहीं क्रोधादिकषायनिका वा विषयनिका निषेध करैं, कहीं लरनेका वा विषयादिसेवनेका उपदेश दें। तहां प्रालब्धि बतावैं, सो विनां क्रोधादि भए आपहीतै लरना आदि कार्य होंय, तौ यह भी मानिए सो तौ होंय नाहीं। बहुरि लरना अदि कार्य होतैं क्रोधादि भए मानिए तौ जुदे ही क्रोधादि कौन है, तिनका निषेध किया। तातै बनै नाहीं, पूर्व्वापरविरोध है। गीताविषै वीतरागता दिखाय लरनेका उपदेश दिया, सो यह प्रत्यक्ष विरोध भासै है। बहुरि ऋषीश्वरादिकनिकरि श्राप दिया बतावै, सो ऐसा क्रोध किए निंद्यपना कैसैं न भया। इत्यादि जानना। बहुरि **अपुत्रस्य गतिर्नास्ति** ऐसा भी कहै अर भारतविषै ऐ भी कह्या है,

अनेकानि सहस्राणि कुमारब्रह्मचारिणाम् ।
दिवं गतानि राजेन्द्र अकृत्वा कुलसन्ततिम् ॥ १ ॥

यहां कुमारब्रह्मचारीनिकौं स्वर्ग गए बताए, सो यह परस्पर विरोध है । बहुरि ऋषीश्वर भारतविषै तौ ऐसा कह्या,

मद्यमांसाशनं रात्रौ भोजनं कन्दभक्षणम् ।
ये कुर्वन्ति वृथास्तेषां तीर्थयात्रा जपस्तपः ॥ १ ॥
वृथा एकादशी प्रोक्ता वृथा जागरणं हरेः ।
वृथा च पौष्करी यात्रा कृत्स्नं चान्द्रायणं वृथा ॥२॥
चातुर्मास्ये तु सम्प्राप्ते रात्रिभोज्यं करोति यः ।
तस्य शुद्धिर्न विद्येत चान्द्रायणशतैरपि ॥ ३ ॥

इनविषै मद्यमांसादिकका वा रात्रिभोजनका वा चौमासैमैं विशेषपनैं रात्रिभोजनका वा कंदभक्षणका निषेध किया । बहुरि बड़े पुरुषनिकै मद्यमांसादिकका सेवन करना कहैं, व्रतादिविषै रात्रिभोजन थापैं वा कंदादिभक्षण थापैं ऐसैं विरुद्ध निरूपै हैं । ऐसैं ही अनेक पूर्वापर विरुद्धवचन अन्यमतके शास्त्रनिविषै है । सो करैं कहा, कहीं तौ पूर्वपरंपरा जानि विश्वास अनावनेके अर्थि यथार्थ कह्या अर कहीं विषयकषाय पोषनेके अर्थि अन्यथा कह्या । सो जहां पूर्वापरविरोध होय, तिनिका वचन प्रमाण कैसे करिए । तहां जो अन्यमतनिविषै क्षमा शील संतोषादिकको पोषते वचन हैं, सो तौ जैनमतविषै पाइए है अर विपरीत वचन हैं, सो उनके कल्पित हैं । जिनमत अनुसार वचनका विश्वासतैं उनका विपरीतवचनका श्रद्धानादिक होय जाय, तातैं अन्यमतका

कोऊ अंग भला देखिकर भी तहां श्रद्धानादिक न करना। जैसैं विषमिलित भोजन हितकारी नाहीं, तैसै जानना। बहुरि जो कोई उत्तमधर्मका अंग जिनमतविषै न पाईए अर अन्यमतविषै पाईए, अथवा कोई निषिद्ध धर्मका अंग जैनमतविषै पाईए अर अन्यत्र न पाईए, तौ अन्यमतकौ आदरो सो सर्वथा होय नाहीं। जातैं सर्वज्ञका ज्ञानतैं किछू छिपा नाहीं है। तातैं अन्यमतनिका श्रद्धानादिक छोरि जिनमतका दृढ़ श्रद्धानादिक करना। बहुरि कालदोषतैं कषायी जीवनिकरि जिनमतविषै भी कल्पितरचना करी हैं, सो ही दिखाईए है,—

श्वेतांवरमतवारे काहूनै सूत्र बनाए, तिनकौ गणधरकें किए कहै है। सो उनकौ पूछिए है—गणधरनै आचारांगादिक बनाए हैं सो तुम्हारैं अबार पाईए है सो इतने प्रमाण लिए ही किए थे। जो एतने प्रमाण लिए ही किए थे, तौ तुम्हारे शास्त्रनिविषैं आचारांगादिकनिकें पदनिका प्रमाण अठारहहजार आदि कह्या है सो तिनकी विधि मिलाय द्यो। पदका प्रमाण कहा। जो विभक्तिका अंतकौ पद कहोगे, तौ कहे प्रमाणतैं बहुत पद होय जांयगे अर जो प्रमाणपद कहोगे, तौ तिस एकपदकै साधिक इक्यावन कोड़ि श्लोक हैं। सो यह तौ बहुत छोटे शास्त्र है, सो बनै नाहीं। बहुरि आचारांगादिकतै दशवैकालिकादिकका प्रमाण घाटि कह्या है। तुम्हारैं वधता है सो कैसै बनै। बहुरि कहोगे, आचारांगादिक बडे थे, कालदोष जानि तिनहीमैंसौ केतेक सूत्र काढ़ि यह शास्त्र बनाए है। तौ प्रथम तौ टूटकग्रंथ प्रमाण नाहीं।

बहुरि यह प्रबंध है, जो बड़ा ग्रथ बनावै तौ वा विषै सर्ववर्णन विस्तार लिए करै अर छोटा ग्रंथ बनावै तौ तहां संक्षेपवर्णन करै परंतु संबंध टूटै नाहीं। अर कोई बड़ा ग्रंथमैं थोरासा कथन काढ़ि लीजिए, तौ तहां संबंध मिलै नाहीं—कथनका अनुक्रम टूटि जाय। सो तुम्हारे सूत्रनिविषै तौ कथादिकका भी संबंध मिलता भासै है- -टूटकपना न भासै है। बहुरि अन्य कवीनितैं गणधरकी तौ बुद्धि अधिक होगी, ताके किए ग्रंथनिमैं थोरे शब्दमैं बहुत अर्थ चाहिए सो तौ अन्य कवीनिकीसी भी गंभीरता नाहीं। बहुरि जो ग्रंथ बनावै, सो अपना नाम ऐसैं धरै नाहीं, 'जो अमुक कहै है'। 'मै कहौं हौं' ऐसा कहै। सो तुम्हारे सूत्रनिविषै 'हे गोतम' वा 'गोतम कहै है' ऐसे वचन है। सो ऐसे वचन तौ तब ही संभवैं, जब और कोई कर्त्ता होय। तातैं यह सूत्र गणधरकृत नाहीं, औरके किए हैं। गणधरका नामकरि कल्पितरचनाकौं प्रमाण कराया चाहै हैं। सो विवेकी तौ परीक्षाकरि मानै, कह्या ही तौ न मानैं। बहुरि वह ऐसा भी कहै हैं--जो गणधरसूत्रनिकै अनुसार कोई दशपूर्वधारी भया है, तानै ए सूत्र बनाए हैं। तहां पूछिए है—जो नए ग्रंथ बनाए थे, तौ नवा नाम धरना था, अंगादिकके नाम काहेकौं धरे। जैसैं कोई बड़ा साहूकारकी कोठीका नामकरि अपना साहूकारा प्रगट करै, तैसैं यह कार्य भया। यह सांच तौ तब होता, जैसैं दिगम्बर आचार्यनिने अनेक ग्रंथ रचे, सो सर्व गणधरकरि भाषित अंगप्रकीर्णक ताके अनुसार रचे अर तिनि सबनिमैं ग्रंथकर्त्ताका नाम सर्व आचार्यनिने अपना भिन्न

भिन्न रक्खा अर तिनि ग्रंथनिके नामहू भिन्न भिन्न रक्खे किसी ग्रंथका भी नाम अंगादिक नहीं रक्खा अर न यह लिख्या,जो ए गणधर देवके रचे हैं। सांचेकौ तौ जैसे दिगंवरविषै ग्रंथनिके नाम धरे अर अनुसारी पूर्वग्रंथनिका कह्या, तैसैं कहना योग्य था। अंगादिकका नाम धरि गणधरदेवका भ्रम काहेकौं उपजाया। तातैं गणधरके वा पूर्व-धारीके वचन नाहीं। वहुरि इन सूत्रनिविषै जो विश्वास अनावनेंकै अर्थि जिनमतअनुसार कथन है, सो तौ साच है ही। दिगंबर भी तैसैं ही कहै हैं। वहुरि जो कल्पितरचना करी है, तामैं पूर्वापरविरुद्धपनौ वा प्रत्यक्षादि प्रमाणमैं विरुद्धपनौं भासै है, सो ही दिखाईए है,—

अन्य लिंगीकै वा गृहस्थकै वा स्त्रीकै वा चांडालादि शूद्रनिकै साक्षात् मुक्तिकी प्राप्ति होनी मानै है, सो वनै नाहीं। सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकी एकता मोक्षमार्ग है। सो वै सम्यग्दर्शनका स्वरूप तौ ऐसा कहै है,—

अरहंतो महादेवो जावज्जीवं सुसाहणो गुरुणो।
जिणपण्णत्तं तत्तं ए सम्मत्तं मए गहिएं॥ १॥

सो अन्यलिंगीकै अरहंत देव, साधु गुरु, जिनप्रणीत तत्त्वका मानना कैसैं संभवै। तव सम्यक्त भी न होय, तौ मोक्ष कैसैं होय। जो कहोगे अंतरंगकै श्रद्धान होनैतैं सम्यक्त तिनिकै हो है, सो विपरीत लिंगधारककी प्रशंसादिक किए भी सम्यक्तकौ अतीचार कह्या है तौ सांचा श्रद्धान भए पीछै आप विपरीतलिंगका धारक कैसैं रहै। श्रद्धान भए पीछै महाव्रतादि अंगीकार किए सम्यक्—

चारित्र अन्यलिंगविषै कैसैं बनै। जो अन्य लिंगविषै भी सम्यक्-चारित्र हो है, तौ जैनलिंग अन्यलिंग समान भया। तातैं अन्य-लिंगीकौं मोक्ष कहना मिथ्या है। बहुरि गृहस्थकौं मोक्ष कहैं, सो हिंसादिक सर्व सावद्यका त्याग किए सम्यक्चारित्र होय, सो सर्व सावद्ययोगका त्याग किए गृहस्थपनौ कैसैं संभवै। जो कहोगे—अंतरंगका त्याग भया है, तौ यहां तौ तीनूं योगका त्याग करै है कायकरि त्याग कैसैं भया। बहुरि बाह्यपरिग्रहादिक राखे भी महाव्रत हो है, सो महाव्रतनिविषैं तौ बाह्यत्यागकरनेकी ही प्रतिज्ञा करिए है त्याग किए बिना महाव्रत न होय। महाव्रत विना छठाआदि गुणस्थान न होय सकै, तौ मोक्ष कैसैं होय। तातैं गृहस्थकौं मोक्ष कहना मिथ्या वचन है।

बहुरि स्त्रीकौं मोक्ष कहैं, सो जातैं सप्तमनरकगमनयोग्य पाप न होय सकै, ताकरि मोक्षका कारण शुद्धभाव कैसैं होय सकै। जातैं जाके भाव दृढ़ होंय सो ही उत्कृष्ट पाप वा धर्म उपजाय सकै है। बहुरि स्त्रीकै निशंक एकांतविषै ध्यान धरना, सर्वपरिग्रहादिकका त्याग करना संभवै नाहीं। जो कहोगे, एकसमयविषै पुरुषवेदी वा स्त्रीवेदी वा नपुंसकवेदीकौं सिद्धि होनी सिद्धांतविषै कही है, तातै स्त्रीकौं मोक्ष मानिए है। सो यहां भाववेदी है कि द्रव्यवेदी है। जो भाववेदी है तौ हम मानै ही हैं। द्रव्यवेदी है, तौ पुरुषस्त्रीवेदी तौ लोकविषै प्रचुर दीखै है, नपुंसक तौ कोई विरला दीखै है। एक समयविषै मोक्ष जानेवाले इतने नपुंसक कैसै संभवै। तातैं द्रव्यवेद अपेक्षा कथन बनैं नाहीं बहुरि जो

कहोगे नवमगुणस्थानताई वेदकहे हैं, सो भी भाववेद अपेक्षा ही कथन है द्रव्यवेदअपेक्षा होय तौ चौदहवाँ गुणस्थानपर्यंत वेदका सद्भाव संभवै । तातैं स्त्रीकै मोक्षका कहना मिथ्या है।

बहुरि शूद्रनिकौं मोक्ष कहैं । सो चांडालादिककौं गृहस्थ सन्मानादिककरि दानादिक कैसे दे, लोकविरुद्ध होय । बहुरि नीचकुलवालोंके उत्तम परिणाम न होय सकै । बहुरि नीचगो- त्रकर्मका उदय तौ पंचम गुणस्थानपर्यंत ही है। ऊपरिके गुणस्थान चढ़े विना मोक्ष कैसैं होय । जो कहोगे-संयम धारे पीछैं वाकै उच्चगोत्रका उदय कहिए, तौ संयम धारनेकी वा न धारनेकी अपेक्षातै नीच उच्चगोत्रका उदय ठहरया । ऐसै होतै असंयमी मनुष्य तीर्थंकर क्षत्रियादिकैक भी नीचगोत्रका उदय ठहरै। जो उनकै कुल अपेक्षा उच्चगोत्रका उदय कहोगे, तौ चांडालादिककै भी कुल अपेक्षा ही नीचगोत्रका उदय कहो । ताका सद्भाव तुम्हारे सूत्रनिविषै भी पंचम गुणस्थानपर्यंत ही कह्या है । सो कल्पित कहनेमैं पूर्वापरविरुद्ध होय ही होय। तातै शूद्रनिकै मोक्षका कहना मिथ्या है।

ऐसै तिनहूनै सर्वकै मोक्षकी प्राप्ति कही, सो ताका प्रयोजन यह है जो सर्वका भला मनावना मोक्षका लालच देना अर अपना कल्पितमतकी प्रवृत्ति करनी। परंतु विचार किए मिथ्या भासै है। बहुरि तिनके शास्त्रनिविषै 'अछेरा' कहै हैं । सो कहैं हैं— हुंडावसर्प्पिणीके निमित्ततैं भए हैं, इनकौं छेड़ने नाहीं । सो

कालदोषतैं केई बात होय परंतु प्रमाणविरुद्ध तौ न होय। जो प्रमाणविरुद्ध भी होय, तौ आकाशके फूल गधेके सींग इत्यादिका होना भी बनै सो संभवै नाहीं। तातैं वै जो अछेरा कहै हैं सो प्रमाणविरुद्ध हैं। काहेतै, सो कहिए है,–

वर्द्धमानजिन केतेककाल ब्राह्मणीके गर्भविषै रहि पीछैं क्षत्रियाणीके गर्भविषैं बधे, ऐसा कहै हैं। सो काहूका गर्भ काहूकै धरया प्रत्यक्ष भासै नाहीं, अनुमानादिकमैं आवै नाहीं। बहुरि तीर्थंकरके भया कहिए, तौ गर्भकल्याणक काहूकै घर भया जन्मकल्याणक काहूकै भया। केतेक दिन रत्नवृष्टयादिक काहूकै घर भई, केतेक दिन काहूकै भई। सोलह स्वप्न किसीकौं आए, पुत्र किसीकै भया, इत्यादि असंभव भासै। बहुरि माता तौ दोय भई अर पिता तौ एक ब्राह्मण ही रह्या। जन्मकल्याणादिविषै वाका सन्मान किया, कै अन्य कल्पित पिताका किया। सो तीर्थंकरकै दोय पिताका कहना, महाविपरीत भासै है। सर्वोत्कृष्ट-प्रदके धारककै ऐसे वचन सुनने भी योग्य नाहीं। बहुरि तीर्थं-करकै भी ऐसी अवस्था भई, तौ सर्वत्र ही अन्यस्त्रीका गर्भ अन्यस्त्रीकै धरि देना ठहरै, तौ वैष्णव जैसैं अनेक प्रकार पुत्र पुत्रीका उपजना बतावैं हैं, तैसैं यह कार्य भया। सो ऐसे निकृष्ट कालविषै तौ ऐसे होय ही नाहीं, तहां होना कैसैं संभवै। तातैं यह मिथ्या है।

बहुरि मल्लितीर्थंकरकौं कन्या कहै हैं। सो मुनि देवादिककी सभाविषै स्त्रीका स्थिति करना उपदेश देना न संभवै, वा स्त्रीपर्याय हीन है सो उत्कृष्ट तीर्थंकरपदधारककै न बनै। बहुरि तीर्थंकरकैं

नग्नलिंग ही कहै है, सो स्त्रीकै नग्नपनौ न संभवै। इत्यादि विचार किए असंभव भासै है।

बहुरि हरिक्षेत्रका भोगभूमियांकौं नरकि गया कहैं। सो बंध-वर्णनविषै तौ भोगभूमियांकै देवगति देवायुहीका बंध कहैं, नरकि कैसै गया। सिद्धांतविषै तौ अनंतकालविषै जो बात होय, सो भी कहै जैसै तीसरे नरक पर्यंत तीर्थंकरप्रकृतिका सत्व कह्या, भोगभूमियांकै नरक आयु गतिका बंध न कह्या, सो केवली भूलै तौ नांहीं। तातैं यह मिथ्या है ऐसै सर्व अछेरे असंभव जानने। बहुरि वै कहै है। इनकौ छेड़ने नाहीं। सो झूंठ कहनेवाला ऐसै ही कहै। बहुरि जो कहोगे—दिगंबर विषै जैसै तीर्थंकरकै पुत्री, चक्रवर्तिका मानभंग इत्यादि कार्य कालदोषतैं भया कहै है, तैसै ए भी भए। सो वै कार्य तौ प्रमाणविरुद्ध नाहीं। अन्यकै होते थे सो महंतनिकै भए, तातै कालदोष भया कहै है। गर्भहरणादि कार्य प्रत्यक्ष अनुमानादितैं विरुद्ध, तिनिकै होना कैसै संभवै। बहुरि अन्य भी घने ही कथन प्रमाणविरुद्ध कहै है। जैसै कहै है, सर्वार्थसिद्धिके देव मनहीतै प्रश्न करै है, केवली मनहीतैं उत्तर दे है। सो सामान्य ही जीवकै मनकी बात मनःपर्ययज्ञानीविना जानि सकै नाहीं। केवलीके मनकी सर्वार्थसिद्धिके देव कैसै जानै। बहुरि केवलीकै भावमनका तौ अभाव है, द्रव्यमन जड़ आकारमात्र है, उत्तर कौन दिया। तातै मिथ्या है। ऐसैं अनेक प्रमाणविरुद्ध कथन किए है, तातै तिनिके आगम कल्पित ही जाननै।

बहुरि श्वेतांबरमतवाले देवगुरुधर्मका स्वरूप अन्यथा निरूपै हैं। तहां केवलीकै क्षुधादिक दोष कहैं। सो यह देवका स्वरूप अन्यथा है। काहेतैं क्षुधादिक दोष होतैं आकुलता होय, तब अनंतसुख कैसैं बनैं। बहुरि जो कहोगे, शरीरकौं क्षुधा लागै है आत्मा तद्रूप न हो है, तौ क्षुधादिकका उपाय आहारादिक काहेकौं ग्रहण किया कहो हैा। क्षुधादिकरि पीड़ित होय, तब ही आहार ग्रहण करै। बहुरि कहोगे, जैसैं कर्मोदयतैं विहार हो है, तैसैं ही आहार ग्रहण हो है। सो विहार तौ विहायोगतिके उदयतैं हो है, अर पीड़ाका उपाय नाहीं, अर विना इच्छा भी किसी जीवकै होता देखिए है। बहुरि आहार है, सो प्रकृतिका उदयतैं नाहीं क्षुधाकरि पीड़ित भए ही ग्रहण करै है। बहुरि आत्मा पवनादिककौं प्रेरै तब ही निगलना हो है, तातैं विहारवत् आहार नाहीं। जो कहोगे—सातावेदनीयकै उदयतैं आहार ग्रहण हो है, सो बनै नाहीं। जो जीव क्षुधादिकरि पीड़ित होय, पीछैं आहारादिक ग्रहणतैं सुख मानै, ताकै आहारादिक साताके उदयतैं कहिए। आहारादिक सातावेदनीयके उदयतैं स्वयमेव होय ऐसैं तौ है नाहीं। जो ऐसैं होय, तौ सातावेदनीयका मुख्यउदय देवनिकै है, ते निरंतर आहार क्यों न करैं। बहुरि महामुनि उपवासादि करैं, तिनकै साताका भी उदय अर निरंतर भोजन करनेवालौंकै असाताका भी उदय संभवै तातैं जैसैं विना इच्छा विहायोगतिके उदयतै विहार संभवै, तैसैं विना इच्छा केवल सातावेदनीयहीके उदयतैं आहारका ग्रहण संभवै नाहीं। बहुरि

वह कहै हैं, सिद्धांतविषै केवलीकै क्षुधादिक ग्याहर परीषद कहे हैं, तातैं तिनकै क्षुधाका सद्भाव संभवै है। बहुरि आहारादिक-विना तिनकी उपशांतता कैसैं होय, तातैं तिनकै आहारादिक मानै हैं। ताका समाधान,—

कर्मप्रकृतीनिका उदय तीव्रमंद भेद लिए हो है। तहां अति मंद होतैं तिसका उदयजनित कार्यकी व्यक्तता भासै नाहीं। तातैं मुख्यपनै अभाव कहिए, तारतम्यविषै सद्भाव कहिए। जैसैं नवम गुणस्थानविषै वेदादिकका उदय मंद है, तहां मैथुनादि क्रिया व्यक्त नाहीं तातैं तहां ब्रह्मचर्य्य ही कह्या। तारतम्यविषै मैथुनादिकका सद्भाव कहिए है। तैसै केवलीकै असाताका उदय अतिमंद है। जातैं एक एक कांडकविषै अनंतवै भाग अनुभाग रहै ऐसे बहुत अनुभागकांडकनि करि वा गुणसंक्रमणादिककरि सत्ताविषै असातावेदनीयका अनुभाग अत्यंत मंद भया, ताका उदयविषैं क्षुधा ऐसी व्यक्त होती नाहीं जो शरीरकौं क्षीण करै। अर मोहके अभावतैं क्षुधाजनित दुःख भी नाहीं, तातै क्षुधादिकका अभाव कहिए हैं। तारतम्यविषै तिनका सद्भाव कहिए है। बहुरि तैं कह्या – आहारादिक विना तिनकी उपशांतता कैसैं होय सो आहारादिकरि उपशांतता होने योग्य क्षुधा लागै, तौ मंद उदय काहेका रह्या। देव भोगभूमिया आदिककै किंचित् मंद उदय होतै ही बहुतकाल पीछै किंचित् आहार ग्रहण हो है तौ इनकै तौ अतिमंद उदय भया है, तातैं इनकै आहारका अभाव संभवै। बहुरि वै कहै हैं देव भोगभूमियांका तौ शरीर ही ऐसा

है, जाकौं घनेंकाल पीछै थोरी भूख लागै, इनका तौ शरीर-कर्मभूमिका औदारिक है । तातैं इनका शरीर आहार विना देशोनकोडि पूर्वपर्यंत उत्कृष्टपनै कैसैं रहै ताका समाधान—

देवादिकका भी शरीर वैसा है, सो कर्मकेही निमित्ततै है । यहां केवलज्ञान भए ऐसा ही कर्म उदय भया जाकरि शरीर ऐसा भया, जाकौं भूख प्रगट होती ही नाहीं । जैसैं केवलज्ञान भए पहलै केश नख बधै थे, सो बधै (बढ़ै) नाहीं । छाया होती थी, सो होती नाहीं । शरीरविषै निगोद थे, ताका अभाव भया । बहुत प्रकारकरि जैसैं शरीरकी अवस्था अन्यथा भई, तैसै आहार-विना भी शरीर जैसाका तैसा रहै ऐसी भी अवस्था भई । प्रत्यक्ष देखौ, औरनिकौं जरा व्यापै तब शरीर शिथिल होय जाय, इनका आयुका अंतपर्यंत शरीर शिथिल न होय । तातै अन्य मनुष्यनिका शरीर अर इनका शरीरकी समानता संभवै नाहीं । बहुरि जो तू कहैगा—देवादिककै आहार ही ऐसा है, जाकरि बहुतकालकी भूख मिटै, इनकै भूख काहेतै मिटी अर शरीर पुष्ट कैसैं रह्या । ताकौं कहिए है--जो असाताका उदय मंद होनेतै मिटी अर समय समय परम औदारिक शरीर वर्गणाका ग्रहण हो है, सो अब तौ कर्म आहार है सो ऐसी वर्गणाका ग्रहण हो है जाकरि क्षुधादिक व्यापै नाहीं वा शरीर शिथिल होय नाहीं । सिद्धांतविषै याहीकी अपेक्षा केवलीकौं आहार कह्या है । अर अन्नादिकका आहार तौ शरीरकी पुष्टताका मुख्य कारण नाहीं । प्रत्यक्ष देखौ, कोऊ थोरा आहार करै शरीर पुष्ट बहुत होय, कोऊ बहुत आहार करै

शरीर क्षीण रहै। बहुरि पवनादि साधनेवाले बहुतकालताई आहार न लें शरीर पुष्ट रह्या करै, वा ऋद्धिधारी मुनि उपवासादि करैं शरीर पुष्ट बन्या रहै, सो केवलीकै तौ सर्वोत्कृष्टपना है। उनकै अन्नादिक विना शरीर पुष्ट बन्या रहै, तौ कहा आश्चर्य भया। बहुरि केवली कैसै आहारकौं जाय' कैसैं जाचै। बहुरि वै आहारकौ जांय, तब समवसरण खाली कैसै रहै। अथवा अन्यका ल्याय देना ठहरावोगे, तौ कौन ल्याय दे, उनके मनकी कौन जानै। पूर्वं उपवासादिककी प्रतिज्ञा करी थी, ताका कैसैं निर्वाह होय। जीवअंतराय सर्व प्रतिभासै, कैसै आहार ग्रहै, इत्यादि विरुद्ध भासै है। बहुरि वह कहै है-आहार ग्रहै है, परंतु काहूकौं दीसै नाहीं। सो आहार ग्रहणकौ निंद्य जान्या, तब वाका न देखना अतिशयविषै लिख्या। सो उनकै निंद्यपना रह्या अर और न देखै हैं, तौ कहा भया। ऐसै अनेक प्रकार विरुद्ध उपजै है।

बहुरि अन्य अविवेक कहै है—केवलीकै नीहार कहै है रोगादिक भया कहै है, अर कहै, काहूनै तेजोलेश्या छोरी ताकरि वर्द्धमान स्वामीकै पेठूंगाका (पेचिसका) रोग भया, ताकरि बहुत बार नीहार होने लागा। सो तीर्थकर केवलीकै भी ऐसा कर्मका उदय रह्या, अर अतिशय न भया तौ इंद्रादिकरि पूज्यपना कैसै सोभै। बहुरि नीहार कैसै करै, कहा करैं कोऊ संभवती बात नाहीं। बहुरि जैसै रागादिकरि युक्त छद्मस्थकै क्रिया होय, तैसै केवलीकै क्रिया ठहरावै है। वर्द्धमानस्वामीका उपदेशविषै 'हे गौतम' ऐसा वारंवार कहना ठहरावै हैं। सो उनकै तौ अपना

कालविषै सहज दिव्यध्वनि हो है, तहां सर्वकौं उपदेश हों है गौतमकौं संबोधन कैसैं बनै। बहुरि केवलीकै नमस्कारादिक क्रिया ठहरावै हैं, सो अनुरागविना बंदना संभवै नाहीं। बहुरि गुणाधिककौं वंदना संभवै, सो उनसौं कोई गुणाधिक रह्या नाहीं। सो कैसैं बनै। बहुरि हाटिविषै समवसरण उतार्या कहैं, सो इंद्रकृत समवसरण हाटिविषै कैसैं रहै? इतनी रचना तहां कैसैं समावै। बहुरि हाटिविषै काहेकौं रहै कहा इंद्र हाटि सारिखी रचना करनेकौं भी समर्थ नाहीं; जातै हाटिका आश्रय लीजिए। बहुरि कहैं,—केवली उपदेशदेनेकौं गए। सो घरि जाय उपदेश देना अतिरागता होय, सो मुनिकै भी संभवै नाहीं केवलीकै कैसै बनै। ऐसैं ही अनेक विपरीतता तहां प्ररूपै हैं। केवली शुद्धज्ञानदर्शनमय रागादिरहित भए हैं, तिनिकै अघातिनिके उदयतै संभवतीक्रिया कोई हो है, अर मोहादिकका अभाव भया है। तातैं उपयोगमिले जो क्रिया होय सकै सो संभवै नाहीं पापप्रकृतिका अनुभाग अत्यंत मंद भया है। ऐसा मंद अनुभाग अन्य कोईकै नाहीं। तातैं अन्यजीवनिकै पापउदयतै जो क्रिया होती देखिए है, सो केवलीकै न होय। ऐसै केवली भगवानकै सामान्य मनुष्यकीसी क्रियाका सद्भाव कहि देवका स्वरूपकौं अन्यथा प्ररूपै हैं।

बहुरि गुरूका स्वरूपकौं अन्यथा प्ररूपै हैं। मुनिकै वस्त्रादिक चौदह उपकरण कहैं हैं। सो हम पूछै है कि मुनिकौं निर्ग्रंथ कहैं अर मुनिपद लेतैं नवप्रकार सर्वपरिग्रहका त्यागकरि महाव्रत

अंगीकार करैं, सो ए वस्त्रादिक परिग्रह है कि नाहीं। जो हैं तौ त्यागकिए पीछैं काहेकौं राखै, अर नाहीं है, तौ वस्त्रादिक गृहस्थ राखै ताकौ भी परिग्रह मति कहौ। सुवर्णादिककौ ही परिग्रह कहौ। बहुरि जो कहोगे, जैसै क्षुधाके अर्थि आहार ग्रहण कीजिए है, तैसैं शीतउष्णादिकके अर्थि वस्त्रादिक ग्रहण कीजिए है। सो मुनिपद अंगीकार करते आहारका त्याग किया नाहीं, परिग्रहका त्याग किया है। बहुरि अन्नादिकका तौ संग्रह करना परिग्रह है, भोजन करने जाय सो परिग्रह नाहीं। अर वस्त्रादिकका संग्रह करना वा पहरना सर्व ही परिग्रह है, सो लोकविषै प्रसिद्ध है। वहुरि कहैंगे शरीरकी स्थितिकै अर्थि वस्त्रादिक राखिए है-ममत्व नाहीं, तातै इनकौ परिग्रह न कहिए। सो श्रद्धानविषै तौ जब सम्यग्दृष्टी भया, तब ही समस्त परद्रव्यविषै ममत्वका अभाव भया। तिस अपेक्षा तौ चौथा गुणस्थान ही परिग्रहरहित कहौ। अर प्रवृत्तिविषै ममत्व नाहीं, तौ कैसै ग्रहण करै हैं। तातैं वस्त्रादिक ग्रहण धारण छूटैगा' तब ही निःपरिग्रह होगा। बहुरि कहैगे–वस्त्रादिककौ कोई ले जाय, तौ क्रोध न करै वा क्षुधादि लागैं तौ वेचै नाहीं, वा वस्त्रादिकपहरि प्रसाद करै नाहीं। परिणामनिकी स्थिरताकरि धर्म ही साधै है, तातैं ममत्व नाहीं। सो बाह्य क्रोध मति करौ, परंतु जाका ग्रहणविषै इष्टबुद्धि होय, ताका वियोगविषै अनिष्टबुद्धि होय ही जाय। जो अनिष्टबुद्धि न भई, तौ बहुरि ताके अर्थि याचना काहेकौ करिए है। बहुरि बेचते नाहीं, सो धातु राखनेतैं अपनी हीनता जानि नाहीं बेचिए

है। जैसैं धनादि राखने तैसैं ही वस्त्रादि राखने। लोकविषै परिग्रहके चाहक जीवनिकै दोऊनिकी इच्छा है। तातैं चौरादिके भयादिकके कारन दोऊ समान हैं। बहुरि परिणामनिकी स्थिरता-करि धर्मसाधनेतैं ही परिग्रहपना न होय, तौ काहूकौं बहुत शीत लागै सो सोड़ि राखि परिणामनिकी स्थिरता करैगा अर धर्मसाधैगा तौ वाकौ भी निःपरिग्रह कहौ। ऐसै गृहस्थधर्म मुनिधर्मविषै विशेष कहा रहैगा। जाकै परीषह सहनेकी शक्ति न होय, सो परिग्रह राखि धर्म साधै ताका नाम गृहस्थधर्म, अर जाकै परिणाम निर्मल भए परीषहकरि व्याकुल न होय, सो परिग्रह न राखै अर धर्म साधै, ताका नाम मुनिधर्म, इतना विशेष है। बहुरि कहोगे, शीतादिकी परीषहकरि व्याकुल कैसैं न होय। सो व्याकुलता तौ मोहके उदयके निमित्ततैं है। सो मुनिकै षष्ठादि गुणस्थाननिविषै तीन चौकड़ीका उदय नाहीं। अर संज्वलनकै सर्वघाती स्पर्द्धक-निका उदय नाहीं। देशघाती स्पर्द्धकनिका उदय है, सो किछू तिनका बल नाहीं। जैसैं वेदक सम्यग्दृष्टीकै सम्यङ्मोहनीयका उदय है सो सम्यक्त्वकौं घात न करि सकै; तैसैं देशघाती संज्व-लनका उदय परिणामनिकौं व्याकुल करि सकै नाहीं। मुनिकै अर औरनिकै परिणामनिकी समानता है नाहीं। और सबनिकै सर्व-घातीका उदय है, इनकै देशघातीका उदय है तातैं औरनिकै जैसे परिणाम होंय, तैसे उनकै कदाचित् न होंय। तातैं जिनिकै सर्वघातीकषायनिका उदय होय, ते गृहस्थ ही रहैं अर जिनकै देशघातीका उदय होय ते मुनिधर्म अंगीकार करैं। ताकै शीता–

दिककरि परिणाम व्याकुल न होंय,तातैं वस्त्रादिक राखैं नाहीं। बहुरि कहौगे–जैन शास्त्रनिविषै चौदह उपकरण मुनि राखैं, ऐसा कह्या है। सो तुम्हारे ही शास्त्रनिविषै कह्या है, दिंगबर जैंनशास्त्रविषै तौ कह्या नाहीं। तहां तौ लंगोटमात्र परिग्रह रहे भी ग्यारहीं प्रतिमाका धारक श्रावक ही कह्या है। सो अब यहां विचारौ, दोऊनिमैं कल्पित वचन कौन है। प्रथम तौ कल्पित रचना, कषायी होय सो करै। बहुरि कषायी होय, सो ही नीचापदविषैं उच्चपनौ प्रगट करै। सो यहां दिगंवरविषै वस्त्रादि राखे धर्म होय ही नाहीं ऐसा तौ न कह्या परंतु तहां श्रावकधर्म कह्या। श्वेतंबरविषैं मुनि धर्म कह्या। सो यहां जानै नीची क्रिया होतैं, उच्चत्व पद प्रगट किया, सो ही कषायी है। इस कल्पित कहनेकरि आपकौं वस्त्रादि राखतैं भी लोक मुनि मानने लगैं, तातैं मानकषाय पोष्या गया। अर औरनिकौं सुगमक्रियाविषै उच्चपदका होना दिखाया, तातैं घने लोक लगि गए। जे कल्पित मत भए है, ते ऐसैं ही भए है। तातैं श्वेतांबरमतविषै वस्त्रादि होतै मुनिपना कह्या है, सो पूर्वोक्त युक्तिकरि विरुद्ध भासै है। तातैं ए कल्पितवचन हैं, ऐसा जानना। बहुरि कहौगे—दिगंबरविषै भी शास्त्र पींछी आदि मुनिकै उपकरण कहे है. तैसैं हमारै चौदह उपकरण कहे हैं। ताका समाधान—

जाकरि उपकार होय, ताका नाम उपकरण है। सो यहां शीतादिककी वेदना दूरि करणेतै उपकरण ठहराईए, तौ सर्वपरिग्रह सामग्री उपकरण नाम पावैं। सो धर्मविषै इनका कहा प्रयोजन?

ए तौ पापका कारण हैं। धर्मविषै तौ धर्मका उपकारी जे होंय, तिनिका नाम उपकरण है। सो शास्त्र ज्ञानकौं कारण, पींछी दयाकौं, कमंडलु शौचकौं कारण, सो ए तौ धर्मके उपकारी भए, वस्त्रादिक कैसैं धर्मके उपकारी होंय, । वै तौ शरीरका सुखहीकै अर्थि धारिए है। बहुरि जो शास्त्र राखि महंतता दिखावैं, पींछी-करि बुहारी दें कमंडलुकरि जलादिक पीवैं वा मैल उतारैं, तौ शास्त्रादिक भी परिग्रह ही हैं। सो मुनि ऐसे कार्य करै नाहीं। तातैं धर्मके साधनकौं परिग्रह संज्ञा नाहीं। भोगके साधनकौं परिग्रह संज्ञा हो है ऐसा जानना। बहुरि कहोगे—कमंडलुतैं तौ शरीरहीका मल दूरि करिए है, सो मुनि मल दूरि करनेकीइच्छा-करि कमंडलु नाहीं राखैं हैं। शास्त्र बांचना आदि कार्य करैं, अर मललिप्त होंय, तौ तिनिका अविनय होय, लोकनिंद्य होंय, तातैं इस धर्मके अर्थि कमंडलु राखिए है ऐसैं पींछी आदि उपकरण संभवैं, वस्त्रादिककौं उपकरण संज्ञा संभवै नाहीं। काम अरतिआदि मोहका उदयतैं विकार बाह्य प्रगट होय, अर शीतादिक सहे न जाँय, तातैं विकार ढांकनेकौं, वा शीतादि घटावनेकौं, वा वस्त्रादिक राखि मानके उदयतैं अपनी महंतता भी चाहैं तातैं, कल्पित-युक्तिकरि उपकरण ठहराईए है। बहुरि घरघर याचनाकरि आहार ल्यावना ठहराय है। सो प्रथम तौ यह पूछिए है, जो याचना धर्मका अंग है, कि पापका अंग है। जो धर्मका अंग है, तौ मांगनेवाले सब धर्मात्मा भए। अर पापका अंग है, तौ मुनिकै कैसै संभवै। बहुरि जो तू कहैगा, लोभकरि किछू धनादिक याचैं

तौ पाप होय; यह तौ धर्म साधनकै अर्थि शरीरकी स्थिरता किया चाहै है। ताका समाधान,—

आहारादिककरि धर्म होता नाहीं, शरीरका सुख हो है। शरीरका सुखकै अर्थि अतिलोभ भए याचना करिए है। जो अति लोभ न होता, तो आप काहेकौं मांगता। वै ही देते तौ देते न देते तौ न देते। बहुरि अतिलोभ भए यहां ही पाप भया, तब मुनिधर्म नष्ट भया और धर्म कहा साधैगा। अब वह कहै है—मनविषै तौ आहारकी इच्छा होय अर याचै नाहीं, तौ मायाकपाय भया अर याचनेमैं हीनता आवै है, सो गर्वकरि याचै नाहीं, तौ मानकपाय भया। आहार लेना था, सो मांगि लिया। यामैं अतिलोभ कहा भया अर यातैं मुनिधर्म कैसै नष्ट भया, सो कहौ। ताकौं कहिए है—

जैसैं काहू व्यापारीकैं कुमावनेकी इच्छा मंद है, सो हाटि (दूकान) ऊपरि तौ बैठै अर मनविषै व्यापारकरनेकी इच्छा भी है परंतु काहूकौं वस्तु लेनदेनेरूप व्यापारकै अर्थ प्रार्थना नाहीं करै है। स्वयमेव कोई आवै अर अपनी विधि मिलै, तौ व्यापार करै है। तौ ताकै लोभकी मंदता है, माया वा मान नाहीं है। माया वा मानकपाय तौ तब होय, जब छलकरनेकै अर्थि वा अपनी महंतताकै अर्थि ऐसा स्वांग करै। सो भले व्यापारीकै ऐसा प्रयोजन नाहीं। तातै वाकै माया मान न कहिए। तैसैं मुनिनकै आहारादिककी इच्छा मंद है, सो आहार लेनेकौ आवै अर मनविषै आहारलेनेकी इच्छा भी है, परंतु आहारकै अर्थि प्रार्थना नाहीं करै है। स्वयमेव कोई

दे, तौ अपनी विधि मिले अहार लें हैं। तौ उनकै लोभकी मंदता है, माया वा मान नाहीं है। माया मान तौ तब होय, जब छल करनेकै अर्थि वा महंतताकै अर्थि ऐसा स्वांग करें। सो मुनिनकै ऐसैं प्रयोजन हैं नाहीं। तातैं इनिकै माया मान नाहीं है। जो ऐसैं ही माया मान होय, तौ जे मनहीकरि पाप करैं वचनकायकरि न करैं, तिन सबनिकै माया ठहरै। अर जे उच्चपदके धारक नीचवृत्ति नाहीं अंगीकार करै हैं, तिन सबनिकै मान ठहरै। ऐसैं अनर्थ होय। बहुरि तैं कह्या--"आहार मागनेमैं अतिलोभ कहा भया" सो अतिकषाय होय, तब लोकनिंद्य कार्य अंगीकार-करिकैं भी मनोरथ पूर्ण किया चाहै, सो मांगना लोकनिंद्य है, ताकौं भी अंगीकारकरि आहारकी इच्छा पूर्ण करनेकी चाहि भई। तातैं यहां अतिलोभ भया। बहुरि तैं कह्या—"मुनिधर्म कैसैं नष्ट भया," सो मुनिधर्मविषै ऐसी तीव्रकषाय संभवै नाहीं। बहुरि काहुका आहारदेनेका परिणाम न था, यानै वाका घरमैं जाय याचना करी। तहां वाकै सकुचना भया वा न दिए लोकनिंद्य-होनेका भय भया। तातैं वाकौं आहार दिया, सो वाका अंतरंग प्राण पीड़नेंतैं हिंसाका सद्भाव आया। जो आप वाका घरमैं न जाते, उसहीकै देनेका उपाय होता, तौ देता। वाकै हर्ष होता। यह तौ दबायकरि कार्य करावना भया। बहुरि अपना कार्यके अर्थि याचनारूप वचन है, सो पापरूप है। सो यहां असत्यवचन भी भया। बहुरि वाकै देनेकी इच्छा न थी, यानै जाच्या, तब वानै अपनी इच्छातैं दिया नाहीं—सकुचिकरि दिया। तातैं अदत्त

ग्रहण भी भया। बहुरि गृहस्थके घरमै स्त्री जैसैं तैसैं तिष्ठै थी, यह चल्या गया। तहां ब्रह्मचर्यकी बाड़िका भंग भया। बहुरि आहार ल्याय, केतेक काल राख्या। आहारादिक राखनेंकौं पात्रादिक राखे, सो परिग्रह भया। ऐसै पांच महाव्रतनिका भंग होनेतै मुनिधर्म नष्ट हो है तातै याचनाकरि आहार लेना मुनिकौं युक्त नाहीं। बहुरि वै कहै है—मुनिकै बाईस परीषहनि विषै याचनापरिषह कही है, सो मांगेबिना तिस परीषहका सहना कैसै होय? ताका समाधान—

याचना करनेका नाम याचनापरीषह नाहीं है। याचना न करनी ताका नाम याचनापरीषह है। जातैं अरति करनेका नाम अरतिपरीषह नाहीं, अरति न करनेका नाम अरतिपरीषह है तैसैं जानना। जो याचना करना, परीषह ठहरै, तौ रंकादि घनी याचना करै है, तिनिकै घना धर्म होय। अर कहोगे, मान घटावनेंतै याकौं परीषह कहै है, तौ कोई कषायी कार्यके अर्थि कोइ कषाय छोरे भी पापी ही होय। जैसै कोई लोभकै अर्थि अपना अपमानकौं भी न गिनै, तौ ताकै लोभकी तीव्रता है। उस अपमान करावनेंतै भी महापाप हो है। अर आपकै इच्छा किछू नाहीं, कोई स्वयमेव अपमान करै है, तौ वाकै महाधर्म हो है। सो यहा तौ भोजनका लोभकै अर्थि याचनाकरि अपमान कराया, तातै पाप ही है धर्म नाहीं। बहुरि वस्त्रादिकके भी अर्थि याचना करै है सो वस्त्रादिक कोई धर्मका अंग नाहीं है। शरीरसुखका कारण है तातै पूर्वोक्तप्रकार ताका निषेध जानना। अपना धर्म-

रूप उच्चपदकौं याचनाकरि नीचा करै हैं, सो यामैं धर्मकी हीनता हो है। इत्यादि अनेकप्रकारकरि मुनिधर्मविषै याचनाआदि नाहीं संभवै है। सो ऐसी असंभवती क्रियाके धारक साधु गुरु. कहै हैं तातैं गुरुका स्वरूप अन्यथा कहैं हैं। बहुरि धर्मका स्वरूप अन्यथा कहै हैं। सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र इनकी एकता मोक्षमार्ग है, सो ही धर्म है सो इनिका स्वरूप अन्यथा प्ररूपैं हैं। सो ही कहिए है—

तत्वार्थश्रद्धान सम्यग्दर्शन है, ताकी तौ प्रधानता नाहीं। आप जैसैं अरहंत देव साधु गुरु दया धर्मकौं निरूपै हैं, तिनका श्रद्धानकौं सम्यग्दर्शन कहै हैं। सो प्रथम तौ अरहंतादिकका स्वरूप अन्यथा कहैं। बहुरि इतने ही श्रद्धानतैं तत्त्वश्रद्धान भए विना सम्यक्त्व कैसै होय, तातैं मिथ्या कहै हैं। बहुरि तत्वनिका श्रद्धानकौं सम्यक्त्व कहै हैं। प्रयोजनलिए तत्त्वनिका श्रद्धान नाहीं कहै है। गुणस्थान मार्गणादिरूप जीवका, अणुस्कंधादिरूप अजीवका, पुण्यपापके स्थाननिका, अविरतिआदि आश्रवनिका व्रतादिरूप संवरका, तपश्चरणादिरूप निर्जराका, सिद्ध होनेके लिंगादिके भेदनिकरि मोक्षका स्वरूप जैसैं उनके शास्त्रविषै कह्या है, तैसैं सीखि लीजिए। अर केवलीका वचन प्रमाण है, ऐमैं तत्त्वार्थश्रद्धानकरि सम्यक्त्व भया मानै हैं सो हम पूछैं हैं, ग्रैवेयिक जानेवाला द्रव्यलिंगी मुनिकै ऐसा श्रद्धान हो है कि नाहीं। जो हो है, तौ वाकौं मिथ्यादृष्टी काहेकौं कहौ। अर न हो है, तौ वानै तौ जैनलिंग धर्मबुद्धिकरि धारया है, ताकै देवा-

दिकी प्रतीति कैसैं नाहीं भई। अर वाकै बहुत शास्त्राभ्यास है, सो वानै जीवादिके भेद कैसैं न जाने। अर अन्यमतका लवलेश भी अभिप्रायमै नाहीं, ताकै अरहंतवचनकी कैसैं प्रतीति नाहीं भई। तातै वाकै ऐसा श्रद्धान तौ होय, परंतु सम्यक्त्व न भया। बहुरि नारकी भोगभूमियां तिर्यंचआदिकै ऐसा श्रद्धानहोनेका निमित्त नाहीं अर तिनिकै बहुतकालपर्यंत सम्यक्त्व रहै है। तातै वाकै ऐसा श्रद्धान नाहीं हो है, तौ भी सम्यक्त्व भया। तातैं सम्यक्श्रद्धानका यह स्वरूप नाहीं। सांचा स्वरूप है, सो आगैं वर्णन करैंगे, सो जानना। बहुरि जो उनके शास्त्रनिका अभ्यास करना, ताकौ सम्यग्ज्ञान कहै है। सो द्रव्यलिंगी मुनिकै शास्त्राभ्यास होतैं भी मिथ्याज्ञान कह्या। असंयत सम्यग्दृष्टीकै विषयादिरूप जानना ताकौं सम्यग्ज्ञान कह्या। तातैं यह स्वरूप नाहीं, सांचा स्वरूप आगैं कहैंगे सो जानना। बहुरि उनकरि निरूपित अणुव्रत महाव्रतादिरूप श्रावक यतीका धर्म धारनेकरि सम्यक्चारित्र भया मानै। सो प्रथम तौ व्रतादिका स्वरूप अन्यथा कहै, सो किछू पूर्वैं गुरुवर्णनविषैं कह्या है। बहुरि द्रव्यलिंगीकै महाव्रत होतैं भी सम्यक्चारित्र न हो है। अर उनका मतके अनुसारि गृहस्थादिककै महाव्रतआदि विना अंगीकार किए भी सम्यक्चारित्र हो है, तातै यह स्वरूप नाहीं। सांचास्वरूप अन्य है, सो आगै कहैंगे। यहां वह कहै हैं--द्रव्यलिंगीकै अंतरंगविषै पूर्वोक्त श्रद्धानादिक भए, सो बाह्य ही भए, तातैं सम्यक्त्वादि न भए। ताका उत्तर-- जो अंतरंग नाहीं अर बाह्य धारै, सो तौ कपटकरि धारै। सो

वाकै कपट होय, तौ ग्रैवेयिक कैसैं जाय, नरकादिविषै जाय। बंध तौ अंतरंग परिणामनितैं हो है। सो अंतरंग जिनधर्मरूप परिणाम भए विना ग्रैवेयक जाना संभवै नाहीं। बहुरि व्रतादिरूप शुभोपयोगहीतैं देवका बंध मानै, अर याहीकौं मोक्षमार्ग मानै, सो बंधमार्ग मोक्षमार्गकौं एक किया, सो यह मिथ्या है। बहुरि व्यवहारधर्मविषै अनेक विपरीत निरूपै हैं। निंदककौं मारनेमैं पाप नाहीं, ऐसा कहै हैं। सो अन्यमती निंदक तीर्थंकरादिकके होतै भी भए, तिनकौं इंद्रादिक मारे नाहीं। सो पाप न होता, तौ इंद्रादिक क्यौं न मारे। बहुरि प्रतिमाकै आभरणादि बनावै है, सो प्रतिबिंब तौ वीतरागभाव बधावनेकौ कारण स्थापन किया था। आभरणादि बनाए, अन्यमतकी मूर्तिवत् यह भी भए। इत्यादि कहां तांई कहिए, अनेक अन्यथा निरूपण करै हैं। या प्रकार श्वेतांबरमत कल्पित जानना। यहां सम्यग्दर्शनका अन्यथा निरूपणतै मिथ्यादर्शनादिकहीकौं पुष्टता हो है। तातैं याका श्रद्धानादि न करना।

बहुरि इन श्वेतांबरनिविषै ही ढूंढिया प्रगट भए हैं, ते आपकौं सांचे धर्मात्मा मानै है, सो भ्रम है। काहेतैं, सो कहिए है,—

केई तौ भेष धारि साधु कहावै हैं, सो उनके ग्रंथनिकै अनुसार भी व्रत समिति गुप्तिआदिका साधन नाहीं भासै है। बहुरि मन वचन काय कृत कारित अनुमोदनाकरि सर्व सावद्ययोग त्याग करनेकी प्रतिज्ञा करैं पीछैं पालै नाहीं। बालककौं वा भोलाकौं वा शूद्रादिककौं ही दीक्षा दें। सो ऐसैं त्याग करैं अर

त्याग करतैं ही किछू विचार न करैं, जो कहा त्याग करों हौं। पीछैं पालै भी नाहीं अर ताकौ सर्व साधु मानै। बहुरि यह कहै,– पीछै धर्म्मबुद्धि होय जाय, तब तौ याका भला हो है। सो पहले ही दीक्षा देनेवालेनै प्रतिज्ञाभंग होती जाणि प्रतिज्ञाभंग कराई, अर यानैं प्रतिज्ञा अंगीकारकरी भंग करी, सो यह पाप कोनकों लाग्या। पीछैं धर्मात्मा होनेका निश्चय कहा। बहुरि जो साधुका धर्म्म अंगीकारकरि यथार्थ न पालै, ताकौ साधु मानिए कै न मानिए। जो मानिए, तौ जे साधु मुनि नाम धरावै है, अर भ्रष्ट है, तिन सबनिकौ साधु मानौं। न मानिए, तौ इनकै साधुपना न रह्या तुम जैसे आचरणतैं साधु मानौ हौ ताका भी पालना कोऊ विरलाकै पाईए है। सबनिकौ साधु काहेकौ मानौ हौ यहां कोऊ कहै – हम तौ जाकै यथार्थ आचरण देखैंगे, ताकौ साधु मानैंगे औरकौ न मानैंगे। ताकौ पूछिए है–एकसंघविषै बहुत भेषी है। तहां जाकै यथार्थ आचरण मानौ हौ, सो यह औरनिकौ साधु मानै है कि न मानै है। जो मानै है, तौ तुमतैं भी अश्रद्धानी भया, ताकौं पूज्य कैसै मानौ हौ। अर न मानै है, तौ उनसेती साधुका व्यवहार काहेकौं वर्त्तै है। बहुरि आप तौ उनकौ साधु न मानैं अर अपने संघविषै राखि औरनि पासि साधु मनाय औरनिकौ अश्रद्धानी करै, ऐसा कपट काहेकौं करै। बहुरि तुम जाकौ साधु न मानौगे, तब अन्य जीवनिकौ भी ऐसा ही उपदेश देवौगे इनकौ साधु मति मानौ, ऐसैं धर्म्मपद्धतिविषै विरुद्ध होय। अर जाकौ तुम साधु मानो हौ, तिसतै भी तुम्हारा विरुद्ध भया।

जातैं वह वाकौं साधु मानै है। बहुरि तुम जाकै यथार्थ आचरण मानौ हौ, सो विचारकरि देखौ, वह भी यथार्थ मुनिधर्म्म नाहीं पालै है। कोऊ कहै--अन्य भेषधारीनितैं तौ घने आछे हैं--तातैं हम मानै हैं। सो अन्यमतीनिविषै तौ नानाप्रकार भेष संभवैं, जातैं तहां रागभवका निषेध नाहीं। इस जैनमतविषै तौ जैसा कह्या, तैसा ही भए साधु संज्ञा होय। यहां कोऊ कहै--शील संयमादि पालै हैं, तपश्चरणादि करै हैं, सो जेता करैं तितना ही भला है। ताका समाधान,--

यह सत्य है, धर्म्म थोरा भी पाल्याहुवा भला है। परंतु प्रतिज्ञा तौ बड़े धर्म्मकी करिए अर पालिए थोरा, तौ तहां प्रतिज्ञाभंगतैं महापाप हो है। जैसैं कोऊ उपवासकी प्रतिज्ञाकरि एकबार भोजन करै, तौ बहुतबार भोजनका संयम होतै भी प्रतिज्ञाभंगतैं पापी कहिए। तैसे मुनिधर्म्मकी प्रतिज्ञा करि कोई किंचित् धर्म्म न पालै, तौ वाकौं शीलसंयमादि होतैं भी पापी ही कहिए। अर जैसैं एकंतकी (एकासनकी) प्रतिज्ञाकरि एकबार भोजन करै, तौ धर्मात्मा ही है। तैसैं अपना श्रावकपद धारि थोरा भी धर्म्म साधन करै, तौ धर्मात्मा ही है। यहां तौ ऊंचा नाम धराय नीची क्रिया करनेतैं पापीपना संभवै है। यथायोग्य नाम धराय धर्मक्रिया करतैं, तौ पापीपना होता नाहीं। जेता धर्म्म साधै, तेता ही भला है। यहां कोऊ कहै—पंचमकालका अंतपर्यंत चतुर्विधि संघका सद्भाव कह्या है। इनकौं साधु न मानिए, तौ किसकौं मानिए। ताका उत्तर—

जैसै इस कालविषै हंसका सद्भाव कह्या है अर गम्यक्षेत्रविषै हंस नाहीं दीसै है, तौ औरनिकौं तौ हंस माने जाते नाहीं, हंसकासा लक्षण मिले ही हंस माने जाय। तैसै इस कालविषै साधुका सद्भाव है, अर गम्यक्षेत्रविषै साधु न दीसै हैं, तौ औरनिकौं तौ साधु माने जाते नाहीं। साधुके लक्षणमिले ही साधु माने जाय। बहुरि इनका भी अचार थोरे ही क्षेत्रविषै सद्भाव दीसै है तहांतै परै क्षेत्रविषै साधुका सद्भाव कैसैं मानै। जो लक्षण मिले मानौ, तौ यहां भी ऐसैं ही मानौ। अर विनालक्षण मिले ही मानौ, तौ तहां अन्य कुलिंगी हैं तिनहीकौं साधु मानौ। ऐसै मानैतै विपरीति होय, तातै बनै नाहीं। कोऊ कहै—इस पंचमकालमै ऐसै भी साधुपद हो है, तौ ऐसा सिद्धांतका वचन बतावौ। विना ही सिद्धांत तुम मानो हौ, तौ पापी होवोगे। ऐसैं अनेक युक्तिकरि इनकै साधुपना बनै नाहीं है। अर साधुपना विना साधु माने गुरु माने मिथ्यादर्शन हो है। जातै भले साधुकौ ही गुरु माने, सम्यग्दर्शन हो हैं।

बहुरि श्रावकका धर्म्मकी अन्यथा प्रवृत्ति करावै हैं। त्रसकी हिंसा स्थूल मृषादि होतैं भी जाका किछू प्रयोजन नाहीं, ऐसा किंचित् त्याग कराय वाकौ देशव्रती भया कहैं। सो वै त्रसघातादि जामै होय ऐसा कार्य करै। सो देशव्रत गुणस्थानविषैं तौ ग्यारह अविरति कहे हैं, तहां त्रसघात कैसै संभवै। बहुरि ग्यारह प्रतिमाभेद श्रावकके है, तिनविषै दशमी ग्यारमी प्रतिमाधारक श्रावक तौ कोई होता नाहीं, अर साधु होय। पूछै, तब कहै—

पडिमाधारी श्रावक अबार होय सकता नाहीं । सो देखो, श्रावक धर्म्म तैं कठिन अर मुनिधर्म्म सुगम ऐसा विरुद्ध भाषैं हैं। बहुरि ग्यारमी प्रतिमाधारकके थोरा परिग्रह मुनिकै बहुतपरिग्रह बतावैं, सो संभवता वचन नाहीं । बहुरि कहैं, ए प्रतिमा तौ थोरे ही काल पालि छोडि दीजिए है। सो कार्य उत्तम है, तौ धर्म्मबुद्धि ऊंची क्रियाकौं काहेकौं छोरै। अर नीचे कार्य हैं, तौ काहेकौं अंगीकार करै । यह संभवै ही नाहीं । बहुरि कुदेव कुगुरुकौं नमस्कारादि करतैं भी श्रावकपना बतावै । कहै, धर्म्मबुद्धिकरि तौ नाहीं बंदै है, लौकिक व्यवहार है। सो सिद्धांतविषै तौ तिनिकी प्रशंसा स्तवनकौं भी सम्यक्त्वका अतिचार कहै अर गृहस्थनिका भला मनावनेकै अर्थि बंदना करते भी किछू न कहैं । बहुरि कहौगे—भय लज्जा कुतूहलादिकरि बंदै है, तौ इन कारणनिकरि कुशीलादि सेवतैं भी पाप मति कहौ। अंतरंगविषै पाप जान्या चाहिए। ऐसैं सर्व आचरनविषै विरुद्ध होगा। मिथ्यात्वसारिखे महापापकी प्रवृत्ति छुडावनैकी तौ मुख्यता नाहीं, अर पवनकायकी हिंसा ठहराय उघारे मुख बोलना छुडावनेकी मुख्यता पाईए । सो क्रमभंग उपदेश हैं । बहुरि धर्म्मके अंग बहुत हैं तिनविषै एक परजीवकी दया ताकौं मुख्य कहै हैं। ताका भी विवेक नाहीं । जलका छानना अन्नका शोधना, सदोष वस्तुका भक्षण न करना; हिंसादिकरूप व्यापार न करना, इत्यादि याके अंगनिकी तौ मुख्यता नाहीं । बहुरि पाटीका बांधना, शौचादिक थोरा करना, इत्यादि कार्यनिकी मुख्यता करै हैं। सो मैलयुक्त पाटीकै थूकका

संबंधतैं जीव उपजैं, तिनका तौ यत्न नाहीं अर पवनकी हिंसाका यत्न बतावैं । सो नासिकाकरि बहुत पवन निकसै, ताका तौ यत्न करते ही नाहीं । बहुरि जो उनका शास्त्रकै अनुसारि बोलनेहीका यत्न किया; तौ सर्वदा काहेकौं राखिए । बोलिए, तब यत्न कर लीजिए । बहुरि जो कहै—भूलि जाय । तौ इतनी भी याद न रहै, तौ अन्य धर्म्मसाधन कैसै होगा । बहुरि शौचादिक थोरे करिए, सो संभवता शौच तौ मुनि भी करै है । तातैं गृहस्थकौ अपने योग्य शौच करना । स्त्रीसंगमादिकरि शौच किए विना सामायिकादि क्रियाकरनेतैं अविनय विक्षिप्तताआदिकरि पाप उपजै । ऐसैं जिनकी मुख्यता करै, तिनका भी ठिकाना नाहीं । अर केई दयाके अंग योग्य पालै है हरितकायत्याग आदि करैं, जल थोरा नाखै, इनका हम निषेध करते नाहीं । बहुरि इस अहिंसाका एकांत पकड़ि प्रतिमा चैत्यालयपूजनादि क्रियाका उत्थापन करै है । सो उनहीके शास्त्रनिविषै प्रतिमाआदिका निरूपण है, ताकौ आग्रहकरि लोपै हैं । **भगवतसूत्र**विषै ऋद्धिधारी मुनिका निरूपण हैं । तहां मेरुगिरिआदिविषै जाय **"तत्थ चेययाइं वंदई"** ऐसा पाठ है । याका अर्थ यह—तहां चैत्यनिकौं बंदै है । सो चैत्य नाम प्रतिमाका प्रसिद्ध है । बहुरि वै हठकरि कहै है—चैत्य शब्दके ज्ञानादिक अनेक अर्थ निपजै है, सो अन्य अर्थ है प्रतिमाका अर्थ नाहीं । याकौ पूछिए है—मेरुगिरि नंदीश्वरद्वीपविषै जाय जाय तहां चैत्यवंदना करी, सो तहां ज्ञानादिककी वंदना करनेका अर्थ कैसै संभवै । ज्ञानादिककौ वंदना तौ सर्वत्र

संभवै। जो वंदने योग्य चैत्य तहां ही संभवै अर सर्वत्र न संभवै, ताकौं तहां वंदनाकरनेका विशेष संभवै, सो ऐसा संभवता अर्थ प्रतिमा ही है। अर चैत्यशब्दका मुख्य अर्थ प्रतिमा ही है; सो प्रसिद्ध है। इस ही अर्थकरि चैत्यालय नाम संभवै है। याकौं हठकरि काहेकौं लोपिए। बहुरि नंदीश्वर द्वीपादिकविषै जाय, देवादिक पूजनादि क्रिया करै हैं, ताका व्याख्यान उनकै जहां तहां पाईए है। बहुरि लोकविषै जहां तहां अकृत्रिम प्रतिमाका निरूपण है। सो या रचना अनादि है। यह भोग कुतूहलादिककै अर्थ तौ है नाहीं। अर इंद्रादिकनिके स्थाननिविषै निःप्रयोजन रचना संभवै नाहीं। सो इंद्रादिक तिनकौं देखि कहा करै हैं। कै तौ अपने मंदरनिविषै निःप्रयोजन रचना देखि, उसतैं उदासीन होते होंगे तहां दुःख होता होगा, सो संभवै नाहीं। कै आछी रचना देखि विषय पोषते होंगे, सो अर्हंत मूर्त्तिकरि सम्यग्दृष्टी अपना विषय पोषै, यह भी संभवै नाहीं। तातैं तहां तिनकी भक्त्यादिक ही करै हैं, यह ही संभवै है। सो उनकै सूर्याभदेवका व्याख्यान है। तहां प्रतिमाजीके पूजनेका विशेष वर्णन किया है। याकौं गोपनेकै अर्थि कहै है, देवनिका ऐसा ही कर्त्तव्य है। सो सांच, परंतु कर्त्तव्यका तौ फल होय ही होय। सो तहां धर्म्म हो है कि पाप हो है। जो धर्म्म हो है, तौ अन्यत्र पाप होता था यहां धर्म्म भया। याकौ औरनिकै सदृश कैसैं कहिए। यह तौ योग्य कार्य भया। अर पाप हो है तौ तहां '**णमोत्थुणं**' का पाठ पढ्या, सो पापकै ठिकानैं ऐसा पाठ

काहेकौं पढ़्या । बहुरि एक विचार यहां यह आया, जो **'णमोत्थुणं'**के पाठविषै तौ अरहंतकी भक्ति है। सो प्रतिमाजीकै आगै जाय यह पाठ पढ़्या, तातैं प्रतिमाजीकै आगै जो अरहंत भक्तिकी क्रिया हैं, सो करनी युक्त भई । बहुरि जो वह ऐसा कहै—देवनिकै ऐसा कार्य है मनुष्यनिकै नाहीं । जातै मनुष्यनिकै प्रतिमाआदि बनावनेविषै हिंसा हो है। तौ उनहीके शास्त्रविषै ऐसा कथन है, द्रोपदी राणी प्रतिमाजीका पूजनादिक जैसै सूर्याभदेव किया, तैसैं करते भई। तातै मनुष्यनिकै भी ऐसा कार्य कर्त्तव्य है। यहां एक यह विचार आया-चैत्यालय प्रतिमा बनावनेकी प्रवृति न थी, तौ द्रोपदी कैसै प्रतिमाका पूजन किया। बहुरि प्रवृत्ति थी, तौ बनावनेवाले धर्मात्मा थे कि पापी थे। जो धर्म्मात्मा थे तौ गृहस्थनिकौ ऐसा कार्य करना योग्य भया। अर पापी थे, तौ तहां भोगादिकका प्रयोजन तौ था नाहीं, काहेकौ वनाया। बहुरि द्रोपदी तहां **'णमोत्थुणं'** का पाठ किया वा पूजनादि किया सो कुतूहल किया कि धर्म्म किया। जो कुतूहल किया, तौ महापापिनी भई। धर्म्मविषै कुतूहल कहा। अर धर्म किया, तौ ओरनिकौ भी प्रतिमाजीकी स्तुति पूजा करनी युक्त है ।

बहुरि वे ऐसी मिथ्यायुक्ति बनावै हैं—जैसै इंद्रकी स्थापनातै इंद्रकी कार्यसिद्धि नाहीं, तैसै अरहंतप्रतिमाकरि कार्यसिद्धि नाहीं सो अरहंत काहूकौ भक्त मानि भला करते होंय, तौ ऐसै भी मानै। सो तौ वे भी वीतराग है। वह जीव भक्तिरूप अपने भावनितै शुभफल पावै है। जैसैं स्त्रीका आकाररूप काष्ट पाषाणकी मूर्ति

देखि, तहां विकाररूप होय अनुराग करै तौ, ताकै पापबंध होय। तैसैं अरहंतका आकाररूप धातु काष्ठ पाषाणकी मूर्ति देखि, धर्म्म बुद्धितै तहां अनुराग करै, तौ शुभकी प्राप्ति कैसैं न होय। तहां वह कहै है, विना प्रतिमा ही हम अरहंतविषै अनुराग उपजावैंगे। तौ उनकौं कहिए है–आकार देखे जैसा भाव होय, तैसा परोक्ष स्मरण किए होय नाहीं। याहीतैं लोकविषै भी स्त्रीका अनुरागी स्त्रीका चित्र बनावै है। तातैं प्रतिमाका अवलंबनकरि विशेष भक्ति होनेतैं विशेष शुभकी प्राप्ति हो है। कोऊ कहै-प्रतिमाकौं देखो परंतु पूजनादिक करनेका कहा प्रयोजन है। ताका उत्तर

जैसैं कोऊ किसी जीवका आकार बनाय, रुद्रभावनितैं घात करै तौ वाकै उस जीवकी हिंसा किएकासा पाप लगै, वा कोऊ काहूका आकार बनाय द्वेषबुद्धितै वाकी बुरी अवस्था करै, तौ जाका आकार बनाया, वाकी बुरी अवस्था किएकासा फल निपजै। तैसैं अरहंतका आकार बनाय रागबुद्धितैं पूजनादि करै, तौ अरहं. तके पूजनादि किएकासा शुभ फल निपजै। अतिअनुराग भए प्रत्यक्ष दर्शन न होतैं आकार बनाय पूजनादि करिए है। इस धर्म्मानुरागतैं महापुण्य उपजै है। बहुरि ऐसी कुत्तर्क करै हैं—जो जाकै जिस वस्तुका त्याग होय, ताकै आगै तिस वस्तुका धरना हास्य करना है। तातैं वंदनादिकरि अरहंतका पूजन युक्त नाहीं। ताका समधान,–

मुनिपद लेतैं ही सर्व परिग्रहका त्याग किया था, पीछैं केवल-ज्ञान भए तीर्थंकरदेवकैं समवसरणादि बनाए, छत्र चामरादि

किए, सो हास्य करी कि भक्ति करी । हास्य करी तौ इंद्र महापापी भया सो बनै नाहीं । भक्ती करी, तौ पूजनादिकविषै भी भक्ति ही करिए है । छद्मस्थकै आगै त्याग करी वस्तुका धरना हास्य है । जातैं वाकै विक्षिप्तता होय आवै है । केवलीकै वा प्रतिमाकै आगै अनुरागकरि उत्तम वस्तु धरनेका दोष नाहीं । उनकै विक्षिप्तता होती नाहीं । धर्म्मानुरागतैं जीवका भला होय । बहुरि वह कहै है—प्रतिमा बनावनेविषै, चैत्यालयादि करावनेविषै, पूजनादि करावनेविषै हिंसा होय अर धर्म्म अहिंसा है । तातै हिंसाकरि धर्म्म माननेतैं महापाप हो है, तातै हम इन कार्यनिको निषेधै है । ताका उत्तर—

उनहीके शास्त्रविषै ऐसा वचन है,—

सुच्चा जाणइ कल्लाणं सुच्चा जाणइ पावगं— ।
उभयं पि जाणये सुच्चा जं सेयं तं समायर ॥ १ ॥

यहां कल्याण पाप उभय ए तीन, शास्त्र सुनिकरि जाणै, ऐसा कह्या । सो उभय तौ पाप अर कल्याण मिले होय, ऐसा कार्यका भी होना ठहर्‌या । तहां पूछिए है—केवल धर्म्मतै तौ उभय घाटि है ही, अर केवल पापतै उभय बुरा है कि भला है । जो बुरा है, तौ यामैं तौ किछू कल्याणका अंश मिल्या, पापतै बुरा कैसे कहिए । भला है, तौ केवल पाप छोड़ि ऐसा कार्य करना ठहर्‌या । बहुरि युक्तिकरि भी ऐसैं हीं संभवै है । कोऊ त्यागी होय, मंदिरादिक नाहीं करावै हैं, वा सामायिकादि निरवद्य कार्यनिविषै प्रवर्तैं हैं । ताकौ तौ छोरि प्रतिमादि करावना पूजनादि करना

उचित नाहीं। परंतु कोई अपने रहनेकै वास्तै मंदिर आदि बनावै तिसतैं तौ चैत्यालयादि करावनेवाला हीन नाहीं। हिंसा तौ भई, परंतु वाकै तौ लोभ पापानुरागकी वृद्धि भई, याकै लोभ छूट्या, धर्मानुराग भया। बहुरि कोई व्यापारादि कार्य करै, तिसतैं पूजनादि कार्य करना हीन नाहीं। वहां तौ हिंसादि बहुत हो है, लोभादि बधै है पापहीकी प्रवृत्ति है। यहां हिंसादिक भी किंचित् हो है लोभादि घटै है, धर्म्मानुराग बधै है। ऐसैं जे त्यागी न होंय, अपने धनकौं पापविषै खरचते होंय तिनिकौं चैत्यालयादि करावना। अर निरवद्य सामायिकादि कार्यनिविषै उपयोगकौं नाहीं लगाय सकै तिनकौं पूजनादि करना निषेध नाहीं। बहुरि तुम कहौगे निरवद्य सामायिक कार्य ही क्यों न करैं, धर्म्मविषै काल गमावना तहां ऐसे कार्य काहेकौं करै। ताका उत्तर—

जो शरीरकरि पाप छोरें ही निरवद्यपना होय, तौ ऐसैं ही करै। सो तौ है नाहीं। परिणामनितै पाप छूटें निरवद्यपना हो है। सो विना अवलंबन सामायिकादिविषै जाका परिणाम लागै नाहीं, सो पूजनादिकरि तहां उपयोग लगावै है। तहां नाना प्रकार आलंबनकरि उपयोग लगि जाय है। जो तहां उपयोगकौं न लगावै, तौ पापकार्यनिविषै उपयोग भटकै तब बुरा होय। तातैं तहां प्रवृत्ति करनी युक्त है। बहुरि तुम कहो हौ— धर्म्मकै अर्थ हिंसा किए तौ महा पाप हो है, अन्यत्र हिंसा किए थोरा पाप हो है, सो यह प्रथम तौ सिद्धांतका वचन नाहीं। अर युक्तितैं भी मिलै नाहीं। जातैं ऐसैं मानैं इंद्र जन्मकल्याणविषै बहुत जलकरि

अभिषेक करै है। समवसरणविषै देव पुष्पवृष्टि चमरढारना इत्यादि कार्य करै है, सो ये महापापी होंय। जो तुम कहोगे, उनका ऐसा ही व्यवहार है, तौ क्रियाका फल तौ भए विना रहता नाहीं। जो पाप है, तौ इंद्रादिक तौ सम्यग्दृष्टी हैं, ऐसा कार्य काहेकौ करैं। अर धर्म्म है, तौ काहेकौ निषेध करो हौ। वहुरि तुमकौं ही पूछै है---तीर्थंकर वंदनाकौ राजादिक गए, वा साधुवंदनाकौं दूरि जाईए है सिद्धात सुनने आदि कार्यनिकौ गमनादि करिए है। तहां मार्गविषै हिंसा भई। वहुरि साधर्म्मी जिमाईए है, साधुका मरण भए ताका संस्कार करिए है, साधु होतैं उत्सव करिए हैं, इत्यादि प्रवृत्ति अव भी दीसै है। सो यहां भी हिंसा हो हैं, सो ये कार्य्य तौ धर्म्महीकै अर्थ हैं अन्य कोई प्रयोजन नाहीं। जो यहां महापाप उपजै है, तौ पूर्वैं ऐसे कार्य किए तिनिका निषेध करौ। अर अव भी गृहस्थ ऐसा कार्य करै है, तिनिका त्याग कहौ। वहुरि जो धर्म्म उपजै है तौ धर्म्मकै अर्थि हिंसाविषै महापाप वताय, काहेकौं भ्रमावो हौ। तातै ऐसैं मानना युक्त है। जैसै थोरा धन ठिगाए, वहुत धनका लाभ होय, तौ वह कार्य करना, तैसै थोरा हिंसादिक पाप भए वहुत धर्म्म निपजै, तौ वह कार्य्य करना। जो थोरा धनका लोभकरि कार्य विगारै, तौ मूर्ख है। जैसै थोरी हिंसाका भयतै वड़ा धर्म्म छोरै, तो पापी ही होय। वहुरि कोऊ वहुत धन ठिगावै, अर स्तोक धन निपजावै वा न उपजावै, तौ वह मूर्ख है। जैसै वहुत हिंसादिककरि वहुत पाप उपजावै अर भक्ति आदि

धर्मविषै स्तोक प्रवर्तै वा न प्रवर्तै, तौ वह पापी ही होय है। बहुरि जैसैं विना ठिगाए ही धनका लाभ होतैं ठिगावै, तो मूर्ख है तैसै निरवद्य धर्म्मरूप उपयोग होतै सावद्य धर्म्म विषै उपयोग लगावना युक्त नाहीं। ऐसैं अनेक परिणामनिकरि अवस्था देखि भला होय, सो करना। एकांतपक्ष कार्यकारी नाहीं। बहुरि अहिंसा ही केवल धर्म्मका अंग नाहीं है। रागादिकनिका घटना धर्म्मका मुख्य अंग है। तातैं जैसैं परिणामनिविषै रागादि घटैं, सो कार्य करना।

बहुरि गृहस्थनिकौं अणुव्रतादिकका साधन भएविना ही सामायिक, पडिकमणो, पोसह आदि क्रियानिका मुख्य आचरन करावै है। सो सामायिक तौ रागद्वेषरहित साम्यभाव भए होय, पाठमात्र पढ़ैं वा उठना बैठना किए ही तौ होता नाहीं। बहुरि कहौगे, अन्य कार्य करता, तातैं तौ भला है। सो सत्य, परंतु सामायिकपाठविषै प्रतिज्ञा तौ ऐसी करै, जो मनवचनकायकरि सावद्यकौं न करूंगा, न कराऊंगा अर मनविषै तौ विकल्प हुवा ही करै। अर वचनकायविषै भी कदाचित् अन्यथा प्रवृत्ति होय, तहां प्रतिज्ञाभंग होय। सो प्रतिज्ञाभंग करनेतैं न करना भला। जातैं प्रतिज्ञाभंगका महापाप है। बहुरि हम पूछै हैं—कोऊ प्रतिज्ञा भी न करै है, अर भाषापाठ पढ़ै है। ताका अर्थ जानि तिसविषै उपयोग राखै है। अर कोऊ प्रतिज्ञा करै, ताकौ तौ नीकैं पालै नाहीं, अर प्राकृतादिकका पाठ पढ़ै, ताके अर्थका आपकौं ज्ञान नाहीं, विना अर्थ जानै तहां उपयोग रहै नाहीं, तब

उपयोग अन्यत्र भटकै। ऐसे इन दोऊनिविषै विशेष धर्म्मात्मा कौन। जो पहलेकौं कहोगे, तौ ऐसा ही उपदेश क्यों न कीजिए। दूसरेकौं कहोगे, तौ प्रतिज्ञाभंगका पाप न भया वा परिणामनिके अनुसार धर्म्मात्मापना न ठहऱ्या। पाठादिकरनेके अनुसार ठहऱ्या। तातै अपना उपयोग जैसै निर्मल होय, सो कार्य करना। सधै सो प्रतिज्ञा करनी। जाका अर्थ जानिए, सो पाठ पढ़ना। पद्धतिकरि नाम धरावनेमैं नफा नाहीं। बहुरि पडिकमणो नाम पूर्वदोष निराकरण करनेका है। सो 'मिच्छामि दुक्कडं' इतना कहे ही तौ दुष्कृत मिथ्या न होय,। मिथ्या होने योग्य परिणाम भए दुष्कृत मिथ्या होय। तातै पाठ ही कार्यकारी नाहीं। बहुरि पडिकमणाका पाठविषै ऐसा अर्थ है, जो बारह व्रतादिकविषै जो दुष्कृत लाग्यो होय, सो मिथ्या होय। सो व्रतधारे विना ही तिनिका पडिकमणा करना कैसै संभवै। जाकै उपवास न होय, सो उपवासविषै लाग्या दोषका निराकरणपना करै, तौ असंभवपना होय। तातै यह पाठ पढ़ना कौनप्रकार बनै नाहीं। बहुरि पोसहविषै भी सामायिकवत् प्रतिज्ञाकरि नाहीं पालै हैं। तातैं पूर्वोक्त ही दोष है। बहुरि पोसह नाम तौ पर्वका है। सो पर्वके दिन भी केतायक कालपर्यंत पापक्रिया करै, पीछैं पोसहधारी होय। सो जेतै काल बनै तेतै काल साधन करनेका तौ दोष नाहीं। परंतु पोसहका नाम करिए, सो युक्त नाहीं। संपूर्ण पर्वविषैं निरवद्य रहे ही पोसह होय। जो थोरा भी कालतै पोसह नाम होय, तौ सामायिककौं भी पोसह कहो,

नाहीं, शास्त्रविषै प्रमाण बतावै । जो जघन्य पोसहका इतना काल है; सो बड़ा नाम धराय लोगनिकौं भ्रमावना, यह प्रयोजन भासै है । बहुरि आखड़ी लेनेका पाठ तौ और पढ़ै, अंगीकार और करै । सो पाठविषै तौ "मेरै त्याग है" ऐसा वचन हैं,तातैं जो त्याग करै सो ही पाठ पढ़ै यह चाहिए । जो पाठ न आवै तौ भाषाहीतैं कहैं । परंतु पद्धतिकै अर्थ यह रीति है । बहुरि प्रतिज्ञा ग्रहण करने करावनेकी मुख्यता है अर पथाविधि पालनेकी शिथिलता है, भावनिर्मल होनेका विवेक नाहीं । आर्त्तपरिणामनिकरि वा लोभादिककरि भी उपवासादिक करै, तहां धर्म्म मानै । सो फल तौ परिणामनितै हो है । इत्यादि अनेक कल्पित बातैं कहै हैं, सो जैनधर्म्मविषै संभवै नाहीं । ऐसैं यह जैनविषै श्वेताम्बरमत है, सो भी देवादिकका वा तत्त्वनिका वा मोक्षमार्गादिकका अन्यथा निरूपण करै है । तातैं मिथ्यादर्शनादिकका पोषक है, सो त्याज्य है सांचा जिनधर्म्मका स्वरूप आगैं कहैं हैं । ताकरि मोक्षमार्गविषै प्रवर्त्तना योग्य हैं । तहां प्रवर्तैं तुम्हारा कल्याण होगा ।

इति श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक शास्त्रविषै अन्यमतनिरूपक
पांचवाँ अधिकार समाप्त भया ॥ ५ ॥

दोहा ।

मिथ्या देवादिक भजे, हो है मिथ्याभाव ।
तज तिनकौं सांचे भजौ, यह हितहेत उपाव ॥ १ ॥

अर्थ-- अनादितैं जीवनिकै मिथ्यादर्शनादिक भाव पाईए है, तिनकी पुष्टताकौ कारण कुदेवकुगुरुकुधर्म्मसेवन है। ताका त्याग भए मोक्षमार्ग्गविषै प्रवृत्ति होय। तातैं इनका निरूपण कीजिए है। तहां जे हितका कर्त्ता नाहीं अर तिनकौं भ्रमतैं हितका कर्त्ता जानि सेवै सो कुदेव है। तिनका सेवन तीनप्रकार प्रयोजनलिए करिए हैं। कहीं तौ मोक्षका प्रयोजन है। कहीं परलोकका प्रयोजन है। कहीं इसलोकका प्रयोजन है। सो ये प्रयोजन तौ सिद्ध होंय नाहीं। किछू विशेषहानि होय। तातैं तिनका सेवन मिथ्याभाव है। सो ही दिखाईए है-

अन्यमतविषै जिनके सेवनतैं मुक्ति होनी कही है, तिनकौं केई जीव मोक्षकै अर्थ सेवन करै है, सो मोक्ष होय नाहीं। तिनका वर्णन पूर्वं अन्यमत अधिकार विषै कह्या ही है। बहुरि अन्यमतविषैं कहे देव, तिनिकौ केई परलोकविषै सुख होय दुःख न होय, ऐसे प्रयोजन लिए सेवै है। सो ऐसी सिद्धि तौ पुण्य उपजाए अर पाप न उपजाए हो है,। सो आप तौ पाप उपजावै है, अर कहै ईश्वर हमारा भला करैगा। तौ तहां अन्याय ठहर्‌या। काहूकौ पापका फल दे काहूकौ न दे ऐसा तौ है नाहीं। जैसा अपना परिणाम करैगा, तैसा ही फल पावैगा। काहूका बुरा भला करनेवाला ईश्वर है नाहीं। बहुरि तिन देवनिका सेवन करतै तिन देवनिका तौ नाम करैं, अर अन्य जीवनिकी हिंसा करै, वा भोजन नृत्यादि-करि अपनी इंद्रियनिका विषय पोषै सो पापपरिणामनिका फल तौ लागे विना रहनेका नाहीं। हिंसा विषय कषायनिकौं सर्व

पाप कहै हैं। अर पापका फल भी खोटा ही सर्व मानै हैं। बहुरि कुदेवनका सेवनविषै हिंसा विषयादिकहीका अधिकार है। तातैं कुदेवनके सेवनतैं परलोकविषै भला न हो है। बहुरि घने जीव इस पर्यायसंबधी शत्रुनाशादिक वा रोगादिक मिटावना धनादिककी प्राप्ति वा पुत्रादिककी प्राप्ति इत्यादि दुःख मेटनेका वा सुख पावनेका अनेकप्रयोजन लिए कुदेवनिका सेवन करै हैं। बहुरि हनुमानादिककौं पूजै हैं। बहुरि देवीनिकौं पूजै हैं। बहुरि गणगौर सांझी आदि बनाय पूजै हैं। चौथि शीतला दिहाड़ी आदिकौं पूजै हैं। बहुरि अऊत पितर व्यंतरादिककौं पूजै हैं। बहुरि सूर्य चंद्रमा शनैश्चरादि ज्योतिषीनिकौं पूजै हैं। बहुरि पीर पैगंबरादिकनिकौं पूजै हैं। बहुरि गऊ घोटकादि तिर्यंचनिकौं पूजै हैं अग्नि जलादिककौं पूजै हैं। शस्त्रादिककौं पूजै हैं। बहुत कहा कहिए रोड़ी इत्यादिककौं भी पूजै हैं। सो ऐसे कुदेवनिका सेवन मिथ्यादृष्टितै हो है। काहेतैं, प्रथम तो जाका सेवन करैं, सो केई तौ कल्पनामात्र ही देव हैं। सो तिनिका सेवन कार्यकरी कैसैं होय। बहुरि केई व्यंतरादिक हैं, सो ए काहूका भला बुरा करनेकौं समर्थ नाहीं। जो वै ही समर्थ होंय, तौ वै ही कर्त्ता ठहरैं। सो तौ उनका किया किछू होता दीसता नाहीं। प्रसन्न होय, धनादिक देय सकैं नाहीं। द्वेषी होय बुरा कर सकते नाहीं। इहां कोऊ कहै—दुःख तौ देते देखिए है, मानेतैं दुःख देते रहि जाय है। ताका उत्तर,—

याकैं पापका उदय होय, तब ऐसी ही उनके कुतूहल बुद्धि होय ताकरि चेष्टा करैं। चेष्टा करतैं यह दुःखी होय। बहुरि कुतूहलतै वै किछू कहै अर यह उनका कह्या न करै, तब वह चेष्टा करनेतैं रहि जाय। बहुरि याकौ शिथिल जानि कुतूहल किया करैं। बहुरि जो याकै पुण्यका उदय होय, तौ किछू कर सकते नाहीं। सो दिखाइए है-कोऊ जीव उनकौं पूजै नाहीं वा उनकी निंदा करै तौ वै भी उसतैं द्वेष करैं। परंतु ताकौ दुख देइ सकैं नाहीं। वा ऐसे भी कहते देखिए है, जो हमकौं फलाना मानै नाहीं, सो उसतैं हमारा वश नाहीं। तातै व्यंतरादिक किछू करणेकौं समर्थ नाहीं। याका पुण्यपापहीतै दुख हो है। उनके माने पूजे उलटा रोग लागै है। किछू कार्यसिद्धि नाहीं। बहुरि ऐसा जानना-जे कल्पित देव हैं, तिनिका भी कहीं अतिशय चमत्कार होता देखिए है, सो व्यंतरादिककरि किया हो है। कोई पूर्व पर्यायविषै इनका सेवक था, पीछै मरि व्यंतरादि भया, तहां ही कोई निमित्ततैं ऐसी बुद्धि भई तब वह लोकविषै तिनिके सेवनेकी प्रवृत्ति करावनेके अर्थि कोई चमत्कार देखि तिस कार्यविषै लग जाय है। जैसैं जिन प्रतिमादिकका भी अतिशय होता सुनिए वा देखिए है। सो जिनकृत नाहीं जैनी व्यंतरादिकृत हो है। तैसै कुदेवनिका कोई चमत्कार होय, सो उनके अनुचर व्यंतरादिकनिकरि किया हो है। बहुरि अन्यमतविषै भक्तनिकी सहाय परमेश्वर करी वा प्रत्यक्ष दर्शन दिए इत्यादि कहै हैं। तहां कोई तौ कल्पित वातैं कहै हैं। कोई उनके अनुचर व्यंतरादिककरि किए कार्य-

निकौं परमेश्वरके किए कहै हैं। जो परमेश्वरके किए होंय, तो परमेश्वर तौ त्रिकालज्ञ है। सर्वप्रकार समर्थ है। भक्तकौं दुःख काहेकौं होने दे। बहुरि अब हू भी देखिए है। म्लेच्छ आय भक्तनकौं उपद्रव करै हैं, धर्मविध्वंस करै हैं मूर्त्तिको विघ्न करै हैं सो परमेश्वरकौं ऐसे कार्यका ज्ञान न होय तौ सर्वज्ञपनों रहै नाहीं। जानें पीछैं सहाय न करै तौ भक्तवत्सलता गई वा सामर्थ्य हीन भया। बहुरि साक्षीभूत रहै है, तौ आगैं भक्तनकी सहाय करी कहिए है सो झूंठ है। उनकी तौ एकसी वृत्ति है। बहुरि जो कहौगे—वैसी भक्ति नाहीं है। तौ म्लेच्छनितैं तौ भले हैं, वा मूर्तिआदि तौ उनहीकी स्थापन थी, तिनका विघ्न तौ न होने देना था बहुरि म्लेच्छपापीनिका उदय हो है, सो परमेश्वरका किया है कि नाहीं। जो परमेश्वरका किया है, तौ निंदकनिकौं सुखी करै, भक्तनकौं दुःखी करै, तहां भक्तवत्सलपना कैसें रह्या। अर परमेश्वरका किया न हो है, तौ परमेश्वर सामर्थ्यहीन भया। तातैं परमेश्वरकृत कार्य नाहीं। कोई अनुचर व्यंतरादिक हीं चमत्कार दिखावै है। ऐसा ही निश्चय करना। बहुरि कोऊ पूछै कि, कोई व्यंतर अपना प्रभुत्व कहै, वा अप्रत्यक्षकौं बताय दे, कोऊ कुस्थानवासादिक बताय, अपनी हीनता कहै, पूछिए सो न बतावै, भ्रमरूपवचन कहै वा औरनिकौं अन्यथा परिणमावैं, औरनिकौं दुख दे इत्यादि विचित्रता कैसें है, ताका उत्तर:—

व्यंतरनिविषै प्रभुत्वकी अधिकता हीनता तौ है, परंतु जो कुस्थानविषैं वासादिक बताय हीनता दिखावै हैं सो तौ कुतूहलतैं

वचन कहै है। व्यंतर बालकवत् कुतूहल किया करै। सो जैसें बालक कुतूहलकरि आपकौं हीन दिखावै, चिड़ावै, गाली सुनै, [1]बार पाड़ै, पीछै हंसने लगि जाय, तैसै ही व्यंतर चेष्टा करै है। जो कुस्थानहीके वासी होंय, तौ उत्तमस्थानविषै आवै है तहां कौनके ल्याए आवैं हैं। आपहीतै आवै हैं, तौ अपनी शक्ति होतै कुस्थानविषै काहेकौ रहैं। तातैं इनका ठिकाना तौ जहां उपजैं है तहां इस पृथ्वीकै नीचै वा ऊपरि है सो मनोज्ञ है। कुतूहलकै लिए चाहै सो कहै हैं। बहुरि जो उनकौं पीड़ा होती होय, तौ रोवते रोवते हंसने कैसैं लगि जांय। इतना है, मंत्रादिककी अचिंत्यशक्ति है सो कोई सांचा मंत्रकै निमित्त नैमित्तिक संबंध होय, तौ वाकै किंचित् गमनादि न होय सकै वा किंचित् दुःख उपजै वा कोई प्रबल वाकौ मनैं करै, तब रहि जाय। वा आप ही रहि जाय। इत्यादि मंत्रकी शक्ति है। परंतु जलावना आदि न हो है। मंत्रवाला जलाया कहै। सो वैक्रियक शरीरका जलावना आदि संभवै नाहीं। अप्रगट हो जाय सकै है। बहुरि व्यंतरनिकै अवधिज्ञान काहूकै स्तोकक्षेत्रकाल जाननेका है, काहूकै बहुत है। तहां वाकै इच्छा होय अर आपकै बहुत ज्ञान होय तौ अप्रत्यक्षकौं पूछै ताका उत्तर दे, वा आपकै स्तोकज्ञान होय तौ अन्य महत्ज्ञानीकौं पूछि आयकरि जुवाब दे। बहुरि आपकै स्तोक ज्ञान होय वा इच्छा न होय, तौ पूछै ताका उत्तर न दे, ऐसा जानना। बहुरि स्तोकज्ञानवाला व्यंतरादिककै उपजता केतेक काल

---

[1] ऊंचे स्वरसे रोवै।

ही पूर्व जन्मका ज्ञान होय सकै, पीछै स्मरण मात्र रहै है। तातैं तहां कोई इच्छाकरि आप किछू चेष्टा करैं तौ करै। बहुरि पूर्व जन्मकी बातैं कहै। कोऊ अन्य वार्ता पूछै, तौ अवधि तौ थोरा, विनाजाने कैसै कहै। बहुरि ताका उत्तर आप न देय सकै, वा इच्छा न होय, तहां मान कुतूहलादिकतैं उत्तर न दे, वा झूंठ बोलै। ऐसा जानना। बहुरि देवनिमैं ऐसी शक्ति है, जो अपने वा अन्यके शरीरकौं वा पुद्गलस्कंधकौ इच्छा होय तैसैं परिणमावैं। तातैं नाना आकारादिरूप आप होय, वा अन्य नानाचरित्र दिखावै। बहुरि अन्य जीवके शरीरकौं रोगादियुक्त करै। यहां इतना है— अपनै शरीरकौं वा अन्य पुद्गलस्कंधनिकौं तौ जेती शक्ति होय तितनैं ही परिणमाय सकै। जातै सर्व कार्य करनेकी शक्ति नाहीं। बहुरि अन्य जीवनिके शरीरादिककौ वाका पुण्य पापकै अनुसार परिणमाय सकैं। वाकै पुण्यउदय होय, तौ आप रोगादिरूप न परिणमाय सकै। अर पापउदय होय, तौ वाका इष्टकार्य न करिसकै। ऐसैं व्यंतरादिकनिकी शक्ति जाननी। यहां कोऊ कहै—इतनी जिनकी शक्ति पाईए, तिनके मानने पूजनेमैं दोष कहा ताका उत्तर,— आपकै पापउदय होतैं सुख न देय सकै, पुण्यउदय होतैं दुख न देय सकै, वा तिनिके पूजनेतैं कोई पुण्यबंध होय नाहीं, रागादिककी वृद्धि होतैं पाप ही होय है। तातैं तिनिका मानना पूजना कार्यकारी नाहीं—बुरा करनेवाला है। बहुरि व्यंतरादिक मनावै हैं, पुजावै हैं, सो कुतूहलादिक करै है, किछू विशेष प्रयोजन नाहीं राखै हैं। जो उनकौं मानै पूजै, तिससेती कुतूहल किया

करैं। जो न मानै पूजै तासूं किछू न कहैं। जो उनकै प्रयोजन ही होय, तौ न मानने पूजनेवालेकौ घना दुखी करैं। सो तौ जिनकै न मानने पूजनेका अवगाढ़ है, तिनिकौ किछू भी कहते दीसते नाहीं। बहुरि प्रयोजन तौ क्षुधादिककी पीड़ा होय तौ होय, सो उनकै व्यक्त होय नाहीं। जो होय, तौ उनकै अर्थि नैवेद्यादिक दीजिए है ताकौं ग्रहण क्यों न करै, वा औरनिकै जिमावने आदि करनेहीकौ काहेकौं कहै। तातै उनकै कुतूहलमात्र क्रिया है। सो आपकौं उनके कुतूहलका ठिकाना भए दुःख होय, हीनता होय तातै उनकौ मानना पूजना योग्य नाहीं। बहुरि कोऊ पूछै कि व्यंतर ऐसै कहै हैं—गया आदि पिंडप्रदान करो, तौ हमारी गति होय, हम बहुरि न आवै, सो कहा है। ताका उत्तर,—

जीवनिकै पूर्वभवका संस्कार तौ रहै ही है। व्यंतरनिकै पूर्व-भवका स्मरणादिकतै विशेष संस्कार है। तातै पूर्वभवविषै ऐसी ही वासना थी, जो गयादिकविषै पिंडप्रदानादि किए गति हो है। तातै ऐसे कार्य करनेकौं कहै हैं। मुसलमानआदि मरि व्यंतर हो हैं, ते ऐसै कहैं नाहीं। वै अपने संस्काररूप ही वचन कहै। तातै सर्व व्यंतरनिकी गति तैसैं ही होती होय, तौ सब ही समान प्रार्थना करै। सो है नाहीं, ऐसा जानना। ऐसै व्यंतरादिकनिका-स्वरूप जानना।

बहुरि सूर्य चंद्रमा ग्रहादिक ज्योतिषी है, तिनकौ पूजै हैं सो भी भ्रम है। सूर्यादिककौ भी परमेश्वरका अंश मानि पूजै हैं। सो वाकै तौ एक प्रकाशका ही आधिक्य भासै है। सो प्रकाशमान्

अन्य रत्नादिक भी हो हैं । अन्य कोई ऐसा लक्षण नाहीं, जातैं वाकौं परमेश्वरका अंश मानिए । बहुरि चंद्रमादिककौं धनादिककी प्राप्तिके अर्थ पूजै हैं । सो उसके पूजनेंतैं ही धन होता होय, तौ सर्वदरिद्री इस कार्यकौं करैं । तातैं ए मिथ्याभाव है । बहुरि ज्योतिषके विचारतैं खोटे ग्रहादिक आए, तिनिका पूजनादिक करैं हैं, ताकै अर्थ दानादिक दे हैं । सो जैसै हिरणादिक स्वयमेव गमनादि करै हैं, पुरुषकै दाहिणें बावै आए सुख दुःख होनेका आगामी ज्ञानको कारण हो हैं, किछू सुख दुख देनेकौं समर्थ नाहीं । तैसैं ग्रहादि स्वयमेव गमनादि करै है । प्राणीकै यथा--संभव योगकौ प्राप्त होतैं सुख दुःख होनेका आगामी ज्ञानकौं कारण हो हैं । किछू सुख दुःख देनेकौ समर्थ नाहीं । कोउ तौ उनका पूजनादि करै, ताकै भी इष्ट न होय, कोऊ न करै, ताकै भी इष्ट होय । तातैं तिनिका पूजनादि करना मिथ्याभाव है । यहां कोऊ कहै–देना तौ पुण्य है, सो भला ही है । ताका उत्तर,—

धर्म्मकै अर्थि देना पुण्य है । यह तौ दुःखका भयकरि वा सुखका लोभकरि दे है, सो पाप ही है । इत्यादि अनेकप्रकारकरि ज्योतिषी देवनिकौं पूजै है, सो मिथ्या है ।

बहुरि देवी दिहाड़ी आदि है, ते केई तौ व्यंतरी वा ज्योति—षिणी हैं, तिनिका अन्यथा स्वरूप मानि पूजनादि करै हैं । केई कल्पित है, सो तिनिका कल्पनाकरि पूजनादि करै हैं । ऐसैं व्यंतरादिकके पूजनेका निषेध किया । यहां कोऊ कहै—क्षेत्रपाल दिहाडी पद्मावती आदि देवी यक्ष यक्षिणी आदि जे जिनमतकौं

अनुसरै है, तिनके पूजनादि करनेमै तौ दोष नाहीं। ताका उत्तर,—

जिनमतविषै संयम धारे पूज्यपनौ हो है। सो देवनिकै संयम होता ही नाहीं। बहुरि इनकौ सम्यक्त्वी मानि पूजिए है, तौ भवनत्रिकमै सम्यक्त्वकी भी मुख्यता नाहीं। जो सम्यक्त्वकरि ही पूजिए, तौ सर्वार्थसिद्धिके देव लौकांतिकदेव तिनकौ ही क्यों न पूजिए। बहुरि कहौगे—इनकै जिनभक्ति विशेष है। सो भक्तिकी विशेषता भी सौधर्म्म इंद्रकै है वा सम्यग्दृष्टी भी है। वाकौं छोरि इनकौ काहेकौ पूजिए। बहुरि जो कहौगे, जैसै राजाकै प्रतीहारादिक हैं, तैसैं तीर्थकरकै क्षेत्रपालादिक है। सो समवसरणादिविषै इनका अधिकार नाहीं। यह झूंठी मानि है। बहुरि जैसै प्रतीहारादिकका मिलाया राजासौ मिलिए, तैसै ये तीर्थंकरकौ मिलावते नाहीं। वहां तौ जाकै भक्ति होय, सो ही तीर्थंकरका दर्शनादिक करो। किछू किसीकैं आधीन नाहीं। बहुरि देखो अज्ञानता, आयुधादिक लीए रौद्रस्वरूप जिनका तिनकी गाय गाय भक्ति करै। सो जिनमतविषै भी रौद्ररूप पूज्य भया, तौ यह भी अन्यमतकै ही समान भया। तीव्र मिथ्यात्वभावकरि जिनमतविषै ऐसी विपरीत प्रवृत्तिका मानना हो है। ऐसैं क्षेत्र-पालादिककौ भी पूजना योग्य नाहीं।

बहुरि गऊ सर्प्पादि तिर्यंच हैं, ते प्रत्यक्ष ही आपतैं हीन भासै है। इनका तिरस्कारादिक करि सकिए है। इनकी निंद्यदशा प्रत्यक्ष देखिए है। बहुरि वृक्ष अग्नि जलादिक स्थावर हैं, ते

तिर्यंचनिहूतैं अत्यंत हीनअवस्थाकौं प्राप्त देखिए है। बहुरि शस्त्र दवात आदि अचेतन हैं, सो सर्वशक्तिकरि हीन प्रत्यक्ष देखिए है। पूज्यपनेका उपचार भी संभव नाहीं। तातैं इनका पूजना महा मिथ्याभाव है। इनकौं पूजे प्रत्यक्ष वा अनुमानकरि भी किछू फलप्राप्ति नाहीं भासै है। तातैं इनकौं पूजना योग्य नाहीं। या प्रकार सर्व ही कुदेवनिका पूजना मानना मिथ्या है। देखो, मिथ्यात्वकी महिमा, लोकविषै आपतैं नीचेकौं नमतैं आपकौं निंद्य मानैं, अर मोहित होय रोड़ीपर्यंतकौ पूजना भी निंद्य न मानैं। बहुरि लोकविषै तौ जातैं प्रयोजन सिद्ध होता जानै, ताहीकी सेवा करैं। अर मोहित होय कुदेवनितै मेरा प्रयोजन कैसैं सिद्ध होगा, ऐसा विना विचारे ही कुदेवनिका सेवन करैं। बहुरि कुदेवनिका सेवन करते हजारों विघ्न होय, ताकौं तौ गिनैं नाहीं। कोई पुण्यके उदयतैं इष्टकार्य होय जाय, ताकौं कहैं, इनके सेवनतैं यहु कार्य भया। बहुरि कुदेवादिकका सेवन किए विना जे इष्ट कार्य होय, तिनकौं तौ गिनैं नाहीं, अर कोई अनिष्ट होय, ताकौं कहैं, याका सेवन न किया, तातैं अनिष्ट भया। इतना नाहीं विचारै हैं, जो इनहीकै आधीन इष्ट अनिष्ट करना होय, तौ जे पूजैं तिनकै इष्ट होय, न पूजै तिनकै अनिष्ट होय। सो तौ दीसता नाहीं। जैसैं काहूकै शीतलाकौं बहुत माने भी पुत्रादि मरते देखिए है। काहूकै विना माने भी जीवते देखिए है। तातैं शीतलाका मानना किछू कार्यकारी नाहीं। ऐसैं ही सर्व कुदेवनिका मानना किछू कार्यकारी नाहीं। इहां कोऊ कहै—कार्यकारी

नाहीं, तौ मति होहु, तिनके माननेतैं किछू विगार भी होता नाहीं।
ताका उत्तर,—

जो विगार न होय, तौ हम काहेको निषेध करैं। परंतु एक तौ मिथ्यात्वादि दृढ होनेतैं मोक्षका मार्ग दुर्लभ होय जाय है। सो यह बड़ा विगार है। बहुरि इनतैं पापबंध हो है, अर पापबंध होनेतैं आगामी दुःख पाईए है, यहु विगार है। यहां पूछै— मिथ्यात्वादिभाव तौ अतत्त्वश्रद्धानादि भए होय हैं। अर पापबंध खोटे कार्य किए होय है, सो तिनके माननेतैं मिथ्यात्वादि कैसें होय। ताका उत्तर,—

प्रथम तौ परद्रव्यनिकौं इष्ट अनिष्ट मानना ही मिथ्या है। जातैं कोऊ द्रव्य काहूका मित्र शत्रु है नाहीं। बहुरि जो इष्ट अनिष्ट बुद्धि पाईए है, तौ ताका कारण पुण्य पाप है। तातै जैसें पुण्यबंध होय, पापबंध न होय, सो करै। बहुरि जो पुण्यउदयका भी निश्चय न होय, केवल इष्ट अनिष्टके बाह्य कारण तिनके संयोग वा वियोगका उपाय करै। सो तौ कुदेवके माननेतैं इष्ट अनिष्टबुद्धि दूरि होती नाहीं। केवल वृद्धिकौं प्राप्त हो है। बहुरि पुण्यबंध भी नाहीं होता, पापबंध हो है। बहुरि कुदेव काहूकौं धनादिक देते खोसते देखे नाहीं। तातै ए बाह्य कारण भी नाहीं। इनका मानना किस अर्थ कीजिए है जब अत्यंत भ्रमबुद्धि होय, जीवा- दिक तत्त्वनिका श्रद्धान ज्ञानका अंश भी न होय, अर रागद्वेषकी अति तीव्रता होय, तब जे कारण नाहीं तिनकौं भी इष्ट अनि- ष्टका कारण मानै। तब कुदेवनिका मानना हो है। ऐसैं तीव्र

मिथ्यात्वादि भए मोक्षमार्ग अति दुर्लभ हो है। आगैं कुगुरुके श्रद्धानादिककौ निषेधिए है,—

जे जीव विषयकषायादि अधर्म्मरूप तौ परिणमैं अर माना-दिकतैं आपकौं धर्म्मात्मा मनावैं, धर्म्मात्मा योग्य नमस्कारादि क्रिया करावैं, अथवा किंचित् धर्म्मका कोई अंग धारि बड़े धर्म्मात्मा कहावैं, बड़े धर्म्मात्मा योग्य क्रिया करावैं, ऐसैं धर्म्मका आश्रयकरि आपकौं बड़ा मनावैं, ते सर्व कुगुरु जानने। जातैं धर्मपद्धतिविषै तौ विषयकषायादि छूटैं जैसा धर्म्मकौं धारै तैसा ही अपना पद मानना योग्य है। तहां कोई तौ कुलकरि आपकौं गुरु मानै है। तिनविषै केई ब्राह्मणादिक तौ कहै हैं, हमारा कुल ही ऊंचा है, तातैं हम सर्व कुलके गुरु हैं सो उस कुलकी उच्चता तौ धर्म्म-साधनतैं है। जो उच्चकुलविषै उपजि हीन आचरण करै, तौ वाकौं उच्च कैसैं मानिए। जो कुलविषै उपजनेहीतैं उच्चपना रहै, तौ मांसाभक्षणादि किए भी वाकौं उच्च ही मानौ। सो बनै नाहीं भारतविषै भी अनेक प्रकार ब्राह्मण कहे हैं तहां "जो ब्राह्मण होय चांडालकार्य करै, ताकौं चांडालब्राह्मण कहिए" ऐसा कह्या है। सो कुलहीतैं उच्चपना होय, तौ ऐसी हीनसंज्ञा काहेकौं दई है। बहुरि वैष्णवशास्त्रनिविषै ऐसा भी कहै हैं—वेदव्यासादिक मछली आदिकतै उपजे तहां कुलका अनुक्रम कैसैं रह्या। बहुरि मूलउत्पत्ति तौ ब्रह्मातैं कहै हैं। तातैं सर्वका एक कुल है। भिन्न-कुल कैसैं रह्या। बहुरि उच्चकुलकी स्त्रीकै नीचकुलके पुरुषतैं अर नीचकुलकी स्त्रीकै उच्चकुलके पुरुषतैं संगम होतैं संतति होती

देखिए है। तहां कुलका प्रमाण कैसैं रह्या। जो कदाचित् कहौगे, ऐसैं है, तौ उच्च नीचकुलका विभाग काहेकौं मानौ हो। सो लौकिक कार्यविषै तौ असत्य भी प्रवर्त्ति संभवै, धर्म्मकार्यविषै तौ असत्यता संभवै नाहीं। तातैं धर्म्मपद्धतिविषै कुलअपेक्षा महंतपना नाहीं संभवै है। धर्म्मसाधनहीतैं महंतपना होय। ब्राह्मणादि कुलनिविषै महंतता है, सो धर्म्म प्रवृत्तितै है सो धर्म्मकी प्रवृत्तिकौ छोरि हिंसादिक पापप्रवृत्तिविषै प्रवर्त्तै महंतपना कैसै रहै बहुरि केई कहै हैं—जो हमारे बड़े भक्त भए है। वा सिद्ध भए हैं, वा धर्म्मात्मा भए हैं। हम उनकी संततिविषै है, तातै हम गुरु है। सो उन बड़निके बड़े तौ ऐसे थे नाहीं। तिनकी संततिविषै उत्तमकार्य किए उत्तम मानौ हौ, तौ उत्तमपुरुषकी संततिविषै जो उत्तमकार्य न करै, ताकौ उत्तम काहेकौ मानो हौ। बहुरि शास्त्रनिविषै वा लोकविषै यह प्रसिद्धि है। पिता शुद्ध कार्यकरि उच्चपदकौं पावै, पुत्र अशुभकार्यकरि नीचपदकौ पावै, वा पिता अशुभकार्यकरि नीचपदकौ पावै, पुत्र शुभकार्यकरि उच्चपदकौ पावै। तातै बड़ेनिकी अपेक्षा महंत मानना योग्य नाहीं ऐसै कुलकरि गुरुपना मानना मिथ्याभाव जानना। बहुरि केई पट्टकरि गुरुपनौं मानै है। सो कोई पूर्वैं महंतपुरुष भया होय, ताकै पाटि जे शिष्य प्रतिशिष्य होते आए, तहां तिनविषै तिस महंतपुरुषकैसे गुण न होंय, तौ भी गुरुपनौं मानिए, सो ऐसै ही होय तौ उस पाटविषै कोई परस्त्रीगमनादि महापापकार्य करैगा, सो भी धर्मात्मा होगा, सुगतिकौ प्राप्त होगा, सो संभवै नाहीं। अर वह महापापी है, सो तौ

पाटका अधिकार कहां रह्या। जो गुरुपदयोग्य कार्य करैं, सो ही गुरु है। बहुरि केई पहलैं तौ स्त्री आदिके त्यागी थे, पीछै भ्रष्ट होय विवाहादि कार्यकरि गृहस्थ भए, तिनकी संतति आपकौं गुरु मानै है। सो भ्रष्ट भए पीछै गुरुपना कैसैं रह्या। अर गृहस्थवत् ए भी भए। इतना विशेष भया, जो ए भ्रष्ट होय गृहस्थ भए। इनिकौं मूल गृहस्थधर्मी गुरु कैसैं मानै। बहुरि केई अन्य तौ सर्व पापकार्य करैं, एक स्त्री परणै नाहीं, इस ही अंगकरि गुरुपनो मानैं हैं। सो एक अब्रह्म ही तौ पाप नाहीं, हिंसा परिग्रहादिक भी पाप हैं, तिनकौं करते धर्म्मात्मा गुरु कैसैं मानिए। बहुरि वह धर्म्मबुद्धितैं विवाहादिकका त्यागी नाहीं भया है। कोई आजीविका वा लज्जाआदि प्रयोजनकौं लिए विवाह न करै है। जो धर्म्मबुद्धि होती, तौ हिंसादिककौं काहेकौं बधावता। बहुरि जाकै धर्मबुद्धि नाहीं, ताकै शीलकी भी दृढता रहै नाहीं। अर विवाह करै नाहीं तब परस्त्रीगमनादि महापापकौं उपजावै। ऐसी क्रिया होतैं गुरुपना मानना महाभ्रमबुद्धि है। बहुरि केई काहूप्रकारका भेषधारनेतैं गुरुपनौ मानैं है। सो भेष धारे कौन धर्म्म भया, जातैं धर्म्मात्मा गुरु मानै। तहां केई टोपी दे हैं, केई गूदरी राखै हैं, केई चोला पहरै हैं, केई चादरि ओढ़ै हैं, केई लालवस्त्र राखै हैं, केई स्वेतवस्त्र राखै हैं, केई भगवां राखै हैं, केई टाट पहरै हैं, केई मृगछाला पहरै हैं, केई राख लगावै हैं, इत्यादि केई स्वांग बनावै हैं। सो जो शीत उष्णादिक सहे न जाते थे, लज्जा न छुटै थी, तौ पाग, जामा इत्यादि प्रवृत्तिरूप वस्त्रादिकका त्याग काहेकौं किया

गृहस्थनिकौं ठिगनेकै अर्थ ऐसे भेष जानने । जो गृहस्थसारिसा अपने स्वांग राखै, तौ गृहस्थ कैसैं ठिगावै । अर इनकौ उनकरि आजीविका वा धनादिकका वा मानादिकका प्रयोजन साधना, तातैं तैसा स्वांग बनावै है । जगत भोला तिस स्वांगकौ देखि ठिगावै, अर धर्म्म भया मानै, सो यह भ्रम है । सोई कह्या है—

जह कुवि वेसारत्तो मुसिज्जमाणो विमण्णए हरिसं ।
तह मिच्छवेसमुहिया गयं पि ण मुणंति धम्मणिहिं ॥ १ ॥

याका अर्थ--जैसैं कोई वेश्यासक्त पुरुष धनादिककौं मुसावता हुवा भी हर्ष मानै है, तैसैं मिथ्याभेषकरि ठिगे गए जीव ते नष्ट होता धर्म्म धनकौ नाहीं जानै है । भावार्थ, यह मिथ्याभेष वाले जीवनिकी शुश्रूषा आदितै अपना धर्म्म धन नष्ट होय, ताका विषाद नाहीं, मिथ्याबुद्धितैं हर्ष करै है । तहां केई तौ मिथ्या शास्त्रनिविषै भेष निरूपण किए हैं, तिनकौ धारै है । सो उन शास्त्रनिका करणहारा पापी सुगमक्रियातै उच्चपद प्ररूपणतै मेरी मानि हो है, वा अन्य जीव इस मार्गविषै बहुत लागै, इस अभिप्रायतै मिथ्याउपदेश दिया । ताकी परंपराकरि विचाररहित जे जीव ते इतना तौ विचारै नाहीं, जो सुगमक्रियातै उच्चपद होना बतावै हैं, सो यहां किछू दगा है । अर भ्रमकरि तिनका कह्या मार्गविषै प्रवर्त्तै है । बहुरि केई शास्त्रनिविषै तौ मार्ग कठिन निरूपण किया, सो तौ सधै नाहीं, अर अपना ऊंच नाम धराए विना लोक मानै नाहीं, इस अभिप्रायतै यति मुनि आचार्य उपा-

ध्याय साधु भट्टारक सन्यासी योगी तपस्वी नग्न इत्यादि नाम तौ ऊंचा धरावैं हैं, अर इनिका आचरनिकौं नाहीं साधि सकैं हैं, तातैं इच्छाअनुसार नानाभेष बनावै हैं। बहुरि केई अपनी इच्छा अनुसार ही तौ नवीन नाम धरावै हैं, अर इच्छाअनुसार ही भेष बनावै है। ऐसैं अनेक भेष धारनेतैं गुरुपनो मानै है, सो यह मिथ्या है। इहां कोऊ पूछै—भेष तौ बहुत प्रकारके दीसैं, तिन-विषै सांचे झूठे भेषकी कैसैं पहचान होय। ताका समाधान,—

जिस भेषनिविषै विषयकषायका किछू लगाव नाहीं, ते भेष सांचे है। सो सांचे भेष तीन प्रकार हैं, अन्य सर्व भेष मिथ्या हैं। सो ही षट्पाहुड़विषै कुंदकुंदाचार्यकरि कह्या है—

एगं जिणस्स रूवं विदियं उक्किट्ठ सावयाणं तु।
अवरट्ठियाण तिदयं चउछं पुण लिंग दंसेण णत्थि॥ १॥

याका अर्थ—एक तौ जिनका स्वरूप निर्ग्रंथ दिगंबर मुनिलिंग, अर दूसरा उत्कृष्ट श्रावकनिका रूप दसईं ग्यारईं प्रतिमाका धारक श्रावकका लिंग, अर तीसरा आर्यिकानिका रूप यह स्त्रीनिका लिंग ऐसैं ए तीन लिंग तौ श्रद्धानपूर्वक हैं। बहुरि चौथा लिंग सम्यग्दर्शनस्वरूप नाहीं है। भावार्थ, यह इन तीनलिंग विना अन्य लिंगकौं मानै, सो श्रद्धानी नाहीं, मिथ्यादृष्टी है। बहुरि इन भेष-निविषै केई भेषी अपने भेषकी प्रतीति करावनेके अर्थि किंचित् धर्म्मका अंगकौं भी पालै हैं। जैसैं खोटा रुपैया चलावनेवाला तिसविषै किछू रूपाका भी अंश राखै है, तैसैं धर्म्मका कोऊ-अंग दिखाय अपना उच्चपद मनावै हैं। इहां कोऊ कहै—धर्म्म

साधन किया, ताका तौ फल होगा। ताका उत्तर—

जैसैं उपवासका नाम धराय कणमात्रका भी भक्षण करै, तौ पापी है। अर एकंतका (एकासनका) नाम धराय किंचित् ऊन भोजन करै, तौ भी धर्म्मात्मा है। तैसै उच्चपदवीका नाम धराय तामैं किंचित् भी अन्यथा प्रवर्त्तै, तौ महापापी है। अर नीची-पदवीका नाम धराय, किछू भी धर्म्म साधन करै, तौ धर्म्मात्मा है। तातै धर्म्मसाधन तौ जेता बनै, तेता कीजिए। यामैं किछू दोष नाहीं। परंतु ऊंचा धर्म्मात्मा नाम धराय नीची क्रिया किए महापापी ही हो है। सोई षट्पाहुड़विषै कुंदकुंदाचार्यकरि कह्या है—

जह जायरूवसरिसो तिलतुसमित्तं ण गहदि अत्थेसु।
जइ लेइ अप्प बहुलय तत्तो पुण जाइ णिग्गोयं॥ १॥

याका अर्थ—मुनिपद है, सो यथाजातरूप सदृश है। जैसा जन्म होतै था, तैसा नग्न है। सो वह मुनि अर्थ जे धन वस्त्रादिक वस्तु तिनविषै तिलतुषमात्र भी ग्रहण न करै। बहुरि कदाचित् अल्प वा बहुत्व ग्रहै, तौ तिसतैं निगोद जाय। सो देखो, गृहस्थपनेमैं बहुत परिग्रह राखि किछू प्रमाण करै, तौ भी स्वर्गमोक्षका अधिकारी हो है अर मुनिपनेमैं किंचित् परिग्रह अंगीकार किए भी निगोद जानेवाला हो है। तातै ऊंचा नाम धराय नीची प्रवृत्ति युक्त नाहीं। देखो, हुंडावसर्पिणी कालविषै यह कलिकाल प्रवर्त्तै है। ताका दोषकरि जिनमतविषै भी मुनिका स्वरूप तौ ऐसा जैसा बाह्य अभ्यंतर परिग्रहका लगाव

नाहीं, केवल अपने आत्माकौं आपो अनुभवते शुभाशुभभावनितैं उदासीन हो है। अर अब विषय कषायासक्त जीव मुनिपद धारैं, तहां सर्वसावद्यका त्यागी होय पंच महाव्रतादि अंगीकार करैं। बहुरि स्वेत रक्तादि वस्त्रनिकौ ग्रहै, वा भोजनादिविषै लोलुपी होंय, वा अपनी अपनी पद्धति बधावनेकौं उद्यमी होंय, वा केई धनादिक भी राखैं, वा हिंसादिक करैं, नाना आरंभ करैं। सो स्तोकपरिग्रह ग्रहणेका फल निगोद कह्या है, तौ ऐसे पापनिका फल तौ अनंतसंसार होय ही होय। बहुरि लोकनिकी अज्ञानता देखो, कोई एक छोटी प्रतिज्ञा भंग करै. ताकौं तौ पापी कहैं अर ऐसी बड़ी प्रतिज्ञा भंग करते देखै, तिनकौं गुरु मानै, मुनिवत् तिनका सन्मानादि करैं। सो शास्त्रविषै कृतकारित अनुमोदनाका फल कह्या है। तातै वैसा ही फल इनकौं भी लागै है। मुनिपद लेनेका तौ क्रम यह है–पहलें तत्त्वज्ञान होय, पीछैं उदासीन परिणाम होय, परिषहादि सहनेकी शक्ति होय, तब वह स्वयमेव मुनि भया चाहै। तब श्रीगुरु मुनिधर्म्म अंगीकार करावैं। यह कौन विपरीत जे तत्त्वज्ञानरहित विषय-कषायासक्त जीव तिनकौं मायाकरि वा लोभ दिखाय मुनिपद देना, पीछैं अन्यथा प्रवृत्ति करावनी, सो यह बड़ा अन्याय है। ऐसैं कुगुरुका वा तिनके सेवनका निषेध किया। अब इस कथनके दृढ़करनेकौं शास्त्रनिकी साक्षी दीजिए है। तहां उपदेश-सिद्धांतरत्नमालाविषै ऐसा कह्या है,—

गुरुणो भट्टा जाया सद्दे थुणिऊणलिंति दाणाइं ।
दोण्णवि अमुणिअसारा दूसमिसमयम्मि वुड्ढंति ॥ १ ॥

कालदोषतैं गुरु जे हैं ते भाट भए । भाटवत् शब्दकरि दातारकी स्तुतिकरिकैं दानादि ग्रहै है । सो इस दुखमा कालविषै दातार वा पात्र दोऊ ही संसारविषै डूबै है । बहुरि तहां कह्या है,--

सप्पे दिट्ठे णासइ लोओ णहि कोवि किंपि अक्खेई ।
जो चयइ कुगुरु सप्पं हा मूढा भणइ तं दुट्ठं ॥ २ ॥

सर्पकों देखि कोई भागै, ताकौं तौ लोक किछू भी कहै नाहीं । हाय हाय देखो, जो कुगुरुसर्पकौं छोरै, ताहि मूढ दुष्ट कहैं बुरा बोलैं ।

सप्पो इक्कं मरणं कुगुरु अणंताइ देइ मरणाइं ।
तो वर सप्पं गहियं मा कुगुरुसेवणं भद्द ॥ १ ॥

अहो सर्पकरि तौ एक ही बार मरण होय अर कुगुरु अनंत-मरण दे है, अनंतबार जन्म मरण करावै है । तातैं हे भद्र सांपका ग्रहण तो भला अर कुगुरुका ग्रहण भला नाहीं । बहुरि संघपट्टविषै ऐसा कह्या है-

क्षुत्क्षामः किल कोपि रंकशिशुकः प्रव्रज्य चैत्ये क्वचित्
कृत्वा किंच न पक्षमक्षतकलिः प्राप्तस्तदाचार्यकम् ।
चित्रं चैत्यगृहे गृहीयति निजे गच्छे कुटुम्बीयति
स्वं शक्रीयति बालिशीयति बुधान् विश्वं वराकीयति ॥

याका अर्थ--देखो क्षुधाकरि कृश कोई रंकका बालक सो कहीं चैत्यालयादिविषै दीक्षा धारि कोई पक्षकरि पापरहित न

होतासंता आचार्यपदकौं प्राप्त भया। बहुरि वह चैत्यालयविषै अपने गृहवत् प्रवर्तै है, निजगच्छविषै कुटुंबवत् प्रवर्तै है, आपकौं इंद्रवत् महान् मानै है, ज्ञानीनिकौं बालकवत् अज्ञानी मानै है, सर्वगृहस्थनिकौं रंकवत् मानै है। सो यह बड़ा आश्चर्य भया है। बहुरि **'यैर्जातो न च वर्द्धितो न च न च क्रीतो'** इत्यादि काव्य है। जिनकरि जन्म भया नाहीं, बध्या नाहीं, मोल लिया नाहीं, देणदार भया नाहीं, इत्यादि कोई प्रकार संबंध नाहीं, अर गृहस्थनिकौं वृषभवत् बहावै जोरावरी दानादिक ले, सो हाय हाय यह जगत् राजाकरि रहित है। कोई न्याय पूछनेवाला नाहीं। यहां कोऊ कहै, ए तौ श्वेतांबरविरचित उपदेश है तिनकी साक्षी काहेकौं दई। ताका उत्तर—

जैसैं नीचापुरुष जाका निषेध करै, ताका उत्तमपुरुषकै तौ सहज ही निषेध किया। तैसैं जिनकै वस्त्रादि उपकरण कहे, वे हू जाकरि निषेध करैं, तौ दिगंबरधर्म्मविषै तौ ऐसी विपरीतिका सहज ही निषेध भया। बहुरि दिगंबरग्रंथनिविषै भी इस श्रद्धानके पोषक वचन हैं। तहां श्रीकुंदकुंदाचार्य षट्पाहुड़विषै (दर्शन-पाहुडमें) ऐसा कह्या है,—

दंसणमूलो धम्मो उवइट्ठं जिणवरेहिं सिरसाणं।
तं सोऊण सकण्णे दंसणहीणो ण वंदिव्वो ॥ २ ॥

जिनवरकरि सम्यग्दर्शन है मूल जाका ऐसा धर्म्म उपदेश्या है। ताकौं सुनकरि हे कर्णसहित हो, यह मानौ—सम्यक्त्वरहित जीव वंदनेयोग्य नाहीं। जे आप कुगुरु ते कुगुरुका श्रद्धानसहित

सम्यक्ती कैसै होंय। विना सम्यक्त अन्य धर्म्म भी न होय। धर्म्म विना वंदनेयोग्य कैसै होंय। बहुरि कहै है, —

जे दंसणेसु भट्ठा णाणे भट्ठा चरित्तभट्ठाय।
एदे भट्टाविभट्टा सेसंपि जणं विणासंति ॥ ८॥

जे दर्शनविषै भ्रष्ट हैं, ज्ञानविषै भ्रष्ट हैं, चारित्रभ्रष्ट हैं, ते जीव भ्रष्टतै भ्रष्ट है। और भी जीव जो उनका उपदेश मानै है, तिनि जीवनिका नाश करै है—बुरा करै है बहुरि कहै है,---

जे दंसणेसु भट्ठा पाए पाडंति दंसणधराणं।
ते हुंति लुल्लमूया बोही पुण दुल्लहा तेसिं ॥ १२ ॥

ज आप तौ सम्यक्तै भ्रष्ट है, अर सम्यक्तधारकनिकौ अपने पगां पड़ाया चाहै है, ते लूले गूंगे हो है वा स्थावर हो है। बहुरि तिनकै बोधकी प्राप्ति महादुर्लभ हो है।

जेवि पडंति च तेसिं जाणंता लज्जगारवभएण।
तेसिंपि णात्थि बोही पावं अणुमोयमाणाणं ॥ १३ ॥

जो जाणता हुवा भी लज्जागारव भयकरि तिनिकै पगां पड़ै है, तिनकै भी बोधी जो सम्यक्त सो नाहीं है। कैसे है ए जीव, पापकी अनुमोदना करते है। पापीनिका सन्मानादि किए तिस पापकी अनुमोदनाका फल लागै है। बहुरि (सूत्रपाहुड़में) कहै है—

जस्स परिग्गहग्गहणं अप्पं बहुयं च हवइ लिंगस्स।
सो गरहिउ जिणवयणे परिगहरहिओ णिरायारो ॥ १९ ॥

जिस लिंगकै थोरा वा बहुत परिग्रहका अंगीकार होय,

सो जिनवचनविषै निंदायोग्य है। परिग्रहरहित ही अनगार हो है। बहुरि (भावपाहुड़में) कहै हैं—

धम्मम्मि णिप्पिवासो दोसावासो य इक्खुफुल्लसमो।
णिप्फलणिग्गुणयारो णडसवणो णग्गरूवेण॥ ७१॥

जो धर्म्मविषै निरुद्यमी है दोषनिका घर है, इक्षुफूल समान निष्फल है, गुणका आचरणकरि रहित है, सो नग्नरूपकरि नट श्रमण है। भांडवत् भेषधारी है। सो नग्न भए भांडका दृष्टांत संभवै है। परिग्रह राखै तौ यह भी दृष्टांत बनै नाहीं।

बहुरिमोक्षपाहुड़में कहा है—

जे पावमोहियमई लिंगं घत्तूण जिणवरिंदाणं।
पावं कुणंति पावा ते चत्ता मोक्खमग्गम्मि॥ ७८॥

पापकरि मोहित भई है बुद्धि जिनकी ऐसे जे जीव जिनवरिनिका लिंग धारि पाप करै हैं, ते पापमूर्ति मोक्षमार्गविषै भ्रष्ट जानने। बहुरि ऐसा कह्या है——

जे पंचचेलसत्ता गंथग्गाहीय जायणासीला।
आधाकम्मम्मिरया ते चत्ता मोक्खमग्गम्मि॥ ७८॥

जे पंचप्रकार वस्त्रविषै आसक्त हैं. परिग्रहके ग्रहणहारे हैं, याचनासहित हैं, अधःकर्म्म आदि दोषनिविषै रत हैं, ते मोक्षमार्गविषै भ्रष्ट जानने। बहुरि कुंदकुंदाचार्य कृतलिंगपाहुड़ है ताविषै मुनिलिंगधारि जो हिंसा आरंभ यंत्रमंत्रादि करै हैं, ताका निषेध बहुत किया है। बहुरि गुणभद्राचार्यकृत आत्मानुशासनविषै ऐसा कह्या है,———

इतस्ततश्च त्रस्यन्तो विभावर्य्यां यथा मृगाः
वनाद्वसन्त्युपग्रामं कलौ कष्टं तपस्विनः ॥ १९७ ॥

कलिकालविषै तपस्वी मृगवत् इधर उधरतैं भयवान् होय वनतैं नगरकै समीप वसै हैं, यह महाखेदकारी कार्य भया है। यहां नगरसमीप ही रहना निषध्या, तौ नगरविषै रहना तौ निसिद्ध भया ही।

वरं गार्हस्थ्यमेवाद्य तपसो भाविजन्मनः।
सुस्त्रीकटाक्षलुण्टाकलुप्तवैराग्यसम्पदः ॥ २०० ॥

अबार होनहार है अनंतसंसार जातैं ऐसे तपतै गृहस्थपना ही भला है। कैसा है वह तप प्रभात ही स्त्रीनिके कटाक्षरूपी लुटेरेनिकरि लूटी है वैराग्य संपदा जाकी ऐसा है बहुरि योगीन्द्रदेवकृत परमात्मप्रकाशविषै ऐसा कह्या है—

दोहा।

चिल्ला चिल्ली पुत्थयहिं, तूसइ मूढ णिभंतु।
एयहिं लज्जइ णाणियउ बंधहहेउ मुणंतु ॥ २१४ ॥

चेला चेली पुस्तकनिकरि मूढ संतुष्ट हो हैं। भ्रांतिरहित ऐसैं ही है। बहुरि ज्ञानी इनकौ बंधका कारण जानता संता इनकरि लज्जायमान हो है।

केणवि अप्पा वंचियउ, सिर लुंचिवि छारेण।
सयलवि संग ण परिहरिय, जिणवरलिंगधरेण ॥ २१६ ॥

किसी जीवकरि अपना आतमा ठिग्या। सो कौन, जिह जीव जिनवरका लिंग धार्‍या अर राखकरि माथाका लोंचकरि समस्त

परिग्रह छांड्या नाहीं ।

जे जिणलिंग धरेवि मुणि इट्ठपरिग्गह लिंति ।
छद्दिकरेवि णु तेवि जिय, सो छद्दि गिलंति ॥२१७॥

हे जीव! जे मुनि लिंगधारि इष्टपरिग्रहकौं ग्रहै हैं ते छर्दि करि तिस ही छर्दिकूं बहुरि भखै हैं । भावार्थ—यह निंदनीय है । इत्यादि तहां कहे हैं ऐसें शास्त्रनिविषै कुगुरुका वा तिनके आचरनका वा तिनकी सुश्रूषाका निषेध किया है, सो जानना । बहुरि जहां मुनिकै धात्रीदूतआदि छीयालीस दोष- आहारादिविषै कहे हैं, तहां गृहस्थनिके बालकनिकौ प्रसन्न करना, समाचार कहना, मंत्र औषधि ज्योतिषादि कार्य बतावना इत्यादि, बहुरि किया कराया अनुमोद्या भोजन लेना इत्यादि क्रियाका निषेध किया है । सो अब कालदोषतैं इनही दोषनिकौं लगाय आहारादि ग्रहै हैं । बहुरि पार्श्वस्थ कुशीलादि भ्रष्टाचारी मुनिनिका निषेध किया है, तिनहीका लक्षणनिकौं धरै हैं । इतना विशेष—वै द्रव्यां तौ नग्न रहै हैं, ए नानापरिग्रह राखै हैं । बहुरि तहां मुनिनिकै भ्रमरी आदि आहार लेनेकी विधि कही है । ए आसक्त होय दातारके प्राण पीड़ि आहारादि ग्रहै हैं । बहुरि गृहस्थधर्म्मविषै भी उचित नाहीं वा अन्याय लोकनिंद्य पापरूप कार्य तिनकूं करते देखिए है । बहुरि जिनविम्ब शास्त्रादिक सर्वोत्कृष्ट पूज्य तिनका तौ अविनय करै हैं । बहुरि आप तिनतैं भी महंतता राखि ऊंचा बैठना आदि प्रवृत्तिको धारै हैं इत्यादि अनेक विपरीतिता प्रत्यक्ष भासै अर आपकौं मुनि मानैं, मूलगुणादिकके धारक कहावैं । ऐसें

ही अपनी महिमा करावैं। बहुरि गृहस्थ भोले उनकरि प्रशंसादिककरि ठिगे हुए धर्म्मका विचार करै नाहीं। उनकी भक्तिविषै तत्पर हो है। सो वड़े पापकौं बड़ा धर्म्म मानना, इस मिथ्यात्वका फल कैसैं अनंतसंसार न होय। एक जिनवचनकौं अन्यथा माने महापापी होना, शास्त्रविषै कह्या है। यहां तौ जिनवचनकी किछू वात राखी ही नाहीं। इस समान और पाप कौन है। अब यहां कुयुक्तिकरि जे तिन कुगुरुनिका स्थापन करै हैं, तिनका निराकरण कीजिए है। तहां वह कहै है,—गुरुविना तौ निगुरा होय, अर वैसे गुरु अवार दीसै नाहीं। तातैं इनहीकौ गुरु मानना। ताका उत्तर—

निगुरा तौ वाका नाम है, जो गुरु मानै ही नाहीं। बहुरि जो गुरुकौं तौ मानै अर इस क्षेत्रविषै गुरुका लक्षण न देखि काहूकौ गुरु न मानै, तौ इस श्रद्धानतै तौ निगुरा होता नाहीं। जैसैं नास्तिक्य तौ वाका नाम है, जो परमेश्वरकौं मानै ही नाहीं। बहुरि जो परमेश्वरकौ तौ मानै अर इस क्षेत्रविषै परमेश्वरका लक्षण न देखि काहूकौं परमेश्वर न मानै, तौ नास्तिक्य होता नाहीं तैसैं ही यह जानना। बहुरि वह कहै है, जैनशास्त्रनिविषै अबार केवलीका तौ अभाव कह्या है, मुनिका तौ अभाव कह्या नाहीं। ताका उत्तर,—

ऐसा तौ कह्या नाहीं, इन देशनिविषै सद्भाव रहैगा। भरत क्षेत्रविषै कहै हैं, सो भरतक्षेत्र तो बहुत बड़ा है। कहीं सद्भाव होगा, तातै अभाव न कह्या है। जो तुम रहो हो, तिसही

क्षेत्रविषै सद्भाव मानौगे, तौ जहां ऐसे भी मुनि न पावौगे, तहां जावौगे तब किसकौं गुरु मानौंगे, । जैसैं हंसनिका सद्भाव अबार कह्या है अर हंस दीसते नाहीं, तौ और पक्षीनिकौं तौ हंसपना मान्या जाता नाहीं । तैसैं मुनिनिका सद्भाव अबार कह्या है । अर मुनि दीसते नाहीं, तौ औरनिकौं तो मुनि मान्या जाय नहीं । बहुरि वह कहै है, एक अक्षरका दाताकौं गुरु मानै हैं । जे शास्त्र सिखावैं वा सुनावैं, तिनकौं गुरु कैसैं न मानिए, ताका उत्तर—

गुरु नाम बड़ेका है । सो जिस प्रकारकी महंतता जाकै संभवै, तिस प्रकार ताकौं गुरुसंज्ञा संभवै । जैसैं कुलअपेक्षा मातापिताकौं गुरुसंज्ञा है, तैसैं ही विद्या पढ़ावनेवालेकौं विद्याअपेक्षा गुरुसंज्ञा है । यहां तौ धर्मका अधिकार है । तातैं जाकै धर्मअपेक्षा महंतता संभवै, सो ही गुरु जानना । सो धर्म नाम चारित्रका हैं । **चारित्तं खलु धम्मो,** ऐसा शास्त्रविषै कह्या है । तातैं चारित्रका धारकहीकौं गुरुसंज्ञा है । बहुरि जैसैं भूतादिकका नाम भी देव है, तथापि यहां देवका श्रद्धानविषै अरहंतदेवहीका ग्रहण है । तैसैं औरनिका भी नाम गुरु है, तथापि श्रद्धानविषै निर्ग्रंथहीका ग्रहण है । सो जिनधर्मविषै अरहंत देव निरग्रंथ गुरु ऐसा प्रसिद्धवचन है । यहां प्रश्न—जो निरग्रंथविना और गुरु न मानिए, सो कारण कहा । ताका उत्तर—

निर्ग्रंथविना अन्य जीव सर्वप्रकरि महंतता नाहीं धारै हैं । जैसैं लोभी शास्त्रव्याख्यान करै, तहां वह वाकौं शास्त्र सुनावनेंतैं महंत भया । वह वाकौं धनवस्त्रादि देनेंतैं महंत भया । यद्यपि

बाह्य शास्त्र सुनावनेवाला महंत रहै, तथापि अंतरंग लोभी होय, सो दाताकौ उच्च मानै। अर दातार लोभीकौ नीचा मानै, तातैं वाकै सर्वथा महंतता न भई। यहां कोऊ कहै निर्ग्रंथ भी तौ आहार ले हैं ताका उत्तर—

लोभी होय दातारकी सुश्रूषाकरि दीनतातैं आहार न ले है। तातैं महंतता घटै नाहीं। जो लोभी होय, सो हीनता पावै है ऐसैं ही अन्य जीव जानने। तातैं निर्ग्रंथ ही सर्वप्रकार महंतता-युक्त है। बहुरि निर्ग्रंथविना अन्य जीव सर्वप्रकार गुणवान् नाहीं। तातैं गुणनिकी अपेक्षा महंतता अर दोषनिकी अपेक्षा हीनता भासै, तब निःशंक स्तुति करी जाय नाहीं। बहुरि निर्ग्रं-थविना अन्य जीव जैसा धर्म्म साधन करैं तैसा वा तिसैंत अधिक गृहस्थ भी धर्म्मसाधन करि सकै। तहां गुरुसंज्ञा किसकौं होय। तातैं वाह्यअभ्यतरपरिग्रहरहित निर्ग्रंथमुनि हैं, सो ही गुरु हैं। यहां कोऊ कहै, ऐसे गुरु तौ अबार यहां नाहीं, तातैं जैसैं अर-हंतकी स्थापना प्रतिमा है, तैसैं गुरुनिकी स्थापना ए भेषधारी हैं—ताका उत्तर—

जैसैं राजाकी स्थापना चित्रमादिककरि किए तौ प्रतिपक्षी नाहीं। अर कोई सामान्य मनुष्य आपकौं राजा मनावै, तौ तिसका प्रतिपक्षी हो है। तैसै अरहंतादिककी पाषाणादिविषै स्थापना बनावैं, तौ तिनका प्रतिपक्षी नाहीं अर कोई सामान्य मनुष्य आपकौ मुनि मनावै, तौ वह मुनिनिका प्रतिपक्षी भया। ऐसैं ही स्थापना होती होय, तौ अरंहत भी आपकौं मनावो।

बहुरि उनकी स्थापना होय, तौ बाह्य तौ ऐसैं ही भए चाहिए। वै निर्ग्रंथ ए बहुतपरिग्रहके धारी, यह कैसैं बनैं। बहुरि कोई कहै—अब श्रावक भी तौ जैसे संभवै तैसे नाहीं। तातैं जैसे श्रावक तैसे मुनि ताका उत्तर—

श्रावकसंज्ञा तौ शास्त्रविषै सर्वगृहस्थ जैनीकौं है। श्रेणिक भी असंयमी था, ताकौं उत्तरपुराणविषै श्रावकोत्तम कह्या। बारह-सभाविषै श्रावक कहे, तहां सर्व व्रतधारी न थे। जो सर्वव्रतधारी होते, तौ असंयत मनुष्यनिकी जुदी संख्या कहते, सो कही नाहीं। तातैं गृहस्थ जैनी श्रावक नाम पावै हैं। अर मुनिसंज्ञा तौ निर्ग्रंथ विना कहीं कही नाहीं। बहुरि श्रावककै तौ आठ मूलगुण कहें हैं। सो मद्य मांस मधु पंचउदंबरादि फलनिका भक्षण श्रावकनिकै है नाहीं, तातैं काहू प्रकारकरि श्रावकपना तौ संभवै भी है। अर मुनिकै अट्ठाईस मूलगुण है, सो भषीनिकै दीसते ही नाहीं। तातैं मुनिपनौ काहूप्रकारकरि संभवै नाहीं। बहुरि गृहस्थअवस्थाविषै तौ पूर्वैं जंबूकुमारादिक बहुत हिंसादिककार्य किए सुनिए है। मुनि होयकरि तौ काहूने हिंसादिक कार्य किए नाहीं, परिग्रह राखे नाहीं, तातै ऐसी युक्ति कारिजकारी नाहीं बहुरि देखो, आदि-नाथजीके साथ च्यारि हजार राजा दीक्षा लेय बहुरि भ्रष्ट भए, तब देव उनकौ कहते भए, जिनलिंगी होय अन्यथा प्रवर्त्तौंगे तौ हम दंड देंगे। जिनलिंग छोरि तुम्हारी इच्छा होय, सो ही करो। तातैं जिनलिंगी कहाय अन्यथा प्रवर्त्तैं, तौ दंड योग्य है। बंदना-दियोग्य कैसैं होय। अब बहुत कहा कहिए, जे जिनमतविषै

कुभेष धारै है, ते महापाप उपजावै हैं। अन्य जीव उनकी सुश्रूषा आदि करै हैं ते भी पापी हो हैं। पद्मपुराणविषै यह कथा है--जो श्रेष्ठी धर्म्मात्मा चारण मुनिनिकैं भ्रमतै भ्रष्ट जानि आहार न दिया, तौ प्रत्यक्ष भ्रष्ट तिनकौ दानादिक देना कैसै संभवै। यहां कोऊ कहै, हमारै अंतरंगविषै श्रद्धान तौ सत्य है, परंतु बाह्य लज्जादिकरि शिष्टाचार करै है, सो फल तौ अंतरंगका होगा, ताका उत्तर--

षट्पाहुडविषै लज्जादिकरि वंदनादिकका निषेध दिखाया था, सो पूर्वै ही कह्या था। बहुरि कोऊ जोरावरी मस्तक नमाय हाथ जुड़ावै, तब तौ यह संभवै, जो हमारा अंतरंग न था। अर आपही मानादिकतै नमस्कारादि करै. तहां अंतरंग कैसैं न कहिए। जैसे कोई अंतरंगविषै तौ मासकौ बुरा जानै अर राजादिकका भला मनावनेकौ मांस भक्षण करै, तौ वाकौ व्रती कैसै मानिए। तैसै अंतरंगविषै तौ कुगुरुसेवनकौं बुरा जानै अर तिनका वा लोकनिका भला मनावनेकौ सेवन करै, ते श्रद्धानी कैसैं कहिए। तातै बाह्य किए ही अंतरंग त्याग संभवै है। तातै जे श्रद्धानी जीव है, तिनकौ काहूप्रकारकरि भी कुगुरुनिकी सुश्रूषाआदि करनी योग्य नाहीं। याप्रकार कुगुरुसेवनका निषेध किया। यहां कोऊ कहै--काहू तत्त्वश्रद्धानीकौं कुगुरुसेवनतै मिथ्यात्व कैसै भया। ताका उत्तर---

जैसैं शीलवती स्त्री परपुरुषसहित भर्तारवत् रमणक्रिया सर्वथा करै नाहीं, तैसैं तत्वश्रद्धानी पुरुष कुगुरुसहित सुगुरुवत् नमस्का-

रादिक्रिया सर्वथा करै नाहीं । काहेतैं, यह तौ जीवादितत्व निका श्रद्धानी भया है। तहां रागादिककौं निषिद्ध श्रद्दहै है, वीतरागभाव श्रेष्ठ मानैं है, तातैं तिनकै वीतरागता पाईए। वैसे ही गुरुकौं उत्तम जानि नमस्कारादि करै हैं। जिनकै रागादिक पाइए, तिनकौं निषिद्ध जानि नमस्कारादि कदाचित् करै नाहीं । कोऊ कहै, जैसैं राजादिककौं करै, तैसैं इनकौं भी करै है। ताका उत्तर—

राजादिक धर्म्मपद्धतिविषै नाहीं। गुरूका सेवन धर्म्मपद्धतिविषै है। सो राजादिकका सेवन तौ लोभादिकतैं हो है तहां चारित्र-मोहहीका उदय संभवै है। अर गुरुनिकी जायगा कुगुरुनिकौं सेए। तत्त्वश्रद्धानके कारण गुरु थे, तिनतैं प्रतिकूली भया। सो लज्जादिकतैं जानैं कारणविषै विपरीतिता उपजाई ताकै कार्यभूत तत्त्वश्रद्धानविषै दृढता कैसैं संभवै। तातैं तहां दर्शनमोहका उदय संभवै है। ऐसैं कुगुरूनिका निरूपण किया। अब कुधर्म्मका निरूपण कीजिए है---

जहां हिंसादिकषाय उपजैं वा विषयकषायनिकी वृद्धि होय, तहां धर्म मानिए, सो कुधर्म्म जानना। तहां यज्ञादिकक्रिया-निविषै महा हिंसादिक उपजावैं बड़े जीवनिका घात करै अर तहां इंद्रियनिके विषय पोषैं। तिन जीवनिविषै दुष्टबुद्धिकरि रौद्रध्यानी होय तीव्रलोभतैं औरनिका बुराकरि अपना कोई प्रयोजन साध्या चाहै ऐसा कार्यकरि तहां धर्म्म मानैं सो कुधर्म्म है। बहुरि तीर्थनिविषै वा अन्यत्र स्नानादिकार्य करै तहां बडे छोटे घने

जीवनिकी हिंसा होय शरीरकौ चैन उपजै, तातैं विषयपोषण होय, तातैं कामादिक बधै, कुतूहलादिककरि तहां कषायभाव बधावै बहुरि तहां धर्म्म मानै सो कुधर्म्म है। बहुरि संक्रांति, ग्रहण, व्यतीपातादिकविषै दान दे, वा खोटा ग्रहादिककै अर्थि दान दे, बहुरि पात्र जानि लोभीपुरुषनिकौं दान दे बहुरि दानविषै सुवर्ण हस्ती घोड़ा तिलआदि वस्तुनिकौं दान दे, सो संक्रांतिआदि पर्व धर्म्मरूप नाहीं। ज्योतिषी संचारादिककरि संक्रांतिआदि हो है। बहुरि दुष्टग्रहादिककै अर्थ दिया, तहां भय लोभादिकका आधिक्य भया। तातैं तहां दान देनैमैं धर्म्म नाहीं। बहुरि लोभीपुरुष देनेयोग्य पात्र नाहीं। जातैं लोभी नाना असत्ययुक्ति करि ठिगै हैं। किछू भला करते नाहीं। भला तौ तब होय, जब याका दानका सहायकरि वह धर्म्म साधै। सो वह तौ उलटा पापरूप प्रवर्तै। पापका सहाईका भला कैसैं होय। सो ही रयणसार शास्त्रविषै कह्या है—

सप्पुरिसाणं दाणं कप्पतरूणां फलाण सोहं वा ॥
लोहीणं दाणं जइ विमाणसोहा सवस्स जाणेह ॥ १ ॥

सत्पुरुषनिकौं दान देना, कल्पवृक्षनिके फलनिकी शोभा समान है अर सुखदायक है। बहुरि लोभीपुरुषनिकौं दान देना जो होय, सो शव जो मऱ्या ताका विमाण जो चक्रडोल ताकी शोभासमान जानहु। शोभा तौ होय, परंतु धनीकौं परमदुखदायक हो है। तातैं लोभीपुरुषनिकौं दान देनेमैं धर्म्म नाहीं। बहुरि द्रव्य तौ ऐसा दीजिए, जाकरि वाकै धर्म्म वधै। सुवर्ण हस्तीआदि

दीजिए, तिनकरि हिंसादिक उपजै वा मान लोभादिक वधै। ताकरि महापाप होय। ऐसी वस्तुनिका देनेवालाकौं पुण्य कैसैं होय। बहुरि विषयासक्त जीव रतिदानादिकविषै पुण्य ठहरावै हैं। सो प्रत्यक्ष कुशीलादि पाप जहां होय, तहांपुण्य कैसै होय। अर युक्ति मिलावनेकौं कहैं, जो वह स्त्री सुख पावै है। तौ स्त्री तौ विषयसेवन किए सुख पावै ही पावै, शीलका उपदेश काहेकौं दिया। रतिसमयविना भी बाका मनोरथ अनुसार न प्रवर्तै दुःख पावै। सो ऐसी असत् युक्ति बनाय विषयपोषनेका उपदेश देहैं। ऐसैं ही दयादान वा पात्रदानविना अन्य दान देय धर्म्म मानना सर्व कुधर्म है।

बहुरि व्रतादिककरिकै तहां हिंसादिक वा विषयादिक बधावै हैं। सो व्रतादिक तौ तिनका घटावनेकै अर्थि कीजिए है। बहुरि जहां अन्नका तौ त्याग करै अर कंदमूलादिकनिका भक्षण करै, तहां हिंसा विशेष भई—स्वादादिकविषय विशेष भए। बहुरि दिवसविषै तौ भोजन करै नाहीं, अर रात्रिविषै करै। सो प्रत्यक्ष दिवसभोजनतैं रात्रिभोजनविषै हिंसा विशेष भासै, प्रमाद विशेष होय। बहुरि व्रतादिकरि नाना श्रृंगार बनावैं, कुतूहल करैं, जुवाआदिरूप प्रवर्तै, इत्यादि पापक्रिया करैं, बहुरि व्रतादिकका फल लौकिक इष्टकी प्राप्ति अनिष्टका नाशकौं चाहैं तहां कषायनिकी तीव्रता विशेष भई। ऐसैं व्रतादिकरि धर्म्म मानै हैं, सो कुधर्म्म है।

बहुरि भक्त्यादिकार्यनिविषै हिंसादिक पाप बधावैं, वा गीत

नृत्यादिक वा इष्ट भोजनादिक वा अन्य सामग्रीनिकरि विषयनिकौं पोषै, कुतूहल प्रमादादिरूप प्रवर्तै। तहां पाप तौ बहुत उपजावैं, अर धर्म्मका किछू साधन नाहीं। तहां धर्म मानैं, सो सर्व कुधर्म है। बहुरि केई शरीरकौ तौ क्लेश उपजावै अर तहां हिंसादिक निपजावै, कषायादिरूप प्रवर्तै। जैसैं पंचाग्नि तापै, सो अग्निकरि बड़े छोटे जीव जलै, हिंसादिक वधै, यामैं धर्म कहा भया। बहुरि अधोमुख झूलैं, ऊर्ध्वबाहु राखैं, इत्यादि साधनकरि तहां क्लेश ही होय। किछू ए धर्मके अंग नाहीं। बहुरि पवनसाधन करै तहां नेती धोती आदि कार्यनिविषै जलादिककरि हिंसादिक उपजै, चमत्कार कोई उपजै तातैं मानादिक वधै, किछू तहां धर्मसाधन नाहीं। इत्यादि क्लेश करैं, विषयकषाय घटावनेका कोई साधन करै नाहीं। अंतरंगविषै क्रोध मान माया लोभका अभिप्राय है वृथा क्लेशकरि धर्म्म मानै है, सो कुधर्म्म है। बहुरि केई इस लोकविषै दुख सह्या न जाय, वा परलोकविषै इष्टकी इच्छा वा अपनी पूजा बढ़ावनेके अर्थि वा कोइ क्रोधादिककरि अपघात करै। जैसै पतिवियोगतैं अग्निविषै जलकरि सती कहावै है, वा हिमालय गलै है, काशीकरोत लै हैं, जीवित मारी लै है, इत्यादि कार्यकरि धर्म मानै हैं। सो अपघातका तौ बड़ा पाप है। शरीरादिकतैं अनुराग घट्या था, तौ तपश्चरणादि किया होता। मरि जाणेमैं कौन धर्म्मका अंग भया। जातैं अपघात करना कुधर्म्म है। ऐसै ही अन्य भी घने कुधर्म्मके अंग हैं। कहां ताईं कहिए जहां विषय कषाय वधै, अर धर्म्म मानिए,

सो सर्व कुधर्म्म जानने। देखो कालका दोष, जैनधर्मविषै भी कुधर्म्मकी प्रवृत्ति भई। जैनमतविषै जे धर्म्मपर्व कहे हैं, तहां तौ विषयकषाय छोरि संयमरूप प्रवर्त्तना योग्य है। ताकौं तौ आदरै नाहीं। अर व्रतादिकका नाम धराय तहां नाना श्रृंगार बनावैं, वा गरिष्ठभोजनादि करै, वा कुतूहलादि करैं, वा कषायवधावनेके कार्य करैं, जूवा इत्यादि महा पापरूप प्रवर्त्तै।

बहुरि पूजानादि कार्यविषै उपदेश तौ यह था,—**सावद्यलेशो बहुपुण्यराशौ दोषाय नालं**। पापका अंश बहुत पुण्यसमूहविषै दोषके अर्थ नाहीं। इस छलकरि पूजाप्रभावनादि कार्यनिविषै रात्रिविषै दीपकादिकरि वा अनंतकायादिकका संग्रह करि वा अयत्नाचार प्रवृत्तिकरि हिंसादिकरूप पाप तौ बहुत उपजावैं, अर स्तुति भक्ति आदि शुभपरिणामनिविषै प्रवर्तै नाहीं, वा थोरे प्रवर्तै, सो टोटा घना नफा थोरा, वा नफा किछू नाहीं। ऐसा कार्यकरनेमै तौ बुरा ही दीखना होय। बहुरि जिनमंदिर तौ धर्म्मका ठिकाना है। तहां नाना कुकथा करनी, सोवना इत्यादिक प्रमादरूप प्रवर्त्तै, वा तहां बाग वाड़ी इत्यादि बनाय विषयकषाय पोषै, बहुरि लोभी पुरुषनिकौं दानादिक दें, वा तिनकी असत्य स्तुतिकरि महंतपनो मानै, इत्यादि प्रकारकरि विषयकषायनिकौं तौ वधावैं, अर धर्म्म मानैं, सो जिनधर्म्म तौ वीतरागभावरूप है। तिसविषै ऐसी प्रवृत्ति कालदोषतैं ही देखिए है। याप्रकार कुधर्म्मसेवनका निषेध किया। अब इसविषै मिथ्यात्वभाव कैसैं भया, सो कहिए है—

तत्वश्रद्धानविषै प्रयोजनभूत एक यह है रागादिक छोड़ना। इस ही भावका नाम धर्म्म है। जो रागादिक भावनिकौ वधाय धर्म्म मानैं, तहां तत्वश्रद्धान कैसैं रह्या। बहुरि जिनआज्ञातैं प्रतिकूली भया। बहुरि रागादिभाव तौ पाप हैं। तिनकौं धर्म्म मान्या, सो यह झूठश्रद्धान भया। तातै कुधर्म्म सेवनविषै मिथ्यात्त्वभाव है। ऐसै कुदेव कुगुरु कुशास्त्रसेवनविषै मिथ्यात्व-भावकी पुष्टता होती जानि, याका निरूपण किया। सो ही षट्पाहुड़विषै कह्या है --

कुच्छियदेवं धम्मं कुच्छियलिंगं च वंदए जोइ।
लज्जभयगारवदो मिच्छादिट्ठी हवे सो दु॥ १॥

जो लज्जातै भयतै वड़ाईतै भी कुत्सित् देवकौं वा कुत्सित् धर्म्मकौं वा कुत्सित् लिंगकौं वंदे है, सो मिथ्यादृष्टी हो है। तातैं जो मिथ्यात्वका त्याग किया चाहै, सो पहलैं कुदेव कुगुरु कुधर्म्मका त्यागी होय। सम्यक्त्वके पचीस मलनिके त्यागविषै भी अमूढदृष्टि वा षडायतनविषै भी इनहीका त्याग कराया है। तातै इनका अवश्य त्याग करना। बहुरि कुदेवादिकके सेवनतै जो मिथ्यात्वभाव हो है, सो यह हिंसादिकपापनितै महापाप है। याके फलतैं निगोद नरकादिपर्याय पाईए है। तहां अनंतकालपर्यंत महासंकट पाईए है। सम्यग्ज्ञानकी प्राप्ति महादुर्लभ होय जाय है। सो ही षट्पाहुडविषै (भाव पाहुड़मे) कह्या है——

कुच्छियधम्मम्मि--रओ, कुच्छियपासंडिभत्तिसंजुत्तो।
कुच्छियतवं कुणंतो कुच्छिय गइभायणो होई॥ १४०॥

जो कुत्सितधर्म्मविषै रत है, कुत्सित पाखंडीनिकी भक्तिकरि संयुक्त है, कुत्सित तपकौं करता है, सो जीव कुत्सित जो खोटी गति ताकौं भोगनहारा हो है। सो हे भव्य हो, किंचिन्मात्रलोभतैं वा भयतैं कुदेवादिकका सेवनकरि जातैं अनंतकालपर्यंत महा-दुःख सहना होय ऐसा मिथ्यात्वभाव करना योग्य नाहीं। जिन-धर्म्मविषै यह तौ आम्नाय है। पहलैं बड़ा पाप छुड़ाय पीछैं छोटा पाप छुड़ाया। सो इस मिथ्यात्वकौं सप्तव्यसनादिकतैं भी बड़ापाप-जानि पहलैं छुड़ाया है। तातैं जे पापके फलतैं डरैं हैं, अपने अत्माकौं दुखसमुद्रमैं न डुबाया चाहैं हैं, ते जीव इस मिथ्यात्वकौं अवश्य छोड़ो। निंदा प्रशंसादिकके विचारतैं शिथिल होना योग्य नाहीं। जातैं नीतिविषै भी ऐसा कह्या है—

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वास्तु मरणं तु युगान्तरे वा
न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥ १॥

जै निंदै हैं तौ निंदौ, अर स्तवै हैं तौ स्तवो, बहुरि लक्ष्मी आवो वा जावो, बहुरि अब ही मरण होहु वा युगांतरविषै होहु, परंतु नीतिविषै निपुणपुरुष न्यायमार्गतैं पैंड़हू चलैं नाहीं। ऐसा न्याय विचारि निंदाप्रशंसादिकका भयतैं लोभादिकतैं अन्यायरूप मिथ्यात्वप्रवृत्ति करनी युक्त नाहीं। अहो, देव गुरु धर्म्म तौ सर्वोत्कृष्ट पदार्थ हैं इनकै आधार धर्म्म है। इनविषै शिथिलता राखैं अन्यधर्म्म कैसैं होय तातैं बहुत कहनेकरि कहा, सर्वथाप्रकार

कुदेव कुगुरु कुधर्म्मका त्यागी होना योग्य है। कुदेवादिकका त्याग न किए मिथ्यात्वभाव बहुत पुष्ट हो है। अर अबार यहां इनकी प्रवृत्ति विशेष पाईए है। तातैं इनका निषेधरूप निरूपण किया हैं। ताकौ जानि मिथ्यात्वभाव छोड़ि अपना कल्याण करो।

इति मोक्षमार्गप्रकाशकनाम शास्त्रविषै कुदेवकुगुरुकुधर्म्म-
निषेधवर्णनरूप छठा अधिकार समाप्त भया ॥ ६ ॥

दोहा।

इस भवतरुको मूल इक, जानहु मिथ्याभाव।
ताकौं करि निर्मूल अब, करिए मोक्ष उपाव ॥ १ ॥

अथ,- जे जीव जैनी है, जिन आज्ञाकौं मानै हैं, अर तिनकै भी मिथ्यात्व रहै है ताका वर्णन कीजिए है—जातै इस मिथ्यात्ववैरीका अंश भी बुरा है, तातै सूक्ष्ममिथ्यात्व भी त्यागने योग्य है। तहां जिन आगमविषै निश्चय व्यवहाररूप वर्णन है। तिन–विषै यथार्थका नाम निश्चय है। उपचारका नाम व्यवहार है। सो इनके स्वरूपकौ न जानते अन्यथा प्रवर्तैं हैं, सोई कहिए है– केई जीव निश्चयकौं न जानते निश्चयाभासके श्रद्धानी होय आपकौं मोक्षमार्गी मानै हैं। अपने आत्माकौ सिद्धसमान अनुभवै है। सो आप प्रत्यक्ष संसारी हैं। भ्रमकरि आपकौ सिद्ध मानैं सोई मिथ्यादृष्टी है। शास्त्रनिविषै जो सिद्धसमान आत्माकौ कह्या है, सो द्रव्यदृष्टिकरि कह्या है, पर्याय अपेक्षा समान नाहीं है। जैसै राजा अर रंक मनुष्यपनेकी अपेक्षा समान है, राजापना रंकपनाकी अपेक्षा तौ समान नाहीं। तैसैं सिद्ध अर संसारी जीवत्त्वपनेकी

अपेक्षा समान हैं, सिद्धपना संसारीपनाकी अपेक्षा तौ समान नाहीं। यह जैसैं सिद्ध शुद्ध हैं, तैसैं ही आपकौं शुद्ध मानै। सो शुद्ध अशुद्ध अवस्था पर्याय है। इस पर्यायअपेक्षा समानता मानिए, सो यह मिथ्यादृष्टि है। बहुरि आपकै केवलज्ञानादिकका सद्भाव मानै, सो आपकै तौ क्षयोपशमरूप मतिश्रुतादि ज्ञानका सद्भाव है। क्षायिकभाव तौ कर्म्मका क्षय भए हो है। यह भ्रमतैं कर्म्मका क्षय विना भए ही क्षायिकभाव मानै। सो यह मिथ्या-दृष्टी है। शास्त्रनिविषै सर्वजीवनिका केवलज्ञानस्वभाव कह्या है, सो शक्तिअपेक्षा कह्या है। सर्वजीवनिविषै केवलज्ञानादिरूप होनेकी शक्ति है। वर्तमान व्यक्तता तौ व्यक्त भए ही कही। कोऊ ऐसा मानै है, आत्माके प्रदेशनिविषै तौ केवलज्ञान ही है, ऊपरि आवरणतैं प्रगट न हो है। सो यह भ्रम है। जो केवलज्ञान होय, तौ वज्रपटलादि आड़े होतैं भी वस्तुकौं जानै। कर्म्मके आड़े आए कैसैं अटकै। तातैं कर्म्मके निमित्ततैं केवलज्ञानकौं अभाव ही है। जो याका सर्वदा सद्भाव रहै तौ याकौं पारिणामिक भाव कहते, सो यह तौ क्षायिकभाव है। सर्वभेद जामैं गर्भित ऐसा चैतन्यभाव सो पारिणामिक भाव है। याकी अनेक अवस्था मतिज्ञानादिरूप वा केवलज्ञानादिरूप हैं, सो ए पारिणामिकभाव नाहीं। तातैं केवलज्ञानका सर्वदा सद्भाव न मानना। बहुरि जो शास्त्रनिविषै सूर्यका दृष्टान्त दिया है, ताका इतना ही भाव लेना, जैसैं मेघपटल होतैं सूर्यप्रकाश प्रगट न हो है, तैसैं कर्म्मउदय होतैं केवलज्ञान न हो है। बहुरि ऐसा भाव

न लेना, जैसैं सूर्यविषै प्रकाश रहै है, तैसैं आत्माविषै केवलज्ञान रहै है। जातैं दृष्टांत सर्वप्रकार मिलै नाहीं। जैसैं पुद्गलविषै वर्ण-गुण है, ताकी हरित पीतादि अवस्था हैं। सो वर्त्तमानविषै कोई अवस्था होतैं अन्य अवस्थाका अभाव ही है। तैसै आत्माविषै चैतन्य गुण है, ताकी मतिज्ञानादिरूप अवस्था हैं। सो वर्त्तमान कोई अवस्था होतैं अन्य अवस्थाका अभाव ही है। बहुरि कोऊ कहै कि, आवरण नाम तौ वस्तुकौं आच्छादनेका है, केवलज्ञानका सद्भाव नाहीं हैं, तौ केवलज्ञानावरण काहेकौं कहो हौ ताका उत्तर—

यहां शक्ति है ताकौं व्यक्त न होने दे, ताकी अपेक्षा आवरण कह्या है। जैसैं देशचारित्रका अभाव होतैं शक्ति घातनेकी अपेक्षा अप्रत्याख्यानावरण कह्या, तैसैं जानना। बहुरि ऐसैं जानौ,— वस्तुविषै जो परनिमित्ततैं भाव होय, ताका नाम औपाधिकभाव है। अर परनिमित्तविना जो भाव होय, सो ताका नाम स्वभाव-भाव है। सो जैसैं जलकै अग्निका निमित्त होतै, उष्णपनो भयो तहां शीतलपनाका अभाव ही है। परंतु अग्निका निमित्त मिटे शीतलता ही होय जाय। तातैं सदाकाल जलका स्वभाव शीतल कहिए। जातैं ऐसी शक्ति सदा पाइए है। बहुरि व्यक्त भए स्वभाव व्यक्त भया कहिए। कदाचित् व्यक्तरूप हो है। तैसैं आत्माकै कर्म्मका निमित्त होतै अन्यरूप भया, तहां केवलज्ञानका अभाव ही है। परंतु कर्म्मका निमित्त मिटे सर्वदा केवलज्ञान होय जाय। तातैं सदाकाल आत्माका स्वभाव केवलज्ञान कहिए है।

जातैं ऐसी शक्ति सदा पाईए है। व्यक्त भए स्वभाव व्यक्त भया कहिए। बहुरि जैसैं शीतलस्वभावकरि उष्ण जलकौं शीतल मानि पानादि करै, तौ दाझना ही होय। तैसैं केवलज्ञानस्वभावकरि अशुद्ध आत्माकौं केवलज्ञानी मानि अनुभवै तौ दुखी ही होय। ऐसैं जे केवलज्ञानादिकरूप आत्माकौं अनुभवै हैं, ते मिथ्यादृष्टी हैं। बहुरि रागादिक भाव आपकै प्रत्यक्ष होतैं भ्रमकरि आत्माकौं रागादिरहित मानैं सो पूछिए है—ए रागादिक तौ होते देखिए है, ए किसद्रव्यके अस्तित्वविषै है। जो शरीर वा कर्मपुद्गलके अस्तित्वविषै होंय तौ ए भाव अचेतन वा मूर्त्तीक होंय। सो तो ए रागादिक प्रत्यक्ष चेतनता लिए अमूर्त्तीकभाव भासै हैं। तातैं ए भाव आत्माहीके हैं। सो ही समयसारके कलशविषै कह्या है—

कार्यत्वादकृतं न कर्म्म न च तज्जीवप्रकृत्योर्द्वयो-
रज्ञायाः प्रकृतेः स्वकार्यनुभवाभावान्न चेयं कृतिः।
नैकस्याः प्रकृतेरचित्त्वलसनाज्जीवस्य कर्त्ता ततो
जीवस्यैव च कर्म्म तच्चिदनुगं ज्ञाता न वै पुद्गलः॥ १॥

यह रागादिरूप भावकर्म्म है, सो काहूकरि किया नाहीं है तातैं यह कार्यभूत है। बहुरि जीव अर कर्म्मप्रकृति इन दोऊनिका भी कर्तव्य नाहीं। जातैं ऐसैं होय, तौ अचेतनकर्म्मप्रकृतिकै भी तिस भावकर्म्म फल सुख दुख ताकौं भोगना होय, सो असंभव है। बहुरि एकली कर्म्मप्रकृतिका भी यह कर्त्तव्य नाहीं। जातैं वाकै अचेतनपनो प्रगट है। तातैं इस रागादिकका जीव ही कर्त्ता है। अर सो रागादिक जीवहीका कर्म्म है। जातैं भावकर्म्म तौ

चेतनका अनुसारी है, चेतना विना न होय। अर पुद्गल ज्ञाता है नाहीं। ऐसे रागादिकभाव जीवके अस्तित्वविषै है। जो रागादिक भावनिका निमित्त कर्म्महीकों मानि आपकौ रागादिकका अकर्त्ता मानै है, सो कर्त्ता तौ आप अर आपकौ निरुद्यमी होय प्रमादी रहना, तातैं कर्म्महीका दोष ठहरावै है। सो यह दुखदायक भ्रम है। सोई समयसारका कलशाविषै कह्या है—

रागजन्मनि निमित्ततां परद्रव्यमेव कलयन्ति ये तु ते।
उत्तरन्ति न हि मोहवाहिनीं शुद्धबोधविधुरान्धबुद्धयः॥

जे जीव रागादिककी उत्पत्तिविषै परद्रव्यहीकौ निमित्तपनो मानै हैं, ते जीव भी शुद्धज्ञानकरि रहित है अंधबुद्धि जिनकी ऐसे होतसंतैं मोहनदीकौं नाहीं उत्तरै हैं। वहुरि समयसारका 'सर्व-विशुद्धि अधिकार विषै जो, आत्माकौ अकर्त्ता मानै है, अर यह कहै है—कर्म्म ही जगावै सुवावै हैं, परघात कर्म्मतै हिंसा है, वेदकर्म्मतै ब्रह्म है, तातैं कर्म्म ही कर्त्ता है, तिस जैनीकौ सांख्यमती कह्या है। जैसैं सांख्यमती आत्माकौं शुद्ध मानि स्वच्छन्द हो है, तैसैं ही यह भया। बहुरि इस श्रद्धानतै यह दोप भया, जो रागादिक अपने न जानै, आपकौ अकर्त्ता मान्या, तव रागादिक होनेका भय रह्या नाहीं, वा रागादिक मेटनेका उपाय रह्या नाहीं, तब स्वच्छंद होय खोटे कर्म बांधि अनंतसंसार-विषै रुलै है। यहां प्रश्न—जो समयसारविषै ही ऐसा कह्या है—

वर्णाद्या वा रागमोहादयो वा
भिन्ना भावाः सर्व्व एवास्य पुंसः।

अर्थ-वर्णादिक वा रागादिकभाव हैं, ते सर्व ही इस आत्मातैं भिन्न हैं। बहुरि तहां ही रागादिककौं पुद्गलमय कहे हैं। बहुरि अन्य शास्त्रनिविषै भी रागादिकतैं भिन्न आत्माकौं कह्या है, सो कैसैं है ताका उत्तर—

रागादिकभाव परद्रव्यके निमित्ततैं उपाधिकभाव हो हैं। अर यह जीव तिनिकौं स्वभाव जानै है। जाकौं स्वभाव जानै, ताकौं बुरा कैसैं मानै, वा ताके नाशका उद्यम काहेकौं करै। सो यह श्रद्धान भी विपरीत है। ताके छुड़ावनेकौं स्वभावकी अपेक्षा रागादिककौं भिन्न कहे हैं। अर निमित्तकी मुख्यताकरि पुद्गलमय कहे हैं। जैसैं वैद्य रोग मेट्या चाहै है। जो शीतका अधिकार देखै, तौ उष्ण औषधि बतावै अर आतापका आधिक्य देखै, तौ शीतल औषधि बतावै। तैसैं श्रीगुरु रागादिक छुड़ाय चाहै है। जो रागादिक परका मानि स्वच्छन्द होय, निरुद्यमी होय, ताकौं उपादानकारणकी मुख्यताकरि रागादिक आत्माका है ऐसा श्रद्धान कराया। बहुरि जो रागादिक आपका स्वभाव मानि तिनिका नाशका उद्यम नाहीं करै है, ताकौं निमित्तकारणकी मुख्यताकरि रागादिक परभाव हैं, ऐसा श्रद्धान कराया है। दोऊ विपरीत श्रद्धानतैं रहित भए सत्यश्रद्धान होय, तब ऐसा मानै—ए रागादिक भाव आत्माका स्वभाव तौ नाहीं, कर्मके निमित्ततैं आत्माके अस्तित्वविषै विभावपर्याय निपजै हैं। निमित्त मिटे इनका नाश होतैं स्वभाव भाव रहि जाय है। तातैं इनके नाशका उद्यम करना। यहां प्रश्न—जो कर्मका निमित्ततैं ए हो हैं, तौ कर्मका उदय रहै

तावत् विभाव दूरि कैसैं होय । तातैं याका उद्यम करना तौ निरर्थक है। ताका उत्तर—

एक कार्य होनेविषै अनेक कारण चाहिए है। तिनिविषै जे कारण बुद्धिपूर्वक होंय, तिनकौं तौ उद्यम करि मिलावै अर अबुद्धि पूर्वक कारण स्वयमेव मिलै—तब कार्यसिद्धि होय। जैसैं पुत्र होनेका कारण बुद्धिपूर्वक तौ विवाहादिक करना है, अर अबुद्धि-पूर्वक भवितव्य है। तहां पुत्रका अर्थी विवाहादिकका तौ उद्यम करै, अर भवितव्य स्वयमेव होय, तब पुत्र होय। तैसैं विभाव दूरि करनेके कारण बुद्धिपूर्वक तौ तत्त्वविचारादिक हैं अर अबुद्धि-पूर्वक मोहकर्मका उपशमादिक है। सो ताका अर्थी तत्त्वविचारा-दिकका तौ उद्यम करै, अर मोहकर्मका उपशमादिक स्वयमेव होय, तब रागादिक दूरि होंय। यहां ऐसा कहै कि-जैसै विवाहा-दिक भी भवितव्य आधीन हैं, तैसैं तत्त्वविचारादिक भी कर्मका क्षयोपशमादिककै आधीन हैं, तातैं उद्यम करना निरर्थक है ताका उत्तर—

ज्ञानावरणका तौ क्षयोपशम तत्वविचारादि करनेयोग्य तेरै भया है। याहीतैं उपयोगकौं यहां लगावनेका उद्यम कराइए है। असंज्ञी जीवनिकै क्षयोपशम नाहीं है, तौ उनकौं काहेकौं उपदेश दीजिए है। बहुरि वह कहै है—होनहार होय, तौ तहां उपयोग लागै, विना होनहार कैसै लागै। ताका उत्तर—

जो ऐसा श्रद्धान है, तौ सर्वत्र कोई ही कार्यका उद्यम मति करै। तू खान पान व्यापारादिकका तौ उद्यम करै, अर यहां

होनहार बतावै। सो जानिए है, तेरा अनुराग यहां नाहीं। माना-दिककरि ऐसी झूंठी बातैं बनावै है। याप्रकार जे रागादिक होतैं तिनकरि रहित आत्माकौं मानै हैं, ते मिथ्यादृष्टि जानने।

बहुरि कर्म नोमकर्मका संबंध होतैं आत्माकौं निर्बंध मानै, सो प्रत्यक्ष इनका बंधन देखिए है। ज्ञानावरणादिकतैं ज्ञानादिकका घात देखिए है। शरीरकरि ताकै अनुसार अवस्था होती देखिए है। बंधन कैसैं नाहीं। जो बंधन न होय, तौ मोक्षमार्गी इनके नाशका उद्यम काहेकौं करै। यहां कोऊ कहै—शास्त्रनिविषै आत्माकौं कर्म नोकर्मतैं भिन्न अवद्धस्पृष्ट कैसैं कह्या है। ताका उत्तर—

संबंध अनेक प्रकार हैं। तहां तादात्म्यसंबंधअपेक्षा आत्माकौं कर्म नोकर्मतैं भिन्न कह्या है। तहां द्रव्य पलटकरि एक नाहीं होय जाय हैं अर इस ही अपेक्षा अवद्धस्पृष्ट कह्या है। बहुरि निमित्तनैमित्तिकसंबंध अपेक्षा बंधन है ही। उनके निमित्ततैं आत्मा अनेक अवस्था धरै ही है। तातैं सर्वथा निर्बंध आपकौं मानना मिथ्यादृष्टि है। यहां कोऊ कहै-हमकौं तौ बंध मुक्तिका विकल्प करना नाहीं, जातै शास्त्रविषै ऐसा कह्या है—

"जो बंधउ मुक्कउ मुणइ, सो बंधई ण भंति।"

याका अर्थ—जो जीव बंध्या अर मुक्त भया मानै है, सो निःसदेह बंधै है। ताकौं कहिए है—

जे जीव केवल पर्यायदृष्टि होय, बंधमुक्त अवस्थाहीकौं

मानै हैं, द्रव्य स्वभावका ग्रहण नाहीं करै हैं, तिनकौं ऐसैं उपदेश दिया है, जो द्रव्यस्वभावकौं न जानता जीव बंध्या मुक्त मानै, सो बंध है। बहुरि जो सर्वथा ही बंधमुक्ति न होय, तौ सो जीव बंध है, ऐसा काहेकौं कहैं। अर बंधके नाशका मुक्त होनेका उद्यम काहेकौ करिए है। तातैं द्रव्यदृष्टिकरि एकदशा है। पर्यायदृष्टिकरि अनेक अवस्था हो हैं, ऐसा मानना योग्य है। ऐसैं ही अनेक प्रकारकरि केवल निश्चयनयका अभिप्रायतै विरुद्ध श्रद्धानादिक करै हैं। जिनवानीविषै तौ नाना नयअपेक्षा कहीं। कैसा कहि कैसा निरूपण किया है। यह अपने अभिप्रायतै निश्चयनयकी मुख्यताकरि जो कथन किया होय, ताहीकौं ग्रहिकरि मिथ्यादृष्टिकौ धारै है। बहुरि जिनवानीविषै तौ सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकी एकता भए मोक्षमार्ग कह्या है। सो याकै सम्यग्दर्शन ज्ञानविषै सप्ततत्त्वनिका श्रद्धान वा जानना भया चाहिए। सो तिनका विचार नाहीं। अर चारित्रविषै रागादिक दूरि किया चाहिए, ताको उद्यम नाहीं। एक अपने आत्माकौं शुद्ध अनुभवना इसहीको मोक्षमार्ग मानि संतुष्ट भया है। ताका अभ्यास करनेकौ अंतरंगविषै ऐसा चिंतवन किया चाहै है—मैं सिद्धसमान शुद्ध हौं, केवलज्ञानादि सहित हौं, द्रव्यकर्म नोकर्म रहित हौं, परमानंदमय हौं, जन्ममरणादि दुःख मेरै नाहीं, इत्यादि चिंतवन करै है। सो यहां पूछिए है-यह चिंतवन जो द्रव्यदृष्टिकरि करो हौ, तौ द्रव्य तौ शुद्ध अशुद्ध सर्वपर्यायनिका समुदाय है। तुम शुद्ध ही अनुभव काहेकौ करौ हौ। अर

पर्यायदृष्टिकरि करो हौ, तौ तुम्हारै तौ वर्त्तमान अशुद्धपर्याय है। तुम आपाकौं शुद्ध कैसैं मानौ हौ। बहुरि जो शक्तिअपेक्षा शुद्ध मानो हौ, तौ मैं ऐसा होनेयोग्य हौं, ऐसा मानौ। ऐसैं काहेकौं मानौ हौ। तातैं आपकौं शुद्धरूप चिंतवन करना भ्रम है। काहेतैं तुम आपकौं सिद्धसमान मान्या, तौ यह संसार अवस्था कौनकी है अर तुम्हारै केवलज्ञानादिक हैं, तौ ये मतिज्ञानादिक कौनके हैं। अर द्रव्यकर्म नोकर्मरहित हौ, तौ ज्ञानादिककी व्यक्तता क्यों नहीं। परमानंदमय हो, तौ अब कर्त्तव्य कहा रह्या। जन्म मरणादि दुःख ही नाहीं, तौ दुखी कैसै होत हौ। तातैं अन्य अवस्थाविषै अन्य अवस्था मानना भ्रम है। यहां कोऊ कहै— शास्त्रविषै शुद्धचिंतवन करनेका उपदेश काहेकौं दिया है। ताका उत्तर—

एक तौ द्रव्यअपेक्षा शुद्धपना है, एक पर्यायअपेक्षा शुद्धपना है। तहां द्रव्यअपेक्षा तौ परद्रव्यतैं भिन्नपनौ वा अपने भावनितैं अभिन्नपनौ ताका नाम शुद्धपना हैं। अर पर्याय अपेक्षा उपाधिकभावनिका अभाव होना, ताका नाम शुद्धपना है सो शुद्ध-चिंतवनविषै द्रव्य अपेक्षा शुद्धपना ग्रहण किया है। सोई समयसारव्याख्याविषै कह्या है—

एष एवाशेषद्रव्यान्तरभावेभ्यो भिन्नत्वेनोपास्यमानः शुद्ध इत्यभिधीयते।

याका अर्थ—जो आत्मा प्रमत्त अप्रमत्त नाहीं है। सो यह ही समस्त परद्रव्यनिके भावनितैं भिन्नपनेकरि सेवा हुवा शुद्ध

ऐसा कहिए है। वहुरि तहां ही ऐसा कह्या--

समस्तकारकचक्रप्रक्रियोत्तीर्णनिर्मलानुभूतिमात्रत्वाच्छु—द्धः।

याका अर्थ—समस्त ही कर्त्ता कर्म आदि कारकनिका समूहकी प्रक्रियातैं पारंगत ऐसी जो निर्म्मल अनुभूति जो अभेद-ज्ञान तन्मात्र है, तातैं शुद्ध है। तातै ऐसै शुद्ध शब्दका अर्थ जानना। वहुरि ऐसै ही केवल शब्दका अर्थ जानना। जो पर-भवतैं भिन्न निःकेवल आप ही ताका नाम केवल है। ऐसैं ही अन्य यथार्थ अर्थ अवधारना। पर्यायअपेक्षा शुद्धपनो मानै, वा केवली आप मानै महाविपरीति होय। तातैं आपकौ द्रव्यपर्यायरूप अवलोकना। द्रव्यकरि सामान्यस्वरूप अवलोकना, पर्यायकरि अवस्थाविशेष अवधारना। ऐसैं ही चिंतवन किए सम्यग्दृष्टि हो है। जातै सांचा अवलोके विना सम्यग्दृष्टी कैसैं नाम पावै वहुरि मोक्षमार्गविषै तौ रागादिक मेटनेका श्रद्धान ज्ञान आचरण करना है। सो तौ विचार ही नाहीं। आपका शुद्ध अनुभवनतै ही आपकौं सम्यग्दृष्टी मानि अन्य सर्व साधनिका निषेध करै हैं, शास्त्राभ्यासकरना निरर्थक वतावै है, द्रव्यादिकका गुणस्थान मार्गणा त्रिलोकादिका विचारकौ विकल्प ठहरावै है, तपश्चरण करना वृथा क्लेश करना मानै है, व्रतादिकका करना वंधनमैं परना ठहरावै है, पूजना इत्यादि सर्वकार्यनिकौं शुभास्रव जानि हेय प्ररूपै है, इत्यादि सर्व साधनिकौं उठाय प्रमादी होय परिणमै हैं। सो शास्त्राभ्यास निरर्थक होय, तौ मुनिनिकै भी तौ ध्यान अध्ययन

दोय ही कार्य मुख्य हैं। ध्यानविषै उपयोग न लागै, तब अध्यं-यनहीविषै उपयोगकूं लगावै है, अन्य ठिकाना बीचमैं उपयोग लगावने योग्य है नाहीं। बहुरि शास्त्रकरि तत्त्वनिका विशेष जाननेतैं सम्यग्दर्शन ज्ञान निर्मल होय है। बहुरि तहां यावत् उपयोग रहै, तावत् कषाय मंद रहै। बहुरि आगामी वीतरागभा-वनिकी वृद्धि होय। ऐसे कार्यकौं निरर्थक कैसैं मानिए। बहुरि वह कहै—जो जिनशास्त्रनिविषै अध्यात्मउपदेश है, तिनिका अभ्यास करना अन्य शास्त्रनिका अभ्यासकरि किछू सिद्धि नाहीं। ताकौं कहिए है—

जो तेरै सांची दृष्टि भई हैं तौ सर्व ही जैनशास्त्र कार्यकारी है। तहां भी मुख्यपनै अध्यात्मशास्त्रनिविषै तौ आत्मस्वरूपका मुख्य कथन है। सो सम्यग्दृष्टी भए आत्मस्वरूपका तौ निर्णय होय चुकै, तब तौ ज्ञानकी निर्मलताकै अर्थि वा उपयोगकौं मंद-कषायरूप राखनेकै अर्थि अन्य शास्त्रनिका अभ्यास मुख्य चाहिए। अर आत्मस्वरूपका निर्णय भया है, ताका स्पष्ट राखनेकै अर्थि अध्यात्मशास्त्रनिका भी अभ्यास चाहिए। परंतु अन्य शास्त्रनिविषैं अरुचि न चाहिए। जाकै अन्य शास्त्रनिकी अरुचि है ताकै अध्यात्मकी रुचि सांची नाहीं। जैसैं जाकै विषयासक्तपना होय, सो विषयासक्त पुरुषनिकी कथा भी रुचितैं सुनै वा विषयके विशेषकौं भी जानै, वा विषयके आचरननिविषै जो साधन होय, ताकौं भी हितरूप जानै वा विषयका स्वरूपकौं भी पहिचानै। तैसैं जाकैं आत्मरुचि भई होय, सो आत्मरुचिके धारक तीर्थंकरा-

दिक तिनका पुराण भी जानै, वहुरि आत्माके विशेष जाननेकौं गुणस्थानादिककौं भी जानै, वहुरि आत्मआचरणविषै जे व्रता-दिक साधन हैं, तिनकौं भी हितरूप मानै, वहुरि आत्माके--स्वरूपकौं भी पहिचानै। तातैं च्यार्‌यौं ही अनुयोग कार्यकारी हैं। वहुरि तिनका नीका ज्ञान होनेकै अर्थि शब्दन्यायशास्त्रादिक भी जानना चाहिए। सो अपनी शक्तिकै अनुसार थोरा वा वहुत अभ्यासकरना योग्य है। वहुरि वह कहै है, 'पद्मनंदिपच्चीसी' विषै ऐसा कह्या है—जो आत्मस्वरूपतै निकसि वाह्य शास्त्रनिविषै वुद्धि विचरै हैं सो वह वुद्धि व्यभिचारणी है। ताका उत्तर—

यह सत्य कह्या है वुद्धि तौ आत्माकी है, ताकौ छोरि पर-द्रव्य शास्त्रनिविषै अनुरागिणी भई, ताकौं व्यभिचारिणी ही कहिए। परंतु जैसै स्त्री शीलवती है, तौ योग्य ही है। अर न रह्या जाय, तौ उत्तमपुरुषकौं छोड़ि चांडालादिकका सेवन किए तौ अत्यंत निंदनीक होय। तैसै वुद्धि आत्मस्वरूपविषै प्रवर्तै, तौ योग्य ही है। अर न रह्या जाय, तौ प्रशस्त शास्त्रादि परद्रव्यकौं छोरि अप्रशस्त विषयादिविषै लगै तौ महानिंदनीक ही होय। सो मुनिनिकै भी वहुत काल स्वरूपविषै वुद्धि रहै नाहीं, तौ तेरी कैसैं रह्या करै। तातैं शास्त्राभ्यासविषै वुद्धि लगावना युक्त है। वहुरि जो द्रव्यादिकका वा गुणस्थानादिकका विचारकौ विकल्प ठहरावै है, सो विकल्प तो है, परंतु निर्विकल्प उपयोग न रहै, तव इन विकल्पनिकौं न करै तौ अन्य विकल्प होंय, ते वहुत रागादिगर्भित होय हैं। वहुरि निर्विकल्पदशा सदा रहै नाहीं।

जातैं छद्मस्थका उपयोग एकरूप उत्कृष्ट रहै तौ अंतर्मुहूर्त रहै। बहुरि तू कहैगा "मैं आत्मस्वरूपहीका चिंतवन अनेक प्रकार किया करूंगा, सो सामान्य चिंतवनविषै तौ अनेकप्रकार बनै नाहीं। अर विशेष करैगा, तब द्रव्य गुण पर्याय गुणस्थान मार्गणा शुद्ध अशुद्ध अवस्था इत्यादि विचार होयगा। बहुरि केवल आत्मज्ञानहीतैं तौ मोक्षमार्ग होय नाहीं। सप्ततत्वनिका श्रद्धान ज्ञान भए, वा रागादिक दूरि किए मोक्षमार्ग होगा। सो सप्ततत्त्वनिका विशेष जाननेकौं जीव अजीवके विशेष वा कर्मके आस्रव बंधादिकका विशेष अवश्य जानना योग्य है जातैं सम्यग्दर्शन ज्ञानकी प्राप्ति होय। बहुरि तहां पीछैं रागादिक दूरि करनेसौं जे रागादिक बधावनेके कारण तिनिकौ छोड़ि जे रागादिक घटावनेके कारण होंय, तहां उपयोगकौं लगावना सो द्रव्यादिकका वा गुणस्थानादिकका विचार रागादिक घटावनेकौं कारण है। इनविषै कोई रागादिकका निमित्त नाहीं, तातैं सम्यग्दृष्टी भए पीछैं भी यहां ही उपयोग लगावना। बहुरि वह कहै है—रागादि मिटावनेकौं कारण होंय तिनविषै तौ उपयोग लगावना, परंतु त्रिलोकवर्त्ती जीवनिकी गति आदि विचार करना, वा कर्म्मका बंध उदयसत्तादिकका घणा विशेष जानना, वा त्रिलोकका आकार प्रमाणादिक जानना इत्यादि विचार कौन कार्यकारी है। ताका उत्तर—

इनकौं भी विचारतैं रागादिक बधते नाहीं। जातैं ए ज्ञेय याकै इष्ट अनिष्टरूप हैं नाहीं। तातैं वर्त्तमान रागादिककौं कारण नाहीं। बहुरि इनकौं विशेष जानै तत्त्वज्ञान निर्मल होय, तातैं

आगामी रागादिक घटावनेकौ ही कारण हैं। तातैं कार्यकारी हैं। बहुरि वह कहै है- स्वर्ग नरकादिककौ जानै तहां राग द्वेष हो है। ताका समाधान--

ज्ञानीकै तौ ऐसी बुद्धि होय नाहीं, अज्ञानीकै होय। जहां पाप छोड़ि पुण्यकार्यविषै लागै, तहां किछू रागादि घटै ही है। बहुरि वह कहै है---शास्त्रविषै ऐसा उपदेश है, प्रयोजनभूत थोरा ही जानना कार्यकारी है। तातै विकल्प काहेकौ कीजिए। ताका उत्तर—

जे जीव अन्य बहुत जानै, अर प्रयोजनभूतकौ न जानै अथवा जिनकी बहुत जाननेकी शक्ति नाहीं, तिनकौ यह उपदेश दिया है। बहुरि जाकौ बहुत जाननेकी शक्ति होय, ताकौ तौ यह कह्या नाहीं जो बहुत जाने बुरा होगा। जेता बहुत जानैगा तेता ही प्रयोजनभूत जानना निर्मल होगा। जातैं शास्त्रविषै ऐसा कह्या है -

सामान्यशास्त्रतो नूनं विशेषो बलवान् भवेत्।

याका अर्थ—यह सामान्य शास्त्रतैं विशेष बलवान् है। विशेषहीतै नीकै निर्णय हो है। तातैं विशेष जानना योग्य है। बहुरि वह तपश्चरणकौं वृथाक्लेश ठहरावै है। सो मोक्षमार्ग भए तौ संसारी जीवनितै उलटी परणति चाहिए। संसारी जीवनिकै इष्ट अनिष्ट सामग्रीतै रागद्वेष हो है, याकै रागद्वेष न चाहिए। तहां राग छोड़नेकै अर्थि इष्ट सामग्री भोजनादिकका त्यागी हो है। अर द्वेष छोडनेकै अर्थि अनिष्टसामग्री अनशनादिककौ अंगीकार

करै है। स्वाधीनपनैं ऐसा साधन होय, तौ पराधीन इष्ट अनिष्ट सामग्री मिले भी राग द्वेष न होय। सो चाहिए तौ ऐसैं, तेरै अनशनादिकतैं द्वेष भया। तातैं ताकौं क्लेश ठहरावे है। जब यह क्लेश भया, तब भोजन करना स्वयमेव ही सुख ठहरया। तहां राग आया, सो ऐसी परिणति तौ संसारीनिकै पाईए ही है। तै मोक्षमार्गी होय, कहा किया। बहुरि जो तू कहैगा, केई सम्यग्दृष्टी भी तपश्चरण नाहीं करै हैं। ताका उत्तर—

यह कारण विशेषतैं तप न होय सकै है। परन्तु श्रद्धान विषै तौ तपकौं भला जानै है ताके साधनका उद्यम राखै है। तेरे तौ श्रद्धान यह तप करना क्लेश है। बहुरि तपका तेरै उद्यम नाहीं तातैं तेरै सम्यग्दृष्टि कैसैं होय। बहुरि वह कहै है— शास्त्रविषै ऐसा कह्या है तप आदिक क्लेश करै है, तौ करो ज्ञानविना सिद्धि नाहीं। ताका उत्तर--

जे जीव तत्त्वज्ञानतैं तौ पराङ्मुख हैं अर तपहीतैं मोक्ष मानै हैं, तिनकौं ऐसा उपदेश दिया है। तत्त्वज्ञानविना केवल तपहीतैं मोक्ष न होय। बहुरि तत्त्वज्ञान भए रागादिक मेटनेकै अर्थि तपकरनेका तौ निषेध है नाहीं। जो निषेध होय, तौ गणधरादिक तप काहेकौं करैं। तातैं अपनी शक्तिअनुसार तप करना योग्य है। बहुरि वह तपादिककौं बंधन मानै है। सो स्वच्छन्दवृत्ति तौ अज्ञानअवस्थाहीविषै थी। ज्ञान पाए तौ परिणतिकौं रोकै ही है। बहुरि तिस परिणति रोकनेकै अर्थि बाह्य हिंसादिक कारण - निका त्यागी अवश्य भया चाहिए। बहुरि वह कहै है—हमारै

परिणाम तौ शुद्ध हैं बाह्य त्याग न किया, तौ न किया। ताका उत्तर—

जे ए हिंसादिकार्य तेरे परिणामविना स्वयमेव होते होंय, तौ हम ऐसैं मानैं। अर तू अपना परिणामकरि कार्य करै, तहां तेरे परिणाम शुद्ध कैसै कहिए। विषयसेवनादिक क्रिया वा प्रमादगमनादि क्रिया परिणामविना कैसैं होय। सो क्रिया तौ आप उद्यमी होय तू करै, अर तहां हिंसादिक होय ताकौ तू गिनै नाहीं, परिणाम शुद्ध मानै सो ऐसै मानै तौ तेरे परिणाम अशुद्ध ही रहैंगे। बहुरि वह कहै है—परिणामनिकौ रोके हू ए बाह्य हिंसादिक घटाईए। परंतु प्रतिज्ञाकरनेमैं बंध हो है, तातै प्रतिज्ञारूप व्रत नाहीं अंगीकार करना। ताका समाधान---

जिस कार्यके करनेकी आशा रहै, ताकी प्रतिज्ञा न लीजिए है। अर आशा रहे तिसतैं राग रहै है। तिस रागभावतैं विना कार्य किए भी अविरतिका बंध हुवा करै। तातैं प्रतिज्ञा अवश्य करनी युक्त है। बहुरि कार्यकरनेकौं बंधन भए विना परिणाम कैसैं रुकैंगे। प्रयोजन पड़े तद्रूपपरिणाम होंय ही होंय। वा विना प्रयोजन पड़े भी ताकी आशा रहै। तातैं प्रतिज्ञा करनी युक्त है बहुरि वह कहै है--न जानिए कैसा उदय आवै, पीछै प्रतिज्ञाभंग होय, तौ महपाप लागै। तातै प्रारब्ध अनुसार कार्य बनै, सो बनै प्रतिज्ञाका विकल्प न करना। ताका समाधान—

प्रतिज्ञा ग्रहण करतैं जाका निर्वाह होता न जानै, तिस प्रतिज्ञाकौं तौ करै नाहीं! प्रतिज्ञा लेतै ही यह अभिप्राय रहै, प्रयोजन पडे

छोड़ि द्योंगा, वह प्रतिज्ञा कौन कार्यकारी भई। अर प्रतिज्ञा ग्रहण करतैं तौ यह परिणाम है, मरणांत भए भी न छोडोंगा ऐसी प्रतिज्ञाकरनी युक्त ही है। विना प्रतिज्ञा किए अविरत संबंधी बंध मिटै नाहीं। बहुरि आगामी उदयकरि प्रतिज्ञा न लीजिए सो उदयकौं विचारे सर्व ही कर्त्तव्यका नाश होय। जैसैं आपकौं पचता जानै, तितना भोजन करै। कदाचित् काहूकै भोजनतैं अजीर्ण भया होय, तिस भयतैं भोजन छांड़ै तौ मरण ही होय। तैसैं आपकौं निर्वाह होता जानै, तितनी प्रतिज्ञा करै। कदाचित् काहूकै प्रतिज्ञातैं भ्रष्टपना भया होय तौ तिस भयतैं प्रतिज्ञा करनी छाड़ै तौ असंयम ही होय। तातैं बनै सो प्रतिज्ञा लेनी युक्त है। बहुरि प्रारब्ध अनुसार तौ कार्य बनै ही है, तू उद्यमी होय भोजनादि काहेकौ करै है। जो तहां उद्यम करै, तौ त्याग करनेका भी उद्यम करना युक्त ही है। जब प्रतिमावत् तेरी दशा होय जायगी, तब हम प्रारब्ध ही मानैंगे—तेरा कर्त्तव्य न मानैंगे। तातैं काहेकौं स्वच्छंद होनेकी युक्ति बनावै है। बनै सो प्रतिज्ञा-करि व्रत धारना योग्य है। बहुरि वह पूजनादि कार्यनिकौं शुभास्रव जानि हेय मानै है। सो यह सत्य है। परंतु जो इन कार्यनिकौं छोड़ि शुद्धोपयोगरूप होय तौ भलै ही है। अर विषय कषायरूप अशुभरूप प्रवर्त्तै, तौ अपना बुरा ही किया। शुभोपयोगतैं स्वर्गादि होय वा भली वासनातै वा भला निमित्ततै कर्म्मका स्थिति अनुभाग घटि जाय, तौ सम्यक्त्वादिककी भी प्राप्ति होय जाय। बहुरि अशुभोपयोगतैं नरक निगोदादि होय, वा बुरी

वासनातैं वा बुरा निमित्ततै कर्म्मका स्थिति अनुभाग बधि जाय, तौ सम्यक्तादिक महा दुर्लभ होय जाय। बहुरि शुभोपयोगहीतैं कषाय मंद हो है। अशुभोपयोगतैं तीव्र हो है। सो मंदकषायका कारण छोरि तीव्रकपायका कारण तौ ऐसा है, जैसै कड़वी वस्तु न खानी अर विप खाना। सो यह अज्ञानता है। बहुरि वह कहै है—शास्त्रविषै शुभ अशुभकौ समान कह्या है तातै हमकौं तौ विशेप जानना युक्त नाहीं। ताका समाधान—

जे जीव शुभोपयोगकौ मोक्षका कारण मानि उपादेय मानै है, शुद्धोपयोगकौ नाहीं पहिचानै हैं, तिनकौ शुभ अशुभ दोऊनिकै, अशुद्धताकी अपेक्षा वा बंधकारणकी अपेक्षा समान दिखाईए है, बहुरि शुभ अशुभनिका परस्पर विचार कीजिए, तौ शुभभावनिकै विषै कषायमंद हो है, तातैं बंध हीन हो है। अशुभभावनिविषै कपायतीव्र हो है, तातैं बंध बहुत हो है। ऐसै विचार किए अशुभकी अपेक्षा सिद्धांतविषै शुभकौ भला भी कहिए। जैसै रोग तौ थोरा वा बहुत बुरा ही है। परंतु बहुत रोगकी अपेक्षा थोरा रोगकूं भला भी कहिए। तातैं शुभोपयोग नाहीं होय, तब अशुभतै छूटि शुभविषै प्रवर्त्तना युक्त है। शुभकौ छोरि अशुभविषै प्रवर्त्तना युक्त नाहीं। बहुरि वह कहै है—जो कामादिक वा क्षुधादिक मिटावनेकौ अशुभरूप प्रवृत्ति तौ भए विना रहती नाहीं, अर शुभप्रवृत्ति चाहिकरि करनी परै है। ज्ञानीकै चाहि चाहिए नाहीं। तातै शुभका उद्यम नाहीं करना। ताका समाधान—

शुभप्रवृत्तिविषै उपयोग लागनेकरि वा ताके निमित्ततै विरा-

गता वधनेकरि कामादिक हीन हो हैं। अर क्षुधादिकविषै भी संकलेश थोरा हो है। तातैं शुभोपयोगका अभ्यास करना। उद्यम किए भी जो कामादिक वा क्षुधादिक रहैं, तौ ताकै अर्थि जैसैं थोरा पाप लागै, सो करना। बहुरि शुभोपयोगकौं छोड़ि निःशंक पापरूप प्रवर्त्तना तौ युक्त नाहीं। बहुरि तू कहै है—ज्ञानीकै चाहि नाहीं अर शुभोपयोग चाहि किए होय, सो जैसैं पुरुष किंचिन्मात्र भी अपना धन दिया चाहै नाहीं, परंतु जहां बहुत द्रव्य जाता जानै, तहां चाहिकरि स्तोक द्रव्य देनेका उपाय करै है। तैसैं ज्ञानी किंचिन्मात्र भी कषायरूप कार्य किया चाहैं नाहीं। परंतु जहां बहुत कषायरूप अशुभकार्य होता जानै, तहां चाहिकरि स्तोक कषायरूप शुभकार्य करनेका उद्यम करै। ऐसैं यह बात सिद्ध भई--जहां शुद्धोपयोग होता जानै, तहां तौ शुभ-कार्यका निषेध ही है अर जहां अशुभोपयोग होता जानै तहां शुभकौं उपायकरि अंगीकार करना युक्त है। या प्रकार अनेक व्यवहारकार्यकौं उथापि स्वच्छंदपनाकौं स्थापै है, ताका निषेध किया। अब तिस ही केवल निश्चयावलंबी जीवकी प्रवृत्ति दिखाइए है--

एक शुद्धात्माकौं जाने ज्ञानी होय है—अन्य किछू चाहिए नाहीं, ऐसा जानि कबहू एकांत तिष्ठकरि ध्यानमुद्रा धारि मैं सर्वकर्मउपाधिरहित सिद्धसमान आत्मा हों, इत्यादि विचारकरि संतुष्ट हो है। सो ए विशेषण कैसैं संभवैं। असंभव हैं, ऐसा विचार नाहीं। अथवा अचल अखंडित अनुपम आदि विशेषण-

निकरि आत्माकौं ध्यावै हैं, सो ए विशेषण अन्य द्रव्यनिविषै भी संभवै हैं। बहुरि ए विशेषण किस अपेक्षा है, सो विचार नाहीं। बहुरि कदाचित् सूता बैठ्या जिस तिस अवस्थाविषै ऐसा विचार राखि आपकौं ज्ञानी मानै है। बहुरि ज्ञानीकै आश्रव बंध नाहीं, ऐसा आगमविषै कह्या है। तातैं कदाचित् विषयकषायरूप हो हैं। तहां बंध होनेका भय नाहीं हैं। स्वच्छंद भया रागादिकरूप प्रवर्तै है। सो आपा परकौं जाननेका तौ चिह्न वैराग्यभाव है, सो समयसारविषै कह्या है—

सम्यग्दृष्टेर्भवति नियतं ज्ञानवैराग्यशक्तिः।

याका अर्थ— यह सम्यग्दृष्टीकै निश्चयसौं ज्ञानवैराग्यशक्ति होय। बहुरि कह्या है—

सम्यग्दृष्टिः स्वयमयमहं जातु बन्धो न मे स्या—
दित्युत्तानोत्पुलकवदना रागिणोप्याचरन्तु।
आलम्ब्यन्तां समितिपरतां ते यतोद्यापि पापाः
आत्मानात्मावगमविरहात्सन्ति सम्यक्त्वशून्याः॥ १ ॥

याका अर्थ-स्वयमेव यह मैं सम्यग्दृष्टी हौं, मेरै कदाचित् बंध नाहीं, ऐसैं ऊंचा फुलाया है मुख जिननैं ऐसे रागी वैराग्य-शक्तिरहित भी आचरण करै हैं, तौ करौ, बहुरि पंचसमितिकी सावधानीकौ अवलंबै है, तौ अवलंबौ, ज्ञानशक्ति विना अजहू पापी ही हैं। ए दोऊ आत्मा अनात्माका ज्ञानरहितपनातैं सम्यक्त्व-रहित ही हैं।

बहुरि पूछिए है —परकौं पर जान्या, तौ परद्रव्यविषै रागादि

करनेका कहा प्रयोजन रह्या। तहां वह कहै है—मोहकें उदयतैं रागादि हो हैं। पूर्वै भरतादि ज्ञानी भए, तिनिकै भी विषय कषायरूप कार्य भया सुनिए है। ताका उत्तर—

ज्ञानकै भी मोहके उदयतैं रागादिक हो हैं यह सत्य, परंतु बुद्धिपूर्वक रागादिक होते नाहीं। सो विशेष वर्णन आगै करैंगे बहुरि जाकै रागादि होनेका किछू विषाद नाहीं तिनिके नाशका उपाय नाहीं, ताकै रागादिक बुरे हैं ऐसा श्रद्धान भी नाहीं संभवै है। ऐसे श्रद्धानविना सम्यग्दृष्टी कैसैं होय। जीवाजीवादि तत्त्वनिके श्रद्धान करनेका प्रयोजन तौ इतना ही श्रद्धान है। बहुरि भरतादि सम्यग्दृष्टीनिकै विषय कषायनिकी प्रवृति जैसैं हो है, सो भी विशेष आगैं कहैंगे। तू उनका उदाहरणकरि स्वच्छंद होगा, तौ तेरै तीव्र आस्रव बंध होगा सो ही कह्या है—

मग्नाः ज्ञाननयैषिणोपि यदि ते स्वच्छन्दमन्दोद्यमाः।

याका अर्थ—यह ज्ञाननयके अवलोकनहारे भी जे स्वच्छंद मंदउद्यमी हो है, ते संसारविषैं बूड़े। और भी तहां "**ज्ञानिनः कर्म्म न जातु कर्त्तुमुचितं**"—इत्यादि कलशाविषै वा "**तथापि न निरर्गलं चरितुमिष्यते ज्ञानिनः**"—इत्यादि कलशाविषै स्वच्छंद होना निषेध्या है। विना चाहि जो कार्य्य होय सो कर्मबंधका कारण नाहीं। अभिप्रायतैं कर्त्ता होय करै अर ज्ञाता रहै, तौ बनै नाहीं इत्यादि निरूपण किया है। तातैं रागादिक बुरे अहितकारी जानि तिनका नाशके अर्थ उद्यम राखना। तहां अनुक्रमविषै पहलै तीव्ररागादि छोड़नेके अनेक अशुभ कार्य छोड़ि

शुभकार्यविषै लागना पीछै मंदरागादि भी छोड़नेके अर्थ शुभकौं छोड़ शुद्धोपयोगरूप होना। बहुरि केई जीव व्यापारादि कार्य वा स्त्रीसेवनादि कार्यनिकौ भी घटावै हैं। बहुरि शुभकौ हेय जानि शास्त्राभ्यासादि कार्यनिविषै नाहीं प्रवर्त्तै हैं। वीतरागभावरूप शुद्धोपयोगकौ प्राप्त भए नाहीं, ते जीव अर्थ काम धर्म्म मोक्षरूप पुरुषार्थतैं रहित होतसतै आलसी निरुद्यमी हो है। तिनकी निंदा पंचास्तिकायकी व्याख्याविषै कीनी है। तिनकौ दृष्टांत दिया है—जैसैं बहुत खीर खांड़ खाय पुरुष आलसी हो है, वा जैसै वृक्ष निरुद्यमी हैं, तैसै ते जीव आलसी निरुद्यमी भए है। अब इनकौं पूछिए हैं—तुम बाह्य तौ शुभ अशुभ कार्यनिकौ घटाया, परंतु उपयोग तौ आलंबनविना रहता नाहीं, सो तुम्हारा उपयोग कहां रहै है, सो कहो। जो वह कहै—आत्माका चिंतवन करैं हैं तौ शास्त्रादिकरि अनेक प्रकारका आत्माका विचारकौं तौ तुम विकल्प ठहराया अर कोई विशेषण आत्माके जाननेमैं बहुत काल लागै नाहीं वारंवार एकरूप चिंतवनविषै छद्मस्थका उपयोग लागता नाहीं। गणधरादिकका भी उपयोग ऐसै न रहि सकै, तातैं तेहू शास्त्रादि कार्यनिविषै प्रवर्त्तैं है। तेरा उपयोग गणधरादिकतैं भी शुद्ध भया कैसैं मानिए तातै तेरा कहना प्रमाण नाहीं। जैसैं कोऊ व्यापारादिविषै निरुद्यमी होय ठाला जैसैं तैसैं काल गमावै तैसैं तू धर्म्मविषै निरुद्यमी होय प्रमादी यौं ही काल गमावै, है। कबहू किछू चिंतवनसा करै, कबहू बातैं बनावै, कबहू भोजनादि करै, अपना उपयोग निर्मल करनेकैं

शास्त्राभ्यास तपश्चरण भक्तिआदि कार्यनिविषै प्रवर्त्तता नाहीं। सूनासा होय प्रमादी होनेका नाम शुद्धोपयोग ठहराय, तहां क्लेश थोरा होनेतैं जैसैं कोई आलसी होय परचा रहनैमैं सुख मानै, तैसैं आनंद मानै है। अथवा जैसैं सुपनेविषै आपकौं राजा मानि सुखी होय, तैसैं आपकौं भ्रमतैं सिद्ध समान शुद्ध मानि आप ही आनंदित हो है। अथवा जैसैं कहीं रति मानि सुखी हो है, तैसैं किछू विचार करनेविषै रति मानि सुखी होय, ताकौं अनुभवजनित आनंद कहै है। बहुरि जैसैं कही अरति मानि उदास होय, तैसैं व्यापारादिक पुत्रादिककौं खेदका कारण जानि तिनतैं उदास रहै है, ताकौं वैराग्य मानै है। सो ऐसा ज्ञान वैराग्य तौ कषायगर्भित है। जो वीतरागरूप उदासीन दशाविषै निराकुलता होय, सो सांचा आनंद ज्ञान वैराग्य ज्ञानी जीवनिकै चारित्रमोहकी हीनता भए प्रगट हो है। बहुरि वह व्यापारादि क्लेश छोड़ि यथेष्ट भोजनादिकरि सुखी हुवा प्रवर्त्तै है। आपकौं तहां कषायरहित मानै है, सो ऐसैं आनंदरूप भए तौ रौद्रध्यान हो है। जहां सुखसामग्री छोड़ि दुखसामग्रीका संयोग भए संक्लेश न होय रागद्वेष न उपजै, तहां निःकषायभाव हो है। ऐसैं भ्रमरूप तिनकी प्रवृत्ति पाईए है। या प्रकार जे जीव केवल निश्चयाभासके अवलंबी हैं, ते मिथ्यादृष्टी जानने। जैसैं वेदांती वा सांख्यमतवाले जीव केवल शुद्धात्माके श्रद्धानी हैं, तैसैं ए भी जानने। जातैं श्रद्धानकी समानताकरि उनका उपदेश इनकौं इष्ट लागै है, इनका उपदेश उनकौं इष्ट लागै है। बहुरि तिन जीवनिकै ऐसा श्रद्धान

है--जो केवल शुद्धात्माका चिंतवनतैं तौ संवर निर्ज्जरा हो है वा मुक्तात्माका सुखका अंश तहां प्रगट हो है। बहुरि जीवके गुण-स्थानादि अशुद्ध भावनिका वा आप विना अन्य जीव पुद्गलादिकका चिंतवन किए आस्रव बंध हो है! तातैं अन्य विचारतैं पराङ्मुख रहै हैं। सो यह भी सत्य श्रद्धान नाहीं। जातैं शुद्ध स्वद्रव्यका चिंतवन करौ, वा अन्य चिंतवन करौ। जो वीतरागता लिए भाव, होय तौ तहां संवर निर्ज्जरा ही है। अर जहां रागादिरूप भाव हो तहां आस्रव बंध है। जो परद्रव्यके जानेहीतै आस्रव बंध होय तौ केवली तौ समस्त परद्रव्यकौं जानै है तिनिकै भी आस्रव बंध होय। बहुरि वह कहै है—जो छद्मस्थकै परद्रव्य चिंतवन होतैं आस्रव बंध हो है। सो भी नाहीं, जातै शुक्लध्यानविषै भी मुनि-निकै छहों द्रव्यनिका द्रव्यगुणपर्यायनिका चिंतवन होना निरूपण किया है वा अवधिमनःपर्ययादिविषै परद्रव्यके जाननेकी विशेषता हो है। बहुरि चौथा गुणस्थानविषै कोई अपने स्वरूपका चिंतवन करै है, ताकै भी आस्रव बंध अधिक है, वा गुणश्रेणी निर्ज्जरा नाहीं है। पंचम षष्ठम गुणस्थानविषै आहार विहारादि क्रिया होतैं परद्रव्य चिंतवनतैं भी आस्रव बंध थोरा हो है वा गुण-श्रेणी निर्जरा हुवा करै है। तातैं स्वद्रव्य परद्रव्यका चिंतवनतै निर्जरा बंध नाहीं। रागादिक घटे निर्जरा है, रागादिक भए बंध है। ताकौं रागादिकके स्वरूपका यथार्थ ज्ञान नाहीं, तातैं अन्यथा मानै है। तहां वह पूछै है कि, ऐसैं है तौ निर्विकल्पदशाविषै नयप्रमाण निक्षेपादिकका वा दर्शन ज्ञानादिकका भी विकल्प

करनेका निषेध किया है, सो कैसें है। ताका उत्तर—

जे जीव इनही विकल्पनिविषैं लागि रहे हैं, अभेदरूप एक आपकौं नाहीं अनुभवै हैं, तिनकौं ऐसा उपदेश दिया है जो ए सर्व विकल्प वस्तुका निश्चयकरनेकौं कारन है। वस्तुका निश्चय भए इनका प्रयोजन किछू रहता नाहीं। तातैं इन विकल्पनिकौं भी छोड़ि अभेदरूप एक आत्माका अनुभव करना। इनकें बिचाररूप विकल्पनिहीविषै फँसि रहना योग्य नाहीं। बहुरि वस्तुका निश्चय भए पीछैं ऐसा नाहीं, जो सामान्यरूप स्वद्रव्यहीका चिंतवन रह्या करै। स्वद्रव्यका वा परद्रव्यका सामान्यरूप वा बिशेषरूप जानना होय, परंतु वीतरागता लिए होय, तिसहीका नाम निर्विकल्पदशा है। तहां वह पूछै है—यहां तौ बहुत विकल्प भए, निर्विकल्पदशा कैसें संभवै। ताका उत्तर —

निर्विचार होनेका नाम निर्विकल्प नाहीं है। तातैं छद्मस्थकै जानना विचार लिए है। ताका अभाव मानै ज्ञानका अभाव होय, तब जड़पना भया। सो आत्माके होता नाहीं। तातैं विचार तौ रहै। बहुरि जो कहिए एक सामान्यका ही विचार रहता है, विशेषका नाहीं। तौ सामान्यका विचार तौ बहुतकाल रहता नाहीं वा विशेषका अपेक्षाविना सामान्यका स्वरुप भासता नाहीं। बहुरि कहिए—आपहीका विचार रहता है, परका नाहीं तौ परविषै परबुद्धि भए विना आपविषै निजबुद्धि कैसै आवै। तहां वह कहै है समयसारविषैं ऐसा कह्या है—

भावयेद्भेदविज्ञानमिदमच्छिन्नधारया ।
तावद्यावत्पराच्च्युत्वा ज्ञानं ज्ञाने प्रतिष्ठिते ॥ १ ॥

याका अर्थ-यह भेदविज्ञान तावत् निरंतर भावना, यावत् परतैं छूटैं ज्ञान है सो ज्ञानविषै स्थिति होय । तातैं भेदविज्ञान छूटे परका जानना मिटि जाय है । केवल आपहीकौं आप जान्या करै है ।

सो यहां तौ यह कह्या है--पूर्वं आपा परकौं एक जानै था, पीछै जुदा जाननेकौं--भेदविज्ञानकौं तावत् भावना ही योग्य है यावत् ज्ञान पररूपकौं भिन्न जानि अपने ज्ञानस्वरूपहीविषै निश्चित होय । पीछै भेदविज्ञान करनेका प्रयोजन रह्या नाहीं । स्वयमेव परकौं पररूप आपकौं आपरूप जान्या करै है । ऐसा नाहीं, जो परद्रव्यका जानना ही मिटि जाय है । जातैं परद्रव्यका जानना वा स्वद्रव्यका विशेष जाननेका नाम विकल्प नाहीं है । तौ कैसे है, सो कहिए है—राग द्वेषके वशतै किसी ज्ञेयके जाननेविषै उपयोग लगावना । ऐसै वारवार उपयोगकौं भ्रमावना, ताका नाम विकल्प है । वहुरि जहां वीतराग होय जाकौं जानैं है ताकौं यथार्थ जानैं है । अन्य अन्य ज्ञेयके जाननेके अर्थि उपयोगकौं नाहीं भ्रमावै है । तहां निर्विकल्पदशा जाननी । यहां कोऊ कहै--छद्मस्थका उपयोग तौ नाना ज्ञेयविषै भ्रमै ही भ्रमै । तहां निर्विकल्पता कैसै संभवै है । ताका उत्तर----

जेतैं काल एक जाननेरूप रहै, तेतै निर्विकल्प नाम पावै । सिद्धांतविषै ध्यानका लक्षण ऐसा ही किया है "एकाग्रचिंता-

निरोधो ध्यानम्" । एकका मुख्य चिंतवन होय अर अन्य चिंता रुकै, ताका नाम ध्यान है । सर्वार्थसिद्धि सूत्रांकी टीकाविषै यह विशेष कह्या है । जो सर्व चिंता रुकनेका नाम ध्यान होय, तौ अचेतनपनो होय जाय । बहुरि ऐसी भी विविक्षा है—जो संतान अपेक्षा नाना ज्ञेयका भी जानना होय । परंतु यावत् वीतरागता रहै, रागादिककरि आप उपयोगकौं भ्रमावै नाहीं, तावत् निर्विकल्पदशा कहिए है । बहुरि वह कहै-ऐसैं है, तौ परद्रव्यतैं छुड़ाय स्वरूपविषै उपयोग लगावनेका उपदेश काहेकौं दिया है । ताका समाधान—

जो शुभ अशुभ भावनिकौं कारण परद्रव्य हैं, तिनविषै उपयोग लगे जिनकै राग द्वेष होय आवै है, अर स्वरूपाचिंतवन करै तौ राग द्वेष घटै है, ऐसे नीचली अवस्थावारे जीवनिकौं पूर्वोक्त उपदेश है । जैसैं कोऊ स्त्री विकारभावकरि काहूकै घर जाय थी, ताकौं मनै करी-परघर मति जाय, घरमैं बैठि रहौ । बहुरि जो स्त्री निर्विकार भावकरि काहूकै घर जाय, यथायोग्य प्रवर्तै, तौ किछू दोष है नाहीं । तैसैं उपयोगरूप परणति राग-द्वेषभावकरि परद्रव्यनिविषै प्रवर्तै थी, ताकौं मनैं करी—परद्रव्य-निविषै मति प्रवर्तै, स्वरूपविषै मग्न रहौ । बहुरि जो उपयोगरूप परणति वीतरागभावकरि परद्रव्यकौं जानि यथायोग्य प्रवर्तै, तौ किछू दोष है नाहीं । बहुरि वह कहै है--ऐसैं है, तौ महा मुनि परिग्रहादिक चिंतवनका त्याग काहेकौं करैं हैं । ताका समाधान---

जैसैं विकाररहित स्त्री कुशीलके कारण परघरनिका त्याग करै, तैसैं वीतरागपरणति राग द्वेषके कारण परद्रव्यनिका त्याग करै है। बहुरि जे व्यभिचारके कारण नाहीं, ऐसे परघर जानेका त्याग है नाहीं। तैसैं जे राग द्वेषके कारण नाहीं, ऐसे परद्रव्य जाननेका त्याग है नाहीं। बहुरि वह कहै है--जो जैसैं स्त्री प्रयोजन जानि पितादिककै घर जाय तौ जाओ, विना प्रयोजन जिस तिसके घर जाना तौ योग्य नाहीं। तैसैं परिणतिकौं प्रयोजन जानि सप्ततत्त्वनिका विचार करना। विना प्रयोजन गुणस्थानादि-कका विचार करना योग्य नाहीं। ताका समाधान---

जैसैं स्त्री प्रयोजन जानि पितादिक वा मित्रादिककै भी घर जाय, जैसैं परणति तत्त्वनिका विशेष जाननेकौं कारण गुणस्था--नादिक कर्म्मादिककौं भी जानै। बहुरि यहां ऐसा जानना-जैसैं शीलवती स्त्री उद्यमकरि तौ विटपुरुषनिकै स्थान न जाय, अर परवश जाना बनि जाय, तौ तहां कुशील न सेवै, तौ स्त्री शीलवती ही है। तैसैं वीतरागपरणति उपायकरि तौ रागादिकके कारण परद्रव्यनिविषै न लागै। जो स्वयमेव तिनका जानना होय जाय, अर तहां रागादि न करै तौ परणति शुद्ध ही है। तैसैं स्त्री आदिकी परीषह मुनिनकै होय, तिनकौं जानैं ही नाहीं, अपने स्वरूपहीका जानना रहै है, ऐसा मानना मिथ्या है। उनकौं जानै तौ है, परंतु रागादिक नाहीं करै है। या प्रकार परद्रव्यनिकौं जानतैं भी वीतरागभाव हो है, ऐसा श्रद्धान करना। बहुरि वह कहै है--ऐसैं है तौ शास्त्रविषै ऐसैं कैसैं कह्या है, जो

आत्माका श्रद्धान ज्ञान आचरण सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र है ।
ताका समाधान—

अनादितै परद्रव्यविषै आपका श्रद्धान ज्ञान आचरण था, ताकौ छुड़ावनेकौं यह उपदेश है। आपहीविषै आपका श्रद्धान ज्ञान आचरण भए परद्रव्यविषै रागद्वेषादिपरणतिका श्रद्धान वा ज्ञान वा आचरण मिटि जाय, तब सम्यग्दर्शनादि हो है। जो परद्रव्यका परद्रव्यरूप श्रद्धानादि करनेतैं सम्यग्दर्शनादि न होते होंय, तौ केवलीकै भी तिनका अभाव होय। जहां परद्रव्यकौं बुरा जानना, निजद्रव्यकौं भला जानना, तहां तौ राग द्वेष सहज ही भया। तहां आपकौं आपरूप परकौं पररूप यथार्थ जान्या करै, तैसैं ही श्रद्धानादिरूप प्रवर्तै, तब ही सम्यग्दर्शनादि हो है। ऐसैं जानना। तातैं बहुत कहा कहिए, जैसैं रागादि मिटावनेका श्रद्धान होय, सो ही श्रद्धान सम्यग्दर्शन है। बहुरि जैसैं रागादि मिटावनेका जानना होय, सो ही जानना सम्यक्ज्ञान है। बहुरि जैसैं रागादि मिटैं, सो ही आचरण सम्यक्चारित्र है। ऐसा ही मोक्षमार्ग मानना योग्य है। या प्रकार निश्चयनयका आभास लिए एकांतपक्षके धारी जैनाभास तिनकै मिथ्यात्वका निरूपण किया।

अब व्यवहाराभास पक्षके जैनाभासनिकै मिथ्यात्वका निरूपण कीजिए है—जिनआगमविषै जहां व्यवहारकी मुख्यताकरि उपदेश है, ताकौं मानि बाह्यसाधनादिकहीका श्रद्धानादिक करै है, तिनिके सर्व धर्मके अंग अन्यथारूप होय मिथ्याभावकौं प्राप्त होंय हैं।

यहां ऐसा जानि लेना—व्यवहारधर्मकी प्रवृत्तितै पुण्यबंध होय है, तातैं पापप्रवृत्ति अपेक्षा तौ याका निषेध है नाहीं। परंतु इहां जो जीव व्यवहार प्रवृत्तिहीकरि सन्तुष्ट होइ, सांचा मोक्षमार्गविषै उद्यमी न होय है, ताकौ मोक्षमार्गविषै सन्मुख करनेकौं तिस शुभरूप मिथ्याप्रवृत्तिका भी निषेधरूप निरूपण कीजिए है। जो यहु कथन कीजिए हैं ताकौं सुनि जो शुभवृत्ति छोड़ि अशुभविषै प्रवृत्ति करैगे, तौ तुम्हारा बुरा होगा और जो यथार्थ श्रद्धानकरि मोक्षमार्गविषै प्रवृत्त होवैंगे, तौ तुम्हारा भला होगा। जैसैं कोऊ रोगी निर्गुण औषधिका निषेध सुनि औषधि साधन छोड़ि कुपथ्य करैगा, तौ मरैगा, वैद्यका कछू दोष है नाहीं। तैसैं ही कोउ संसारी पुण्यरूप धर्मका निषेध सुनि धर्मसाधन छोड़ि विषय कषायरूप प्रवर्त्तैगा तौ वह ही नरकादिविषै दुख पावैगा। उपदेश दाताका तौ दोष नाहीं। उपदेश देनेवालेका अभिप्राय असत्य श्रद्धानादि छुड़ाय मोक्षमार्गविषै लगावनेका जानना। सो ऐसा अभिप्रायतै इहां निरूपण कीजिए है। इहां कोई जीव तौ कुलक्रमकरि ही जैनी हैं, जैनधर्मका स्वरूप जानते नाहीं। परन्तु कुलविषै जैसी प्रवृत्ति चली आई, तैसैं प्रवर्त्तैं हैं। सो जैसैं अन्यमती अपने कुलधर्मविषै प्रवृत्तै है, तैसैं ही यहु प्रवृत्तै हैं। जो कुलक्रमहीते धर्म होय, तौ मुसलमान आदि सर्व ही धर्मात्मा होंइ। जैनधर्मका विशेष कहा रह्या। सोई कह्या है—

लोयम्मि रायणीई णायं ण कुलकम्म कइयावि।
किं पुण तिलोयपहुणो जिणंदधम्माहिगारम्मि॥ १॥

लोकविषै यहु राजनीति है- कदाचित् कुलक्रमकरि न्याय नाहीं होय है। जाका कुल चोर होय, ताकौं चोरकरि पकरै तौ वाका कुलक्रम जानि छोड़ै नाहीं, दंड ही दे। तौ त्रिलोक-प्रभु जिनेन्द्रदेवके धर्मका अधिकारविषै कहा कुलक्रम अनुसारि न्याय संभवै। बहुरि जो पिता दरिद्री होय आप धनवान् होय, तहां तौ कुलक्रम विचारि आप दरिद्री रहता ही नाहीं। धर्मविषै कुलका कहा प्रयोजन है। बहुरि पिता नरकि जाय, पुत्र मोक्ष जाय। तहां कुलक्रम कैसैं रह्या। जो कुल ऊपरि दृष्टि होय, तौ पुत्र भी नरकगामी होय। तातैं धर्मविषै किछू कुलक्रमका प्रयोजन नाहीं। शास्त्रनिका अर्थ विचारि जो काल-दोष तैं जिनधर्मविषै भी पापी पुरुषनिकरि कुदेव कुगुरु कुधर्म सेवनादिरूप वा विषयकषायपोषणादिरूप विपरीति प्रवृति चलाई होइ, ताका त्याग करि जिनआज्ञा अनुसारि प्रवर्तना योग्य है। इहां कोऊ कहै--परंपरा छोड़ि नवीन मार्गविषै प्रवर्तना योग्य नाहीं। ताकौं कहिए है----

जो अपनी बुद्धिकरि नवीन मार्ग प्रवर्तै, तो युक्त नाहीं। जो परंपरा अनादिनिधन जैनधर्मका स्वरूप शास्त्रनिविषै लिख्या है, ताकी प्रवृत्ति मेटि पापीपुरुषां अन्यथा प्रवृति चलाई, तौ ताकौं परंपराय मार्ग कैसैं कहिए। बहुरि ताकौं छोड़ि पुरातन जैनशास्त्रनिविषै जैसा धर्म लिख्या था तैसे प्रवर्तै, तौ ताकौं नवीन मार्ग कैसैं कहिए। बहुरि जो कुलविषै जैसे जिन--देवकी आज्ञा है, तैसैं ही धर्मकी प्रवृत्ति है, तौ अपको भी

तैसैं ही प्रवर्त्तना योग्य है । परंतु ताका कुलाचरण जानना, धर्म जानि ताके स्वरूप फलादिकका निश्चय करि अंगीकार करना । जो सांचा भी धर्मको कुलाचार जानि प्रवर्तै है, तौ ताकौं धर्मात्मा न कहिए । जातैं सर्व कुलके उस आचरणको छोड़ै, तौ आप भी छोड़ि दे । बहुरि जो वह आचरण करै है, सो कुलका भयकरि करै है । किछू धर्मबुद्धितैं नाहीं करै है । तातैं वह धर्मात्मा नाहीं । ऐसे विवाहादि कुलसंबंधी कार्यनिविषैं तौ कुलक्रमका विचार करना और धर्मसंबंधी कार्यविषैं कुलका विचार न करना । जैसैं धर्ममार्ग सांचा है, तैसैं प्रवर्तना योग्य है । बहुरि कोई आज्ञा अनुसारि जैनी है । जैसैं शास्त्रविषै आज्ञा है, तैसैं मानै हैं । परन्तु आज्ञाकी परीक्षा करैं नाहीं । सो आज्ञा ही मानना धर्म होय, तौ सर्व मतवारे अपने २ शास्त्रकी आज्ञा मानि धर्मात्मा होंइ । तातैं परीक्षाकरि जिनवचनकौ सत्यपनो पहिचानि जिनआज्ञा माननी योग्य है । विना परीक्षा किए सत्य असत्यका निर्णय कैसै होय । और विना निर्णय किए जैसैं अन्यमती अपने २ शास्त्रनिकी आज्ञा मानै हैं, तैसैं याने जैनशास्त्रकी आज्ञा मानी । यहु तो पक्षकरि आज्ञा मानना है । कोउ कहै—शास्त्रविषै दश प्रकार सम्यक्त्वविषैं आज्ञासम्यक्त्व कह्या है, वा आज्ञाविचयधर्मध्यानका भेद कह्या है, वा निःशंकित अंगविषै जिनवचनविषै संशय करना निषेध्या है, सो कैसे है । ताका समाधान—

शास्त्रविषै केई कथन तौ ऐसे हैं, जिनका प्रत्यक्ष अनुमान

करि सकिए है। बहुरि केई कथन ऐसे हैं जो प्रत्यक्ष अनुमानादिगोचर नाहीं। तातैं आज्ञाहीकरि प्रमाण होय है। तहां नाना शास्त्रनिविषै जो कथन समान होय, तिनकी तौ परीक्षा करनेका प्रयोजन ही नाहीं। बहुरि जो कथन परस्परविरुद्ध होइ, तिनिविषै जो कथन प्रत्यक्ष अनुमानादिगोचर होय, तिनकी तौ परीक्षा करनी। तहां जिन शास्त्रके कथनकी प्रमाणता ठहरे, तिनि शास्त्रविषै जो प्रत्यक्ष अनुमानगोचर नाहीं, ऐसे कथन किए होंय, तिनकी भी प्रमाणता करनी। बहुरि जिन शास्त्रनिके कथनकी प्रमाणता न ठहरै, तिनके सर्व हू कथनकी अप्रमाणता माननी। इहां कोऊ कहै—परीक्षा किए कोई कथन कोई शास्त्रविषै प्रमाण भासै, कोई कथन कोई शास्त्रविषै अप्रमाण भासै तौ कहा करिए। ताका समाधान—

जो आप्तके भासे शास्त्र हैं, तिनिविषै कोई ही कथन प्रमाणविरुद्ध न होइ। जातै कै तौ जानपना ही न होइ, कै राग द्वेष होय, ते असत्य कहैं। सो आप्त ऐसा होय नाहीं, तातैं परीक्षा नीकी नाहीं कीनी है, तातै भ्रम है। बहुरि वह कहै है-छद्मस्थकै अन्यथा परीक्षा होय जाय, तौ कहा करै। ताका समाधान—

सांची झूठी दोऊ वस्तुनिकौं मीड़ै अर प्रमाद छोड़ि परिक्षा किए तौ सांची ही परीक्षा होइ। जहां पक्षपातकरि नीके परीक्षा न करै, तहां ही अन्यथा परीक्षा होय है। बहुरि वह कहै है, जो शास्त्रनिविषै परस्पर विरुद्ध कथन तो घनो, कौन-२ की परीक्षा करिए। ताका समाधान—

मोक्षमार्गविषै देव गुरु धर्म वा जीवादि तत्व वा बंधमोक्षमार्ग प्रयोजनभूत हैं, सो इनकी परीक्षा करिलैनी। जिन शास्त्रनिविषै ए साचे कहे तिनकी सर्व आज्ञा माननी। जिनविषै ए अन्यथा प्ररूपे तिनकी आज्ञा न माननी। जैसैं लोकविषै जो पुरुष प्रयोजनभूत कार्यनिविषै झूठ न बोलै, सो प्रयोजनरहितविषै कैसै झूठ बोलैगा। तैसैं जिन शास्त्रनिविषै प्रयोजनभूत देवादिका स्वरूप अन्यथा न कह्या, तिनविषै प्रयोजनरहित द्वीप समुद्रादिकका कथन अन्यथा कैसैं होगा जातै देवादिकका कथन अन्यथा किए वक्ताके विषय कषाय पोखे जांय है। इहां प्रश्न --जो देवादिकका कथन तो अन्यथा विषयकषायतैं किया, तिन ही शास्त्रनिविषै अन्य कथन अन्यथा काहेकौं किया। ताका समाधान--

जो एक ही कथन अन्यथा कहै, वाका अन्यथापना शीघ्र ही प्रगट होय जाइ। जुदी पद्धती ठहरै नाहीं। तातैं घने कथन अन्यथा करनैतैं जुदी पद्धती ठहरै। तहां तुच्छबुद्धी भ्रममें पड़िजाय—यह भी मत है। तातैं प्रयोजनभूतका अन्यथापनाका मेलनेके अर्थि अप्रयोजनभूत भी अन्यथा कथन घने किए। बहुरि प्रतीति अनावनेके अर्थि कोई २ सांचा भी कथन किया। परंतु स्याना होय, सो भ्रममैं परै नाहीं। प्रयोजनभूत कथनकी परीक्षाकरि जहां सांच भासै, तिस मतकी सर्व आज्ञा मानै, सो परीक्षा किए जैनमत ही सांचा भासै है। जातैं याका वक्ता सर्वज्ञ वीतराग है, सो झूठा काहेकौं कहै। ऐसैं जिन आज्ञा मानै, सो सांचा श्रद्धान होइ, ताका नाम आज्ञासम्यक्त्व है। बहुरि जहां

एकाग्र चिन्तवन होय, ताका नाम आज्ञाविचय धर्मध्यान है। जो ऐसैं न मानिए अर विना परीक्षा किए आज्ञा माने सम्यक्त्व वा धर्मध्यान होय जाय, तौ द्रव्यलिंगी आज्ञा मानि मुनि भया, आज्ञाअनुसारि साधनकरि ग्रैवेयिक पर्यंत प्राप्त होय, ताकै मिथ्यादृष्टिपना कैसैं रह्या। तातैं किछू परीक्षाकरि आज्ञा माने ही सम्यक्त्व वा धर्मध्यान होय है। लोकविषै भी कोई प्रकार परीक्षा किए पुरुषकी प्रतीति कीजिए है। बहुरि तै कह्या—जिन-बचनविषै संशय करनेतैं सम्यक्त्वको शंका नाम दोष होय, सो 'न जानिए यह कैसै है', ऐसा मानि निर्णय न कीजिए तो तहां शंका नाम दोष होय। बहुरि जहां निर्णय करनेको विचार करते ही सम्य-क्त्वको दोष लागै, तौ **अष्टसहस्री**विषै आज्ञाप्रधानतैं परीक्षाप्रधानको उत्तम काहेकौं कह्या। पृच्छना आदि स्वाध्यायके अंग कैसैं कहे। प्रमाण नयतैं पदार्थनिका निर्णय करनेका उपदेश काहेकौं दिया। तातैं परिक्षाकरि आज्ञा माननी योग्य है। बहुरि केई पापी पुरुषां अपना कल्पित कथन किया है अर तिनिकौं जिनवचन ठहरावैं हैं, तिनिकौं जैनमतका शास्त्र जानि प्रमाण न करना। तहां भी प्रमाणादिकतैं परीक्षाकरि वा परस्पर शास्त्रनतैं विधि मिलाय वा ऐसैं संभव है कि नाहीं, ऐसा विचारकरि विरुद्ध अर्थको मिथ्या ही जानना। जैसे ठिग आप पत्र लिखि तामैं लिखनवारेका नाम किसी साहूकारका धरया, नामके भ्रमतैं धनको ठिगावै, तौ दारिद्री ही होय। तैसैं पापी आप ग्रंथादि बनाया, तहां कर्ताका नाम जिन गणधर आचार्यनिका धरया, तिस नामके भ्रमतैं झूंठा श्रद्धान करै

तौ मिथ्यादृष्टी ही होय । बहुरि वह कहै है —**गोमटसार**विषै ऐसा कह्या है-सम्यग्दृष्टी जीव अज्ञानगुरुकै निमित्ततै झूठा भी श्रद्धान करै, तौ आज्ञा माननेतै सम्यग्दृष्टी होय है । सो यह कथन कैसैं किया है । ताका उत्तर—जो प्रत्यक्ष अनुमानादि-गोचर नाहीं, सूक्ष्मपनैतै जिनका निर्णय न होइ सकै, तिनिकी अपेक्षा यह कथन है । मूलभूत देव गुरु धर्मादि वा तत्त्वादिकका अन्यथा श्रद्धान भए, तौ सर्वथा सम्यक्त्व रहै नाहीं, यहु निश्चय करना । तातैं विना परीक्षा किए केवल आज्ञाहीकरि जैनी, हैं, ते भी मिथ्यादृष्टी जानने । बहुरि केई परीक्षा भी करि जैनी होय है, परंतु मूल परीक्षा नाहीं करै हैं दया शील तप संयमादि क्रियानिकरि वा पूजा प्रभावनादि कार्यनिकरि वा अतिशय चमत्कारादिकरि वा जिनधर्मतै इष्ट प्राप्ति होनेकरि जिनमतकौ उत्तम जानि प्रीतवंत होय जैनी होय हैं । अन्यमतविषै हू ए कार्य तौ होय है, तातै इन लक्षणनिविषै अतिव्याप्ति पाइए है । कोऊ कहै—जैसै जिनधर्मविषै ए कार्य हैं, तैसै अन्यमतविषै न पाइए है। तातै अतिव्याप्ति नाहीं । ताका साधन—

यह तौ सत्य है, ऐसै ही है। परंतु जैसै तू दयादिक मानै है तैसै तौ वै भी निरूपै है । परजीवनिकी रक्षाकौ दया तू कहे, सो ही वे कहै हैं । ऐसै ही अन्य जानने ।

बहुरि वह कहै—उनकै ठीक नाहीं । कबहू दया प्ररूपैं, कबहूं हिंसा प्ररूपै । ताका उत्तर—तहां दयादिकका अंशमात्र तौ आया । तातैं अतिव्याप्तिपना इनि लक्षणनिकरि पाइए है । इनि-

करि सांची परीक्षा होय नाहीं। तौ कैसैं होय। जिनधर्मविषै सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र मोक्षमार्ग कह्या है। तहां सांचे देवादिकका वा जीवादिका श्रद्धान किए सम्यक्त्व होय, वा तिनिकौं जाने सम्यग्ज्ञान होइ, वा सांचा रागादिक मिटैं सम्यक्चारित्र होइ, सो इनिका स्वरूप जैसैं जिनमतविषैं निरूपण किया है, तैसैं कहीं निरूपण किया नाहीं। वा जैनीविना अन्यमती ऐसा कार्य करि सकते नाहीं। तातैं यहु जिनमतका सांचा लक्षण है। इस लक्षणकौं पहचानि जे परीक्षा करैं, तेई श्रद्धानी हैं। इन विना अन्य प्रकारकरि परीक्षा करै हैं, ते मिथ्यादृष्टी ही रहै हैं।

बहुरि केई संगतिकरि जैनधर्म धारै हैं। कोई महान्‌पुरुषको जिनधर्मविषै प्रवर्त्तता देखि आप भी प्रवर्तैं हैं। केई देखा देखी जिनधर्मकी शुद्ध वा अशुद्ध क्रियानिविषै प्रवर्तैं हैं। इत्यादि अनेकप्रकारके जीव आप विचारकरि जिनधर्मका रहस्य नाहीं पहिचानै हैं अर जैनी नाम धरावै हैं, ते सर्व मिथ्यादृष्टी ही जानने। इतना तौ है, जिनमतविषै पापकी प्रवृत्ति विशेष नाहीं होय सकै है अर पुण्यके निमित्त घने हैं। अर सांचा मोक्षमार्गके भी कारण तहां बनि रहे हैं। तातैं जे कुलादिकरि भी जैनी हैं, ते भी औरनितैं तौ भले ही हैं बहुरि जे जीव कपटकरि आजीवकाके अर्थि वा बड़ाईके अर्थि वा किछू विषयकषायसंबंधी प्रयोजनविचारि जैनी हो हैं, ते पापी ही हैं। अति तीव्रकषाय भए ऐसी बुद्धि आवै है। उनका सुलझना भी कठिन है। जैनधर्म तौ संसारका नाशिके अर्थि सेवै है। ताकरि जो संसारके

प्रयोजन साध्या चाहै, सो वड़ा अन्याय करै है। तातै ते तौ मिथ्यादृष्टि हैं ही।

इहां कोऊ कहै—हिंसादिककरि जिन कार्यनिकौं करिए, ते कार्य धर्मसाधनकरि सिद्ध कीजिए, तौ बुरा कहा भया। दोऊ प्रयोजन सधै। ताकौ कहिए है—पापकार्य अर धर्मकार्यका एक साधन किए पाप ही होय। जैसैं कोऊ धर्मका साधन चैत्यालय वनाय, तिसहीकौं स्त्रीसेवनादि पापनिका भी साधन करै, तौ पाप ही होइ। हिंसादिककरि भोगादिकके अर्थि जुदा मंदिर वनावै, तौ वनावौ। परंतु चैत्यालयविषै भोगादि करना युक्त नाहीं। तैसैं धर्मका साधन पूजा शास्त्रादि कार्य है, तिनिहीकौ आजीविका आदि पापका भी साधन करै, तौ पापी ही होय। हिंसादिकरि आजीविकादिकके अर्थि व्यापारादि करै, तौ करौ। परंतु पूजादि कार्यनिविषै तौ आजीविका आदिका प्रयोजन विचारना युक्त नाहीं। इहां प्रश्न—जो ऐसैं है तौ मुनि भी धर्मसाधि परघर भोजन करैं हैं वा साधर्मीका उपकार करै करावै है, सो कैसैं वनै। ताका उत्तर—

जो आप किछू आजीविका आदिका प्रयोजन विचारि धर्म नाहीं साधै है, आपकौं धर्मात्मा जानि केइ स्वयमेव भोजन उपकारादि करै है, तौ किछू दोष है नाही। बहुरि जो आप ही भोजनादिकका प्रयोजन विचारि धर्म साधै है, तो पापी है ही। जे विरागी होय मुनिपनो अंगीकार करै है, तिनिकै भोजनादिकका प्रयोजन नाहीं। शरीरकी स्थितिके अर्थि स्वयमेव भोजनादिक

कोई दे तौ लें, नाहीं तौ समता राखै। संक्लेशरूप होय नाहीं। बहुरि आप हितकै अर्थि धर्म साधै हैं। उपकार करावनेका अभिप्राय नाहीं है। आपकै जाका त्याग नाहीं, ऐसा उपकार करावैं। कोई साधर्मी स्वयमेव उपकार करै, तौ करौ अर न करै तौ आपकै किछू संक्लेश होता नाहीं। सो ऐसैं तौ योग्य हैं। अर आप ही आजीविका आदिका प्रयोजन विचारि बाह्य धर्मका साधन करै तहां भोजनादिक उपकार कोई न करै तहां संक्लेश करै, याचना करै, उपाय करै, वा धर्मसाधनविषै शिथिल होय जाय, सो पापी ही जानना। ऐसैं संसारिक प्रयोजन लिए धर्म साधै हैं ते पापी भी हैं अर मिथ्यादृष्टि हैं ही। याप्रकार जिनमतवाले भी मिथ्यादृष्टि जानने। अब इनकै धर्मका साधन कैसैं पाइए है, सो विशेष दिखाइए है—

तहां जीव कुलप्रवृत्तिकरि वा देख्यां देखी लोभादिकका अभिप्रायकरि धर्म साधै हैं, तिनकै तौ धर्मदृष्टि नाहीं। जो भक्ति करै है तौ चित्त तौ कहीं है, दृष्टि फिरया करै है। अर मुखतै पाठादि करै है वा नमस्कारादि करै है। परंतु यह ठीक नाहीं - मैं कौन हौं, किसकी स्तुति करूं हूं, किस प्रयोजनके अर्थि स्तुति करौं हौं, पाठविषै कहा अर्थ है, सो किछू ठीक नाहीं। बहुरि कदाचित् कुदेवादिककी भी सेवा करने लगि जाय। तहां सुदेव गुरुशास्त्रादिविषै विशेष पहिचानै नाहीं। बहुरि जो दान दे है, तौ पात्र अपात्रका विचाररहित जैसैं अपनी प्रशंसा होय, तैसैं दान दे है। बहुरि तप करै है, तौ भूखा रहनेकरि महंतपनौ

होय सो कार्य करै है। परिणामिनकी पहिचान नाहीं। बहुरि व्रतादिक धारै हैं, तहां बाह्यक्रिया ऊपरि दृष्टि है। सो भी कोई सांची क्रिया करै है, कोई झूंठी करै है। अर अंतरंग रागादिक भाव पाइए है, तिनिका विचार ही नाहीं। वा बाह्य भी रागादि पोषनेका साधन करै है। बहुरि पूजा प्रभावना आदि कार्य करै है। तहां जैसैं लोकविषै बड़ाई होय वा विषय कषाय पोषे जांय तैसें कार्य करै है। बहुरि बहुत हिंसादिक निपजावै है। सो ए कार्य तौ अपना वा अन्य जीवनिका परिणाम सुधारनेके अर्थि कहे हैं। बहुरि तहां किंचित् हिंसादिक भी निपजै है, तौ थोरा अपराध होय गुण बहुत होय, सो कार्य करना कह्या है। सो परिणामनिकी पहचानि नाहीं। अर यहां अपराध केता लागै है, गुण केता हो है, सो नफा टोटाका ज्ञान नाहीं, वा विधि अविधिका ज्ञान नाहीं। बहुरि शास्त्राभ्यास करै है। तहां पद्धतिरूप प्रवर्तै है। जो वांचै है, तौ औरनिकौं सुनाय दे है। जो पढ़ै है, तौ आप पढ़ि जाय है। सुनै है तौ, कहै है सो सुनि ले है। जो शास्त्राभ्यासका प्रयोजन है, ताकौं आप नाहीं अवधारै है। इत्यादि धर्म्मकार्यनिका धर्मकौं नाहीं पहिचानै। केई तौ कुलविषै जैसै बड़े प्रवर्तैं, तैसै हमकौं भी करना, अथवा और करै है, तैसै हमकौं भी करना, वा ऐसैं किए हमारा लोभदिककी सिद्धि होगी, इत्यादि विचार लिए अभूतार्थ धर्मको साधै है। बहुरि केई जीव ऐसे है, जिनकै किछू तौ कुलादिरूप बुद्धि है, किछू धर्मबुद्धि भी है, तातै पूर्वोक्तप्रकार भी धर्मका साधन करै

हैं। अर किछू आगैं कहिए है, तिस प्रकार अपने परिणामनिकौं भी सुधारै हैं। मिश्रपनो पाईए है। बहुरि केई धर्म्मबुद्धिकरि धर्म्म साधै हैं। परंतु निश्चयधर्म्मकौं न जानै हैं। तातैं अभूतार्थ धर्मकौं साधै हैं। तहां व्यवहार सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित्रकौं मोक्षमार्ग जानि तिनिका साधन करै हैं। तहां शास्त्रविषै देव गुरु धर्म्मकी प्रतीति लिए सम्यक्त्व होना कह्या है। ऐसी आज्ञा मानि अरहंत देव निर्ग्रंथ गुरु जैनशास्त्र विना औरनिकौं नमस्कारादि करनेका त्याग किया है। परंतु तिनका गुण अवगुणकी परीक्षा नाहीं करै है। अथवा परीक्षा भी करैं, तौ तत्वज्ञानपूर्वक सांची परीक्षा नाहीं करै हैं। बाह्यलक्षणनिकारि परीक्षा करै हैं। ऐसैं प्रतीतिकरि सुदेव गुरु शास्त्रनिकी भक्तिविषै प्रवर्त्तै हैं। तहां अरहंत देव है, सो इंद्रादिकरि पूज्य है अनेक अतिशयसहित हैं, क्षुधादिदोषरहित है, शरीरकी सुंदरताकौं धरै है, स्त्रीसंगमादि रहित है, दिव्यध्वनिकरि उपदेश दे है, केवलज्ञानकरि लोकालोक जानै है, काम क्रोधादि नष्ट किए हैं, इत्यादि विशेषण कहै है। तहां इनविषै केई विशेषण पुद्गलके आश्रय हैं, केई जीवके आश्रय हैं। तिनकौं भिन्न भिन्न नाहीं पाहिचानै है। जैसैं असमानजातीय मनुष्यादि पर्यायनिविषै भिन्न न जानि मिथ्यादृष्टि धरै है, तैसैं यह असमान जातीय अरहंतपर्यायविषै जीव पुद्गलके विशेषणनिकौं भिन्न न जानि मिथ्यादृष्टिता धरै है। बहुरि जो बाह्य विशेषण हैं, तिनकौं तौ जानि तिनकरि अरहंतदेवको महंतपनो विशेष मानै है। अर जे जीवके विशेषण हैं, तिनकौं

यथावत् न जानि तिनकरि अरहंतदेवको महंतपनो आज्ञा अनुसार मानै है। अथवा अन्यथा मानै है। जातै यथावत् जीवकौं विशेषण जाने मिथ्यादृष्टी रहै नाहीं। बहुरि तिन अरहंतनिकौं स्वर्गमोक्षका दाता दीनदयाल अधमउधारक पतितपावन मानै है। सो अन्यमती कर्तृत्वबुद्धितै ईश्वरकौं जैसै मानै है, तैसैं यह अरहंतकौं मानै है। ऐसा नाहीं जानै है—फल तौ अपने परिणामनिका लागै है, अरहंतनिकौ निमित्त मानै हैं, तातैं उपचारकरि वै विशेषण संभवै हैं। अपने परिणाम शुद्ध भए विना अरहंत हू स्वर्गमोक्षादिका दाता नाहीं। बहुरि अरहंतादिकके नामादिकतैं श्वानादिक स्वर्ग पाया। तहां नामादिकका ही अतिशय मानै है. विना परिणाम नाम लेनेवालेकैं भी स्वर्गकी प्राप्ति न होय, तौ सुननेवालेकैं कैसे होय। श्वानादिककैं नाम सुननेके निमित्ततैं मंदकषायरूप भाव भए है। तिनका फल स्वर्ग भया है। उपचार करि नामहीकी मुख्यता करी है। बहुरि अरहंतादिकके नाम पूजनादिकतैं अनिष्ट सामग्रीका नाश इष्ट सामग्रीकी प्राप्ति मानि रोगादि मेटनेके अर्थि वा धनादिकी प्राप्तिके अर्थि नाम ले है वा पूजनादि करै है। सो इष्ट अनिष्टके तौ कारण पूर्वकर्मका उदय है। अरहंत तौ कर्त्ता है नाहीं। अरहंतादिककी भक्तिरूप शुभोपयोग परिणामनितै पूर्व पापका संक्रमणादि होय जाय है। तातै उपचारकरि अनिष्टका नाशकौं इष्टकी प्राप्तिकौं कारण अरहंतादिककी भक्ति कहिए है। अर जो जीव पहलै ही संसारी प्रयोजन लिए भक्ति करै, ताकै तौ पापहीका अभिप्राय रह्या

कांक्षारूप भाव भए तिनकरि पूर्वपापका संक्रमणादि कैसैं होय। बहुरि तिनका कार्यसिद्ध न भया। बहुरि केई जीव भक्तिकौं मुक्तिका कारण जानि तहां अति अनुरागी होय प्रवर्तैं हैं। सो अन्यमती जैसैं भक्तितैं मुक्ति मानै हैं, तैसैं याकै भी श्रद्धान भया। सो भक्ति तौ रागरूप है। रागतैं बंध है। तातैं मोक्षका कारण नाहीं। जब रागका उदय आवै, तब भक्ति न करै, तौ पापानुराग होय। तातैं अशुभ राग छोड़नेकौं ज्ञानी भक्तिविषै प्रवर्तैं हैं। वा मोक्षमार्गकौं बाह्य निमित्तमात्र भी जानै हैं। परंतु यहां ही उपादेयपना मानि संतुष्ट न हो हैं। शुद्धोपयोगका उद्यमी रहै हैं। सो ही पंचास्तिकायव्याख्याविषै कह्या है—

इयं भक्तिः केवलभक्तिप्रधानस्याज्ञानिनो भवति। तीव्ररागद्वेषविनोदार्थमस्थानरागनिषेधार्थं क्वचित् ज्ञानिनोपि भवति॥

याका अर्थ—यह भक्ति केवलभक्ति ही है प्रधान जाकै ऐसा अज्ञानीजीवकै ही है। बहुरि तीव्र रागज्वर मेटनेकै अर्थ वा कुठिकानैं रागनिषेधनेके अर्थि कदाचित् ज्ञानीकै भी हो है। तहां वह पूछै है—ऐसैं है, तौ ज्ञानीतैं अज्ञानीकै भक्तिकी विशेषता होती होगी ताका उत्तर—

यथार्थपनेकी अपेक्षा तौ ज्ञानकै सांची भक्ति है—अज्ञानीकै नाहीं है। अर रागभावकी अपेक्षा अज्ञानीकै श्रद्धानविषै भी मुक्तिकारण जाननेतैं अति अनुराग है। ज्ञानीकै श्रद्धानविषै शुभबंधकारण जाननेतैं तैसा अनुराग नाहीं है। बाह्य कदाचित्

ज्ञानीकै अनुराग घना हो है, कदाचित् अज्ञानीकै हो है ऐसा जानना। ऐसैं देवभक्तिका स्वरूप दिखाया। अब गुरुभक्ति वाकै कैसै हो है, सो कहिए है—

केई जीव आज्ञानुसारी है। ते तौ ए जैनके साधु हैं हमारे गुरु हैं, तातै इनकी भक्ति करनी, ऐसैं विचारि तिनकी भक्ति करै हैं। बहुरि केई जीव परीक्षा भी करै हैं। तहां ए मुनि दया पालैं है शील पालै है, धनादि नाहीं राखै है, उपवासादि तप करै है, क्षुधादि परीषह सहै हैं, किसीसौ क्रोधादि नाहीं करै है उपदेश देय औरनिकौ धर्म्मविषै लगावै हैं इत्यादि गुण विचारि तिनविषै भक्तिभाव करै है। सो ऐसे गुण तौ परमहंसादिक परमती हैं, तिनविषै वा जैनी मिथ्यादृष्टीनिविषै भी पाईए। तातैं इनविषै अतिव्याप्तपनो है। इनकरि सांची परीक्षा होय नाहीं। बहुरि जिन गुणनिकौं विचारैं है, तिनविषै केई जीवाश्रित हैं, केई पुद्गलाश्रित है, तिनका विशेष न जानना असमानजातीय मुनिपर्यायविषै एकत्व बुद्धितै मिथ्यादृष्टि ही रहै हैं। बहुरि सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी एकतारूप मोक्षमार्ग सोई मुनिनका सांचा लक्षण है। ताकौं पहिचानै नाहीं। जातैं यह पहिचानि भए मिथ्यादृष्टी रहता नाहीं। ऐसै मुनिनका सांचा स्वरूप ही न जानैं, तौ सांची भक्ति कैसैं होय। पुण्यबंधकौं कारणभूत शुभक्रियारूप गुणनिकौं पहचानि तिनकी सेवातैं अपना भला होना जानि तिनविषैं अनुरागी होय भक्ति करै है। ऐसा रुभक्तिका स्वरूप कह्या। अब शास्त्रभक्तिका स्वरुप कहिए हैं—

केई जीव तौ यह केवली भगवानकी वानी है तातैं केवलीके पूज्यपनातैं यह भी पूज्य है, ऐसा जानि भक्ति करै हैं। बहुरि केई ऐसैं परिक्षा करै हैं—इन शास्त्रनिविषै विरागता दया क्षमा शील संतोषादिकका निरूपण है तातैं उत्कृष्ट हैं ऐसा जानि भक्ति करै हैं। सो ऐसा कथन तौ अन्य शास्त्र वेदान्तादिक तिनविषै भी पाईए है। बहुरि इन शास्त्रनिविषै त्रिलोकादिकका गंभीर निरूपन है। तातैं उत्कृष्टता जानि भक्ति करै हैं। सो यहां अनुमानादिकका तौ प्रवेश नाहीं। यहां अनेकांतरूप सांचा जीवादितत्त्वनिका निरूपन है। अर सांचा रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग दिखाया है। ताकरि जैनशास्त्रनिकी उत्कृष्टता है। ताकौं नाहीं पहिचानै है। जातैं यह पहचानि भए मिथ्यादृष्टि रहै नाहीं। ऐसैं शास्त्रभक्तिका स्वरूप कह्या।

या प्रकार याकै देव गुरु शास्त्रकी प्रतीति भई, तातैं व्यवहार-सम्यक्त्व भया मानै है। परंतु उनका सांचास्वरूप भास्या नाहीं तातैं प्रतीति भी सांची भई नाहीं। सांची प्रतीतिविना सम्यक्तकी प्राप्ति नाहीं। तातै मिथ्यादृष्टी रहै है। बहुरि शास्त्रविषै "**तत्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्**" ऐसा वचन कह्या है। तातैं जैसैं शास्त्रनिविषै जीवादि तत्त्व लिखे हैं, तैसै आप सीखि ले है। तहां ही उपयोग लगावै है। औरनिकौं उपदेश दे है, परन्तु तिनका भाव भासता नाहीं। अर यहां तिस वस्तुका भावहीका नाम तत्त्व कह्या। सो भाव भासे विना तत्त्वार्थश्रद्धान कैसैं होय। भावभासना कहा, सो कहिए हैं—

जैसै कोऊ पुरुष चतुर होनेका अर्थि शास्त्रकरि स्वर ग्राम मूर्छना रागनिका स्वरूप ताल तानके भेद तिनकौ सीखै है। परंतु स्वरादिकका स्वरूप नाहीं पहिचानै है। स्वरूपपहिचानि भए विना अन्य स्वरादिककौ अन्य स्वरादिकरूप मानै है। वा सत्य भी मानै है, तौ निर्णयकरि नाहीं मानै है। तातैं वाकै चतुरपनो होय नाहीं। तैसैं कोऊ जीव सम्यक्ती होनेकै अर्थि शास्त्रकरि जीवादि तत्त्वनिका स्वरूपकौ सीखै है। परंतु तिनका स्वरूपकौ नाहीं पहिचानै है। स्वरूप पहिचाने विना अन्य तत्त्वनिकौं अन्य तत्त्वरूप मानि ले है। वा सत्य भी मानै है, तौ निर्णयकरि नाहीं मानै है। तातै वाकै सम्यक्त्व होय नाहीं। बहुरि जैसे कोई शास्त्रादि पढ़्या है, वा न पढ़्या है, जो स्वरादिकका स्वरूपकौं पहिचानै है, तौ वह चतुर ही है। तैसै शास्त्र पढ़्या है वा न पढ़्या है, जो जीवादिकका स्वरूप पहिचानैं है, तौ वह सम्यग्दृष्टी ही है। जैसैं हिरण रागादिकका नाम न जानै है, अर ताका स्वरूपकौं पहिचानै है। तैसैं तुच्छबुद्धि जीवादिकका नाम न जानै है, अर तिनका स्वरूपकौं पहिचानै है। यह मैं हूं, यह पर है, ए भाव बुरे हैं, ए भले है, ऐसै स्वरूप पहिचानै ताका नाम भावभासना है। **शिवभूति** मुनि जीवादिकका नाम न जानै था, अर "तुषमाषभिन्न" ऐसा घोषने लागा, सो यह सिद्धान्तका शब्द था नाहीं। परंतु आपा परका भावरूप ध्यान किया, तातैं केवली भया। अर ग्यारह अंगका पाठी जीवादितत्त्वनिका विशेषभेद जानै, परंतु भासै नाहीं, तातैं मिथ्यादृष्टी ही रहै हैं। अब याकै

तत्त्वश्रद्धान किसप्रकार हो है, सो कहिए है—

जिनशास्त्रविषै कहे जीवके त्रस स्थावरादिरूप वा गुणस्थान-मार्गणादिरूप भेदनिकौ जानै हैं अर जीवके पुद्गलादि भेदनिकौं वा तिनके वर्णादि विशेष तिनकौं जानै है। परंतु अध्यात्मशास्त्रनिविषै भेदविज्ञानकौं कारणभूत वा वीतरागदशा होनेकौं कारणभूत जैसैं निरूपण किया है, तैसैं न जानै है। बहुरि किसी प्रसंगतैं तैसैं भी जानना होय तौ शास्त्र अनुसार जानि ले है। परंतु आपकौं आप जानि परका अंश भी न मिलावना अर आपका अंश भी परविषै न मिलावना, ऐसा सांचा श्रद्धान नाहीं करै है। जैसैं अन्य मिथ्यादृष्टी निर्धारविना पर्यायबुद्धिकरि जानपनाविषै वा वर्णादिविषै अहंबुद्धि धारै हैं, तैसैं यह भी आत्माश्रित ज्ञानादिविषै वा शरीराश्रित उपदेश उपवासादि क्रियानिविषै आपो मानै है। बहुरि शास्त्रकै अनुसार कबहू साची बात भी बनावै, परंतु अंतरंग निर्द्धाररूप श्रद्धान नाही। तातैं जैसैं मतवाला माताकौ माता भी कहै, तौ स्याना नाहीं। तैसैं याकौ सम्यक्ती न कहिए। बहुरि जैसैं कोई औरहीकी बातैं करता होय, तैसैं आत्माका कथन करै। परंतु यह आत्मा मैं हूं, ऐसा भाव नाहीं भासै। बहुरि जैसैं कोई औरकूं औरतैं भिन्न बतावता होय, तैसैं आत्मा शरीरकी भिन्नता प्ररूपै। परन्तु मैं इस शरीरादिकतैं भिन्न हूं, ऐसा भाव भासै नाहीं। बहुरि पर्यायविषै जीव पुद्गलकै परस्पर निमित्ततैं अनेक क्रिया हो हैं, तिनकौं दोय द्रव्यका मिलापकरि निपजी जानै। यह जीवकी क्रिया है, ताका पुद्गल निमित्त है, यह

पुद्गलकी क्रिया है, ताका जीव निमित्त है, ऐसा भिन्न भिन्न भाव भासै नाहीं। इत्यादि भाव भासे विना जीव अजीवका सांचा श्रद्धानी न कहिए। तातैं जीव अजीव जाननेका तौ यह ही प्रयोजन था सो भया नाहीं। बहुरि आश्रवतत्वविषै जे हिंसादि-रूप पापास्रव है, तिनिकौ हेय जानैं हैं। अहिंसादिरूप पुण्यास्रव है तिनिकौं उपदेश मानै है। सो ए तौ दोऊ ही कर्मबंधके कारण इनविषै उपादेयपना मानना सोई मिथ्यादृष्टि है। सोई समय-सारका बंधाधिकार विषै कह्या है—

सर्व जीवनिकै जीवन मरण सुख दुःख अपने कर्मके निमित्त तैं हो है। जहां अन्य जीव अन्य जीवकै इन कार्यनिका कर्त्ता होय, सोई मिथ्याध्यवसाय बंधका कारण है। तहां अन्य जीवकौ जिवावनेका वा सुखी करनेका अध्यवसाय होय सो तौ पुण्यबंधकौ कारण है, अर मारनेका या दुखी करनेका अध्यवसाय होय, सो पापबंधका कारण है। ऐसैं अहिंसावत् सत्यादिक तौ पुण्यबंधकौं कारण है, अर हिंसावत् असत्यादिक पापबंधकौ कारण हैं। ए सर्व मिथ्याध्यवसाय है, ते त्याज्य है। तातै हिंसादिवत् अहिंसा-दिककौं भी बंधका कारण जानि हेय ही मानना। हिंसाविषै मारनेकी बुद्धि होय, सो वाका आयु पूरा हुवा विना मरै नाहीं। अपनी द्वेषपरणतिकरि आप ही पाप बांधै है। अहिंसाविषै रक्षा करनेकी बुद्धि होय, सो वाका आयु अवशेषविना जीवै नाहीं, अपनी प्रशस्त रागपरणतिकरि आप ही पुण्य बांधै है। ऐसै ए दोऊ होय है। जहां वीतराग होय दृष्टा ज्ञाता प्रवर्त्तै, तहां निर्बंध

है। सो उपादेय है। सो ऐसी दशा न होय, तावत् प्रशस्त रागरूप प्रवर्त्तौ। परंतु श्रद्धान तौ ऐसा राखौ—यह भी बंधका कारण है—हेय है। श्रद्धानविषै याकौं मोक्षमार्ग जाने मिथ्यादृष्टी ही है।

बहुरि मिथ्यात्व अविरत कषाय योग ए आस्रवके भेद हैं तिनिकौ बाह्यरूप तौ मानै, अंतरंग इन भावनिकी जातिकौं पहिचानै नाहीं। तहां अन्य देवादिकसेवनेरूप गृहीतमिथ्यात्वकौं मिथ्यात्व जानै, अर अनादि अगृहीतमिथ्यात्व है, ताकौं न पहिचानै। बहुरि बाह्य त्रस स्थावरकी हिंसा वा इंद्रिय मनके विषयनिविषै प्रवृत्ति ताकौ अविरत जानै। हिंसाविषै प्रमादपरणति मूल है, अर विषयसेवनविषै अभिलाष मूल है। ताकौं न अवलोकै बहुरि बाह्य क्रोधादि करना, ताकौ कषाय जानै, अभिप्रायविषै रागद्वेष रहै ताकौं न पहिचानै। बहुरि बाह्य चेष्टा होय, ताकौं योग जानै, शक्तिभूत योगनिकौं न जानै। ऐसैं आस्रवनिका स्वरूप अन्यथा जानै। बहुरि राग-द्वेष मोहरूप जे आस्रवभाव हैं, तिनका तौ नाश करनेकी चिंता नाहीं। अर बाह्यक्रिया वा बाह्य निमित्त मेटनेका उपाय राखै, सो तिनके मैटे आश्रव मिटता नाहीं। द्रव्यलिंगीमुनि अन्य देवादिककी सेवा न करै है, हिंसा वा विषयनिविषै न प्रवर्तै हैं, क्रोधादि न करै हैं, मन वचन कायकौं रोकै है, तौ भी वाकै मिथ्यात्वादि च्यारौं आस्रव पाईए है। बहुरि कपटकरि भी ए कार्य न करै हैं। कपटकरि करै तौ ग्रैवेयकपर्यंत कैसैं पहुंचै। तातै जो अंतरंग अभिप्रायविषै मिथ्या-

त्वादिरूप रागादिभाव है, सोई आस्रव है। ताकौं न पहिचानै तातै याकै आस्रवतत्त्वका भी सत्य श्रद्धान नाहीं। वहुरि बंधतत्वविषै जे अशुभभावनिकरि नरकादिरूप पापका बंध होय, ताकौं तौ बुरा जानै अर शुभभावनिरूप पुण्यका बंध होय, ताकौ भला जानै। सो सर्व ही जीवनिकै दुखसामग्रीविषै द्वेष सुखसामग्री विषै राग पाईए, सो ही याकै राग द्वेष करनेका श्रद्धान भया। जैसा इस पर्यायसंबंधी सुखदुखसामग्रीविषै राग द्वेष करना, तैसा ही आगामी पर्यायसंबंधी सुखदुखसामग्रीविषै राग द्वेष करना। वहुरि शुभअशुभभावनिकरि पुण्यपापका विशेष तौ अघाति कर्मनिविषै हो है। सो अघातिकर्म आत्माके गुणके घातक नाहीं। वहुरि शुभ अशुभ भावनिविषै घातिकर्मनिका तौ निरंतरबंध होय। ते सर्व पापरूप ही हैं। अर तेई आत्मगुणके घातक हैं। तातै अशुद्ध भावनिकरि कर्म्मबंध होय, तिसविषै भला बुरा जानना सोई मिथ्याश्रद्धान है। सो ऐसे श्रद्धानतैं बंधका भी याकै सत्यश्रद्धान नाहीं। वहुरि संवरतत्त्वविषै अहिंसादिरूप शुभास्रव भाव तिनकौं संवर जानै है। सो एक कारणतैं पुण्यबंध भी मानै अर संवर भी मानैं, सो बनै नाहीं। यहां प्रश्न जो मुनिनिकैं एकै काल ए भाव हो हैं। तहां उनकैं बंध भी हो है अर संवर निर्जरा भी हो है, सो कैसैं है। ताका समाधान—

वह भाव मिश्ररूप है। किछू वीतराग भया है किछू सराग भया है। जे अंश वीतराग भए तिनकरि संवर है ही अर जे अंश सराग रहे, तिनकरि बंध है। सो एकभावतैं तौ दो कार्य बनै

परंतु एक प्रशस्तरागहीतैं पुण्यास्रव भी मानना अर संवरनिर्जरा भी मानना सो भ्रम है। मिश्रभावविषै भी, यह सरागता है, यह विरागता है, ऐसी पहचानि सम्यग्दृष्टीहीकै होय। तातैं अवशेष सराग ताकौं हेय श्रद्दहै है। मिथ्यादृष्टीकै ऐसी पहचानि नाहीं। तातैं सराग भावविषै संवरका भ्रमकरि प्रशस्त रागरूप कार्यनिकौं उपादेय श्रद्दहै। बहुरि सिद्धांतविषै गुप्ति समिति धर्म अनुप्रेक्षा परीषह-जय चारित्र इनकरि संवर हो है, ऐसा कह्या है। सो इनकौं भी यथार्थ न श्रद्दहै है। कैसैं, सो कहिए है—

बाह्य मन वचन कायकी चेष्टा मेटै, पापचिंतवन न करै, मौन धरै, गमनादि न करै, सो गुप्ति मानै है। सो यहां तौ मनविषै भक्तिआदिरूप प्रशस्तरागादि नानाविकल्प हो हैं, वचन कायकी चेष्टा आप रोकि राखै है, तहां शुभप्रवृत्ति है, अर प्रवृत्तिविषै गुप्तिपनो बनै नाहीं। तातैं वीतरागभाव भए जहां मन वचन कायकी चेष्टा न होय, सो ही सांची गुप्ति है। बहुरि परजीवनिकी रक्षाकै अर्थ यत्नाचारप्रवृत्ति ताकौं समिति मानै है। सो हिंसाके परिणामनितैं तौ पाप हो है, अर रक्षाके परिणामनितैं संवर कहौगे, तौ पुण्यबंधका कारण कौन ठहरैगा। बहुरि एषणासमिति-विषै दोष टालै है। तहां रक्षाका प्रयोजन है नाहीं। तातैं रक्षाहीकै अर्थ समिति नाहीं है। तौ समिति कैसैं हो है— मुनिनकै किंचित् राग भए गमनादि क्रिया हो है। तहां तिन क्रियानिविषै अति आसक्तताके अभावतैं प्रमादरूप प्रवृत्ति न हो

है । बहुरि और जीवनिकौं दुखी करि अपना गमनादि प्रयोजन न साधै हैं । तातैं स्वयमेव ही दया पलै है । ऐसैं सांची समिति है । बहुरि बंधादिकके भयतैं वा स्वर्गमोक्षकी चाहितैं क्रोधादि न करै है, सो यहां क्रोधादिकरनेका अभिप्राय तौ गया नाहीं । जैसैं कोई राजादिकका भयतैं वा महंतपनाका लोभतैं परस्त्री न सेवै है, तौ वाकौं त्यागी न कहिए । तैसैं ही यह क्रोधादिका त्यागी नाहीं । तौ कैसैं त्यागी होय । पदार्थ अनिष्ट इष्ट भासैं क्रोधादि हो हैं । जब तत्वज्ञानके अभ्यासतैं कोई इष्ट अनिष्ट न भासै, तब स्वयमेव ही क्रोधादिक न उपजैं, तब सांचा धर्म हो है । बहुरि अनित्यादि चिंतवनतैं शरीरादिककौं बुरा जानि हितकारी न जानि तिनतैं उदास होना ताका नाम अनुप्रेक्षा कहै हैं । सो यह तौ जैसैं कोऊ मित्र था, तब उसतैं राग था, पीछैं वाका अवगुण देखि उदासीन भया, तैसैं शरीरादिकतैं राग था पीछैं अनित्यत्वादि अवगुण अवलोकि उदासीन भया । सो ऐसी उदासीनता तौ द्वेषरूप है । जहां जैसा अपना वा शरीरादिकका स्वभाव है, तैसा पहचानि भ्रमकौ मेटि भला जानि राग न करना, बुरा जानि द्वेष न करना, ऐसी सांची उदासीनताकै अर्थि यथार्थ अनित्यत्वादि-कका चिंतवन सो ही सांची अनुप्रेक्षा है । बहुरि क्षुधादिक भए तिनके नाशका उपाय न करना, वाकौं परीषह सहना कहै हैं । सो उपाय तौ न किया, अर अंतरंग क्षुधादि अनिष्ट सामग्री मिले दुखी भया, रति आदिका कारण मिले सुखी भया, तौ सो दुख-सुखरूप परिणाम है, सोई आर्त्तध्यान रौद्रध्यान है । ऐसे

भावनितैं संवर कैसैं होय। तातैं दुखका कारण मिले दुखी न होय सुखका कारण मिलें सुखी न होय, ज्ञेयरूपकरि तिनका जाननहारा ही रहै, सोई सांची परीषहका सहना है। बहुरि हिंसादि सावद्य योगका त्यागकौं चारित्र मानै है। तहां महाव्रतादिरूप शुभयोगकौं उपादेयपनैंकरि ग्रहण मानै हैं। सो तत्त्वार्थसूत्रविषै आस्रव-पदार्थका निरूपण करते महाव्रत अणुव्रत भी आस्रवरूप कहे हैं। ए उपादेय कैसैं होंय। अर आस्रव तौ बंधका साधक है, चारित्र मोक्षका साधक है। तातैं महाव्रतादिरूप आस्रवभावनिकैं चारित्रपनो संभवै नाहीं। सकल कषायरहित जो उदासीनभाव ताहीका नाम चारित्र है। जो चारित्रमोहके देशघाती स्पर्द्धकनिके उदयतैं महामंद प्रशस्त राग हो है, सो चारित्रका मल है। याकौं छूटता न जानि याका त्याग न करै हैं। सावद्ययोग ही त्याग करै है। परंतु जैसैं कोई पुरुष कंदमूलादि बहुत दोषीक हरितकायका त्याग करै हैं, अर कैई हरितकायनिकौं भखै है। परंतु ताकौं धर्म न मानै है। तैसैं मुनि हिंसादि तीव्रकषायरूप भावनिका त्याग करै है अर कैई मंदकषायरूप महाव्रतादिकौं पालै है। परंतु ताकौं मोक्षमार्ग न मानै है। यहां प्रश्न—जो ऐसैं है, तौ चारित्रके तेरह भेदनिविषै महाव्रतादि कैसैं कहे हैं। ताका समाधान—

यह व्यवहारचारित्र कह्या है। व्यवहार नाम उपचारका है। सो महाव्रतादिक भए ही वीतरागचारित्र हो है। ऐसा संबंध जानि महाव्रतादिविषै चारित्रका उपचार किया है। निश्चयकरि निःकषाय भाव है सो ही सांचा चारित्र है। या प्रकार संवरका

कारणनिकौं अन्यथा जानता संता सांचा श्रद्धानी न हो है। बहुरि यह अनशनादि तपतैं निर्जरा मानै है। सो केवल बाह्यतप ही तौ किए निर्जरा होय नाहीं। बाह्यतप तौ शुद्धोपयोग बधावनेके अर्थि कीजिए है। शुद्धोपयोग निर्जराका कारण है। तातैं उपचारकरि तपकौं भी निर्जराका कारण कह्या है। जो बाह्य दुख सहना ही निर्जराका कारण होय, तौ तिर्यंचादि भी भूख तृषादि सहै है। तब वह कहै है—स्वाधीनपनै धर्मबुद्धितैं उपवासादिरूप तप करै ताकै निर्जरा हो है। ताका समाधान—

धर्मबुद्धितैं बाह्य उपवासादिक तो किए, बहुरि तहां उपयोग अशुभ शुभ शुद्धरूप जैसैं परिणमैं तैसैं परिणमो। घने उपवासादि किए घनी निर्जरा होय, थोरे किए थोरी निर्जरा होय। जो ऐसैं नियम ठहरै, तौ उपवासादिक ही मुख्य निर्जराका कारण ठहरै। सो तौ बनै नाहीं। परिणाम दुष्ट भए उपवासकरतैं निर्जरा होनी कैसैं संभवै। बहुरि जो कहिए–जैसा अशुभ शुभ शुद्धरूप उपयोग परिणमै, ताकैं अनुसार बंधनिर्जरा है। तौ उपसादि तप मुख्य निर्जराका कारण कैसैं रह्या। अशुभ शुभ परिणाम बंधके कारन ठहरे, शुद्ध परिणाम निर्जराके कारण ठहरे। यहां प्रश्न— जो तत्त्वार्थसूत्रविषै "**तपसा निर्जरा च**" ऐसा कैसै कह्या है। ताका समाधान–

शास्त्रविषै "**इच्छानिरोधस्तपः**" ऐसा कह्या है। इच्छाका रोकना ताका नाम तप है। सो शुभ अशुभ इच्छा मिटे उपयोग शुद्ध होय, तहां निर्जरा हो है। तातैं तपकरि निर्जरा कही है।

यहां कोऊ कहै, आहारादिरूप अशुभकी तौ इच्छा दूरि भए ही तप होय। परंतु उपवासादिक वा प्रायश्चित्तादि शुभकार्य हैं, तिनकी इच्छा तौ रहै ताका समाधान—

ज्ञानी जननिकै उपवासादिककी इच्छा नाहीं हैं। एक शुद्धोपयोगकी इच्छा है। उपवासादि किए शुद्धोपयोग बधै हैं, तातैं उपवासादि करै हैं। बहुरि जो उपवासादिकतैं शरीरकी वा परिणमनिकी शिथिलताकरि शुद्धोपयोग शिथिल होता जानैं, तहां आहारादिक ग्रहै हैं। जो उपवासादिकहीतैं सिद्धि होय, तौ अजितनाथादिक तेईस तीर्थंकर दीक्षा लेय दोय उपवास ही कैसैं धरते। उनकी तौ शक्ति भी बहुत थी। परंतु जैसैं परिणाम भए तैसैं बाह्यसाधनकरि एक वीतराग शुद्धोपयोगका अभ्यास किया। यहां प्रश्न—जो ऐसैं है, तौ अनशनादिककौं तपसंज्ञा कैसैं भई! ताका समाधान—

इनकौं बाह्यतप कहै हैं। सो बाह्यका अर्थ यह है, जो बाह्य औरनिकौं दीखै, यह तापसी है। बहुरि आप तौ फल जैसा अंतरंग परिणाम होगा, तैसा ही पावैगा। जातैं परिणामशून्य शरीरकी क्रिया फलदाता नाहीं। बहुरि यहां प्रश्न—जो शास्त्रविषै तौ अकामनिर्जरा कही है। तहां विना चाहि भूख तृषादि सहे निर्जरा हो है। तौ उपवासादिकरि कष्ट सहे कैसैं निर्जरा न होय। ताका समाधान—

अकामनिर्जराविषै भी बाह्य निमित्त तौ विना चाहि भूख तृषाका सहना भया है। अर तहां मंदकषायरूप भाव होय, तौ

पापकी निर्जरा होय, देवादि पुण्यका बंध होय। अर जो तीव्रकषाय भए भी कष्ट सहे पुण्यबंध होय, तौ सर्व तिर्यंचादिक देव ही होंय। सो बनै नाहीं। तैसै ही चाहिकरि उपवासादि किए तहां भूख तृषादि कष्ट सहिए है। सो यह बाह्यनिमित्त है। यहां जैसा परिणाम होय, तैसा फल पावै है। जैसै अन्नकौ प्राण कह्या। ऐसै बाह्यसाधन भए अंतरंगतपकी वृद्धि हो है। तातैं उपचारकरि इनकौं तप कहे हैं। जो बाह्यतप तौ करै अर अंतरंगतप न होय, तौ उपचारतै भी वाकौ तपसंज्ञा नहीं। सोई कह्या है–

कषायविषयाहारो त्यागो यत्र विधीयते।
उपवासः स विज्ञेयः शेषं लङ्घनकं विदुः॥

जहां कषाय विषय आहारका त्याग कीजिए, सो उपवास जानना। शेषकौ लंघन श्री गुरु कहैं है। यहां कहैगा, जो ऐसै है तौ हम उपवासादि न करैंगे। ताकौं कहिए है—

उपदेश तौ ऊंचा चढ़नेकौ दीजिए है। तू उलटा नीचा पड़ैगा, तौ हम कहा करैंगे। जो तू मानादिकतैं उपावासादि करै है, तौ करि वा मति करै, किछू सिद्धि नाहीं। अर जो धर्मबुद्धितैं अहारादिकका अनुराग छोड़ै है, तौ जेता राग छूट्या तेता ही छूट्या। परंतु इसहीकौं तप जानि इसतै निर्जरा मानि संतुष्ट मति होहु। वहुरि अंतरंग तपनिविषै प्रायश्चित्त विनय वैयावृत्त्य स्वाध्याय, त्याग, ध्यानरूप जो क्रिया ताविषै बाह्यप्रवर्तन, सो तौ बाह्य तपवत् ही जानना। जैसै अनशनादि बाह्यक्रिया हैं, तैसै ए भी बाह्यक्रिया है। तातैं प्रायश्चित्तादि बाह्यसाधन अंतरंग-

तप नाहीं है। ऐसा बाह्य प्रवर्त्तन होतैं, जो अंतरंग परिणामनिकी शुद्धता होय, तहां तौ निर्जरा हीं है, बंध नाहीं हो है। अर स्तोक शुद्धताका भी अंश रहै, तौ जेती शुद्धता भई ताकरि तौ निर्जरा है। अर जेता शुभभाव है ताकरि बंध है। ऐसा मिश्रभाव युगपत् हो है, तहां बंध वा निर्जरा दोऊ हो हैं। यहां कोऊ कहै, शुभभावनितै पापकी निर्जरा हो है, पुण्यका बंध हो है, शुद्धभावनितै दोऊनिकी निर्जरा हो है, ऐसा क्यौं न कहौ। ताका उत्तर—

मोक्षमार्गविषै स्थितिका तौ घटना सर्व ही प्रकृतीनिका होय। तहां पुण्यपापका विशेष है ही नाहीं। अर अनुभागका घटना पुण्यप्रकृतीनिका शुद्धोपयोगतैं भी होता नाहीं। ऊपरि ऊपरि पुण्यप्रकृतीनिका अनुभागका तीव्रउदय हो है, अर पापप्रकृतिके परमाणु पलटि शुभप्रकृतिरूप होंय ऐसा संक्रमण शुभ शुद्ध दोऊ भाव होतैं होय। तातैं पूर्वोक्त नियम संभवै नाहीं। विशुद्धताहीकै अनुसार नियम संभवै है। देखो, चतुर्थगुणस्थानवाला शास्त्राभ्यास आत्माचिंतवनादि कार्य करै, तहां भी निर्जरा नाहीं, बंध भी घना होय। बहुरि पंचमगुणस्थानवाला उपवासादि वा प्रायश्चितादि तप करै, तिस कालविषै भी वाकै निर्जरा थोरी, अर छठागुणस्थानवाला आहार विहारादि क्रिया करै, तिस कालविषैं भी वाकै निर्जरा घनी। उसतैं भी बंध थोरा होय। तातैं बाह्यप्रवृत्तिकै अनुसार निर्जरा नाहीं है। अंतरंग कषायशक्ति घटैं विशुद्धता भए निर्जरा हो है। सो इसका प्रगटस्वरूप आगे निरूपण करैंगे, तहां जानना। ऐसैं अनशनादि क्रियाकौं तपसंज्ञा उपचारतैं

जाननी। याहीतै इनकौं व्यवहार तप कह्या है। व्यवहार उपचारका एक अर्थ है। बहुरि साधनतै ऐसा जो वीतराग भावरूप विशुद्धता होय, सो सांचा तप निर्जराका कारण जानना। यहां दृष्टांत—जैसै धनकौं वा अन्नकौं प्राण कह्या। सो धनतैं अन्न ल्याय भक्षण किए प्राण पोपे जांय, तातै धन अन्नकौ प्राण कह्या। कोई इंद्रियादिक प्राणनिकौं न जानै, अर इनहीकौ प्राण जानि संग्रह करै, तौ मरण ही पावै। तैसै अनशनादिकौ वा प्रायश्चित्तादिकौ तप कह्या, सो अनशनादि साधनतै प्रायश्चित्तादिरूप प्रवर्तें वीतरागभावरूप सत्य तप पोष्या जाय। तातैं उपचारकरि अनशनादिकौ वा प्रायश्चित्तादिकौ तप कह्या। कोई वीतरागभावरूप तपकौ न जानै अर इनहीकौ तप जानि संग्रह करै, तौ संसारहीमै भ्रमै। वहुत कहा, इतना समझि लेना—निश्चय धर्म्म तौ वीतरागभाव है। अन्य नाना विशेष वाह्यसाधन अपेक्षा उपचारतै किए है, तिनकौ व्यवहारमात्र धर्म संज्ञा जाननी। इस रहस्यकौ न जानै तातै वाकै निर्जराका भी सांचा श्रद्धान नाहीं है।

वहुरि सिद्ध होना ताकौं मोक्ष मानै है। बहुरि जन्म जरा मरण रोग क्लेशादि दुख दूरि अनंतज्ञानकरि लोकालोकका जानना भया, त्रिलोकपूज्यपना भया इत्यादि रूपकरि ताकी महिमा जानै है। सो सर्व जीवनिकै दुख दूर करनेकी वा ज्ञेय जाननेकी वा पूज्य होनेकी चाहि है। इनहीकै अर्थ मोक्षकी चाहि कीनी, तौ याकै और जीवनिका श्रद्धानतै कहा विशेषता

भई। बहुरि याकै ऐसा भी अभिप्राय है—स्वर्गविषै सुख है, तातैं अनंतगुणा मोक्षविषै सुख है सो इस गुणकारविषै स्वर्ग मोक्ष सुखकी एक जाति जानै है। तहां स्वर्गविषै तौ विषयादि सामग्रीजनित सुख हो है, ताकी जाति याकौं भासै है अर मोक्षविषै विषयादि सामग्री है नाहीं, सो वहांका सुखकी जाति याकौ भासै तौ नाहीं, परंतु स्वर्गतै भी उत्तम मोक्षकौं महापुरुष कहै हैं, तातैं यह भी उत्तम ही मानै है। जैसैं कोऊ गानका स्वरूप न पहिचानै, परंतु सर्व सभाके सराहैं, तातैं आप भी सराहै है। तैसैं यह मोक्षकौं उत्तम मानै हैं। यहां वह कहै है—शास्त्रविषै भी तौ इंद्रादिकतैं अनंतगुणा सुख सिद्धनिकै प्ररूपै हैं। ताका उत्तर—

जैसैं तीर्थंकरके शरीरकी प्रभाकौं सूर्यप्रभातैं कोट्यां गुणी कही। तहां तिनकी एक जाति नाहीं। परंतु लोकविषै सूर्यप्रभाकी महिमा है, तातैं भी बहुत महिमा जनावनेकौं उपमालंकार कीजिए है। तैसैं सिद्धसुखकौं इंद्रादिसुखतै अनंतगुणा कह्या। तहां तिनकी एकजाति नाहीं। परंतु लोकविषै इंद्रादिसुखकी महिमा है, तातैं भी बहुत महिमा जनावनेकौं उपमालंकार कीजिए है। बहुरि प्रश्न—जो सिद्धसुख अर इंद्रादिसुखकी एकजाति वह जानै है, ऐसा निश्चय तुम कैसैं किया। ताका समाधान—

जिस धर्मसाधनका फल स्वर्ग मानै है, तिस धर्मसाधनहीका फल मोक्ष मानै है। कोई जीव इंद्रादिपद पावै, कोई मोक्ष पावै,

तहां तिन दोऊनिकै एकजाति धर्मका फल भया मानै। ऐसा तौ मानै, जो जाकै साधन थोरा हो है, सो इंद्रादिपद पावै है, जाकै संपूर्ण साधन होय, सो मोक्ष पावै है। परंतु तहां धर्मकी जाति एक जानै है। सो जो कारणकी एक जाति जानै, ताकौ कार्यकी भी एक जातिका श्रद्धान अवश्य होय। जातै कारण विशेष भए ही कार्य विशेष हो हैं। तातैं हम यह निश्चय किया, वाकै अभिप्रायविषै इंद्रादिसुख अर सिद्धसुखकी जातिका एक जातिका श्रद्धान है। बहुरि कर्मनिमित्ततैं आत्माकै औपाधिक भाव थे, तिनिका अभाव होतैं शुद्धस्वभावरूप केवल आत्मा आप भया। जैसैं परमाणु स्कंधतैं विछुरें शुद्ध हो हैं, तैसै यह कर्मादिकतैं भिन्न भया शुद्ध हो है। विशेष इतना—वह दोऊ अवस्थाविषै दुखी सुखी नाहीं, आत्मा अशुद्ध अवस्थाविषै दुखी था, अब ताके अभाव होनेतैं निराकुललक्षण अनंतसुखकी प्राप्ति भाई। बहुरि इंद्रादिकनिकै जो सुख है, सो कषाय भावनिकरि आकुलतारूप है। सो वह परमार्थतैं दुखी ही है। तातैं वाकी याकी एकजाति नाहीं। बहुरि स्वर्गसुखका कारण प्रशस्तराग है, मोक्षसुखका कारण वीतरागभाव हैं, तातैं कारणविषैं भी विशेष है। सो ऐसा भाव याकौं भासै नाहीं। तातैं मोक्षका भी याकैं सांचा श्रद्धान नाहीं है। या प्रकार याकैं सांचा तत्त्वश्रद्धान नाहीं है। याहीतैं समयसारविषै कह्या है — "अभव्यकै तत्त्वश्रद्धान भए भी मिथ्यादर्शन ही रहैं है।" वा प्रवचनसारविषै कह्या है—"आत्मज्ञानशून्य तत्वार्थश्रद्धान कार्यकारी नाहीं।" बहुरि यह व्यवहारदृष्टिकरि

सम्यग्दर्शनके आठ अंग कहे हैं, तिनकौं पालै है। पचीस दोष कहे हैं, तिनकौं टालै है। संवेगादिक गुण कहे हैं, तिनकौं धारै है। परंतु जैसैं बीज बोए विना खेतकी सावधानी किए भी अन्न होता नाहीं, तैसैं सांचा तत्त्वश्रद्धान भए विना सम्यक्त होता नाहीं। सो पंचास्तिकायव्याख्याविषैं जहां अंतविषै व्यवहारा-भासवालेका वर्णन किया, तहां ऐसा ही कथन किया है। या प्रकार याकै सम्यग्दर्शनके अर्थि साधन करतें भी सम्यग्दर्शन न हो है।

अब यह सम्यग्ज्ञानकै अर्थि शास्त्रविषै शास्त्राभ्यास किए सम्यग्ज्ञान होना कह्या है, तातैं जे शास्त्राभ्यासविषै तत्पर रहै हैं, तहां सीखना सिखावना यादि करना वांचना पढ़ना आदि क्रियाविषै तौ उपयोगकौं रमावै हैं। परंतु वाकै प्रयोजन ऊपरि दृष्टि नाहीं है। इस उपदेशविषैं मुझकौं कारिजकारी कह्या, सो अभिप्राय नाहीं। आप शास्त्राभ्यासकरि औरनिकौं उपदेश देनेका अभिप्राय राखै है। घने जीव उपदेश मानैं तहां संतुष्ट हो है। सो ज्ञाना-भ्यास तौ आपकै अर्थ कीजिए है और प्रसंग पाय परका भी भला करै। बहुरि कोई उपदेश न सुनै, तौ मति सुनौ, आप काहेकौं विषाद कीजिए। शास्त्रार्थका भाव जानि आपका भला करना। बहुरि शास्त्राभ्यासविषै भी केई तौ व्याकरण न्याय काव्य आदि शास्त्रनिकौं बहुत अभ्यासैं हैं। सो ए तौ लोकविषै पंडितता प्रगट करनेके कारण हैं। इनविषै आत्महितनिरूपण तौ है नाहीं। इनका तौ प्रयोजन इतना ही है। अपनी बुद्धि

बहुत होय तौ थोरा बहुत इनका अभ्यासकरि पीछै आत्महितके साधक शास्त्र तिनका अभ्यास करना। जो बुद्धि थोरी होय, तौ आत्महितके साधक सुगम शास्त्र तिनहीका अभ्यास करै। ऐसा न करना, जो व्याकरणादिकका ही अभ्यास करतैं करतै आयु पूरा होय जाय, अर तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति न बनै। यहां कोऊ कहै— ऐसै है, तौ व्याकरणादिकका अभ्यास न करना। ताकौ कहिए है—तिनका अभ्यासविना महान् ग्रंथनिका अर्थ खुलै नाहीं। तातै तिनका भी अभ्यास करना योग्य है। बहुरि यहां प्रश्न— महान् ग्रंथ ऐसे क्यौं किए, जिनका अर्थ व्याकरणादि विना न खुलै भाषाकरि सुगमरूप हितोपदेश क्यौं न लिख्या। उनकै किछू प्रयोजन तौ था नाहीं। ताका समाधान—

भाषाविषै भी प्राकृत संस्कृतादिकके ही शब्द है। परंतु अपभ्रंश लीए है। बहुरि देशनिविषै भाषा अन्य अन्य प्रकार है। सो महंत पुरुष शास्त्रनिविषै अपभ्रंश शब्द कैसैं लिखै। बालक तोतला बोलै, तौ बड़े तौ न बोलैं। बहुरि एकदेशकी भाषारूप शास्त्र दूसरे देशविषै जाय, तौ तहां ताका अर्थ कैसैं भासै। न्यायविना लक्षण परीक्षा आदि यथावत् न होय सकै। इत्यादि वचनद्वारि वस्तुका स्वरूपनिर्णय व्याकरणादि विना नीकै न होता जानि तिनकी आम्नाय अनुसार कथन किया। भाषाविषै भी तिनकी थोरी बहुत आम्नाय आप ही उपदेश होय सकै है। तिनकी बहुत आम्नायतैं नीकै निर्णय होय सकै है। बहुरि जो कहौगे—ऐसैं है तौ अब भाषारूप ग्रंथ काहेकौं बनाईए है।

ताका समाधान—

कालदोषतैं जीवनिकी मंदबुद्धि जानि केई जीवनिकै जेता ज्ञान होगा, तेता ही होगा, ऐसा अभिप्राय विचारि भाषाग्रंथ कीजिए है। सो जे जीव व्याकरणादिकका अभ्यास न करि सकैं, तिनकौं ऐसे ग्रंथनिकरि ही अभ्यास करना। बहुरि जे जीव शब्दनिकी नाना युक्त लिए अर्थ करनेकौं व्याकरण अवगाहै हैं, वादादिकरि महंत होनेकौ न्याय अवगाहै हैं, चतुरपना प्रगट करनेके अर्थि काव्य अवगाहै हैं, इत्यादि लौकिक प्रयोजन लिए इनका अभ्यास करै है ते धर्मात्मा नाहीं। वनै जेता थोरा वहुत अभ्यास इनका करि आत्महितकै अर्थि तत्त्वादिकका निर्णय करैं हैं, सोई धर्मात्मा पंडित जानना। वहुरि कोई जीव पुण्य पापादिक फलके निरूपक पुराणादि शास्त्र वा पुण्य पापक्रियाके निरूपक आचारादि शास्त्र वा गुणस्थान मार्गणा कर्मप्रकृति त्रिलो-कादिकके निरूपक करणानुयोगके शास्त्र तिनका अभ्यास करै हैं। सो जो इनका प्रयोजन आप न विचारै, तब तौ सूवाकासा ही पढ़ना भया। वहुरि जो इनका प्रयोजन विचारै है, तहां पापकौं वुरा जानना, पुण्यकौं भला जानना, गुणस्थानादिकका स्वरूप जानि लेना, इनका अभ्यास करैंगे तितना हमारा भला है इत्यादि प्रयोजन विचार्या, सो इसतैं इतना तौ होगा—नरकादिका छेद स्वर्गादिकी प्राप्ति, परंतु मोक्षमार्गकी तौ प्राप्ति होय नाहीं। पहलैं सांचा तत्त्वज्ञान होय, तहां पीछै पुण्यपापका फलकौं संसार जानै, शुद्धोपयोगतैं मोक्ष मानै, गुणस्थानादिरूप जीवका व्यवहार निरूपण

जानै, इत्यादि जैसाका तैसा श्रद्धान करता संता इनका अभ्यास करै, तौ सम्यग्ज्ञान होय। सो तत्त्वज्ञानकौ कारण अध्यात्मरूप द्रव्यानुयोगके शास्त्र हैं। बहुरि केई जीव तिन शास्त्रनिका भी अभ्यास करै है। परंतु जहां जैसैं लिख्या है, तैसै आप निर्णय करि आपकौ आपरूप, परकौं पररूप, आस्रवादिककौ आस्रवादिरूप न श्रद्धान करै है। मुखतै तौ यथावत् निरूपण ऐसा भी करै, जाके उपदेशतै और जीव सम्यग्दृष्टी होय जांय। परंतु जैसैं लड़का स्त्रीका स्वांगकरि ऐसा गान करै, जाकौं सुनतै अन्य पुरुष स्त्री कामरूप होय जांय। परंतु वह जैसै सीख्या तैसैं कहै हैं, वाकौ किछू भाव भासै नाहीं, तातै आप कामासक्त न हो है। तैसै यह जैसैं लिख्या, तैसै उपदेश दे, परंतु आप अनुभव नाहीं करै है। जो आपकै श्रद्धान भया होता, तौ और तत्त्वका अंश और तत्वविषै न मिलावता, सो याकै थल नाहीं, तातै सम्यग्ज्ञान होता नाहीं। ऐसैं यह ग्यारह अंगपर्यंत पढ़ै तौ भी सिद्धि होती नाहीं। सो समयसारादिविषै मिथ्यादृष्टीकै ग्यारह अंगका ज्ञान होना लिख्या है। यहां कोऊ कहै—ज्ञान तौ इतना हो है, परंतु जैसैं अभव्यसेनके श्रद्धानरहित ज्ञान भया, तैसै हो है। ताका समाधान—

वह तौ पापी था, जाकै हिंसादिकी प्रवृत्तिका भय नाहीं। परंतु जो जीव ग्रैवेयिकआदिविषै जाय है, ताकै ऐसा ज्ञान हो है, सो तौ श्रद्धानरहित नाहीं। वाकै तौ ऐसा ही श्रद्धान है, ए ग्रंथ सांचे हैं परंतु तत्त्वश्रद्धान सांचा न भया। समयसारविषै

एक ही जीवकै धर्म्मका श्रद्धान एकादशांगका ज्ञान महाव्रतादि-कका पालना लिख्या है। प्रवचनसारविषै ऐसा लिख्या है—आगमज्ञान ऐसा भया जाकरि सर्वपदार्थनिकौ हस्तामलकवत् जानै है। यह भी जानै है इनका जाननहारा मैं हूं। परंतु मैं ज्ञानस्वरूप हों ऐसा आपकौ परद्रव्यतै भिन्न केवल चैतन्यद्रव्य नाहीं अनुभवै है। तातैं आत्मज्ञानशून्य आगमज्ञान भी कार्यकारी नाहीं। या प्रकार सम्यग्ज्ञानके अर्थि जैनशास्त्रनिका अभ्यास करै है, तौ भी याकै सम्यग्ज्ञान नाहीं।

बहुरि इनिकै सम्यक्चारित्रकै अर्थि कैसै प्रवृति है, सो कहिए है—बाह्यक्रियाऊपरि तौ इनकै दृष्टी है, अर परिणाम सुधरने बिगरनेका विचार नाहीं। जो परिणामनिका भी विचार होय, तौ जैसा अपना परिणाम होता दीसै, तिनहीकै ऊपरि दृष्टि रहै है। परंतु उन परिणामनिकी परंपरा विचारें अभिप्राय विषै जो वासना है, ताकौ न विचारै है। अर फल लागै है, सो अभिप्रायविषै वासना है, ताका फल लागै है। सो इसका विशेष व्याख्यान आगैं करैंगे। तहां स्वरूप नीकै भासैगा। ऐसी पहिचानि विना बाह्य आचरणका ही उद्यम है। तहां केई जीव तौ कुलक्रमकरि वा देखादेखी वा क्रोध मान माया लोभादिकतै आचरण आचरै हैं। सो इनकै तौ धर्मबुद्धि ही नाहीं। सम्यक्चारित्र काहेतैं होय। ए जीव कोई तौ भोले है वा कषायी हैं, सो अज्ञानभाव कषाय होतैं सम्यक्चारित्र होता नाहीं। बहुरि केई जीव ऐसा मानै हैं, जो जाननेमै कहा है, अर माननेमैं कहा है, किछू करैगा तौ

फल लागैगा। ऐसै विचारि व्रत तप आदि क्रियाहीका उद्यमी रहै हैं अर तत्वज्ञानका उपाय न करै है। सो तत्वज्ञान विना महाव्रतादिकका आचरण भी मिथ्याचारित्र ही नाम पावै है। अर तत्वज्ञान भए किछू भी व्रतादि नाहीं है, तौ भी असंयत सम्यग्दृष्टी नाम पावै है। तातै पहलै तत्वज्ञानका उपाय करना, पीछै कषाय घटावनेकौं वाह्य साधन करना। सो ही **योगींद्रदेव-कृत श्रावकाचारविषै** कह्या है—

दंसणभूमिह बाहिरा, जिय वयरुक्ख ण होंति।

याका अर्थ-यह सम्यग्दर्शनभूमिका विना हे जीव व्रतरूपी वृक्ष न होय। भावार्थ–जिन जीवनिकै तत्वज्ञान नाहीं, ते यथार्थ आचरण न आचरै है। सोई विशेष दिखाईए है--

केई जीव पहलै तौ वड़ी प्रतिज्ञा धरि बैठैं अर अंतरंगविषै कषायवासना मिटी नाहीं। तब जैसैं तैसैं प्रतिज्ञा पूरि किया चाहैं, तहां तिस प्रतिज्ञाकरि परिणाम दुखी होय है। जैसैं बहुत उपवासकरि बैठै पीछैं पीड़ातै दुखी हुवा रोगीवत् काळ गमावै, धर्म्मसाधन न करै। सो पहलैं ही सधती जानिए तितनी ही प्रतिज्ञा क्यौं न लीजिए। दुखी होनेमै आर्त्तध्यान होय, ताका फळ भला कैसे लागैगा। अथवा उस प्रतिज्ञाका दुख सह्या न जाय, तब ताकी एवज विषयपोषनेकौं अन्य उपाय करै। जैसैं तृषा लागै, तब पानी तौ न पीवै अर अन्य शीतल उपचार अनेक प्रकार करै। वा घृत तौ छोड़ै अर अन्य स्निग्धवस्तुकौं उपायकरि भखै। ऐसैं ही अन्य जानना। सो परीषह न सह्या जाय

था, विषयवासना न छूटै थी, तौ ऐसी प्रतिज्ञा काहेकौं करी ।
सुगमविषय छोड़ि विषमविषयनिका उपाय करना पड़ै, ऐसा कार्य
काहेकौं कीजिए। यहां तौ उलटा रागभाव तीव्र हो है । अथवा
प्रतिज्ञाविषै दुख होय, तब परिणाम लगावनेकौं कोई आलंबन
विचारै ! जैसैं उपवासकरि पीछैं क्रीड़ा करैं । केई पापी जूवा
आदि कुविसनविषैं लगै हैं । अथवा सोय रह्या चाहैं । यह जानैं,
किसी प्रकारकरि काल पूरा करना । ऐसैं ही अन्य प्रतिज्ञाविषै
जानना। अथवा केई पापी ऐसे भी हैं, पहलैं प्रतिज्ञा करैं पीछैं
तिसतैं दुखी होंय, तब प्रतिज्ञा छोड़ दें। प्रतिज्ञा लेना छोड़ना
तिनकै ख्यालमात्र है । सो प्रतिज्ञा भंग करनेका महापाप है ।
इसतैं तौ प्रतिज्ञा न लेनी ही भली है । या प्रकार पहलैं तौ
निर्विचार होय प्रतिज्ञा करैं, पीछैं ऐसी इच्छा होय । सो जैन
धर्मविषै प्रतिज्ञा न लेनेका दंड तौ है नाहीं । जैनधर्मविषै तौ यह
उपदेश है, पहिलैं तौ तत्त्वज्ञानी होय । पीछैं ताका त्याग करैं
ताका दोष पहिचानै । त्याग किए गुण होय, ताकौं जानै । बहुरि
अपने परिणामनिका ठीक करै । वर्त्तमान परिणामनिहीकै भरोसे
प्रतिज्ञा न करि बैठै । आगामी निर्वाह होता जानै, तौ प्रतिज्ञा
करै । बहुरि शरीरकी शक्ति वा द्रव्य क्षेत्र काल भावादिकका
विचार करै । ऐसैं विचारैं पीछैं प्रतिज्ञा करनी, सो भी ऐसी
करनी जिस प्रतिज्ञातैं निरादरपना न होय, परिणाम चढ़ते रहैं ।
ऐसी जैनधर्मकी आम्नाय है । यहां कोऊ कहै, चांडालादिकौनैं
प्रतिज्ञा करीं, तिनकै इतना विचार कहां हो है । ताका समाधान—

मरणपर्यंत कष्ट होय, तौ होहु परंतु प्रतिज्ञा न छोड़नी, ऐसा विचारकरि प्रतिज्ञा करे हैं प्रतिज्ञाविषै निरादरपना नाहीं। अर सम्यग्दृष्टि प्रतिज्ञा करै है, सो तत्वज्ञानादिपूर्वक ही करै है। बहुरि जिनकै अंतरंग विरक्तता न भई अर बाह्य प्रतिज्ञा धरैं हैं, ते प्रतिज्ञाके पहलैं वा पीछैं जाकी प्रतिज्ञा करैं, ताविषै अति आसक्त होय लागे हैं। जैसें उपवासके धारनैं पारनैं भोजनविषै अतिलोभी होय गरिष्ठादि भोजन करैं, शीघ्रता घनी करै। सो जैसें जलकौं मूंदि राख्या था, छूट्या तब ही बहुत प्रवाह चलने लागा। तैसें प्रतिज्ञाकरि विपयप्रवृत्ति मूंदि अंतरंग आसक्तता वधती गई। प्रतिज्ञा पूरी होतैं ही अत्यंत विषयप्रवृत्ति होने लागी सो प्रतिज्ञाका कालविषै विपयवासना मिटी नाहीं। आगें पीछैं तिसकी एवज अधिक राग किया, तौ फल तौ रागभाव मिटे होगा। तातैं जेती विरक्तता भई होय तितनी ही प्रतिज्ञा करनी। महामुनि भी, थोरी प्रतिज्ञा करैं पीछैं आहारादिविषै उछटि करैं। अर बड़ी प्रतिज्ञा करै हैं, सो अपनी शक्ति देखि करै हैं। जैसैं परिणाम चढ़ते रहैं, सो करैं हैं। प्रमाद भी न होय अर आकुलता भी न उपजै। ऐसी प्रवृत्ति कारिजकारी जाननी। बहुरि जिनकै धर्मऊपरि दृष्टि नाहीं, ते कबहू तौ बड़ा धर्म आचरैं कबहू अधिक स्वच्छन्द होय प्रवर्त्तैं। जैसै कोई धर्मपर्वविषै तौ बहुत उपवासादि करै, कोई धर्मपर्वविषै वारंवार भोजनादि करैं। सो धर्मबुद्धि होय, तौ सर्व धर्मपर्वनिविषै यथायोग्य संयमादि धरै बहुरि कबहू तौ कोई धर्मकार्यनिविषै बहुत धन खरचै, कबहू

कोई धर्मकार्य आनि प्राप्त भया होय, तौ भी तहां थोरा भी धन न खरचै। सो धर्मबुद्धि होय, तौ यथाशक्ति यथायोग्य सर्व ही धर्मकार्यनिविषै धन खरच्या करै। ऐसैं ही अन्य जानना। बहुरि जिनकै सांचा धर्मसाधन नाहीं, ते कोई क्रिया तौ बहुत बड़ी अंगीकार करैं अर कोई हीनक्रिया किया करैं। जैसैं धनादिकका तौ त्याग किया, अर चोखा भोजन चोखा वस्त्र इत्यादि विषयनिविषै विशेष प्रवर्तै। बहुरि कोई जामा पहरना, स्त्रीसेवन करना, इत्यादि कार्यनिका तौ त्यागकरि धर्मात्मापना प्रकट करैं, अर पीछैं खोटे व्यापारादि कार्य करैं। तहां लोकनिंद्य पापक्रियाविषै प्रवर्तै। ऐसैं ही कोई क्रिया अति ऊंची, केई क्रिया अति नीची करैं। तहां लोकनिंद्य होय, धर्मकी हास्य करावैं। देखो अमुक धर्मात्मा ऐसे कार्य करै हैं। जैसैं कोई पुरुष एक वस्त्र तौ अति उत्तम पहरै, एक वस्त्र अति हीन पहरैं, तौ हास्य ही होय। तैसैं यह हास्य पावै हैं सांचा धर्मकी तौ यह आम्नाय है, जेता अपना रागादि दूरि भया होय, ताकै अनुसार जिस पदविषै जो धर्मक्रिया संभवै, सो सब अंगीकार करै। जो थोरा रागादि मिटया होय, तौ नीचा ही पदविषै प्रवर्तै। परंतु ऊंचा पद धराय, नीची क्रिया न करै। यहां प्रश्न—जो स्त्रीसेवनादिकका त्याग ऊपरिकी प्रतिमाविषै कह्या है, सो नीचली अवस्थावाला तिनका त्याग करै कि न करै। ताका समाधान—

सर्वथा तिनका त्याग नीचली अवस्थावाला कर सकता नाहीं। कोई दोष लागै है तातैं ऊपरिकी प्रतिमाविषै त्याग कह्या है।

नीचली अवस्थाविषै जिसप्रकार त्याग संभवै, तैसा नीचली अव-स्थावाला भी करै। परंतु जिस नीचली अवस्थाविषै जो कार्य संभवै नाहीं, ताका करना तौ कषायभावनिहीतै हो है। जैसैं कोऊ सप्तव्यसन सेवै, स्वस्त्रीका त्याग करै, कैसै बनै। यद्यपि स्वस्त्रीका त्याग करना धर्म है, तथापि पहलै सप्तव्यसनका त्याग होय, तब ही स्वस्त्रीका त्याग करना योग्य है ऐसैं ही अन्य जानने। बहुरि सर्व प्रकार धर्मकौ न जानै, ऐसा जीव कोई धर्मका अंगकौं मुख्यकरि अन्य धर्मनिकौं गौण करै है। जैसै केई जीव दयाधर्मकौं मुख्यकरि पूजा प्रभावनादि कार्यकौं उथापैं है, केई पूजा प्रभावनादि धर्मकौ मुख्यकरि हिंसादिकका भय न राखैं हैं केई तपकी मुख्यताकरि आर्तध्यानादिकरिकैं भी उपवासादि करै वा आपकौं तपस्वी मानि निःशंक क्रोधादि करै, केई दानकी मुख्यताकरि वहुत पाप करकै भी धन उपजाय दान दे हैं केई आरंभत्यागकी मुख्यताकरि याचना करने लगि जांय है, केई जीव हिंसा मुख्यकरि स्नानशौचादि नाहीं करै है वा लौकिक कार्य आएं धर्म छोड़ि तहां लागि जाना इत्यादि करै हैं। इत्यादि प्रकारकरि कोई धर्मकौं मुख्यकरि अन्य धर्मकौं न गिनै हैं, वा वाकै आसरै पाप आचरै है। सो जैसैं अविवेकी व्यापारीकौ काहू व्यापारके नफेके अर्थि अन्य प्रकारकरि घना तोटा होय है, तैसै यह कार्य भया। सो जैसै विवेकी व्यापारीका प्रयोजन नफा हैं, सर्व विचारकरि जैसै नफा घना होय तैसै करै। तैसैं ज्ञानीका प्रयोजन वीतरागभाव है। सर्व विचारकरि जैसै वीतरागभाव

बना होय, तैसैं करै। जातैं मूलधर्म वीतरागभाव है। याही प्रकार अविवेकी जीव अन्यथा धर्म अंगीकार करै हैं, तिनकै तौ सम्यक्चारित्र आभास भी न होय। बहुरि केई जीव अणुव्रत महाव्रतादिरूप यथार्थ आचरण करै हैं। बहुरि आचरणकै अनुसार ही परिणाम हैं। कोई माया लोभादिकका अभिप्राय नाहीं है। इनकौं धर्म जानि मोक्षकै अर्थि इनका साधन करै हैं। कोई स्वर्गादिक भोगनिकी इच्छा न राखै, परंतु तत्त्वज्ञान पहलैं न भया तातैं आप तौ जानै मोक्षका साधन करौं हौं अर मोक्षका साधन जो है, ताकौं जानै भी नाहीं। केवल स्वर्गादिक-हीका साधन करैं, सो मिश्रीकौं अमृत जानि भखै हैं अमृतका गुण तौ न होय। आपकी प्रतीतिकै अनुसार नफा फल होता नाहीं। फल जैसा साधन करै, तैसा ही लागै है। शास्त्रविषै ऐसा कह्या है—चारित्रविषै 'सम्यक्' पद है, सो अज्ञानपूर्वक आचरणकी निवृत्तिकै अर्थि है। तातैं पहलैं तत्वज्ञान होय, तहां पीछैं चारित्र होय, सो सम्यक्चारित्र नाम पावै है। जैसैं कोई खेतीवाला बीज तौ बोवै नाहीं अर अन्य साधन करै, तौ अन्नप्राप्ति कैसैं होय। घास फूस ही होय। तैसैं अज्ञानी तत्त्वज्ञानका तौ अभ्यास करै नाहीं, अर अन्य साधन करै, तौ मोक्षप्राप्ति कैसैं होय देवपदादिक ही होंय। तहां केई जीव तौ ऐसे हैं, तत्त्वादिकका नीकै नाम भी न जानैं, केवल व्रतादिकविषै ही प्रवर्त्तैं हैं। केई जीव ऐसे हैं, पूर्वोक्तप्रकार सम्यग्दर्शन ज्ञानका अयथार्थ साधनकरि व्रतादिविषै प्रवर्त्तैं हैं। सो यद्यपि व्रतादिक यथार्थ आचरैं, तथापि यथार्थ

श्रद्धान ज्ञानविना सर्व आचरण मिथ्याचारित्र ही है । सो ही समयसारका कलशाविषै कह्या है—

क्लिश्यन्तां स्वयमेव दुर्धरतरैर्मोक्षोन्मुखैः कर्मभिः
क्लिश्यन्तां च परे महाव्रततपोभारेण भग्नाश्चिरम् ।
साक्षान्मोक्ष इदं निरामयपदं संवेद्यमानं स्वयं
ज्ञानं ज्ञानगुणं विना कथमपि प्राप्तं क्षमन्ते न हि ॥ १ ॥

याका अर्थ—मोक्षतैं पराङ्मुख ऐसे अतिदुस्तर पंचाग्नि तपनादि कार्य तिनकरि आप ही क्लेश करै है, तौ करौ । बहुरि अन्य केई जीव महाव्रत अर तपका भारकरि चिरकालपर्यंत क्षीण होते क्लेश करै हैं, तौ करौ । परंतु यह साक्षात् मोक्षस्वरूप सर्वरोगरहित जो पद आपै आप अनुभवमैं आवै, ऐसा ज्ञान स्वभाव सो तौ ज्ञान-गुणविना अन्य कोई भी प्रकारकरि पावनेकौं समर्थ नाहीं है । बहुरि पंचास्तिकाय विषै जहां अंतविषै व्यवहाराभासवालोंका कथन किया है, तहां तेरहप्रकार चारित्र होतै भी ताका मोक्षमार्गविषै निषेध किया है । बहुरि प्रवचनसारविषै आत्माज्ञानशून्य संयम-भाव अकार्यकारी कह्या है। बहुरि इनही ग्रंथनिविषै वा अन्य परमात्मप्रकाशादि शास्त्रनिविषै इस प्रयोजन लिए जहां तहां निरूपण है । तातैं पहलैं तत्त्वज्ञान भए ही आचरण कार्यकारी है । यहां कोऊ जानैगा, बाह्य तौ अणुव्रत महाव्रतादि साधै है, अंतरंग परिणाम नाहीं, वा स्वर्गादिककी वांछाकरि साधै है, सो ऐसै साधै तौ पापबंध होय । द्रव्यलिंगी मुनि ऊपरिम ग्रैवेयकपर्यंत जाय है । परावर्त्तनिविषै इकतीससागर पर्यंत देवायुकी प्राप्ति

अनंत वार होनी लिखी है। सो ऐसे ऊंचेपद तौ तब ही पावै, जब अंतरंग परिणामपूर्वक महाव्रत पालै, महामंदकषायी होय इस लोक परलोकका भोगादिककी चाहि न होय, केवल धर्मबुद्धितैं मोक्षाभिलाषी हुवा साधन साधै। तातैं द्रव्यलिंगीकै स्थूल तौ अन्यथापनो है नाहीं, सूक्ष्म अन्यथापनो है, सो सम्यग्दृष्टीकौं भासै है। अब इनकै धर्मसाधन कैसै है, अर तामैं अन्यथापनो कैसैं है, सो कहिए है—

प्रथम तौ संसारविषै नरकादिकका दुख जानि स्वर्गादिविषै भी जन्म मरणादिका दुख जानि संसारतैं उदास होय, मोक्षकौं चाहै है। सो इन दुखनिकौ तौ दुख सब ही जानै है। इंद्र अहमिंद्रादिक विषयानुरागतैं इंद्रियजनित सुख भोगवै है ताकौं भी दुख जानि निराकुल सुखअवस्थाकौं पहचानि मोक्ष जानै हैं, सोई सम्यग्दृष्टि जानना। बहुरि विषयसुखादिकका फल नरकादिक है, शरीर अशुचि विनाशीक है, पोषनेयोग्य नाहीं, कुटुंबादिक स्वार्थके सगे हैं। इत्यादि परद्रव्यनिका दोष विचारि तिनका तौ त्याग करै है, व्रतादिकका फल स्वर्गमोक्ष है, तपश्चरणादि पवित्रफलके दाता हैं, तिनकरि शरीर सोखने योग्य है, देव गुरु शास्त्रादि हितकारी है। इत्यादि परद्रव्यनिका गुण विचारि तिनहीका अंगीकार करै है। इत्यादि प्रकारकरि कोई परद्रव्यकौ बुरा जानि अनिष्ट श्रद्है है। कोई परद्रव्यकौ भला जानि इष्ट श्रद्है है। सो परद्रव्यविषै इष्ट अनिष्टरूप श्रद्धान सो मिथ्या है। बहुरि इसही श्रद्धानतैं याकै उदासीनता भी द्वेषबुद्धिरूप हो है। जातैं काहूकौं बुरा जानन

ताहीका नाम द्वेष है। कोऊ कहैगा, सम्यग्दृष्टी भी तौ बुरा जानि परद्रव्यकौं त्यागै है। ताका समाधान —
सम्यग्दृष्टी परद्रव्यनिकौं बुरा न जानै है। अपना रागभावकौं बुरा जानै है। आप सरागभावकौं छोरै, तातैं ताका कारणका भी त्याग हो है। वस्तु विचारे कोई परद्रव्य तौ भला बुरा है नाहीं। कोऊ कहैगा, निमित्तमात्र तौ है। ताका उत्तर—

परद्रव्य जोरावरी तौ क्यौंाई बिगारता नाहीं। अपने भाव बिगरै तब वह भी बाह्यनिमित्त है। बहुरि वाका निमित्तविना भी भाव बिगरै हैं। तातैं नियमरूप निमित्त भी नाहीं। ऐसैं परद्रव्यका तौ दोष देखना मिथ्याभाव है। रागादिभाव ही बुरे है। सो याकै ऐसी समझि नाहीं। यह परद्रव्यनिका दोष देखि तिनविषै द्वेषरूप उदासीनता करै है। सांची उदासीनता तौ वाका नाम है, जो कोई ही परद्रव्यका गुण वा दोष न भासै, तातैं काहूकौ बुरा भला न जानै। आपकौं आप जानै, परकौं पर जानैं, परतैं किछू भी प्रयोजन मेरा नाहीं, ऐसा मानि साक्षीभूत रहै। सो ऐसी उदासीनता ज्ञानीहीकै होय। बहुरि यह उदासीन होय शास्त्रविषै व्यवहारचारित्र अणुव्रत महाव्रतरूप कह्या है, ताकौं अंगीकार करै है, एकदेश वा सर्वदेश हिंसादिपापकौं छांड़ै है, तिनकी जायगा अहिंसादि पुण्यरूप कार्यनिविषै प्रवर्त्तै है। बहुरि जैसै पर्यायाश्रित पापकार्यनिविषै कर्त्तापना मानै था तैसैं ही अब पर्यायाश्रित पुण्यकार्यनिविषै कर्त्तापना अपना मानने लगी, ऐसैं पर्यायाश्रित कार्यनिविषै अहंबुद्धि माननेकी समानता भई।

जैसैं मैं जीव मारौं हौं, मैं परिग्रहधारी हौं, इत्यादिरूप मानि थी, तैसैंही मैं जीवनिकी रक्षा करौं हौं, मैं नग्न परिग्रहरहित हौं, ऐसी मानि भई। सो पर्यायाश्रित कार्यविषै अहंबुद्धि है, सो ही मिथ्यादृष्टि है। सोई समयसारविषै कह्या है—

ये तु कर्त्तारमात्मानं पश्यन्ति तमसावृताः॥
सामान्यजनवत्तेषां न मोक्षोपि मुमुक्षुतां॥ १॥

याका अर्थ—जे जीव मिथ्याअंधकारव्याप्त होत संतै आपकौं पर्यायाश्रित क्रियाका कर्त्ता मानै हैं, ते जीव मोक्षाभिलाषी हैं, तौऊ तिनकै जैसैं अन्यमती सामान्य मनुष्यनिकै मोक्ष न होय, तैसैं मोक्ष न हो है। जातैं कर्त्तापनाका श्रद्धानकी समानता है। बहुरि ऐसैं आप कर्त्ता होय श्रावकधर्म वा मुनिधर्मकी क्रियाविषै मन वचन कायकी प्रवृत्ति निरंतर राखै है। जैसैं उन क्रियानिविषै मन भंग न होय, तैसैं प्रवर्तैं है। सो ऐसे भाव तौ सराग है। चारित्र है, सो वीतरागभावरूप है। तातै ऐसे साधनकौं मोक्षमार्ग मानना मिथ्याबुद्धि है। यहां प्रश्न—जो सराग वीतराग भेदकरि दोयप्रकार चारित्र कह्या है, सो कैसैं है। ताका उत्तर—

जैसैं तंदुल दोय प्रकार हैं—एक तुषरहित हैं, एक तुषसहित हैं। तहां ऐसा जानना—तुष है सो तंदुलका स्वरूप नाहीं। तंदुलविषै दोष है। अर कोई स्याना तुषसहित तंदुलका संग्रह करै था, ताकौं देखि कोई भोला तुषनिहीकौं तंदुल मानि संग्रह करै, तौ वृथा खेदखिन्न ही होय। तैसैं चारित्र दोय प्रकार है- एक सराग है एक वीतराग हैं। तहां ऐसा जानना--राग है, सो चारित्रका

स्वरूप नाहीं। चारित्रविषै दोष है। अर केई ज्ञानी प्रशस्तराग-सहित चारित्र धारैं हैं। तिनिकौं देखि कोई अज्ञानी प्रशस्तरागहीकौं चारित्र मानि संग्रह करै, तौ वृथा खेदखिन्न ही होय। यहां कोऊ कहैगा-पापक्रिया करतैं तीव्ररागादिक होते थे, अब इन क्रियानिकैं करतें मंदराग भया। तातैं जेताअंश रागभाव घट्या, तितना अंश तौ चारित्र कहौ। जेता अंश राग रह्या, तेता अंश राग कहौ। ऐसैं याकै सरागचारित्र संभवै है। ताका समाधान—

जो तत्त्वज्ञानपूर्वक ऐसैं होय, तौ कहो हौं जैसैं ही है। तत्त्वज्ञानविना उत्कृष्ट आचरण होतै भी असंयम ही नाम पावै है। जातैं रागभाव करनेका अभिप्राय नाहीं मिटै है। सोई दिखाईए है-

द्रव्यलिंगी मुनि राज्यादिककौं छोड़ि निर्ग्रंथ हो है, अठाईस मूलगुणनिकौं पालै है, उग्रोग्र अनशनादि घना तप करै है, क्षुधादिक बाईस परिषह सहै है, शरीरका खंड खंड भए भी व्यग्र न हो है, व्रतभंगके कारण अनेक मिलैं, तौं भी दृढ़ रहै है, कोईसेती क्रोध न करै है, ऐसा साधनका मान न करै है, ऐसे साधनविषै कोई कपटाई नाहीं है, इस साधनकरि इस लोक परलोकके विषयसुखकौं न चाहै है। ऐसी याकी दशा भई है। जो ऐसी दशा न होय, तौ ग्रैवेयकपर्यंत कैसैं पहुचै। परंतु याकौं मिथ्यादृष्टी असंयमी ही शास्त्रविषै कह्या। सो ताका कारण यह है—याकै तत्वनिका श्रद्धान ज्ञान सांचा भया नाहीं। पूर्वैं वर्णन किया, तैसै तत्वनिका श्रद्धान ज्ञान भया है। तिस ही अभिप्राय सर्व साधन करै है। सो इन साधनिका अभिप्रायकी परंपराकौं

विचारें कषायनिका अभिप्राय आवै है। सो कैसैं सो सुनहु—

यह पापके कारण रागादिककौं तौ हेय जानि छोरै है, परंतु पुण्यका कारण प्रशस्तरागकौं उपादेय मानै है। ताके बधनेका उपाय करै है। सो प्रशस्तराग भी तौ कषाय है। कषायकौं उपादेय मान्या, तब कषाय करनेका ही श्रद्धान रह्या। अप्रशस्त परद्रव्यनिसौं द्वेषकरि प्रशस्त परद्रव्यनिविषै राग करनेका अभिप्राय भया। किछू परद्रव्यनिविषै साम्यभावरूप अभिप्राय न भया। यहां प्रश्न—जो सम्यग्दृष्टी भी तौ प्रशस्तरागका उपाय राखै है। ताका उत्तर—

जैसैं काहूकै बहुत दंड होता था, सो वह थोरा दंड देनेका उपाय राखै है। अर थोरा दंड दिए हर्ष भी मानै है परंतु श्रद्धानविषै दंड देना, अनिष्ट ही मानै है। तैसैं सम्यग्दृष्टीकै पापरूप बहुत कषाय होता था, सो यह पुण्यरूप थोरा कषाय-करनेका उपाय राखै है। अर थोरा कषाय भए हर्ष भी मानै है। परंतु श्रद्धानविषै कषायकौं हेय ही मानै है। बहुरि जैसैं कोऊ कुमाईका कारण जानि व्यापारादिकका उपाय राखै है। उपाय बनि आएं हर्ष मानै है। तैसैं द्रव्यलिंगी मोक्षका कारण जानि प्रशस्तरागका उपाय राखै है। उपाय बनि आए हर्ष मानै है। ऐसैं प्रशस्तरागका उपायविषै वा हर्षविषै समानता होतैं भी सम्यग्दृष्टीकै तौ दंडसमान मिथ्यादृष्टीकै व्यापारसमान श्रद्धान पाईए है। तातैं अभिप्रायविषै विशेष भया। बहुरि याकै परीषह तपश्चरणादिकके निमित्ततैं दुख होय, ताका इलाज तौ न करै है, परंतु दुख वेदै

है। सो दुखका वेदना कषाय ही है। जहां वीतरागता हो है, तहां तौ जैसैं अन्य ज्ञेयकौं जानै है, तैसैं ही दुखका कारण ज्ञेयकौं जानै है। सो ऐसी दशा याकी न हो है। बहुरि उनकौं सहै है, सो भी कषायका अभिप्रायरूप विचारतैं सहै है। सो विचार ऐसा हो है-जो परवशपनै नरकादिगतिविषै बहुत दुख सहे, ये परीषहादिकका दुख तौ थोरा है। याकौं स्ववश सहें स्वर्ग मोक्षसुखकी प्राप्ति हो है,। जो इनकौ न सहिए अर विषय-सुख सेईए, तौ नरकादिककी प्राप्ति हो है, तहां बहुत दुख होगा। इत्यादि विचारविषै परीषहनिविषै अनिष्टबुद्धि रहै है। केवल नरकादिकके भयतै वा सुखके लोभतै तिनकौं सहै है। सो ए सर्व कषायभाव ही हैं। बहुरि ऐसा विचार हो है—जे कर्म बांधे, ते भोगेविना छूटते नाहीं। तातैं मोकौ सहने आए। सो ऐसे विचारतैं कर्मफल चेतनारूप प्रवर्त्तै है। बहुरि पर्यायदृष्टितैं जो परीषहादिकरूप अवस्था हो है, ताकौं आपकै भई मानै है। द्रव्यदृष्टितैं अपनी वा शरीरादिककी अवस्थाकौं भिन्न न पहिचानै है। ऐसैं ही नानाप्रकार व्यवहार विचारतैं परीषहादिक सहै है। बहुरि यानैं राज्यादि विषयसामग्रीका त्याग किया है, वा इष्ट भोजनादिकका त्याग किया करै है। सो जैसैं कोऊ दाहज्वरवाला वायु होनेके भयतैं शीतलवस्तु सेवनका त्याग करै है, परंतु यावत् शीतल वस्तुका सेवन रुचै, तावत् वाकै दाहका अभाव न कहिए। तैसैं रागसहित जीव नरकादिकके भयतैं विषयसेवना त्याग करै है, परन्तु यावत् विषयसेवनरुचै, तावत् रागका अभाव न कहिए।

बहुरि जैसैं अमृतका आस्वादी देवकौं अन्य भोजन स्वयमेव न रुचै, तैसै स्वरसका आस्वादकरि विषयसेवनकी रुचि याकै न हो है। या प्रकार फलादिककी अपेक्षा परीषहसहनादिकौं सुखका कारण जानै है। अर विषयसेवनादिकौं दुखका कारण जानै है। बहुरि तत्कालविषै परीषह सहनादिकतैं दुख होना मानै है। विषयसेवनादिकतैं सुख मानै है। बहुरि जिनतैं सुख दुख होना मानिए, तिनविषै इष्ट अनिष्ट बुद्धितैं राग द्वेषरूप अभिप्रायका अभाव होय नाहीं। बहुरि जहां रागद्वेष हैं, तहां चारित्र होय नाहीं। तातैं यह द्रव्यलिंगी विषयसेवन छोरि तपश्चरणादि करै है, तथापि असंयमी है। सिद्धांतविषै असंयत देशसंयत सम्य-ग्दृष्टीतै भी याकौं हीन कह्या है। तातै उनकै चौथा पांचवां गुणस्थान है, याकै पहला ही गुणस्थान है। यहां कोऊ कहै— असंयत देशसंयत सम्यग्दृष्टीकै कषायनिकी प्रवृत्ति विशेष है, अर द्रव्यलिंगी मुनिकै थोरी है, यातैं असंयत देशसंयत सम्यग्दृष्टी तौ सोलहवां स्वर्गपर्यंत ही जाय अर द्रव्यलिंगी ऊपरिम ग्रैवेयकपर्यंत जाय। तातैं भावलिंगी मुनितैं तौ द्रव्यलिंगीकौं हीन कहौ, असं-यत देशसंयत सम्यग्दृष्टीतैं याकौं हीन कैसैं कहिए। ताका समाधान—

असंयत देशसंयत सम्यग्दृष्टीकै कषायनिकी प्रवृत्ति तौ है, परंतु श्रद्धानविषै किसी ही कषायके करनेका अभिप्राय नाहीं। बहुरि द्रव्यलिंगीकै शुभकषाय करनेका अभिप्राय पाईए है। श्रद्धान-विषै तिनकौं भले जानै है। तातैं श्रद्धानअपेक्षा असंयत

सम्यग्दृष्टीतैं भी याकै अधिक कपाय है । बहुरि द्रव्यलिंगीकै योग-
निकी प्रवृत्ति शुभरूप घनी हो है । अर अघातिकर्मनिविषै पुण्य
पापबंधका विशेप शुभ अशुभ योगनिकै अनुसार है । तातै उप-
रिम ग्रैवेयकपर्यंत पहुंचै है, सो किछू कार्यकारी नाहीं । जातैं अघा-
तिया कर्म आत्मगुणके घातक नाहीं । इनके उदयतैं ऊंचे नीचेपद
पाए तौ कहा भया । ए तौ बाह्य संयोगमात्र संसारदशाके स्वांग है ।
आप तौ आत्मा है, तातैं आत्मगुणके घातक ए कर्म्म है तिनका
हीनपना कार्यकारी है । सो घातिया कर्मनिका बंध बाह्य प्रवृत्तिकै
अनुसार नाहीं । अंतरंग कपायशक्तिकै अनुसार है । याहीतैं
द्रव्यलिंगीतैं असंयत देशसंयत सम्यग्दृष्टिकै घातिकर्म्मनिका बंध
थोरा है । द्रव्यलिंगीकै तौ सर्व घातिकर्मनिका बंध बहुत स्थिति
अनुभाग लिए होय । अर असंयत देशसंयत सम्यग्दृष्टिकै मि-
थ्यात्व अनंतानुबंधी आदि कर्मनिका तौ बंध है ही नाहीं । अवशे
पनिका बंध हो है, सो स्तोक स्थिति अनुभाग लिए हो है । बहुरि
द्रव्यलिंगीकै कदाचित् गुणश्रेणीनिर्जरा न होय, सम्यग्दृष्टीकै
कदाचित् हो है । देशसकलसंयम भए निरंतर हो है । याहीतैं
यह मोक्षमार्ग भया है । तातै द्रव्यलिंगी मुनि असंयत देशसंयत
सम्यग्दृष्टीतैं हीन कह्या है । सो समयसारविषै द्रव्यलिंगी मुनिका
हीनपना गाथा वा टीका कलशानिविषै प्रगट किया है । बहुरि
पंचास्तिकायकी टीकाविपै जहां केवल व्यवहारावलंबीका कथन किया
है, तहां व्यवहार पंचाचार होतै भी ताका हीनपना ही प्रगट किया
है । बहुरि प्रवचनसारविपै संसारतत्त्व द्रव्यलिंगीकौ कह्या । बहुरि

परमात्मप्रकाशादि अन्य शास्त्रनिविषै भी इस व्याख्यानकौं स्पष्ट किया है। बहुरि द्रव्यलिंगीकै जो जप तप शील संयमादि क्रिया है, तिनकौं भी अकार्यकारी इन शास्त्रनिविषै जहां दिखाये हैं, सो तहां देखि लेना। यहां ग्रंथ वधनेके भयतैं नाहीं लिखिए है। ऐसैं केवल व्यवहाराभासके अवलंबी मिथ्यादृष्टी तिनका निरूपण किया।

अब निश्चय व्यवहार दोऊ नयनिके आभासकौं अवलंबै हैं, ऐसे मिथ्यादृष्टी तिनिका निरूपण कीजिए है—

जे जीव ऐसा मानै हैं–जिनमतविषै निश्चय व्यवहार दोय नय कहे हैं, तातैं हमकौं तिनि दोऊनिका अंगीकार करना। ऐसैं विचारि जैसैं केवल निश्चयाभासके अवलंबीनिका कथन किया था तैसै तौ निश्चयका अंगीकार करै हैं अर जैसैं केवल व्यवहाराभासके अवलंबीनिका कथन किया था, तैसैं व्यवहारका अंगीकार करै हैं। यद्यपि ऐसैं अंगीकार करनेविषै दोऊ नयनिविषैं परस्पर विरोध है, तथापि करैं कहा, सांचा तो दोऊ नयनिका स्वरूप भास्या नाहीं, अर जिनमतविषै दोय नय कहे तिनविषै काहूकौं छोड़ी भी जाती नाहीं। तातैं भ्रम लिए दोऊनिका साधन साधै हैं, ते भी जीव मिथ्यादृष्टि जानने।

अब इनिकी प्रवृत्तिका विशेष दिखाईए है-- अंतरंगविषै आप तौ निर्धार करि यथावत् निश्चय व्यवहार मोक्षमार्गकौ पहिचान्या नाहीं। जिनआज्ञा मानि निश्चय व्यवहाररूप मोक्षमार्ग दोय प्रकार मानै है। सो मोक्षमार्ग दोय नाहीं। मोक्षमार्गका निरूपण

दोय प्रकार है । जहां सांचा मोक्षमार्गकौं मोक्षमार्ग निरूपण सो निश्चय मोक्षमार्ग हैं । अर जहां जो मोक्षमार्ग तौ है नाहीं, परंतु मोक्षमार्गका निमित्त है, वा सहचारी है, ताकौं उपचार करि मोक्षमार्ग कहिए, सो व्यवहार मोक्षमार्ग है। जातैं निश्चय व्यवहारका सर्वत्र ऐसा ही लक्षण है । सांचा निरूपण सो निश्चय, उपचार निरूपण सो व्यवहार, तातै निरूपण अपेक्षा दोय प्रकार मोक्षमार्ग जानना । एक निश्चयमोक्षमार्ग है, एक व्यवहारमोक्षमार्ग है । ऐसै दोय मोक्षमार्ग मानना मिथ्या है । बहुरि निश्चय व्यवहार दोऊनिकूं उपादेय मानै है सो भी भ्रम है । जातै निश्चय व्यवहारका स्वरूप तौ परस्पर विरोध लिए है । जातैं **समयसार**विषै ऐसा कह्या है—

व्यवहारो भूदत्थो भूदत्थो देसिऊण सुद्धणआ।

याका अर्थ-व्यवहार अभूतार्थ है। सत्य स्वरूपकौं न निरूपै है । किसी अपेक्षा उपचारकरि अन्यथा निरूपै है । बहुरि शुद्ध नय जो निश्चय है, सो भूतार्थ है । जैसा वस्तुका स्वरूप है, तैसा निरूपै है । ऐसै इनि दोऊनिका स्वरूप तो विरुद्धता लिए है । बहुरि तू ऐसैं मानैं है, जो सिद्धसमान शुद्ध आत्माका अनुभवन सो निश्चय अर व्रत शील संयमादिरूप प्रवृत्ति सो व्यवहार, सो ऐसा तेरैं मानना ठीक नाहीं । जातै कोई द्रव्यभावका नाम निश्चय कोईका नाम व्यवहार, ऐसैं है नाहीं । एक ही द्रव्यके भावकौं तिसस्वरूप ही निरूपण करना, सो निश्चय नय है । उपचारकरि तिस द्रव्यके भावकौं अन्यद्रव्यके भावस्वरूप निरूपण

करना, सो व्यवहार है। जैसैं माटीके घड़ेकौं माटीका घड़ा निरूपिए सो निश्चय, अर घृतसंयोगका उपचारकरि वाकौं ही घृतका घड़ा कहिए, सो व्यवहार। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। तातैं तू किसीकौं निश्चय मानै, किसीकौं व्यवहार मानै, सो भ्रम है। बहुरि तेरे मानने विषै भी निश्चय व्यवहारकै परस्पर विरोध आया। जो तू आपकौं सिद्ध मान शुद्ध मानै है, तौ व्रतादिक काहेकौं करै है। जो व्रतादिकका साधनकरि सिद्ध भया चाहै है, तौ वर्त्तमानविषै शुद्ध आत्माका अनुभवन मिथ्या भया। ऐसैं दोऊ नयनिकै परस्पर विरोध है। तातै दोऊ नयनिका उपादेयपना बनै नाहीं। यहां प्रश्न--जो समयसारादिविषै शुद्ध आत्माका अनुभवकौं निश्चय कह्या है। व्रत तप संयमादिककौं व्यवहार कह्या है, तैसैं ही हम मानै हैं। ताका समाधान—

शुद्ध आत्माका अनुभव सांचा मोक्षमार्ग है। तातैं वाकौं निश्चय कह्या। यहां स्वभावतैं अभिन्न परभावतै भिन्न ऐसा शुद्धशब्दका अर्थ जानना। संसारीकौं सिद्ध मानना, ऐसा भ्रमरूप अर्थ शुद्धशब्दका न जानना। बहुरि व्रत तप आदि मोक्षमार्ग है नाहीं, निमित्तादिककी अपेक्षा उपचारतै इनकौ मोक्षमार्ग कहिए है, तातैं इनकौं व्यवहार कह्या। ऐसैं भूतार्थ अभूतार्थ मोक्षमार्गपनाकरि इनकौं निश्चय व्यवहार कहे हैं। सो ऐसैं ही मानना। बहुरि ए दोऊ ही सांचे मोक्षमार्ग हैं। इन दोऊनिकौं उपादेय मानना, सो तौ मिथ्याबुद्धि ही है। तहां वह कहै है—श्रद्धान तौ निश्चयका राखै है, अर प्रवृत्ति व्यवहाररूप राखै हैं, ऐसैं हम

दोऊनिकौं अंगीकार करै हैं । सो भी बनै नाहीं । जातैं निश्चयका निश्चयरूप व्यवहारका व्यवहाररूप श्रद्धान करना युक्त है । एक ही नयका श्रद्धान भए एकांतमिथ्यात्व हो है । बहुरि प्रवृत्तिविषै नयका प्रयोजन ही नाहीं। प्रवृति तौ द्रव्यकी परणति है। तहां जिस द्रव्यकी परणति होय, ताकौ तिसहीकी प्ररूपिए सो निश्चय-नय अर तिसहीकौं अन्य द्रव्यकी प्ररूपिए, सो व्यवहारनय; ऐसै अभिप्राय अनुसार प्ररूपणतै तिस प्रवृत्तिविषै दोऊ नय बनैं हैं। किछू प्रवृति ही तौ नयरूप है नाहीं। तातै या प्रकार भी दोऊ नयका ग्रहण मानना मिथ्या है। तौ कहा करिए, सो कहिए है—
निश्चयनयकरि जो निरूपण किया होय, ताकौ तौ सत्यार्थ मानि ताका श्रद्धान अंगीकार करना अर व्यवहारनयकरि जो निरूपण किया होय, ताकौं असत्यार्थ मानि ताका श्रद्धान छोड़ना। सो ही समयसारविषै कह्या है—

सर्वत्राध्यवसायमेवमखिलं त्याज्यं यदुक्तं जिनै—
स्तन्मन्ये व्यवहार एव निखिलोऽप्यन्याश्रयस्त्याजितः।
सम्यग्निश्चयमेकमेव परमं निष्कम्प्यमाक्रम्य किं
शुद्धज्ञानघने महिम्नि न निजे बध्नन्ति सन्तो धृतिम् ॥१॥

याका अर्थ—जातैं सर्व ही हिंसादि वा अहिंसादिविषै अध्य-वसाय है सो समस्त ही छोड़ना ऐसा जिनदेवनिकरि कह्या है। तातैं मैं ऐसैं मानौ हौं, जो पराश्रित व्यवहार है' सो सर्व ही छुड़ाया है। सन्तपुरुप एक निश्चयहीकौं भलै प्रकार निश्चयपनै अंगीकारकरि शुद्धज्ञानघनरूप निजमहिमाविषै स्थिति क्यों न

करै हैं। भावार्थ—यहां व्यवहारका तौ त्याग कराया, तातैं निश्चयकौं अंगीकारकरि निजमहिमारूप प्रवर्त्तना युक्त है। बहुरि षट्पाहुड़विषै कह्या है—

जो सुत्तो ववहारे सो जोई जागदे सकज्जम्मि।
जो जागदि ववहारे सो सुत्तो अप्पणे कज्जे ॥ १ ॥

याका अर्थ—जो व्यवहारविषै सूता है, सो जोगी अपने कार्यविषै जागै है। बहुरि जो व्यवहारविषै जागै है, सो अपने कार्यविषै सूता है। तातैं व्यवहारनयका श्रद्धान छोड़ि निश्चय नयका श्रद्धान करना योग्य है। व्यवहारनय स्वद्रव्य परद्रव्यकौं वा तिनके भावनिकौं वा कारण कार्यादिककौं काहूकौं काहूविषै मिलाय निरूपण करै है। सो ऐसे ही श्रद्धानतैं मिथ्यात्व है। तातैं याका त्याग करना। बहुरि निश्चयनय तिनहीकौं यथावत् निरूपै है, काहूकौ काहूविषै न मिलावै है। ऐसे ही श्रद्धानतैं सम्यक्त हो है। तातैं याका श्रद्धान करना। यहां प्रश्न—जो ऐसैं है, तौ जिनमार्गविषै दोऊ नयनिका ग्रहण करना कह्या है, सो कैसैं। ताका समाधान—

जिनमार्गविषै कहीं तौ निश्चयनयकी मुख्यता लिए व्यवहार है ताकौ तौ 'सत्यार्थ ऐसैं ही है, ऐसा जानना। बहुरि कहीं व्यवहारनयकी मुख्यता लिए व्याख्यान है, ताकौ 'ऐसैं है नाहीं—निमित्तादि अपेक्षा उपचार किया है, ऐसा जानना। इस प्रकार जाननेका नाम ही दोऊ नयनिका ग्रहण है। बहुरि दोऊ नयनिके व्याख्यानकौं समान सत्यार्थ जानि ऐसैं भी है, ऐसैं भी है,

ऐसा भ्रमरूप प्रवर्त्तनेकरि तौ दोऊ नयनिका ग्रहण करना कह्या है नाहीं। बहुरि प्रश्न--जो व्यवहारनय असत्यार्थ है, तौ याका उपदेश जिनमार्गविषै काहेकौं दिया--एक निश्चयनयहीका निरूपण करना था। ताका समाधान--

ऐसा ही तर्क सपयसारविषै किया है। तहां यह उत्तर दिया है---

जह णावि सक्कमणज्जो अणज्जभासं विणा उगाहेउं।
तह ववहारेण विणा परमत्थुवएसणमसक्कं ॥ १ ॥

याका अर्थ-जैसैं अनार्य जो म्लेछ सो ताहि म्लेछभाषा विना अर्थ ग्रहण करावनेकौं समर्थ न हूजे। तैसैं व्यवहार विना परमार्थका उपदेश अशक्य है। तातैं व्यवहारका उपदेश है। बहुरि इसही सूत्रकी व्याख्याविषै ऐसा कह्या है- **व्यवहारनयो नानुसर्त्तव्यः।** यह निश्चयके अंगीकार करावनेकौं व्यवहारकरि उपदेश दीजिए है। बहुरि व्यवहारनय है, सो अंगीकार करने योग्य नाहीं। यहां प्रश्न--व्यवहार विना निश्चयका उपदेश कैसैं न होय। बहुरि व्यवहारनय कैसैं अंगीकार करना, सो कहो। ताका समाधान--

निश्चयनयकरि तौ आत्मा परद्रव्यतैं भिन्न स्वभावनितैं अभिन्न स्वयंसिद्ध वस्तु है। ताकौं जे न पहिचानै, तिनकौं ऐसै ही कह्या करिए तौ वह समझै नाहीं। तब उनकौं व्यवहारनयकरि शरीरादिक परद्रव्यनिकी सापेक्षकरि नर नारक पृथ्वीकायादिरूप जीवके विशेष किए। तब मनुष्य जीव है, नारकी जीव है, इत्यादि प्रकार

लिए वाकै जीवकी पहचानि भई। अथवा अभेदवस्तुविषै भेद उपजाय ज्ञानदर्शनादि गुणपर्यायरूप जीवके विशेष किए, तब जाननेवाला जीव है, देखनेवाला जीव है, इत्यादि प्रकार लिए वाकै जीवकी पहिचानि भई। बहुरि निश्चयकरि वीतरागभाव मोक्षमार्ग है। ताकौं जे न पहिचानैं, ताकौं ऐसैं ही कह्या करिए तौ वह समझै नाहीं। तब उनकौं व्यवहारनयकरि तत्त्वश्रद्धान-ज्ञानपूर्वक परद्रव्यका निमित्त मेटनेकी सापेक्षकरि व्रत शील संयमादिकरूप वीतरागभावके विशेष दिखाए, तब वाकै वीतराग-भावकी पहचानि भई। याही प्रकार अन्यत्र भी व्यवहारविना निश्चयका उपदेशका न होना जानना। बहुरि यहां व्यवहारकरि नर नारकादिपर्यायहीकौं जीव कह्या, सो पर्यायहीकौं जीव न मानि लेना। पर्याय तौ जीव पुद्गलका संयोगरूप है। तहां निश्चयकरि जीवद्रव्य जुदा है, ताहीकौं जीव मानना। जीवका संयोगतैं शरीरादिककौं भी उपचारकरि जीव कह्या, सो कहने मात्र ही है। परमार्थतैं शरीरादिक जीव होते नाहीं। ऐसा ही श्रद्धान करना। बहुरि अभेदआत्माविषै ज्ञानदर्शनादि भेद किए, सो तिनकौं भेदरूप ही न मानि लेने। भेद तौ समझावनेके अर्थ हैं। निश्चयकरि आत्मा अभेद ही है। तिसहीकौं जीववस्तु मानना। संज्ञा संख्यादिकरि भेद कहे, सो कहने मात्र ही हैं। परमार्थतैं जुदे जुदे हैं नाहीं। ऐसा ही श्रद्धान करना। बहुरि परद्रव्यका निमित्त मेटनेकी अपेक्षा व्रत शील संयमादिककौं मोक्षमार्ग कह्या। सो इनहीकौं मोक्षमार्ग न मानि लेना। जातैं

परद्रव्यका ग्रहण त्याग आत्माकै होय, तौ आत्मा परद्रव्यका कर्त्ता हर्त्ता होय। सो कोई द्रव्य कोई द्रव्यकै आधीन है नाहीं। तातैं आत्मा अपने भाव रागादिक है, तिनकौं छोड़ि वीतरागी हो है। सो निश्चयकरि वीतराग भाव ही मोक्षमार्ग है। वीतराग भावनिकै अर व्रतादिकनिकै कदाचित् कार्यकारणपनो है। तातै व्रतादिककौं मोक्षमार्ग कहे, सो कहने मात्र ही हैं। परमार्थतैं बाह्यक्रिया मोक्षमार्ग नाहीं, ऐसा ही श्रद्धान करना। ऐसै ही अन्यत्र भी व्यवहारनयका अंगीकार करना जानि लेना। यहां प्रश्न—जो व्यवहारनय परकौ उपदेशविषै ही कार्यकारी है कि, अपना भी प्रयोजन साधै है। ताका समाधान--

आप भी यावत् निश्चयनयकरि प्ररूपित वस्तुकौ न पहिचानै तावत् व्यवहारमार्गकरि वस्तुका निश्चय करै। तातैं नीचली दशाविषै आपकौ भी व्यवहारनय कार्यकारी है परंतु व्यवहारकौ उपचार मात्र मानि वाकै द्वारि वस्तुका ठीक करै, तौ कार्यकारी होय। बहुरि जो निश्चयवत् व्यवहार भी सत्यभूत मानि वस्तु ऐसैं ही है, ऐसा श्रद्धान करै, तौ उलटा अकार्यकारी होय जाय। सो ही पुरुषार्थ सिद्ध्युपायविषै कह्या है--

अबुधस्य बोधनार्थं मुनीश्वरा देशयन्त्यभूतार्थम्।
व्यवहारमेव केवलमवैति यस्तस्य देशना नास्ति॥६॥
माणवक एव सिंहो यथा भवत्यनवगीतसिंहस्य।
व्यवहार एव हि तथा निश्चयतां यात्यनिश्चयज्ञस्य॥७॥

इनका अर्थ—मुनिराज अज्ञानीके समझावनेकौ असत्यार्थ जो

व्यवहारनय ताकौं उपदेशै है। जो केवल व्यवहारहीकौं जानै है, ताकौं उपदेश ही देना योग्य नाहीं है। बहुरि जैसैं जो सांचा सिंहकौ न जानै, ताकै बिलाव ही सिंह है, तैसैं जो निश्चयकौं ना जानै, ताकै व्यवहार ही निश्चयपणाकौं प्राप्त हो है। यहां कोई निर्विचार पुरुष ऐसैं कहै--तुम व्यवहारकौं असत्यार्थ हेय कहो हौ, तौ हम व्रत शील संयमादिका व्यवहार कार्य काहेकौं करैं— सर्व छोड़ि देवैंगे। ताकौं कहिए हैं किछू व्रतशील संयमादिकका नाम व्यवहार नाहीं है। इनकौं मोक्षमार्ग मानना व्यवहार है, सो छोड़ि दे। बहुरि ऐसा श्रद्धानकरि जो इनकौं तौ बाह्य सहकारी जानि उपचारतैं मोक्षमार्ग कह्या है। ए तौ परद्रव्याश्रित हैं। बहुरि सांचा मोक्षमार्ग वीतरागभाव हैं, सो स्वद्रव्याश्रित है। ऐसैं व्यवहारकौं असत्यार्थ हेय जानना। व्रतादिककौं छोड़नेतैं तौ व्यवहारका हेयपना होता है नाहीं। बहुरि हम पूछैं है-व्रतादिककौ छोड़ि कहा करैगा। जो हिंसादिरूप प्रवर्त्तैगा, तौ तहां तौ मोक्षमार्गका उपचार भी संभवै नाहीं। तहां प्रवर्त्तनेतैं कहा भला होयगा, नरकादिक पावैगा। तातैं ऐसै करना, तौ निर्विचारपना है। बहुरि व्रतादि परिणति मेटि केवल वीतराग उदासीन भावरूप होना बनै, तौ भलैं ही है। सो नींचली दशा विषै होय सकै नाहीं। तातैं व्रतादिसाधन छोड़ि स्वच्छंद होना योग्य नाहीं। या प्रकार श्रद्धानविषै निश्चयकौं, प्रवृत्तिविषै व्यवहारकौं, उपादेय मानना, सो भी मिथ्याभाव ही है।

बहुरि यह जीव दोऊ नयनिका अंगीकार करनेकै अर्थि

कदाचित् आपकौं शुद्ध सिद्धसमान रागादिरहित केवलज्ञानादि-सहित आत्मा अनुभवै है, ध्यानमुद्रा धारि ऐसे विचारविषै लागै है। सो ऐसा आप नाहीं, परंतु भ्रमकरि मैं ऐसा ही हौं, ऐसा मानि संतुष्ट हो है। कदाचित् वचनद्वारि निरूपण ऐसा ही करै है। सो निश्चय तौ यथावत् वस्तुकौ प्ररूपै, प्रत्यक्ष जैसा आप नाहीं तैसा आपकौं मानना, सो निश्चय नाम कैसैं पावै। जैसैं केवल निश्चयाभासवाला जीवकै पूर्वं अयथार्थपना कह्या था, तैसैं ही याकै जानना। अथवा यह ऐसै मानै है, जो इस नयकरि आत्मा ऐसा है, इस नयकरि ऐसा है, सो आत्मा तौ जैसा है तैसा है ही, तिसविषै नयकरि निरूपण करनेका जो अभिप्राय है, ताकौं न पहिचानै है। जैसैं आत्मा निश्चयकरि तौ सिद्धसमान केवलज्ञानादिसहित द्रव्यकर्म—नोकर्म-भावकर्मरहित है, व्यवहार-नयकरि संसारी मतिज्ञानादिसहित वा द्रव्यकर्म–नोकर्म–भावकर्म--सहित है, ऐसा मानै है। सो एक आत्माके ऐसे दोय स्वरूप तौ होय नाहीं। जिस भावहीका सहितपना तिस भावहीका रहितपना एकवस्तुविषै कैसैं संभवै। तातैं ऐसा मानना भ्रम है। तौ कैसैं है—जैसै राजा रंक मनुष्यपनेकी अपेक्षा समान है तैसैं सिद्ध संसारी जीवत्वपनेकी अपेक्षा समान कहे हैं। केवलज्ञानादि अपेक्षा समानता मानिए, सो है नाहीं। संसारीकै निश्चयकरि मतिज्ञानादिक ही है। सिद्धकै केवलज्ञान है। इतना विशेष है—संसारीकै मतिज्ञानादिक कर्मका निमित्ततैं है, तातैं स्वभावअपेक्षा संसारीकै केवलज्ञानकी शक्ति कहिए, तौ दोष नाहीं। जैसैं रंक-

मनुष्यकै राजा होनेकी शक्ति पाईए, तैसैं यह शक्ति जाननी; बहुरि द्रव्यकर्म नोकर्म पुद्गलकरि निपजे हैं, तातैं निश्चयकरि ससारीकै भी इनका भिन्नपना है। परंतु सिद्धवत् इनका कारण कार्यसंबंध भी न मानै, तौ भ्रम ही है। बहुरि भावकर्म आत्माका भाव है, सो निश्चयकरि आत्माहीका है। कर्मके निमित्तनैं हो है, तातैं व्यवहारकरि कर्मका कहिए है। बहुरि सिद्धवत् संसारीकै भी रागादिक न मानना, कर्महीका मानना यह भी भ्रम ही है। याही प्रकारकरि नयकरि एक ही वस्तुकौं एक-भावअपेक्षा बैसा भी मानना, वैसा भी मानना, सो तौ मिथ्या-बुद्धि है। बहुरि जुदे भावनिकी अपेक्षा नयनिकी प्ररूपणा है, ऐसैं मानि यथासंभव वस्तुकौं मानना सो सांचा श्रद्धान है। तातैं मिथ्यादृष्टी अनेकांतरूप वस्तुकौं मानैं, परंतु यथार्थ भावकौं पहिचानि मानि सकैं नाहीं, ऐसा जानना।

बहुरि इस जीवकै व्रत शील संयमादिकका अंगीकार पाईए है, सो व्यवहार करि 'ए भी मोक्षके कारण हैं', ऐसा मानि तिनकौं उपादेय मानै है। सो जैसैं केवल व्यवहारावलंबी जीवकै पूर्वै अयथार्थपना कह्या था, तैसैं ही याकै भी अयथार्थपना जानना बहुरि यह ऐसैं भी मानै है—जो यथायोग्य व्रतादि क्रिया तौ करनी योग्य है, परंतु इनविषै ममत्त्व न करना सो जाका आप कर्त्ता होय, तिसविषै ममत्त्व कैसैं न करिए। अर आप कर्त्ता न है, तौ मुझकौं करनी योग्य है, ऐसा भाव कैसैं किया। अर जो कर्त्ता है, तौ वह अपना कर्म भया, तब कर्त्ताकर्मसंबंध स्वयमेव

ही भया। सो ऐसी मानि तौ भ्रम है। तौ कैसे है— बाह्य व्रतादिक है, सो तौ शरीरादि परद्रव्यकै आश्रय हैं। परद्रव्यका आप कर्त्ता है नाहीं। तातैं तिसविषै कर्तृत्वबुद्धि भी न करनी। अर तहां ममत्व भी न करना। बहुरि व्रतादिकविषै ग्रहण त्याग रूप अपना शुभोपयोग होय, सो अपने आश्रय है ताका आप कर्त्ता है, तातै तिसविषै कर्तृत्वबुद्धि भी माननी। अर तहां ममत्व भी करना। बहुरि इस शुभोपयोगकौं बंधका ही कारण जानना, मोक्षका कारण न जानना। जातै बंध अर मोक्षकै तौ प्रतिपक्षीपना है। तातैं एक ही भाव पुण्यबंधकौं भी कारण होय अर मोक्षकौं भी कारण होय, ऐसा मानना भ्रम है। तातैं व्रत अव्रत दोऊ विकल्परहित जहां परद्रव्यके ग्रहण त्यागका किछू प्रयोजन नाहीं, ऐसा उदासीन वीतराग शुद्धोपयोग सोई मोक्षमार्ग हैं। बहुरि नीचली दशाविषै केई जीवनिकै शुभोपयोग अर शुद्धोपयोगका युक्तपना पाईए है। तातैं उपचारकरि व्रतादिक शुभोपयोगकौ मोक्षमार्ग कह्या है। वस्तु विचारतै शुभोपयोग मोक्षका घातक ही है। जातैं मोक्षकौ कारण सोई मोक्षका घातक है, ऐसा श्रद्धान करना। बहुरि शुद्धोपयोगहीकौं उपादेय मानि ताका उपाय करना। शुभोपयोग अशुभोपयोगकौं हेय जानि तिनके त्यागका उपाय करना। जहां शुभोपयोग न होय सकै, तहां अशुभोपयोगकौ छोडि शुभहीविषै प्रवर्त्तना। जातैं शुभोपयोगतै अशुभोपयोगविषै अशुद्धताकी अधिकता है। बहुरि शुद्धोपयोग होय, तब तौ परद्रव्यका साक्षी

भूत ही रहै है । तहां तौ किछू परद्रव्यका प्रयोजन ही नाहीं ।
बहुरि शुभोपयोग होय, तहां बाह्य व्रतादिककी प्रवृति होय, अर
अशुभोपयोग होय तहां बाह्य अव्रतादिककी प्रवृत्ति होय । जातैं
अशुभोपयोगकै अर परद्रव्यकी प्रवृत्तिकै निमित्त नैमित्तिक सबंध
पाईए है। बहुरि पहलै अशुभोपयोग छूटि शुभोपयोग होय, पीछैं
शुभोपयोग छूटि शुद्धोपयोग होय। ऐसी क्रमपरिपाटी है। बहुरि
केई ऐसैं मानैं कि शुभोपयोग है, सो शुद्धोपयोगकौं कारण है। सो
जैसैं अशुभोपयोग छूटि शुभोपयोग हो है, तैसैं शुभोपयोग छूटि
शुद्धोपयोग हो है। ऐसैं ही कार्य कारणपना होय, तौ शुभोपयो-
गका कारण अशुभोपयोग ठहरै। अथवा द्रव्यलिंगीकै शुभोपयोग
तौ उत्कृष्ट हो है, शुद्धोपयोग होता ही नाहीं । तातैं परमार्थतैं
इनकै कारणकार्यपना है नाहीं। जैसैं रोगीकै बहुत रोग था,
पीछैं स्तोक रोग भया, तौ वह स्तोक रोग तौ निरोग होनेका
कारण है नाहीं । इतना है स्तोक रोग रहें निरोग होनेका उपाय
करै, तौ होय जाय । बहुरि जो स्तोक रोगहीकौं भला जानि
ताका राखनेका यत्न करै, तौ निरोग कैसैं होय । तैसैं कषायीकै
तीव्रकषायरूप अशुभोपयोग था, पीछैं मंदकषायरूप शुभो-
पयोग भया, तौ वह शुभोपयोग तौ निःकषाय शुद्धोपयोग होनें-
कौं कारण है नाहीं। इतना है—शुभोपयोग भए शुद्धोपयोगका
यत्न करै, तौ होय जाय। बहुरि जो शुभोपयोगहीकौं भला जानि
ताका साधन किया करै, तौ शुद्धोपयोग कैसैं होय। तातैं मिथ्या
दृष्टीका शुभोपयोग तौ शुद्धोपयोगकौं कारण है नाहीं। सम्यग्दृष्टीकै

शुभोपयोग भए निकट शुद्धोपयोग प्राप्ति होय, ऐसा मुख्यपनाकरि कहीं शुभोपयोगकौं शुद्धोपयोगका कारण भी कहिए है। ऐसा जानना। बहुरि यह जीव आपकौं निश्चय व्यवहाररूप मोक्षमार्गका साधक मानै है। तहां पूर्वोक्त प्रकार आत्माकौं शुद्ध मान्या, सो तौ सम्यग्दर्शन भया। तैसैं ही जान्या सो सम्यग्ज्ञान भया। तैसै ही विचारविषै प्रवर्त्या सो सम्यक्चारित्र भया। ऐसैं तौ आपकै निश्चय रत्नत्रय भया मानै। सो मैं प्रत्यक्ष अशुद्ध सो शुद्ध कैसैं मानौं जानौं विचारौं हौं, इत्यादि विवेकरहित भ्रमतैं संतुष्ट हो है। बहुरि अरहंतादि विना अन्य देवादिककौं न मानैं हैं, वा जैनशास्त्र अनुसार जीवादिकके भेद सीख लिए हैं, तिनही-कौ मानै है औरकौं न मानै, सो तौ सम्यग्दर्शन भया। बहुरि जैनशास्त्रनिका अभ्यासविषै बहुत प्रवर्तैं है, सो सम्यग्ज्ञान भया। बहुरि व्रतादिरूप क्रियानिविषै प्रवर्तैं है, सो सम्यक्चारित्र भया। ऐसैं आपकै व्यवहार रत्नत्रय भया मानै। सो व्यवहार तौ उपचा-रका नाम है। सो उपचार भी तौ तब बनै, जब सत्यभूत निश्चय रत्नत्रयका कारणादिक होय। जैसैं निश्चय रत्नत्रय सधै, तैसैं इनकौं साधै, तौ व्यवहारपनो भी संभवै। सो याकै तौ सत्यभूत रत्नत्रयकी पहचानि ही भई नाहीं। यह ऐसै कैसैं साधि सकै। आज्ञाअनुसारी हुवा देख्यांदेखी साधन करै है। तातैं याकै निश्चय व्यवहार मोक्षमार्ग न भया। आगैं निश्चय व्यवहार मोक्ष-मार्गका निरूपण करैंगे, ताका साधन भए ही मोक्षमार्ग होगा। ऐसैं यह जीव निश्चयाभासकौं जानै मानै है। परंतु व्यवहार

साधनेकौं भी भला जानै है, तातैं स्वच्छंद होय अशुभरूप न प्रवर्तै है। व्रतादिक शुभोपयोगरूप प्रवर्तै है, तातै अंतिम ग्रैवेयक पर्यंत पदकौं पावै है। बहुरि जो निश्चयाभासकी प्रबलतातैं अशुभरूप प्रवृत्ति होय जाय, तौ कुगतिविषै भी गमन होय परिणामनिकै अनुसार फल पावै है। परंतु संसारका ही भोक्ता रहै है। सांचा मोक्षमार्गके पाए विना सिद्धपदकौं न पावै है। ऐसैं निश्चयाभास व्यवहाराभास दोऊनिके अवलंबी मिथ्यादृष्टी तिनिका निरूपण किया।

अब सम्यक्त्वके सन्मुख जे मिथ्यादृष्टी तिनका निरूपण कीजिए है—

कोई मंदकषायादिकका कारण पाय ज्ञानावरणादि कर्मनिका क्षयोपशम भया, तातैं तत्वविचार करनेकी शक्ति भई। अर मोह मंद भया। तातैं तत्त्वादिविचारविषै उद्यम भया। बहुरि बाह्य-निमित्त देव गुरु शास्त्रादिकका भया, तिनकरि सांचा उपदेशका लाभ भया, । तहां अपने प्रयोजनभूत मोक्षमार्गका, वा देवगुरु-धर्मादिकका वा जीवादि तत्वनिका, वा आपा परका, वा आपकौं अहितकारी हितकारी भावनिका, इत्यादिकका उपदेशतै सावधान होय, ऐसा विचार किया—अहो मुझकौ तौ इन बातनिकी खबरि नाहीं, मैं भ्रमतै भूलि पर्यायहीविषै तन्मय भया। सो इस पर्यायकी तौ थोरे ही कालकी स्थिति है। बहुरि यहां मोकौं सर्व निमित्त मिले हैं। तातै मोकौं इन बातनिका ठीक करना। जातैं इनविषैं तौ मेरा ही प्रयोजन भासै है। ऐसैं विचारि जो उपदेश

सुन्या ताका निर्द्धार करनेका उद्यम किया। तहां उद्देश, लक्षण, निर्देश, परीक्षा द्वारकरि तिनका निर्द्धार होय। तातै पहलै तौ तिनके नाम सीखैं, बहुरि तिनके लक्षण जानै, बहुरि ऐसै संभवै है कि नाहीं, ऐसा विचारलिए परीक्षा करने लगै। तहां नाम सीख लेना अर लक्षण जानि लेना ये दोऊ तौ उपदेशकै अनुसार हो है। जैसैं उपदेश दिया तैसैं याद करि लेना। बहुरि परीक्षाकरने विषै अपना विवेक चाहिए है। सो विवेककरि एकांत अपना उपयोगविषै विचारै--जैसैं उपदेश दिया तैसै ही है कि अन्यथा है। तहां अनुमानादि प्रमाणकरि ठीक करै, वा उपदेश तौ ऐसैं है अर ऐसैं न मानिए तौ ऐसैं होय। सो इनविषै प्रबल युक्ति कौन है अर निर्बल युक्ति कौन है। जो प्रबल भासै ताकौ सांच जानै। बहुरि जो उपदेशतै अन्यथा सांच भासै वा संदेह रहै निर्द्धार न होय, तौ बहुरि विशेष ज्ञानी होय तिनिकौ पूछै। बहुरि वह उत्तर दे, वाकौ विचारै। ऐसै ही यावत् निर्द्धार न होय, तावत् प्रश्न उत्तर करै। अथवा समान बुद्धिके धारक होय तिनिकौ आपकै जैसा विचार भया होय तैसा कहै। प्रश्न उत्तर परस्पर चर्चा करै। बहुरि जो प्रश्नोत्तरविषै निरूपण भया होय, ताकौ एकांतविषै विचारै। याही प्रकार अपने अंतरंगविषै जैसैं उपदेश दिया था, तैसै ही निर्णय होय भाव न भासै, तावत् ऐसै ही उद्यम किया करै। बहुरि अन्यमतीनिकरि कल्पित तत्त्वनिका उपदेश दिया है, ताकरि जैन उपदेश अन्यथा भासै, संदेह होय, तौ भी पूर्वोक्त प्रकारकरि उद्यम करै। ऐसैं उद्यम किए जैसैं जिन-

देवका उपदेश है।, तैसैं ही सांच है। मुझकौं भी ऐसैं ही भासै है, ऐसा निर्णय होय। जातैं जिनदेव अन्यथावादी हैं नाहीं। यहां कोऊ कहै—जिनदेव अन्यथावादी नाहीं हैं, तौ जैसैं उनका उपदेश है, तैसै श्रद्धान करि लीजिए, परीक्षा काहेकौं कीजिए, ताका समाधान--

परीक्षा किए विना यह तौ मानना होय, जो जिनदेव ऐसैं कह्या है, सो सत्य है, परंतु उनका भाव आपकौं भासै नाहीं। बहुरि भाव भासे विना निर्मल श्रद्धान न होय। जाकी काहूका वचनहीकरि प्रतीति करिए, ताकी अन्यका वचनकरि अन्यथा भी प्रतीति होय जाय, तौ शक्तिअपेक्षा वचनकरि कीन्हीं प्रतीति अप्रतीतिवत् है। बहुरि जाका भाव भास्या होय, ताकौं अनेक प्रकारकरि भी अन्यथा न मानै। तातैं भाव भासें प्रतीति होय सोई सांची प्रतीति है। बहुरि जो कहौगे, पुरुषप्रमाणतैं वचन प्रमाण कीजिए है, तौ पुरुषकी भी प्रमाणता स्वयमेव न होय वाके केई वचननिकी परीक्षा पहलैं करि लीजिए, तब पुरुषकी प्रमाणता होय। यहां प्रश्न---उपदेश तौ अनेक प्रकार, किस-किसकी परीक्षा करिए, ताका समाधान--

उपदेशविषै केई उपादेय केई हेय तत्त्व निरूपिए है। तहां उपादेय हेय तत्त्वनिकी तौ परीक्षा करि लेनी। जातैं इनविषै अन्यथापनों भए अपना बुरा हो है। उपादेयकौं हेय मानि लैं, तौ बुरा होय, हेयकौं उपादेय मानि लै, तौ बुरा होय। बहुरि जो कहौगे, आप परीक्षा न करी, अर जिनवचनहीतैं उपादेयकौं

उपादेय जानै, हेयकौं हेय जानै, तौ कैसैं बुरा होय। ताका समाधान—

अर्थका भाव भासे विना वचनका अभिप्राय न पहिचानै। यह तौ मानि ले, जो मैं जिनवचन अनुसार मानौं हौं। परंतु भाव भासे विना अन्यथापनो होय जाय। लोकविषै भी किंकरकौं किसी कार्यकौं भेजिए, सो वह उस कार्यका भाव जानै, तौ कार्यकौं सुधारै, जो भाव न भासै, तौ कहीं चूकि ही जाय। तातैं भाव भासनेके अर्थि हेय उपादेय तत्त्वनिकी परीक्षा अवश्य करनी। बहुरि वह कहै है—जो परीक्षा अन्यथा होय जाय तौ कहा करिए। ताका समाधान—

जिनवचन अर अपनी परीक्षा इनकी समानता होय तब तौ जानिए सत्य परीक्षा भई। यावत् ऐसैं न होय तावत् जैसैं कोई लेखा करै है, ताकी विधि न मिलै तावत् अपनी चूककौं ढूंढै। तैसैं यह अपनी परीक्षाविषै विचार किया करै। बहुरि जो ज्ञेयतत्व हैं, तिनकी परीक्षा होय सकै, तौ परीक्षा करै। नाहीं, यह अनुमान करै, जो हेय उपादेय तत्त्व ही अन्यथा न कहैं, तौ ज्ञेयतत्व अन्यथा किस अर्थ कहै। जैसैं कोऊ प्रयोजनरूप कार्यनिविषै झूठ न बोलै, सो अप्रयोजनविषै झूठ काहेकौं बोलै। तातैं ज्ञेयतत्वनिका परीक्षाकरि भी वा आज्ञाकरि स्वरूप जानिए। तिनका यथार्थ स्वरूप न भासै, तौ भी दोष नाहीं। याहीतैं जैन-शास्त्रनिविषै तत्वादिकका निरूपण किया, तहां तौ हेतुयुक्ति आदिकरि जैसैं याकै अनुमानादिकरि प्रतीति आवै, तैसै कथन

किया। बहुरि त्रिलोक गुणस्थान मार्गणा पुराणादिकका कथन आज्ञा अनुसार किया। तातै हेयोपादेय तत्वनिकी परीक्षा करनी योग्य है। तहां जीवादिक द्रव्य वा तत्व तिन कौं पहचानना। बहुरि त्यागने योग्य मिथ्यात्व रागादिक अर ग्रहणे योग्य सम्यग्दर्शनादिक तिनका स्वरूप पहचानना। बहुरि निमित्त नैमित्तादिक जैसैं हैं, तैसैं पहचानना। इत्यादि मोक्षमार्गविषै जिनके जानैं प्रवृत्ति होय तिनकौ अवश्य जाननै। सो इनकी तौ परीक्षा करनी। सामान्यपनैं हेतुयुक्तिकरि इनकौं जाननै, वा प्रमाण नयनिकरि जाननैं, वा निर्देश स्वाम्यत्वादिकरि, वा सत् संख्यादिकरि इनका विशेष जानना। जैसी बुद्धि होय जैसा निमित्त बनैं, तैसैं इनकौं सामान्य विशेषरूप पहचाननें। बहुरि इस जाननैका उपकारी गुणस्थानमार्गणादिक वा पुराणादिक वा व्रतादिक क्रियादिकका भी जानना योग्य है। यहां परीक्षा होय सकै, तिनकी परीक्षा करनी, न होय सकै ताका आज्ञा अनुसारि जानपना करना। ऐसैं इस जाननेके अर्थि कबहू आपही विचार करैं है, कबहू शास्त्र बाचै है, कबहू सुनै है, कबहू अभ्यास करै है, कबहू प्रश्नोत्तर करै है इत्यादिरूप प्रवर्तै है। अपना कार्य करनेका जानै हर्ष बहुत है, तातै अंतरंग प्रीतितै ताका समाधान करै। या प्रकार साधनकरतै यावत् सांचा तत्त्वश्रद्धान न होय, 'यह ऐसै ही है' ऐसीं प्रतीति लिए जीवादि तत्त्वनिका स्वरूप आपकौं न भासै, जैसे पर्यायविषै अहंबुद्धि है, तैसैं केवल आत्मविषै अहंबुद्धि न आवै, हित अहितरूप अपनें भाव न

पहिचानै तावत् सम्यक्तके सन्मुख मिथ्यादृष्टी है। यह जीव थोरे ही कालमैं सम्यक्तकों प्राप्त होगा। इस ही भवमैं वा अन्य पर्यायविषै सम्यक्तकों पावैगा। इस भवमैं अभ्यासकरि परलोकविषै तिर्यचादिगतिविषै भी जाय—तौ तहां संस्कारके बलतैं देव गुरु शास्त्रका निमित्तविना भी सम्यक्त होय जाय। जातैं ऐसे अभ्यासके बलतैं मिथ्यात्वकर्मका अनुभाग हीन हो है। जहां वाका उदय न होय, तहां ही सम्यक्त होय जाय। मूल कारण यह ही है। देवादिकका तौ बाह्य निमित्त है, सो मुख्यताकरि तौ इनके निमित्तहीतैं सम्यक्त हो है। तारतम्यतैं पूर्व अभ्यास संस्कारतैं वर्त्तमान इनका निमित्त न होय, तौ भी सम्यक्त होय सकै है। सिद्धांतविषै ऐसा सूत्र कह्या है—

"तन्निसर्गादधिगमाद्वा"

यह सो सम्यग्दर्शन निसर्ग वा अधिगमतै हो है। तहां देवादिक बाह्य निमित्तविना होय, सो निसर्गतैं भया कहिए। देवादिकका निमित्ततैं होय, सो अधिगमतैं भया कहिए। देखो तत्त्वविचारकी महिमा; तत्त्वविचाररहित देवादिककी प्रतीति करै, बहुत शास्त्र अभ्यासै, व्रतादिक तपश्चरणादि करै, ताकै तौ सम्यक्त होनेका अधिकार नाहीं। अर तत्त्वविचारवाला इन विना भी सम्यक्तका अधिकारी हो है। बहुरि कोई जीवकै तत्त्वविचारकै होने पहलै किसी कारण पाय देवादिककी प्रतीति होय, वा व्रत तपका अंगीकार होय, पीछै तत्त्वविचार करै। परंतु सम्यक्तका अधिकारी तत्त्वविचार भए ही हो है। बहुरि काहूकै तत्त्वविचार

भए पीछैं तत्वप्रतीति न होनेतैं सम्यक्त तौ न भया, अर व्यवहार धर्मकी प्रतीति रुचि होय गई, तातैं देवादिककी प्रतीति करै है, वा व्रत तपकौं अंगीकार करै है। काहूकै देवादिककी प्रतीति अर सम्यक्त युगपत् होय, अर व्रत तप सम्यक्तकी साथि भी होय, वा न भी होय, देवादिककी प्रतीतिका तौ नियम है। इस विना सम्यक्त न होय। व्रतादिकका नियम है नाहीं। घने जीव तौ पहलैं सम्यक्त होय पीछैं ही व्रतादिककौं धारैं हैं। काहूकै युगपत् भी हो जाय है। ऐसैं वह तत्वविचारवाला जीव सम्यक्तका अधिकारी है। परंतु याकै सम्यक्त होय ही होय, ऐसा नियम नाहीं। जातैं शास्त्रविषैं सम्यक्त होनेतैं पहले पंचलब्धिका होना कह्या है—क्षयोपशम, विशुद्धि, देशना, प्रायोग्य, करण। तहां जिसकौं होतसंतैं तत्वविचार होय सकै, ऐसा ज्ञानावरणादि कर्मनिका क्षयोपशम होय। उदयकालकौं प्राप्त सर्वघाती स्पर्द्धकनिके निषेकनिका उदयका अभाव सो क्षय, अर अनागतकालविषै उदयआवने योग्य तिनहीका, सत्तारूप रहना सो उपशम ऐसी देशघाती स्पर्द्धकनिका उदय सहित कर्मनिकी अवस्था ताका नाम क्षयोपशम है। ताकी प्राप्ति सो क्षयोपशमलब्धि है। बहुरि मोहका मंद उदय आवनेतैं मंदकषायरूप भाव होय, तहां तत्त्वविचार होय सकै, सो विशुद्धलब्धि है। बहुरि जिनदेवका उपदेश्या तत्वका धारण होय, विचार होय सो देशनालब्धि है। जहां नरकादि विषै उपदेशका निमित्त न होय, तहां पूर्वसंस्कारतैं होय। बहुरि कर्मनिकी पूर्वसत्ता घटकरि अंतःकोटाकोटी सागर

प्रमाण रहि जाय, अर नवीनबंध अंतःकोटाकोटी प्रमाण ताकै संख्यातवैं भागमात्र होय, सो भी तिस लब्धिकालतैं लगाय क्रमतैं घटता होय, केतीक पापप्रकृतिनिका बंध क्रमतैं मिटता जाय, इत्यादि योग्य अवस्था होना, सो प्रायोग्यलब्धि है। सो ए च्यारौं लब्धि भव्य वा अभव्यकै होय हैं। इन च्यारलब्धि भए पीछे सम्यक्त होयतौ होय, न होय तौ नहीं भी होय। ऐसैं **लब्धिसार**विषै कह्या है। तातै तिस तत्त्वविचारवालाकै सम्यक्त होनैंका नियम नाहीं। जैसैं काहूकौं हितकी शिक्षा दई, ताकौं वह जानि विचार करै, यह सीख दई सो कैसैं है। पीछै विचारतां वाकै ऐसै ही है, ऐसी प्रतीति होय जाय। अथवा अन्यथा विचार होय, वा अन्य विचारविषै लागि तिस सीखका निर्द्धार न करै तौ प्रतीति नाहीं भी होय। तैसैं श्रीगुरां तत्वो-पदेश दिया, ताकौं जानि विचार करै, यह उपदेश दिया, सो कैसै है। पीछै विचार करनेतै वाकै 'ऐसैं ही है' ऐसी प्रतीति होय जाय। अथवा अन्यथा विचार होय, वा अन्य विचारविषै लागि तिस उपदेशका निर्द्धार न करै, तौ प्रतीति नाहीं होय। ऐसा नियम है। याका उद्यम तौ तत्त्वविचारका करने मात्र ही है। बहुरि पांचई करणलब्धि भए सम्यक्त होय ही होय, ऐसा नियम है। सो जाकै पूर्वै कही थीं च्यारि लब्धि ते तौ भई होंय, अर अंतर्मुहूर्त्त पीछैं जाकै सम्यक्त होनो होय, तिसही जीवकै करणलब्धि हो है। सो इस करणलब्धिवालाकै बुद्धिपूर्वक तौ इतना ही उद्यम हो है—जिस तत्वविचारविषै उपयोगकौं

तद्रूप होय लगावै, ताकरि समय समय परिणाम निर्मल होते जाय हैं। जैसैं काहूकै सीखका विचार ऐसा निर्मल होने लग्या, जाकरि याकै शीघ्र ही ताकी प्रतीति होय जासी। तैसैं तत्त्वउपदेश ऐसा निर्मल होने लग्या, जाकरि याकै शीघ्र ही ताका श्रद्धान होसी। बहुरि इन परिणामनिका तारतम्य केवलज्ञानकरि देख्या, ताकरि निरूपण करणानुयोगविषै किया है। सो इस करणलब्धिके तीन भेद हैं—अधःकरण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण। इनका विशेष व्याख्यान तौ लब्धिसार शास्त्रविषै किया है, तिसतैं जानना। यहां संक्षेपसौं कहिए है—

त्रिकालवर्त्ती सर्व करणलब्धिवाले जीव तिनके परिणामनिकी अपेक्षा ए तीन नाम हैं। तहां करण नाम तौ परिणामका है। बहुरि जहां पहले पिछले समयनिके परिणाम समान होय, सो अधःकरण है। जैसैं कोई जीवका परिणाम तिस करणके पहिले समय स्तोक विशुद्धता लिए भए, पीछैं समय समय अनंतगुणी विशुद्धताकरि बधते भए। बहुरि वाकै जैसैं द्वितीय तृतीयादि समयनिविषै परिणाम होंय, तैसैं केई अन्य जीवनिकै प्रथम समयविषै ही होंय। ताकै तिसतैं समय समय अनंती विशुद्धताकरि बधते होंय। ऐसैं अधःप्रवृत्तकरण जानना। बहुरि जिसविषै पहले पिछले समयनिके परिणाम समान न होंय, अपूर्व ही होंय, बहुरि जैसैं यहां अधःकरणवत् पहले समय होंय तैसैं कोई ही जीवकै द्वितीयादि समयनिविषै न होंय बधते ही होंय। तिस करणके परिणाम जैसैं जिन जीवनिकै करणका पहला समय ही होय,

तिन अनेक जीवनिकै परस्पर परिणाम समान भी होय, अर अधिक हीन विशुद्धता लिए भी होय, । परंतु यहां इतना विशेष भया, जो इसकी उत्कृष्टतातै भी द्वितीयादि समयवालेका जघन्य परिणाम भी अनंतगुणी विशुद्धता लिए ही होय। ऐसैं ही जिनकौ करण मांडे द्वितीयादि समय भया होय, तिनकै तिस सययवालौंकै तौ परस्पर परिणाम समान वा असमान होय, । परंतु ऊपरले समयवालौंकै तिस समय समान सर्वथा न होय अपूर्व ही होंय, ऐसै अपूर्वकरण जानना। बहुरि जिसविषै समान समयवर्त्ती जीवनिकै परिणाम समान ही होंय, निवृत्ति कहिए परस्पर भेद ताकरि रहित होंय। जैसे तिस करणका पहलै समय-विषै सर्व जीवनिका परस्पर समान ही होय, ऐसै ही द्वितीयादि समयनिविषै समानता परस्पर जाननी। बहुरि प्रथमादि समय-वालोंतैं द्वितीयादि समयवालोकै अनंतगुणी विशुद्धता लिए होय, ऐसैं अनिवृत्तिकरण जानना। ऐसै ए तीन करण जानने। तहां पहलैं अंतर्मुहूर्त्त कालपर्यंत अधःकरण होय, तहां च्यारि आवश्यक हो है। समय समय अनंतगुणी विशुद्धता होय, बहुरि एक अंतर्मुहूर्त्तकरि नवीनबंधकी स्थिति घटती होय, सो स्थितिबंधा-पसरण होय, बहुरि समय समय प्रशस्त प्रकृतिनिका अनंत गुणा अनुभाग बधै, बहुरि समय समय अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभाग-बंध अनंतवै भाग होय, ऐसैं च्यारि आवश्यक होंय। तहां पीछे अपूर्वकरण होय। ताका काल अधःकरणके कालकैं संख्यातवैं भाग है। ताविषै ए आवश्यक और होय। एक एक अंतर्मुहूर्त्तकरि

सत्ताभूत पूर्वकर्मकी स्थिति थी, ताकौं घटावै सो स्थितिकांडक घात होय। बहुरि तिसतैं स्तोक एक एक अंतर्मुहूर्त्तकरि पूर्वकर्मका अनुभागकौं घटावै, सो अनुभागकांडक घात होय। बहुरि गुणश्रेणिका कालविषै क्रमतैं असंख्यातगुणा प्रमाण लिए कर्म निर्जरने योग्य करिए, सो गुणश्रेणीनिर्जरा होय। बहुरि गुणसंक्रमण यहां नाहीं हो है। अन्यत्र अपूर्वकरण हो है, तहां हो है। ऐसैं अपूर्वकरण भए पीछैं अनिवृत्तिकरण होय। ताका काल अपूर्वकरणकै भी संख्यातवैं भाग है। तिसविषै पूर्वोक्त आवश्यक सहित केता काल गए पीछैं अनिवृत्तिकरण करै है। अनिवृत्तिकरणके काल पीछैं उदय आवने योग्य ऐसे मिथ्यात्त्वकर्म मुहूर्त्तमात्र निषेकनिका अभाव करै है, तिन परिणामनिकौं अन्य स्थितिरूप परिणमावै है। बहुरि अंतःकरणकरि पीछैं उपशमकरण करै है। अंतःकरणकरि अभावरूप किए निषकनिके ऊपरि जो मिथ्यात्वके निषेक तिनकौं उदय आवनेकौं अयोग्य करै है। इत्यादिक क्रिया करि अनिवृत्तिकरणका अंतसमयकै अनंतर जिन निषकनिका अभाव किया था, तिनका उदयकाल आया, तब निषकनि विना उदय कौनका आवै। तातैं मिथ्यात्त्वका उदय न होनेतैं प्रथमोपशम सम्यक्तकी प्राप्ति हो है। अनादि मिथ्यादृष्टीकै सम्यक्त मोहनीय मिश्रमोहनीयकी सत्ता नाहीं है। तातैं एक मिथ्यात्व-कर्महीकौ उपशमाय उपशमसम्यग्दृष्टी हो है। बहुरि कोई जीव सम्यक्त पाय पीछैं भ्रष्ट हो है, ताकी भी दशा अनादि मिथ्यादृष्टीकी सी ही होय जाय है। यहां प्रश्न जो परीक्षाकरि तत्त्व-

श्रद्धान किया था, ताका अभाव कैसैं होय। ताका समाधान--

जैसै किसी पुरुपकौं शिक्षा दई, ताकी परीक्षाकरि वाकै 'ऐसैं ही है' ऐसी प्रतीति भी आई थी, पीछैं अन्यथा कोई प्रकारकरि विचार भया, तातैं उस शिक्षाविपै संदेह भया। 'ऐसैं है कि ऐसै है' अथवा 'न जानो कैसै है,' अथवा तिस शिक्षाकौं झूठ जानि तिसतै विपरीति भई, तब वाकै प्रतीति न भई। तब वाकै तिस शिक्षाकी प्रतीतिका अभाव होय, अथवा पूर्वं तौ अन्यथा प्रतीति थी ही, बीचिमैं शिक्षाका विचारतै यथार्थ प्रतीति भई थी, बहुरि तिस शिक्षाका विचार किए बहुतकाल होय गया, तब ताकौ भूलि जैसैं पूर्वं अन्यथा प्रतीति थी, तैसैं ही स्वयमेव होय गई। तब तिस शिक्षाकी प्रतीतिका अभाव होय जाय। अथवा यथार्थ प्रतीति पहलैं तौ कीन्हीं, पीछै न तौ किछू अन्यथा विचार किया, न बहुत काल भया। परंतु तैसा ही कर्म उदयतैं होनहारके अनुसार स्वयमेवही तिस प्रतीतिका अभाव होय, अन्यथापना भया। ऐसैं अनेक प्रकार तिस शिक्षाकी यथार्थ प्रतीतिका अभाव हो है। तैसैं जीवकै जिनदेवका तत्त्वादिरूप उपदेश भया, ताकी परीक्षाकरि वाकै 'ऐसै ही है' ऐसा श्रद्धान भया, पीछै पूर्वं जैसै कहे तैसैं अनेक प्रकार तिस पदार्थश्रद्धानका अभाव हो है। सो यह कथन स्थूलपनैं दिखाया है। तारतम्यकरि केवलज्ञानविपै भासै है—इस समय श्रद्धान है, कि इस समय नाहीं है। जातैं यहां मूलकारण मिथ्यात्वकर्म है। ताका उदय होय तब तौ अन्य विचारादिक कारण मिलै वा मति मिलै।

स्वयमेव सम्यक्श्रद्धानका अभाव हो है । बहुरि ताका उदय न होय, तब अन्य कारण मिलो वा मति मिलो स्वयमेव सम्यक्श्रद्धान होय जाय है । सो ऐसैं अंतरंग समयसंबंधी सूक्ष्मदशाका जानना छद्मस्थके होता नाहीं । तातैं अपनी मिथ्या सम्यक्रूप अवस्थाका तारतम्य याकौं निश्चय होय सकै नाहीं। केवलज्ञानविषै भासै है । तिस अपेक्षा गुणस्थाननिकी पलटनिकी शास्त्रविषैं कही है । या प्रकार जो सम्यक्त तै भ्रष्ट होय, सो सादि मिथ्यादृष्टी कहिए। ताकै भी बहुरि सम्यक्त की प्राप्तिविषै पूर्वोक्त पांचलब्धि हो है । विशेष इतना यहां कोई जीवकै दर्शन मोहकी तीन. प्रकृतिकी सत्ता हो है । सो तिनिकौं उपशमाय प्रथमोपशमसम्यक्ती हो है। अथवा काहूकै सम्यक्तमोहनीयका उदय आवै है, दोय प्रकृतिनीका उदय न हो है, सो क्षयोपशमसम्यक्ती हो है। याकै गुणश्रेणी आदि क्रिया न हो है । वा अनिवृत्तिकरण न हो है । बहुरि काहूकै मिश्रमोहनीयका उदय आवै है । दोय प्रकृतिनिका उदय न हो है। सो मिश्रगुणस्थानकौ प्राप्त हो है । याकै करण न हो है । ऐसैं सादिमिथ्यादृष्टीकै मिथ्यात्व छूटैं दशा हो है । क्षायिकसम्यक्तकौं वेदकसम्यक्दृष्टीही पावै है । तातैं याका कथन यहां न किया है । ऐसैं सादि मिथ्यादृष्टीका जघन्य तौ मध्य अंतर्मुहूर्तमात्र उत्कृष्ट किंचिदून अर्द्धपुद्गल परिवर्तनमात्र काल जानना। देखो, परिणामनिकी विचित्रता कोई जीव तौ ग्यारवै गुणस्थान यथाख्यातचारित्र पाय बहुरि मिथ्यादृष्टी होय, किंचित् ऊन अर्द्धपुद्गल परिवर्तन कालपर्यंत संसारमैं रुलै, अर कोई नित्य निगो-

द्रमैसौं निकसि मनुष्य होय मिथ्यात्व छूटैं पीछैं अंतर्मुहूर्तमैं केवलज्ञान पावै। ऐसै जानि अपने परिणाम विगरनेका भय राखना। अर तिनके सुधारनेका उपाय करना। वहुरि इस सादिमिथ्यादृष्टीकैं थोरे काल मिथ्यात्वका उदय रहै, तौ बाह्य जैनपना नाहीं नष्ट हो है। वा तत्त्वनिका अश्रद्धान व्यक्त न हो है। वा विना विचार किएं ही वा स्तोक विचारहीतै बहुरि सम्यक्तकी प्राप्ति होय जाय है। वहुरि बहुत काल मिथ्यात्वका उदय रहै, तौ जैसी अनादि मिथ्यादृष्टीकी दशा तैसी याकी दशा हो है। गृहीत मिथ्यात्वकौं भी ग्रहै है। निगोदादिविषै भी रुलै हैं। याका किछू प्रमाण नाहीं। वहुरि कोई जीव सम्यक्ततैं भ्रष्ट होय सासादन हो है। सो तहां जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली प्रमाण काल रहै है, सो याका परिणामकी दशा वचनकरि कहनेमैं आवती नाहीं। सूक्ष्ममात्र काल कोइ जातिके केवल-ज्ञानगम्य परिणाम हो है। तहां अनंतानुवंधीका तौ उदय हो है, मिथ्यात्वका उदय न हो है। सो आगम प्रमाणतै याका स्वरूप जानना। वहुरि कोई जीव सम्यक्ततैं नष्ट होय, मिश्रगुणस्थानकौं प्राप्त हो है। तहां मिश्रमोहिनीयका उदय हो है। याका काल मध्य अंतर्मुहूर्त्तमात्र हैं। सो याका भी काल थोरा है, सो याकै भी परिणाम केवलज्ञानगम्य है। यहां इतना भासै है—जैसे काहूकौं सीख दई, तिसकौ वह किछू सत्य किछू असत्य एकै काल मानै। तैसैं तत्त्वनिका श्रद्धान अश्रद्धान एकै काल होय, सो मिश्रदशा

है। केई कहै हैं—हमकौं तौ जिनदेव वा अन्य देव सर्व ही बंदने योग्य हैं। इत्यादि मिश्रश्रद्धानकौं मिश्रगुणस्थान कहै हैं, सो नाहीं। यह तौ प्रत्यक्ष मिथ्यत्वदशा है व्यवहाररूप देवादिकका श्रद्धान भए भी मिथ्यात्व रहै है, तौ याकै तौ देव कुदेवका किछू ठीक ही नाहीं। याकै तौ यह विना मिथ्यात्व प्रगट है। ऐसैं जानना। ऐसैं सम्यक्तके सन्मुख मिथ्यादृष्टीनिका कथन किया। प्रसंग पाय अन्य भी कथन किया है। या प्रकार जैनमतवाले मिथ्यादृष्टीनिका स्वरूप निरूपण किया। यहां नानाप्रकार मिथ्यादृष्टीनिका कथन किया है, ताका प्रयोजन यह जानना, जो इन प्रकारनिकौं पहचानि आपविषै ऐसा दोष होय, ता ताकौं दूरिकरि सम्यक्श्रद्धानी होना। औरनिहीकै ऐसे दोष देखि कषायी न होना। जातैं अपना भला बुरा तौ अपने परिणामनितैं हो है। औरनिकौं रुचिवान् देखै, तो कछु उपदेश देय तिनका भी भला करै। जातैं अपने परिणाम सुधारनेका उपाय करना योग्य है। सर्वप्रकारके मिथ्यात्वभाव छोड़ि सम्यग्दृष्टी होना योग्य है। जातैं संसार मूल मिथ्यात्व है। मिथ्यात्व समान अन्य पाप नाहीं है। एक मिथ्यात्व अर ताकै साथ अनंतानुबंधीका अभाव भए इकतालीस प्रकृतिनिका तौ बंध ही मिट जाय। स्थिति अन्तःकोटाकोटी सागरकी रह जाय। अनुभाग थोरा ही रह जाय। शीघ्र ही मोक्षपदकौं पावै। बहुरि मिथ्यात्वका सद्भाव रहें अन्य अनेक उपाय किए भी मोक्ष न होय। तातैं जिस तिस

उपायकरि सर्व प्रकार मिथ्यात्वका नाश करना योग्य है।

इति मोक्षमार्गप्रकाशकनाम शास्त्रविषै जैनमतवाले मिथ्या-दृष्टीनिका निरूपण जामैं ऐसा सातवाँ अधिकार संपूर्ण भया ॥ ७ ॥

अथ मिथ्यादृष्टी जीवनिकौं मोक्षमार्गका उपदेश देय तिनका उपकार करना यह ही उत्तम उपकार है। तीर्थंकर गणधरादि भी ऐसा ही उपाय करै हैं। तातैं इस शास्त्रविषै भी उनहीका उपदेशकै अनुसारि उपदेश दीजिए है। तहां उपदेशका स्वरूप जाननेकै अर्थ किछू व्याख्यान कीजिए है। जातैं उपदेशकौ यथावत् न पहिचानै, तौ अन्यथा मानि विपरीत प्रवर्तै, तातै उपदेशका स्वरूप कहिए है—

जिनमतविषै उपदेश च्यारअनुयोगका दिया है। सो प्रथमा-नुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यानुयोग ए च्यार अनुयोग हैं। तहां तीर्थंकर चक्रवर्ती आदि महान् पुरुषनिके चरित्र जिसविषै निरूपण किए होंय, सो **प्रथमानुयोग** है। बहुरि गुणस्थान मार्गणादिकरूप जीवका वा कर्मनिका वा त्रिलोकादिका जाविषै निरूपण होय, सो **करणानुयोग** है। बहुरि गृहस्थ मुनिके धर्म आचरण करनेका जाविषै निरूपण होय, सो **चरणा-नुयोग** है। बहुरि षट् द्रव्य सप्त तत्वादिकका वा स्वपरभेद विज्ञानादिकका जाविषै निरूपण होय, सो **द्रव्यानुयोग** है। अब इनका प्रयोजन कहिये है—

प्रथमानुयोगविषै तौ संसारकी विचित्रता, पुण्य पापका फल,

महंतपुरुषनिकी प्रवृत्ति इत्यादि निरूपणकरि जीवनिकौं धर्मविषै
लगाए है । जे जीव तुच्छबुद्धि होंय, ते भी तिसकरि धर्मसन्मुख
हो हैं । जातै वै जीव सूक्ष्मनिरूपणकौं पहिचानैं नाहीं । लौकिक
वार्तानिकौं जानै । तहां तिनका उपयोग लागै । बहुरि प्रथमानु-
योगविषै लौकिक प्रवृत्तिरूप निरूपण होय, ताकौं ते नीकैं समझि-
जाय । बहुरि लोकविषै तौ राजादिककी कथानिविषै पापका वा
पुण्यका पोषण है, तहां महंत पुरुष राजादिक तिनकी कथा सुनै
हैं । परंतु प्रयोजन जहां तहां पापकौं छांड़ि धर्मविषै लगावनेका
प्रगट कहै है । तातै ते जीव कथानिके लालचकरि तौ तिनकौं
वांचैं सुनैं, पीछैं पापकौं बुरा धर्मकौं भला जानि धर्मविषै रुचिवंत
हो हैं । ऐसैं तुच्छ बुद्धिनिके समझावनेकौ यह अनुयोगतैं 'प्रथम'
कहिए 'अव्युत्पन्न मिथ्यादृष्टी' तिनके अर्थ जो अनुयोग सो
प्रथमानुयोग है । ऐसा अर्थ गोमट्टसारकी टीकाविषै किया है।
बहुरि जिन जीवनिकै तत्वज्ञान भया होय, पीछैं इस प्रथमानुयो
गकौं बांचैं सुनैं, तौ तिनकौं यह तिनका उदाहरणरूप भासै है ।
जैसैं जीव अनादिनिधन है, शरीरादिक संयोगी पदार्थ हैं, ऐसै
यह जानै था । बहुरि पुराणविषै जीवनिके भवांतर निरूपण
किए, ते तिस जाननेके उदाहरण भए । बहुरि शुभ अशुभ
शुद्धोपयोगकौं जानै था, वा तिनके फलकौं जानै था । बहुरि
पुराणनिविषै तिन उपयोगनिकी प्रवृत्ति अर तिनका फल जीवनिकै
भया, सो निरूपण किया । सो ही तिस जाननेका उदाहरण
भया । ऐसैं ही अन्य जानना । यहां उदाहरणका अर्थ यह जो

जैसैं जानै था, तैसै ही कोई जीवकै अवस्था भई, तातै तिस जाननेकी साखि भई। बहुरि जैसै कोई सुभट है, सो सुभटनिकी प्रशंसा अर कायरनिकी निंदा जाविषै होय, ऐसी कोई पुराण पुरुषनिकी कथा सुननेकरि सुभटविषै अति उत्साहवान् हो है, तैसै धर्मात्मा है, सो धर्मीनिकी प्रशंसा अर पापीनिकी निंदा जाविषै होय, ऐसे कोई पुराणपुरुषनिकी कथा सुननेकरि अति-उत्साहवान् हो है। ऐसैं यह प्रथमानुयोगका प्रयोजन जानना।

बहुरि करणानुयोगविषै जीवनिकी वा कर्मनिकी विशेषता वा त्रिलोकादिककी रचना निरूपणकरि जीवनिकौ धर्मविषै लगाए है। जे जीव धर्मविषै उपयोग लगाया चाहै, ते जीवनिका गुणस्थान मार्गणा आदि विशेष अर कर्मनिका कारण अवस्था फल कौन कौनकै कैसै कैसै पाइए, इत्यादि विशेष अर त्रिलोकविषै नरक स्वर्गादिकके ठिकाने पहचानि पापतैं विमुख होय धर्मविषै लागै है। बहुरि ऐसे विचारविषै उपयोग रमि जाय, तब पापप्रवृत्ति छूटि स्वयमेव तत्काल धर्म उपजै है। तिस अभ्यासकरि तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति हो है। बहुरि ऐसा सूक्ष्म यथार्थ कथन जिनमतविषै ही है, अन्यत्र नाहीं, ऐसै महिमा जानि जिनमतका श्रद्धानी हो है। बहुरि जे जीव तत्त्वज्ञानी होय इस करणानुयोगकौ अभ्यासै है, तिनकौं यह तिसका विशेषणरूप भासै है। जो जीवादिक तत्त्व आप जानै है, तिनहीके विशेष करणानुयोगविषै किए है। तहां केई विशेषण तौ यथावत् निश्चयरूप है, केई उपचार लिए व्यवहाररूप है। केई द्रव्य क्षेत्र काल भावा-

दिकका स्वरूप प्रमाणादिरूप हैं, केई निमित्त आश्रयादि अपेक्षा लिए हैं। इत्यादि अनेक प्रकारके विशेषण निरूपण किए हैं, तिनकौं जैसाका तैसा मानता, तिस करणानुयोगकौं अभ्यासै है। इस अभ्यासतैं तत्वज्ञान निर्मल हो है। जैसैं कोऊ यह तौ जानैं था, यह रत्न है। परंतु उस रत्नके विशेष घने जानें निर्मल रत्नका पारखी होय, तैसैं तत्वनिकौं जानै था, ए जीवादिक हैं, परंतु तिन तत्वनिके घने विशेष जानै, तौ निर्मल तत्वज्ञान होय। तत्वज्ञान निर्मल भए आप ही विशेष धर्मात्मा हो है। बहुरि अन्य ठिकाने उपयोगकौं लगाईए, तौ रागादिककी वृद्धि होय, छद्मस्थका एकाग्र निरंतर उपयोग रहै नाहीं। तातैं ज्ञानी इस कारणानुयोगका अभ्यासविषै उपयोगकौं लगावैं हैं। तिसकरि केवलज्ञानकरि देखे पदार्थनिका जानपना याकै हो है। प्रत्यक्ष अप्रत्यक्षहीका भेद है। भासनेविषै विरुद्ध है नाहीं। ऐसैं यह करणानुयोगका प्रयोजन जानना। 'करण' कहिए गणितकार्यकौ कारण 'सूत्र' तिनका जाविषै 'अनुयोग' अधिकार होय, सो करणानुयोग है। इसविषै गणीतवर्णनकी मुख्यता है, ऐसा जानना।

बहुरि चरणानुयोगविषै नानाप्रकार धर्मके साधन निरूपणकरि जीवनिकौं धर्मविषै लगाईए है। जे जीव हित अहितकौं जानैं नाहीं हिंसादि, कषाय कार्यनिविषै तत्पर होय रहे हैं, तिनकौं जैसैं वे पापकार्यनिकौं छोड़ि धर्मकार्यविषै लागैं, तैसैं उपदेश दिया। ताकौं जिनधर्म आचरण करनेकौं सन्मुख भए, ते जीव

गृहस्थधर्मका विधान सुनि आपतैं जैसा धर्म सधै, तैसा धर्म, साधनविषै लागै है। ऐसैं साधनतैं कषाय मंद हो है। ताके फलतै इतना तौ हो है, जो कुगतिविषै दुख न पावै अर सुगति-विषै सुख पावै। बहुरि ऐसे साधनतैं जिनमतका निमित्त बन्या रहै। तहां तत्त्वज्ञान भी प्राप्त होनी होय, तौ होय जावै। बहुरि जीवतत्त्वके ज्ञानी होयकरि चरणानुयोगकौं अभ्यासै हैं, तिनकौं ए सर्व आचरण अपने वीतरागभावके अनुसारी भासै है। एकोदेश वा सर्वदेश वीतरागता भए ऐसी श्रावकदशा ऐसी मुनिदशा हो है। जातैं इनकै निमित्त नैमित्तिकपनो पाईए है। ऐसै जानि श्रावक मुनिधर्मके विशेष पहचानि जैसा अपना वीतरागभाव भया होय, तैसा अपने योग्य धर्मकौं साधै है। तहां जेता अंशां वीतरागता हो है, ताकौं कार्यकारी जानै है, जेता अंशां राग रहै है, ताकौं हेय जानै है। संपूर्ण वीतरागताकौ परमधर्म मानै है। ऐसैं चरणानुयोगका प्रयोजन है।

बहुरि द्रव्यानुयोगविषै द्रव्यनिका वा तत्त्वनिका निरूपणकरि जीवनिकौं धर्मविषै लगाईए है। जे जीवादिक द्रव्यनिकौं पहिचानैं नाहीं, आपा परकौ भिन्न जानैं नाहीं, तिनकौ हेतु दृष्टांत युक्ति करि वा प्रमाणनयादिककरि तिनका स्वरूप ऐसै दिखाया, जैसैं याकै प्रतीति होय जाय। ताके अभ्यासतैं अनादि अज्ञानतादूरि होय, अन्यमत कल्पित तत्त्वादिक झूठ भासैं, तब जिनमतकी प्रतीति होय। अर उनके भावका अभ्यास राखै, तौ शीघ्र ही तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति होय जाय। बहुरि जिनकै तत्वज्ञान भया

होय, ते जीव द्रव्यानुयोगकौं अभ्यासैं। तिनकौ अपने श्रद्धानकै अनुसारि सो सर्व कथन प्रतिभासै है। जैसैं काहूनैं किसी विद्याकौं सीख लई। परंतु जो ताका अभ्यास किया करै तौ वह यादि रहै, न करै तौ भूलि जाय। तैसैं याकै तत्वज्ञान भया, परंतु जो द्रव्यानुयोग अभ्यास किया करै, तौ वह तत्वज्ञान रहै, न करै तौ भूलि जाय। अथवा संक्षेपपनै तत्त्वज्ञान भया था, सो नानायुक्ति हेतु दृष्टांतादिककरि स्पष्ट होय जाय, तौ तिसविषै शिथिलता न होय सकै। बहुरि इस अभ्यासतै रागादि घटनेतैं शीघ्र मोक्ष सधै। ऐसैं द्रव्यानुयोगका प्रयोजन जानना।

अब इन अनुयोगनिविषै किस प्रकार व्याख्यान है, सो कहिए है--

प्रथमानुयोगविषै जे मूलकथा है, ते तौ जैसी है तैसी ही निरूपत हैं। अर तिनविषै प्रसंग पाय व्याख्यान हो हैं, सो कोई तौ जैसाका तैसा हो है, कोई ग्रंथकर्त्ताका विचारकै अनुसार होय परंतु प्रयोजन अन्यथा न हो है।

ताका उदाहरण—जैसैं तीर्थंकर देवनिकै कल्याणकनिविषै इंद्र आया, यह कथा तौ सत्य है। बहुरि इंद्र स्तुति करी ताका व्याख्यान किया, सो इंद्र तौ और ही प्रकार स्तुति कीनी थी अर यहां ग्रंथकर्ता और ही प्रकार स्तुति कीनी लिखी। परंतु स्तुतिरूप प्रयोजन अन्यथा न भया। बहुरि परस्पर किनिहूकै बचनालाप भया। तहां उनकै और प्रकार अक्षर निकसे थे, यहां ग्रंथकर्ता अन्य प्रकार कहैं। परंतु प्रयोजन एक ही दिखावै है।

बहुरि नगर वन संग्रामादिकका नामादिक तौ यथावत् ही लिखै, अर वर्णन हीनाधिक भी प्रयोजनकौं पोषता निरूपै है। इत्यादि ऐसैं ही जानना। बहुरि प्रसंगरूप कथा भी ग्रंथकर्त्ता अपने विचार अनुसार कहै। जैसैं **धर्मपरीक्षाविषै** मूर्खनिकी कथा लिखी, सो ए ही कथा मनोवेग कही थी ऐसा नियम नाहीं। परंतु मूर्खपनाकौ ही पोषती कोई वार्त्ता कही, ऐसा अभिप्राय पोषै है। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। यहां कोऊ कहै—अयथार्थ कहना तौ जैन शास्त्रनिविषै संभवै नाहीं। ताका उत्तर—

अन्यथा तौ वाका नाम है, जो प्रयोजन औरका और प्रगट करै। जैसैं काहूकौं कह्या - तू ऐसै कहियौ, वानैं वै ही अक्षर तौ न कहे, परंतु तिसही प्रयोजन लिए कह्या। ताकौं मिथ्यावादी न कहिए। ऐसैं जानना—जो जैसाका तैसा लिखनेकी संप्रदाय होय, तौ काहूनै बहुत प्रकार वैराग्य चिंतवन किया था, ताका वर्णन सब लिखे ग्रंथ बधि जाय, अर किछू न लिखै, तौ भाव भासै नाहीं। तातैं वैराग्यकै ठिकानैं थोरा बहुत अपना विचारकै अनुसार वैराग्य पोषता ही कथन करै सराग पोषता न करै। तहां प्रयोजन अन्यथा न भया, तातैं याकौं अयथार्थ न कहिए। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि प्रथमानुयो विषै जाकी मुख्यता होय, ताकौं ही पोषै हैं। जैसैं काहूनै उपवास किया, ताका तौ फल स्तोक था बहुरि वाकै अन्यधर्म परिणतिकी विशेषता भई, तातै विशेष उच्चपदकी प्राप्ति भई। तहां तिसकौं उपवासहीका फल निरूपण करैं। ऐसैं ही अन्यत्र

जानना। बहुरि जैसैं काहूनैं शीलहीकी प्रतिज्ञा दृढ़ राखी वा नमस्कार मंत्र स्मरण किया, वा अन्यधर्म साधन किया, ताकै कष्ट दूरि भए अतिशय प्रगट भए, तहां तिनहीका जैसा फल न भया अर अन्य कोई कर्म उदयतैं वैसे कार्य भए तौ भी तिनकौ तिन शीलादिकका ही फल निरूपण करै। ऐसैं ही कोई पापकार्य किया, ताकैं तिसहीका तौ तैसा फल न भया अर अन्य कर्म उदयतैं नीचगतिकौं प्राप्त भया, वा कष्टादिक भए, ताकौं तिस ही पापका फल निरूपण करै। इत्यादि ऐसैं ही जानना। यहां कोऊ कहै–ऐसा झूठा फल दिखावना तौ योग्य नाहीं। ऐसे कथनकौं प्रमाण कैसैं कीजिए ताका समाधान—

जे अज्ञानी जीव बहुत फल दिखाए विना धर्मविषैं न लागैं, वा पापतैं न डरैं, तिनका भला करनेकै अर्थ ऐसैं वर्णन करिए है। बहुरि झूठ तौ तब होय, जब धर्मका फलकौं पापका फल बतावैं, पापका फलकौं धर्मका फल बतावैं। सो तौ है नाहीं जैसैं दश पुरुष मिलि, कोई कार्य करैं, तहां उपचारकरि एक पुरुष भी किया कहिए, तौ दोष नाहीं। अथवा जाके पितादिकनैं कोई कार्य किया होय, ताकौं एक जाति अपेक्षा उपचारकरि पुत्रादिक किया कहिए, तौ दोष नाहीं। तैसैं बहुत शुभ वा अशुभकार्यनिका फल भया, ताकौं उपचारकरि एक शुभ वा अशुभकार्यका फल कहिए, तौ दोष नाहीं। अथवा और शुभ वा अशुभकार्यका फल भया होय, ताकौं एक जाति अपेक्षा उपचारकरि कोई और ही शुभ वा अशुभकार्य का फल कहिए, तौ दोष नाहीं। उपदेशविषै

कहीं व्यवहार वर्णन है, कहीं निश्चय वर्णन है। यहां उपचाररूप व्यवहार वर्णन किया है, ऐसैं याकौं प्रमाण कीजिए है। याकौं तारतम्य न मानि लेना। तारतम्य करणानुयोगविषै निरूपण किया है, सो जानना। बहुरि प्रथमानुयोगविषै उपचाररूप कोई धर्मका अंग भए संपूर्ग धर्म भया कहिए है। जैसैं जीवनिकै शंका कांक्षादिक न भए, तिनकै सम्यक्त भया कहिए। सो एक कोई कार्यविषै शंका कांक्षा न किए ही तौ सम्यक्त न होय सम्यक्त तौ तत्वश्रद्धान भए हो है। परंतु निश्चय सम्यक्तका तौ व्यवहारविषै उपचार किया, बहुरि व्यहवार सम्यक्तका कोई एक अंगविषै संपूर्ण व्यवहार सम्यक्तका उपचार किया, ऐसैं उपचार-करि सम्यक्त भया कहिए। बहुरि कोई जैनशास्त्रका एक अंग जानें सम्यग्ज्ञान भया कहिए है, सो संशयादिरहित तत्वज्ञान भए सम्यग्ज्ञान होय, परंतु पूर्ववत् उपचारकरि कहिए। बहुरि कोई भला आचरण भए सम्यक्चारित्र भया कहिए है। तहां जानैं जैनधर्म्म अंगीकार किया होय, वा कोई छोटी मोटी प्रतिज्ञा गृही होय, ताकौं श्रावक कहिए, सो श्रावक तौ पंचमगुणस्थान-वर्त्ती भए हो हैं। परंतु पूर्ववत् उपचारकरि याकौं श्रावक कह्या है। उत्तरपुराणविषै श्रेणिककौं श्रावकोत्तम कह्या, सो वह तौ असंयत था। परंतु जैनी था, तातैं कह्या। ऐसै ही अन्यत्र जानना। बहुरि जो सम्यक्तरहित मुनिलिंग धारैं, वा कोई द्रव्यांभी अतिचार लगावता होय, ताकौं मुनि कहिए। सो मुनि तौ षष्ठादि गुणस्थानवर्त्ती भए हो हैं। परंतु पूर्ववत् उपचारकरि मुनि

कहा है। समवसरणसभाविषै मुनिनिकी संख्या कही, तहां सर्व ही भावलिंगी मुनि न थे, परंतु मुनिलिंग धारनेतैं सबनिकैं मुनि कहे। ऐसैं ही सर्वत्र जानना। बहुरि प्रथमानुयोगविषै कोई धर्मबुद्धितैं अनुचित कार्य करै,ताकी भी प्रशंसा करिए है। जैसैं **विष्णुकुमार** मुनिनिका उपसर्ग दूरि किया, सो धर्म्मानुरागतैं किया, परंतु मुनिपद छोड़ि यह कार्य करना योग्य न था। जातैं ऐसा कार्य तौ गृहस्थधर्मविषै संभवै अर गृहस्थधर्मतैं मुनिधर्म ऊंचा है। सो ऊंचा धर्मकौं छोड़ि नीचा धर्म अंगीकार किया, सो अयोग्य हैं। परंतु वात्सल्य अंगकी प्रधानताकरि विष्णुकुमारजीकी प्रशंसाकरी इस छलकरि औरनिकौं ऊंचा धर्म छोड़ि नीचा धर्म अंगीकार करना योग्य नाहीं। बहुरि जैसैं **गुवालियानैं** मुनिकौं अग्निकरि तपाया, सो करुणातैं यह कार्य किया। परंतु आया उपसर्गकौं तौ दूरि करें सहजअवस्थाविषै जो शीतादिककी परीषह होय है, तिनकौं दूर भए रति मान लेनेका कारण हो है, सो तिनैं रति करनी नाहीं, तातैं उलटा उपसर्ग होय। यातैं विवेकी तिनकै उपचार करते नाहीं। गुवालिया अविवेकी था, करुणाकरि या कार्य किया, तातैं वाकी प्रशंसा करी। औरकौं धर्मपद्धतिविषै जो विरुद्ध होय, सो कार्य करना योग्य नाहीं। बहुरि जैसैं **वज्रकरण** राजा **सिंहोदर** राजाकौं नम्या नाहीं। मुद्रिकाविषै प्रतिमा राखी, सो बड़े बड़े सम्यग्दृष्टी राजादिककौं नमैं, याका दोष नाहीं, अर मुद्रिकाविषै प्रतिमा राखनेमैं अविनय होय यथावत् विधितैं ऐसी प्रतिमा न होय, तातैं इस कार्यविषै दोष

है। परंतु वाकैं ऐसा ज्ञान न था, धर्मानुरागतैं मै औरकौ नमौं नाहीं, ऐसी बुद्धि भई, तातैं वाकी प्रशंसा करी। इस छलकरि और-निकौं ऐसे कार्य करने युक्त नाहीं। बहुरि केई पुरुषोंनैं पुत्रादि-ककी प्राप्तिकै अर्थ वा रोग कष्टादि दूरि करनेके अर्थ चैत्यालय पूजनादि कार्य किए, नमस्कार मंत्र स्मरण किया। सो ऐसैं किए तौ निकांक्षित गुणका अभाव होय निदानबंधनामा आर्त्तध्यान होय; पापहीका प्रयोजन अंतरंगविषै है, तातैं पापहीका बंध होय। परंतु मोहित होयकरि भी बहुत पापबंधका कारण कुदेवादिकका तौ पूजनादि न किया, इतना गुण ग्रहणकरि वाकी प्रशंसा करिए है। इस छलकरि औरनिकौं लौकिक कार्यनिके अर्थ धर्मसाधन करना युक्त नाहीं। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। ऐसैं ही प्रथमानुयोग विषै अन्य कथन भी होय, ताकौ यथासंभव जानि भ्रमरूप न होना।

अब करणानुयोगविषै किस प्रकार व्याख्यान है, सो कहिए है—जैसैं केवलज्ञानकरि जान्या तैसैं करणानुयोगविषै व्याख्यान है। बहुरि केवलज्ञानकरि तौ बहुत जान्या, परंतु जीवकौं कार्य-कारी जीव कर्मादिकका वा त्रिलोकादिकका ही याविषै निरूपण हो है। बहुरि तिनका भी स्वरूप सर्व निरूपण न होय सकै तातैं वचनगोचर होय छद्मस्थके ज्ञानविषैं उनका किछू भाव भासै, तैसैं संकोचन करि निरूपण करिए है।

यहां उदाहरण—जीवके भावनिकी अपेक्षा गुणस्थान कहे, ते भाव अनंतस्वरूप लिए वचनगोचर नाहीं। तहां बहुत भावनिकी

एक जातिकरि चौदह गुणस्थान कहे । बहुरि जीव जाननेके अनेक प्रकार हैं । तहां मुख्य चौदह मार्गणाका निरूपण किया बहुरि कर्मपरमाणू अनंतप्रकार शक्तियुक्त हैं, तिनविषै बहुत तिनिकी एक जाति करि आठ वा एकसौ अड़तालीस प्रकृति कही । बहुरि त्रिलोकाविषै अनेक रचना हैं तहां मुख्य केतीक रचना निरूपण करिए है । बहुरि प्रमाणके अनंत भेद तहां संख्यातादि तीन भेद वा इनके इकईस भेद निरूपण किए, ऐसैं ही अन्यत्र जानना । बहुरि करणानुयोगविषै यद्यपि वस्तुके द्रव्य क्षेत्र काल भावादिक अखंडित हैं, तथापि छद्मस्थकौं हीनाधिक ज्ञान होनेके अर्थ प्रदेश समय अविभागप्रतिच्छेदादिककी कल्पनाकरि तिनका प्रमाण निरूपिए है । बहुरि एक वस्तुविषै जुदे जुदे गुणनिका वा पर्यायनिका भेदकरि निरूपण कीजिए है । बहुरि जीव पुद्गलादिक यद्यपि भिन्न भिन्न हैं, तथापि संबंधादिककरि वा द्रव्यकरि निपज्या गति जाति आदि भेद तिनकौं एक जीवके निरूपे हैं, इत्यादि व्यवहार नयकी प्रधानता लिए व्याख्यान जानना । जातैं व्यवहारविना विशेष जानि सकै नाहीं । बहुरि कहीं निश्चयवर्णन भी पाइए है । जैसै जीवादिक द्रव्यनिका प्रमाण निरूपण किया, सो जुदे जुदे इतने ही द्रव्य हैं । सो यथासंभव जानि लेना । बहुरि करणानुयोगविषै कथन हैं, ते केई तौ छद्मस्थकै प्रत्यक्ष अनुमानादिगोचर होंय, बहुरि जे न होंय तिनकौं आज्ञा प्रमाणकरि ही मानने । जैसैं जीव पुद्गलके स्थूल बहुतकालस्थायी मनुष्यादि पर्याय वा घटादि पर्याय निरूपण

किए, तिनका तौ प्रत्यक्ष अनुमानादि होय सकै, बहुरि समय समयप्रति सूक्ष्म परिणमन अपेक्षा ज्ञानादिकके वा स्निग्ध सूक्ष्मादिकके अंश निरूपण किए, ते आज्ञाहीतैं प्रमाण हो हैं। ऐसै ही अन्यत्र जानना। बहुरि करणानुयोगविषै छद्मस्थनिकी प्रवृत्तिकै अनुसार वर्णन नाहीं। केवलज्ञानगम्य पदार्थनिका निरूपण है। जैसै कैई जीव तौ द्रव्यादिकका विचार करै हैं, वा व्रतादिक पालै है, परंतु अंतरंग सम्यक्त चारित्रशक्ति नाहीं, तातै उनकौं मिथ्यादृष्टि अव्रती कहिए है। बहुरि कैई जीव द्रव्यादिकका वा व्रतादिकका विचार रहित है, अन्य कार्यनिविषै प्रवर्तै हैं, वा निद्रादिकरि निर्विचार होय रहे हैं, परंतु उनकै सम्यक्तादि शक्तिका सद्भाव है तातैं उनकौ सम्यक्ती वा व्रती कहिए है। बहुरि कोई जीवकैं कषायनिकी प्रवृत्ति तौ घनी है अर वाकै अंतरंग कषायशक्ति थोरी है, तौ वाकौ मंदकषाई कहिए है। अर कोई जीवकै कषायनिकी प्रवृत्ति तौ थोरी है, अर वाकै अंतरंग कषायशक्ति घनी है तौ वाकौं तीव्रकषायी कहिए है। जैसैं व्यंतरादिक देव कषायनितै नगरनाशादि कार्य करैं, तौ भी तिनकै थोरी कषायशक्तितै पीतलेश्या कही। बहुरि एकेंद्रियादि जीव कषायकार्य करते दीखै नाहीं, तिनकै घनीशक्तितैं कृष्णादि लेश्या कही। बहुरि सर्वार्थसिद्धिके देव कषायरूप थोरे प्रवर्त्तैं, तिनकै बहुत कषायशक्तितैं असंयम कह्या, अर पंचम गुणस्थानी व्यापार अब्रह्मादि कषायकार्यरूप बहुत प्रवर्त्तैं, ताकै मंदकषायशक्तितैं देशसंयम कह्या। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि कोई जीवकै

मन वचन कायकी चेष्टा थोरी होती दीसै, तौ भी कर्माकर्षण शक्तिकी अपेक्षा बहुत योग कह्या। काहूकै चेष्टा बहुत दीखै, तौ भी शक्तिकी हीनतातैं स्तोकयोग कह्या। जैसैं केवली गमनादि-क्रियारहित भया, तहां भी ताकै योग बहुत कह्या। वेंद्रियादिक जीव गमनादि करैं हैं, तौ भी तिनकैं योग स्तोक कहे, ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि कहीं जाकी व्यक्त तौ किछू न भासै, तौ भी सूक्ष्मशक्तिके सद्भावतैं ताका तहां अस्तित्व कह्या। जैसैं मुनिकै अब्रह्मकार्य किछू नाहीं, तौ भी नवम गुणस्थानपर्यंत मैथुनसंज्ञा कही। अहमिंद्रनिकै दुखका कारण व्यक्त नाहीं, तौ भी कदाचित् असाताका उदय कह्या। नारकीनिकै सुखका कारण व्यक्त नाहीं, तौ भी कदाचित् साताका उदय कह्या। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि करणानुयोग सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रादिक धर्मका निरूपण कर्मप्रकृतीनिका उपशमादिककी अपेक्षा लिए सूक्ष्मशक्ति जैसैं पाईए तैसैं गुणस्थानादिविषै निरूपणकरै है, वा सम्यग्दर्शनादिकके विषयभूत जीवादिक तिनका भी निरूपण सूक्ष्मभेदादि लिए करै है। यहां कोई करणानुयोगकै अनुसारि आप उद्यम करै, तौ होय सकै नाहीं। करणानुयोगविषै तौ यथार्थ पदार्थ जनावनेका मुख्य प्रयोजन है। आचरण करावनेकी मुख्यता नाहीं। तातैं यह तौ चरणानुयोगकै अनुसार प्रवर्तैं, तिसतैं जो कार्य होना होय सो स्वयमेव ही हो है। जैसैं आप कर्मनिका उपशमादि किया चाहै, तौ कैसैं होय। आप तौ तत्वादिकका निश्चय करनेका उद्यम करै, तातैं स्वयमेव ही उप-

शमादिक सम्यक्त होय। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। एक अंतर्मु-हूर्त्तविषै ग्यारवां गुणस्थानसौं पड़ि क्रमतैं मिथ्यादृष्टी होय बहुरि चढ़िकरि केवलज्ञान उपजावै। सो ऐसैं सम्यक्तादिकके सूक्ष्मभाव बुद्धिगोचर आवते नाहीं, तातैं करणानुयोगकै अनुसारि जैसाका तैसा जानि तो ले, अर प्रवृत्ति बुद्धिगोचर जैसैं भला होय, तैसैं करैं। बहुरि करणानुयोगविषै भी कहीं उपदेशकी मुख्यता लिए व्याख्यान हो है, ताकौं सर्वथा तैसैं ही न मानना। जैसैं हिंसादि-कका उपायकौं कुमतिज्ञान कह्या, अन्य मतादिकके शास्त्रा-भ्यासकौं कुश्रुतज्ञान कह्या, बुरा दीसै भला न दीसै ताकौं विभंग-ज्ञान कह्या। सो इनकौं छोड़नैंकै अर्थ उपदेशकरि ऐसैं कह्या। तारतम्यतैं मिथ्यादृष्टीकै सर्व ही ज्ञान कुज्ञान है, सम्यग्दृष्टीकै सर्व ही ज्ञान सुज्ञान है। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि कहीं स्थूलकथन किया होय, ताकौं तारतम्यरूप न जानना। जैसैं व्यासतैं तिगुणी परिधि कहिए, सूक्ष्मपनै किछू अधिक तिगुणी हो है। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि कहीं मुख्यताकी अपेक्षा व्याख्यान होय, ताकौं सर्व प्रकार न जानना। जैसैं मिथ्यादृष्टी सासादन गुणस्थानवालैंकौं पापजीव कहे, असंयतादिक गुणस्था-नवालैंकौं पुण्यजीव कहे सो मुख्यपनै ऐसै कहे, तारतम्यतै दोऊनिकैं पाप पुण्य यथासंभव पाईए है। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। ऐसैं ही और भी नाना प्रकार पाईए है, ते यथासंभव जानने। ऐसैं करणानुयोगविषै व्याख्यानका विधान दिखाया।

अब चरणानुयोगविषै किस प्रकार व्याख्यान है, सो दिखाईए है—

चरणानुयोगविषै जैसैं जीवनिकै अपनी बुद्धिगोचर धर्मका आचरण होय, सो उपदेश दिया है। तहां धर्म तौ निश्चयरूप मोक्षमार्ग है, सोई है। ताकै साधनादिक उपचारतैं धर्म है, सो व्यवहारनयकी प्रधानताकरि नाना प्रकार उपचारधर्मके भेदादिकका याविषैं निरूपण करिए है। जातैं निश्चय धर्मविषै तौ किछू ग्रहण त्यागका विकल्प नाहीं अर याकै नीचली अवस्थाविषै विकल्प छूटता नाहीं, तातैं इस जीवकौं धर्मविरोधी कार्यनिकौं छुड़ावनेका धर्मसाधनादि कार्यनिके ग्रहण करावनेका उपदेश याविषै है। सो उपदेश दोय प्रकार करिए है। एक तौ व्यवहारहीका उपदेश दीजिए है, एक निश्चयसहित व्यवहारका उपदेश दीजिए है। तहां जिन जीवनिकै निश्चयका ज्ञान नाहीं है, वा उपदेश दिए भी होता न दीसैं ऐसे मिथ्यादृष्टी जीव किछू धर्मकौं सन्मुख भए तिनकौ व्यवहारहीका उपदेश दीजिये है। बहुरि जिन जीवनिकै निश्चय व्यवहारका ज्ञान है, वा उपदेश दिए तिनका ज्ञान होता दीसै है, ऐसे सम्यग्दृष्टी जीव वा सम्यक्तकौं सन्मुख मिथ्यादृष्टी जीव तिनकौं निश्चयसहित व्यवहारका उपदेश दीजिए है। जातैं श्रीगुरु सर्व जीवनिके उपकारी हैं। सो असंज्ञी जीव तौ उपदेश ग्रहणे योग्य नाहीं, तिनका तौ उपकार इतना ही किया, और जीवनिकौं तिनकी दयाका उपदेश दिया। बहुरि जे जीव कर्मप्रबलतातैं निश्चयमार्गकौं प्राप्त होय सकैं नाहीं, तिनका इतना ही उपकार किया, जो उनकौं व्यवहार धर्मका उपदेश देय कुगतिके दुःखनिका कारण पापकार्य छुड़ाय

सुगतिके इंद्रियनिके सुखका कारण पुण्यकार्य तिसविषै लगाया । जेता दुख मिटया, तेता ही उपकार भया । बहुरि पापीकैं तौ पापवासना ही रहै, अर कुगतिविषै जाय तहां धर्मका निमित्त नाहीं । तातैं परंपराय दुखहीकौं पावै करै । अर पुण्यवानकै धर्मवासना रहै अर सुगति विषै जाय, तहां धर्मके निमित्त पाईए, तातैं परंपराय सुखकौं पावै । अथवा कर्मशक्ति हीन होय जाय, तौ मोक्षमार्गकौं भी प्राप्त होय जाय । तातैं व्यवहार उपदेशकरि पापतैं छुड़ाय पुण्यकार्यनिविषै लगाईए है । बहुरि जे जीव मोक्षमार्गकौं प्राप्त भए वा प्राप्ति होने योग्य हैं,तिनका ऐसा उपकार किया जो उनकौ निश्चयसहित व्यवहारका उपदेश देय मोक्षमार्गविषै प्रवर्ताए । श्रीगुरु तौ सर्वका ऐसा ही उपकार करै । परंतु जिन जीवनिका ऐसा उपकार न बनै, तौ श्रीगुरु कहा करै । जैसा बन्या तैसा ही उपकार किया । तातैं दोय प्रकार उपदेश दीजिए है । तहां व्यवहारविषै तो बाह्य क्रियानिहीकी प्रधानता है । तिनका तौ उपदेशतैं जीव पापक्रिया छोड़ि पुण्यक्रियानिविषै प्रवर्तै । तहां क्रियानिकै अनुसार परिणाम भी तीव्रकषाय छोड़ि किछू मंदकषायी होय जांय । सो मुख्यपनैं तौ ऐसैं है । बहुरि काहूकै न होय, तौ मति होहु । श्रीगुरु तौ परिणाम सुधारनेके अर्थ बाह्यक्रियानिकौं उपदेशै हैं । बहुरि निश्चयसहित व्यवहारका उपदेशविषै परिणामनिहीकी प्रधानता है । ताका उपदेशतैं तत्त्वज्ञानका अभ्यासकरि वा वैराग्यभावनाकरि परिणाम सुधारै, तहां परिणामकै अनुसारि बाह्यक्रिया भी सुधरि

जाय । परिणाम सुधरें बाह्यक्रिया भी सुधरै ही सुधरै । तातैं श्रीगुरु परिणाम सुधारनेकौं मुख्य उपदेशैं हैं। ऐसैं दोय प्रकार उपदेशविषै व्यवहारहीका उपदेश होय । तहां सम्यग्दर्शनके अर्थ अरहंत देव, निर्ग्रंथ गुरु, दया धर्मकौं ही मानना । बहुरि जीवादिक तत्वनिका व्यवहारस्वरूप कह्या है, ताका श्रद्धान करना, शंकादि पच्चीस दोष न लगावने, निःशंकितादिक अंग अथवा संवेगादिक गुण पालने, इत्यादिक उपदेश दीजिए है । बहुरि सम्यग्ज्ञानके अर्थ जिनमतके शास्त्रनिका अभ्यास करना, अर्थ व्यंजनादि अंगनिका साधन करना, इत्यादि उपदेश दीजिए है । बहुरि सम्यक्चारित्रकै अर्थ एकोदेश सर्वोदेश हिंसादि पापनिका त्याग करना, व्रतादि अंगनिकौं पालने इत्यादि उपदेश दीजिए है । बहुरि कोई जीवकौं विशेष धर्मका साधन न होता जानि, एक आखड़ी आदिकका ही उपदेश दीजिए है । जैसैं भीलकौं कागलाका मांस छुड़ाया, गुवालियाकौं नमस्कार मंत्र जपनेका उपदेश दिया, गृहस्थकौं चैत्यालय पूजा प्रभावनादि कार्यका उपदेश दिया, इत्यादि जैसा जीव होय, ताकौं तैसा उपदेश दीजिए है । बहुरि जहां निश्चयसहित व्यवहारका उपदेश होय, तहां सम्यग्दर्शनके अर्थ यथार्थ तत्वनिका श्रद्धान कराईए हैं। तिनका जो निश्चय स्वरूप है, सो भूतार्थ है । व्यवहारस्वरूप है, सो उपचार है । ऐसा श्रद्धान लिए वा स्वपरकाभेदविज्ञानकरि परद्रव्यविषै रागादि छोड़नेका प्रयोजन लिए तिन तत्वनिका श्रद्धान करनेका उपदेश दीजिए है। ऐसे श्रद्धानतैं अरहंतादिविना अन्य देवादिक झूंठ

भासै, तब स्वयमेव तिनका मानना छूटै है, ताका भी निरूपण करिए है। बहुरि सम्यग्ज्ञानके अर्थ संशयादिरहित तिनही तत्वनिका तैसैं ही जाननेका उपदेश दीजिए है, तिस जाननेकौं कारण जिनशास्त्रनिकौ अभ्यास है। तातैं तिस प्रयोजनकै अर्थ जिनशास्त्रनिका भी अभ्यास स्वयमेव हो है, ताका निरूपण करिए है। बहुरि सम्यक्चारित्रके अर्थ रागादि दूरि करनेका उपदेश, दीजिए हैं। तहां एकदेश वा सर्वदेश तीव्ररागादिकका अभाव भए तिनके निमित्ततैं होतीं जे एकदेश सर्वदेश पापक्रिया तातै छूटै है। बहुरि मंदरागतै श्रावकमुनिनिकै व्रतनिकी प्रवृत्ति हो है, बहुरि मंदरागादिकनिका भी अभाव भएं शुद्धोपयोगकी प्रवृत्ति हो है, ताका निरूपण करिए है। बहुरि यथार्थ श्रद्धान लिए सम्यग्दृष्टीनिकै जैसै यथार्थ कोई आखड़ी हो है, वा भक्ति हो है, वा पूजा प्रभावनादि कार्य हो है, वा ध्यानादिक हो है। तिनका उपदेश दीजिए है। जैसा जिनमतविषै सांचा परंपराय मार्ग है, तैसा उपदेश दीजिए है। ऐसै दोय प्रकार उपदेश चरणानुयोगविषै जानना।

बहुरि चरणानुयोगविषै तीव्रकषायनिका कार्य छुड़ाय मंद-कषायरूप कार्य करनेका उपदेश दीजिए है। यद्यपि कषाय करना बुरा ही है, तथापि सर्वकषाय न छूटते जानि जेता कषाय घटै तितना ही भला होगा, ऐसा प्रयोजन तहां जानना। जैसे जिनि जीवनिकै आरंभादि करनेकी वा मंदिरादि बनावनेकी वा विषय सेवनेकी वा क्रोधादि करनेकी इच्छा सर्वथा दूरि न

होती जानै, तिनकौं पूजा प्रभावनादिककै करनेका वा चैत्यालयादि बनावेनका वा जिनदेवादिककै आगै शोभादिक नृत्य गानादि-करनेका वा धर्मात्मा पुरुषनिकी सहायादि करनेका उपदेश दीजिए है। जातैं इनविषै परंपराय कषायनिका पोषण न हो है। पापकार्यनिविषै परंपराय कषायपोषणा हो है, तातैं पापकार्यनितै छुड़ाय इन कार्यनिविषै लगाईए है। बहुरि थोरा बहुत जेता छूटता जानै, तितना पापकार्य छुड़ाय सम्यक्त वा अणुव्रतादि पालनेका तिनकौं उपदेश दीजिए है। बहुरि जिन जीवनिकै सर्वथा आरंभादिककी इच्छा दूरि भई, तिनकौं पूर्वोक्त पूजनादिक कार्य वा सर्व पापकार्य छुड़ाय महाव्रतादि कार्यनिका उपदेश दीजिए है। बहुरि जिनकै किंचित् रागादिक छूटता न जानै, तिनकौ दया धर्मोपदेश प्रतिक्रमणादि कार्य करनेका उपदेश दीजिए है। जहां सर्वराग दूरि होय तहां किछू करनेका कार्य ही रह्या नाहीं। तातैं तिनकौं किछू उपदेश ही नाहीं। ऐसा क्रम जानाना।

बहुरि चरणानुयोगविषै कषायी जीवनिकौं कषाय उपजायकरि भी पापकौं छुड़ाईए है, अर धर्मविषै लगाईए है। जैसें पापका फल नरकादिकके दुख दिखाय तिनकौं भय कषाय उपजाय पापकार्य छुड़ाईए है। बहुरि पुण्यका फल स्वर्गादिकके सुख दिखाय तिनकौ लोभकषाय उपजाय धर्मकार्यनिविषै लगाईए है। बहुरि यह जीव इंद्रियविषय शरीर पुत्र धनादिकके अनुरागतैं पाप करै है, धर्म पराङ्मुख रहै है, तातै इंद्रियविषयनिकौं मरण

कलेशादिकके कारण दिखावनेकरि तिनविषै अरतिकषाय कराईए है। शरीरादिककौ अशुचि दिखावनेकरि तहां जुगुप्साकषाय कराईए है, पुत्रादिककौं धनादिकके ग्राहक दिखाय तहां द्वेष कराईए है, वहुरि धनादिककौं मरण कलेशादिकका कारण दिखाय, तहां अनिष्ट बुद्धि कराईए है। इत्यादि उपायतैं विषया- दिविषै तीव्रराग दूरि होनेकरि तिनकै पापक्रिया छूटि धर्मविषै प्रवृति हो है। वहुरि नामस्मरण स्तुतिकरण पूजा दान शीलादिकतैं इस लोकविषै दरिद्रकष्ट दूरि हो है, पुत्र धनादिककी प्राप्ति हो है, ऐसैं निरूपणकरि तिनकै लोभ उपजाय तिन धर्म कार्य निविषै लगाईए है। ऐसैं ही अन्य उदाहरण जानने। यहां प्रश्न—जो कोई कषाय छुड़ाय कोई कषाय करावनेका प्रयोजन कहा? ताका समाधान—

जैसैं रोग तौ शीतांग भी है अर ज्वर भी है। परंतु कोईकै शीतांगतैं मरण होता जानै, तहां वैद्य है सो वाकै ज्वर होनेका उपाय करै। ज्वर भए पीछैं वाकै जीवनेकी आशा होय, तब पीछैं ज्वरके भी मेटनेका उपाय करै। तैसै कषाय तौं सर्व ही हेय हैं, परंतु कोई जीवनिकै कषायनितै पापकार्य होता जानै, तहां श्रीगुरु हैं सो उनकै पुण्यकार्यकौं कारणभूत कषाय होनेका उपाय करैं, पीछैं वाकै सांची धर्मबुद्धि जानै, तब पीछैं तिस कषाय मेटनेका उपाय करैं, ऐसा प्रयोजन जानना। बहुरि चरणा- नुयोगविषै जैसैं जीव पापकौं छोड़ि धर्मविषै लगै, तैसैं अभिप्राय लिये अनेक युक्तिकरि वर्णन करिए है। तहां लौकिक दृष्टांत

युक्तिकरि न्यायपद्धतिके द्वारा समझाइए है। बहुरि कहीं अन्यमतके भी उदाहरणादि दीजिए है। जैसैं सूक्तमुक्तावली-विषैं लक्ष्मीकौं कमलवासिनी कही, वा समुद्रविषै विष और लक्ष्मी उपजै हैं, तिस अपेक्षा विषकीं भगिनी कही। ऐसैं ही अन्यत्र कहिए है। तहां कोई उदाहरण झूठे हू हैं, परंतु सांच प्रयोजनकौं पोषैं हैं। तहां दोष नाहीं। यहां कोउ कहै,–झूठका तौ दोष लागै है। ताका समाधान—जो झूठ है और सांचे प्रयोजनकौं पोषै है। तौ उसको झूठ न कहिए है और जो सांचे भी हैं और झूठे प्रयोजनकौं पोषैं तो वह झूठ ही हैं। ऐसैं अलंकारयुक्त नामादिकविषै वचन अपेक्षा झूठ सांच नाहीं, प्रयोजन अपेक्षा झूठ सांच है। जैसै तुच्छशोभासहित नगरीकौं इंद्रपुरीकै समान कहिए है, सो झूठ है। परंतु शोभाका प्रयोजनकौं पोषै है, तातैं झूठ नाहीं। बहुरि "इस नगरीविषै छत्रहीकै दंड है, अन्यत्र नाहीं" ऐसा कह्या, सो झूठ है। अन्यत्र भी दंड देना पाईए है, परंतु तहां अन्यायवान् थोरे हैं न्यायवानकौ दंड न दीजिए है, ऐसा प्रयोजनकौ पोषै है, तातैं झूठ नाहीं। बहुरि बृहस्पतिका नाम 'सुरगुरु' लिखैं वा मंगलका नाम 'कुज' लिखै, सो ऐसे नाम अन्यमत अपेक्षा हैं। इनका अक्षरार्थ है, सो झूठा है। परंतु वह नाम तिस पदार्थकौं प्रगट करै है, तातैं झूठा नाहीं। ऐसैं अन्य मतादिकके उदाहरणादि दीजिए है, सो झूठ हैं, परंतु उदाहरणादिकका तौ श्रद्धान करा-वना है नाहीं, श्रद्धान तौ प्रयोजनका करावना है, सो प्रयोजन

सांचा है, दोष है नाहीं। बहुरि चरणानुयोगविषै छद्मस्थकी बुद्धि-गोचर स्थूलपनाकी अपेक्षा लोकप्रवृत्तिकी मुख्यता लिए उपदेश दीजिए है, । बहुरि केवलज्ञानगोचर सूक्ष्मपनाकी अपेक्षा न दीजिए है। जातै तिसका आचरण न होय सकै है। और यहां आचरण करावनेका प्रयोजन है। जैसैं अणुव्रतीकै त्रसहिंसाका त्याग कह्या, अर वाकै स्त्री सेवनादि कार्यविषै त्रसहिंसा हो है। यह भी जानै है—जिनवानी विषै यहां त्रस कहे हैं। परंतु याकै त्रस मारनेका अभिप्राय नाहीं, अर लोकविषै जाका नाम त्रसघात है, ताकौं करै नाहीं, तातैं तिस अपेक्षा वाकै त्रसहिंसाका त्याग है। बहुरि मुनिकै स्थावरहिंसाका भी त्याग कह्या, सो मुनि पृथ्वी जलादिविषै गमनादि करै हैं, तहां सर्वथा त्रसका भी अभाव नाहीं। जातैं त्रसजीवकी भी अवगाहना ऐसी छोटी हो है, जो दृष्टिगोचर न होवै। अर तिनकी स्थिति पृथ्वी जलादि विषै ही है, सो मुनि जिनवानीतै जानै है वा कदाचित् अवधि ज्ञानादिकरि भी जानै है, । परंतु याकै प्रमादतैं स्थावर त्रस-हिंसाका अभिप्राय नाहीं। बहुरि लोकविषै भूमि खोदना अप्रासुक जलतैं क्रिया करनी इत्यादि प्रवृत्तिका नाम स्थावरहिंसा है, अर स्थूल त्रसनिकै पीड़नेका नाम त्रसहिंसा है, ताकौं न करै। तातैं मुनिकै सर्वथा हिंसाका त्याग कहिए है। बहुरि ऐसैं ही अनृत स्तेय अब्रह्म परिग्रहका त्याग कह्या। अर केवलज्ञानका जाननेकी अपेक्षा असत्यवचनयोग बारवां गुणस्थान पर्यंत कह्या अदत्त कर्मपरमाणु आदि परद्रव्यका ग्रहण तेरवां

गुणस्थान पर्यंत है, । वेदका उदय नवमागुणस्थानपर्यंत है। अंतरंगपरिग्रह दशमगुणस्थानपर्यंत है । बाह्यपरिग्रह समवसरणादि केवलीकै भी हो है । परंतु प्रमादतैं पापरूप अभिप्राय नाहीं, अर लोकप्रवृत्तिविषै तिन क्रियानिकरि यह झूठ बोलै है, चोरी करै है, कुशील सेवै है, परिग्रह राखै है, ऐसा नाम पावै, वै क्रिया इनकै हैं नाहीं। तातैं अनृतादिकका इनकैं त्याग कहिए हैं । बहुरि जैसैं मुनिके मूलगुणनिविषैं पंचइंद्रियनिके विषयका त्याग कह्या। सो जानना इंद्रियनिका मिटै नाहीं, अर विषयनिविषै रागद्वेष सर्वथा दूरि भया होय, तौ यथाख्यात चारित्र होय जाय, सो भया नाहीं। परंतु स्थूलपनैं विषयइच्छाका अभाव भया अर बाह्य विषय सामग्री मिलावनेकी प्रवृत्ति दूरि भई, तातैं याकै इंद्रियविषयका त्याग कह्या । ऐसैं ही अन्यत्र जानना । बहुरि व्रती जीव त्याग वा आचरण करै है, सो चरणानुयोगकी पद्धति अनुसारि वा लोकप्रवृत्तिकै अनुसारि करै है। जैसैं काहूनैं त्रसहिंसाका त्याग किया है, तहां चरणानु योगविषै वा लोकविषैं जाकौं त्रसहिंसा कहिए है, ताका त्याग किया, केवलज्ञानकरि जो त्रस देखिए है, तिनिका त्याग बनै नाहीं। तहां त्रसहिंसाका त्याग किया, तिसरूप मनका विकल्प न करना मनकरि त्याग है, वचन न बोलना सो वचनकरि त्याग है। कायकरि न प्रवर्त्तना, सो कायकरि त्याग है। ऐसैं अन्य त्याग वा ग्रहण हो है, सो ऐसी पद्धति लिए ही हो है, ऐसा जानना। यहां प्रश्न—जो करणानुयोगविषै केवलज्ञान अपेक्षा तारतम्य

कथन है, तहां छटे गुणस्थानवालेकै सर्वथा बारह अविरतिनिका अभाव कह्या, सो कैसे कह्या। ताका उत्तर—

अविरति भी योगकषायविषै गर्भित थे, परंतु तहां भी चरणानुयोग अपेक्षा त्यागका अभाव तिसहीका नाम अविरति कह्या है। तातै तहां तिनका अभाव है। मनअविरतिका अभाव कह्या, सो मुनिकै मनके विकल्प हो हैं, परंतु स्वेच्छाचारी मनका पापरूप प्रवृत्तिका अभावतै मनअविरतिका अभाव कह्या ऐसा जानना। बहुरि चरणानुयोगविषै व्यवहार लोकप्रवृत्ति अपेक्षा ही नामादिक कहिए है। जैसे सम्यक्तीकौ पात्र कह्या, मिथ्यातीकौ अपात्र कह्या। सो यहां जाकै जिनदेवादिकका श्रद्धान पाईए, सो तौ सम्यक्ती, जाकै तिनका श्रद्धान नाहीं, सो मिथ्याती जानना। जातैं दान देना चरणानुयोगविषै कह्या है, सो चरणानुयोगहीकी अपेक्षा सम्यक्त मिथ्यात्व ग्रहण करिए है। करणानुयोग अपेक्षा सम्यक्त मिथ्यात्व ग्रहैं वो ही जीव ग्यारवैं गुणस्थान अर वो ही अंतर्मुहूर्त्तमै पहिले गुणस्थान आवै, तहां दातार पात्र अपात्रका कैसैं निर्णय करि सकै। बहुरि द्रव्यानुयोग अपेक्षा सम्यक्त मिथ्यात्व ग्रहैं मुनि संघविषै द्रव्यलिंगी भी है भावलिंगी भी हैं। सो प्रथम तौ तिनका ठीक होना कठिन है। जातैं बाह्यप्रवृत्ति समान है। अर जो कदाचित् सम्यक्तीकौं कोई चिह्नकरि ठीक पड़ै अर वह वाकी भक्ति न करै, तब औरनिकै संशय होय, जो याकी भक्ति क्यौं न करी। ऐसै वाका मिथ्यादृष्टीपना प्रगट होय, तब संघविषै विरोध उपजै। तातैं यहां

व्यवहार सम्यक्त मिथ्यात्वकी अपेक्षा कथन जाननैं। यहां कोई प्रश्न करै—सम्यक्ती तौ द्रव्यलिंगीकौं आपतैं हीनगुणयुक्त मानै है, ताकी भक्ति कैसैं करै। ताका समाधान —

व्यवहारधर्मका साधन द्रव्यलिंगीकै बहुत है अर भक्ति करनी सो भी व्यवहार ही है। तातैं जैसैं कोई धनवान् होय परंतु जो कुलविषै बड़ा होय ताकौं कुल अपेक्षा बड़ा जानि ताका सत्कार करै, तैसैं आप सम्यक्तगुणसहित है, परंतु जो व्यवहारधर्मविषै प्रधान होय, ताकौं व्यवहारधर्म अपेक्षा गुणाधिक मानि ताकी भक्ति करै है। ऐसा जानना। बहुरि ऐसैं ही जो जीव बहुत उपवासादि करै ताकौं तपस्वी कहिए हैं। यद्यपि जो कोई ध्यान अध्ययनादि विशेष करै है, सो उत्कृष्ट तपस्वी है। तथापि चरणानुयोगविषै बाह्यतपहीकी प्रधानता है। तातैं तिसहीकौं तपस्वी कहिए है। याही प्रकार अन्य नामादिक जाननैं। ऐसैं ही अन्य अनेक प्रकार लिए चरणानुयोगविषै व्याख्यानका विधान जानना।

अब द्रव्यानुयोगविषै कहिए है—

जीवनिकै जीवादि द्रव्यनिका यथार्थ श्रद्धान जैसैं होय, तैसै विशेष युक्ति हेतु दृष्टान्तादिकका यहां निरूपण कीजिए है। जातैं याविषै यथार्थ श्रद्धान करावनेका प्रयोजन है। तहां यद्यपि जीवादि वस्तु अभेद हैं, तथापि तिनविषै भेदकल्पनाकरि व्यवहारतैं द्रव्य गुण पर्यायादिकका भेद निरूपण कीजिए है। सो भी युक्त है। बहुरि प्रतीति अनावनेकै अर्थ अनेक युक्तिकरि

उपदेश दीजिए है, अथवा प्रमाणनयकरि उपदेश दीजिए है, बहुरि वस्तुका अनुमान प्रत्यभिज्ञानादिक करनेकौं हेतु दृष्टांतादिक दीजिए हैं। ऐसैं तहां वस्तुकी प्रतीति करावनेका उपदेश दीजिए है। बहुरि यहां मोक्षमार्गका श्रद्धान करावनेकै अर्थ जीवादि तत्त्वनिका विशेष युक्ति दृष्टांतादिकरि निरूपण कीजिए है। तहां स्वपरभेदविज्ञानादिक जैसैं होय, तैसैं जीव अजीवका निर्णय कीजिए है। बहुरि वीतरागभाव जैसै होय, आस्रवादिकका स्वरूप दिखाईए है। बहुरि तहां मुख्यपनैं ज्ञान वैराग्यकौं कारण आत्मानुभवनादिक ताकी महिमा गाईए है बहुरि द्रव्यानुयो- गविषै निश्चय अध्यात्म उपदेशकी प्रधानता होय, तहां व्यवहार धर्मका भी निषेध कीजिए है। जे जीव आत्मानुभवके उपायकौं न करै हैं, अर बाह्य क्रियाकांडविषै मग्न है, तिनकौं तहांतैं उदासकरि आत्मानुभवनादिविषै लगावनेकौ व्रत शील संयमादि- कका हीनपना प्रगट कीजिए है। तहां ऐसा न जानि लेना, जो इनकौं छोड़ि पापविषै लगना। जातैं तिस उपदेशका प्रयोजन अशुभविषै लगावनेका नाहीं है। शुद्धोपयोगविषै लगावनेकौं शुभोपयोगका निषेध कीजिए है। यहां कोऊ कहै कि-अध्यात्म- शास्त्रनिविषै पुण्य पाप समान कहे हैं, तातैं शुद्धोपयोग होय तौ भला ही है, न होय तौ पुण्यविषै लगो वा पापविषै लगो। ताका उत्तर—

जैसैं शूद्रजातिअपेक्षा जाट चांडाल समान कहे, परंतु चांडलतै जाट किछू उत्तम है। यह अस्पृश्य है, वह स्पृश्य है। तैसैं

बंधकारण अपेक्षा पुण्य पाप समान हैं, परंतु पापतैं पुण्य किछू भला है। वह तीव्रकषायरूप है, यह मंदकषायरूप है। तातैं पुण्य छोड़ि पापविषै लगना युक्त नाहीं, ऐसा जानना। बहुरि जे जीव जिनबिम्बभक्त्यादि कार्यनिविषै ही मग्न हैं, तिनकौं आत्मश्रद्धानादि करावनेकौं "देहविषै देव है, देहुराविषै नाहीं" इत्यादि उपदेश दीजिए है। तहां ऐसा न जानि लेना, जो भक्ति छुड़ाय भोजनादिकतै आपकौं सुखी करना। जातै तिस उपदेशका प्रयोजन ऐसा नाहीं है। ऐसै ही अन्य व्यवहारका निषेध तहां किया होय, ताकौं जानि प्रमादी न होना। ऐसा जानना,-जे केवल व्यवहारविषै ही मग्न हैं, तिनकौं निश्चयरुचि करावनेकै अर्थ व्यवहारकौं हीन दिखाया है। बहुरि तिन ही शास्त्रनिविषै सम्यग्दृष्टीके विषय भोगादिककौं बंधकारण न कह्या, निर्ज्जराका कारण कह्या। सो यहां भोगनिका उपादेयपना न जानि लेना। तहां सम्यग्दृष्टीकी महिमा दिखावनेकौं जे तीव्रबंधके कारण भोगादिक प्रसिद्ध थे, तिन भोगादिककौं होतसंतैं भी श्रद्धानशक्तिके बलतैं मंदबंध होने लगा, ताकौं तौ गिन्या नाहीं अर तिसही बलतैं निर्जरा विशेष होने लगी, तातैं उपचारतै भोग-निकौं भी बंधका कारण न कह्या, निर्जराका कारण कह्या। विचार किए भोग निर्ज्जराके कारण होंय, तौ तिनकौं छोड़ि सम्यग्दृष्टी मुनिपदका ग्रहण काहेकौं करै। यहां इस कथनका इतना ही प्रयोजन है—देखो, सम्यक्तकी महिमा जाके बलतैं भोग भी अपने गुणकौ न करि सकै है। या प्रकार और भी

कथन होंय, तौ ताका यथार्थपना जानि लेना। बहुरि द्रव्यानुयोग-विषै भी चरणानुयोगवत् ग्रहण त्याग करावनेका प्रयोजन है। तातैं छद्मस्थके बुद्धिगोचर परिणामनिकी अपेक्षा ही तहां कथन कीजिए है। इतना विशेष है जो चरणानुयोविषै तौ बाह्य-क्रियाकी मुख्यताकरि वर्णन करिए है अर द्रव्यानुयोगविषै आत्म-परिणामनिकी मुख्यताकरि निरूपण कीजिए है--करणानुयोगवत् सूक्ष्मवर्णन न कीजिए है। ताके उदाहरण कहिए हैं—

उपयोगके शुभ अशुभ शुद्ध ऐसैं तीन भेद कहे। तहां धर्मानु-रागरूप परिणाम सो शुभोपयोग, पापानुराग वा द्वेषरूप परिणाम सो अशुभोपयोग, अर रागद्वेषरहित परिणाम सो शुद्धोपयोग, ऐसैं कह्या। सो इस छद्मस्थके परिणामनिकी अपेक्षा यह कथन है। करणानुयोगविषै कषायशक्ति गुणस्थानादिविषै संक्लेश विशुद्ध परिणाम निरूपण किया है, सो विवक्षा यहां नाहीं है। करणानुयोगविषै तौ रागादिरहित शुद्धोपयोग, यथाख्यातचारित्र भए होय, सो मोहका नाश भए स्वयमेव होगा। नीचली अवस्थावाला शुद्धोपयोग साधन कैसैं करै। अर द्रव्यानुयोगविषै शुद्धोपयोग करनेहीका मुख्य उपदेश है, तातैं यहां छद्मस्थ जिस कालविषै बुद्धिगोचर भक्ति आदि वा हिंसा आदि कार्यरूप परिणामनिकौं छुड़ाय आत्मानुभवनादि कार्यविषै प्रवर्तै, तिस काल ताकौं शुद्धोपयोगी कहिए। यद्यपि यहां केवलज्ञानगोचर सूक्ष्म रागादिक हैं, तथापि ताकी विवक्षा यहां न कही, अपनी बुद्धि-गोचर रागादिक छोड़ि तिस अपेक्षा याकौं शुद्धोपयोगी कह्या है।

ऐसैं ही स्वपरश्रद्धानादिक भए सम्यक्तादिक कहे, सो बुद्धिगोचर अपेक्षा निरूपण है। सूक्ष्म भावनिकी अपेक्षा गुणस्थानादिविषै सम्यक्तादिकका निरूपण करणानुयोगविषै पाईए है। ऐसैं ही अन्यत्र जाननैं। तातैं द्रव्यानुयोगके कथनकी करणानुयोगतैं विधि मिलाया चाहिए, सो कहीं तौ मिलै कहीं न मिलै। जैसैं यथाख्यातचारित्र भए, तौ दोऊ अपेक्षा शुद्धोपयोग है, बहुरि नीचली दशाविषै द्रव्यानुयोग अपेक्षा तौ कदाचित् शुद्धोपयोग होय अर करणानुयोग अपेक्षा सदा काल कषायअंशके सद्भावतैं शुद्धोपयोग नाहीं। ऐसैं ही अन्य कथन जानि लेना। बहुरि द्रव्यानुयोगविषै परमतविषै कहे तत्त्वादिक तिनकौं असत्य दिखावनेकौं अर्थ तिनका निषेध कीजिए है, तहां द्वेषबुद्धि न जाननी। तिनकौं असत्य दिखाय सत्य श्रद्धान करावनेका प्रयोजन जानना। ऐसैं ही और भी अनेक प्रकारकरि द्रव्यानुयोगविषै व्याख्यानका विधान किया है। या प्रकार च्यारौं अनुयोगके व्याख्यानका विधान कह्या, सो कोई ग्रंथविषै एक अनुयोगकी, कोई विषै दोयकी, कोई विषैं तीनकी, कोई विषै च्यारौंकी प्रधानता लिए व्याख्यान हो है। सो जहां जैसा संभवै, तहां तैसा समझ लैना।

अब इन अनुयोगनिविषै कैसी पद्धतिकी मुख्यता पाईए है, सो कहिए है—

प्रथमानुयोगविषै तौ अलंकारशास्त्रनिकी वा काव्यादि शास्त्रनिकी पद्धति मुख्य है। जातै अलंकारादितैं मन रंजायमान होय। सूधी बात कहैं ऐसा उपयोग लागै नाहीं, जैसा अलं-

कारादि युक्तिसहित कथनतैं उपयोग लागै। बहुरि परोक्ष बातकौं किछू अधिकताकरि निरूपण करिए, तौ वाका स्वरूप नीकैं भासै। बहुरि करणानुयोगविषै गणित आदि शास्त्रनिकी पद्धति मुख्य है। जातैं तहां द्रव्य क्षेत्र काल भावका प्रमाणादिक निरूपण कीजिए हैं। सो गणित ग्रंथनिकी आम्नायतैं ताका सुगम जानपना हो है। बहुरि चरणानुयोगविषै सुभाषित नीतिशास्त्रनिकी पद्धति मुख्य है। जातैं यहां आचरण करावना है, सो लोक-प्रवृत्तिकै अनुसार नीतिमार्ग दिखाए वह आचरण करै। बहुरि द्रव्यानुयोगविषैं न्यायशास्त्रनिकी पद्धति मुख्य है। जातैं यहां निर्णय करनेका प्रयोजन है अर न्यायशास्त्रनिविषै निर्णय करनेका मार्ग दिखाया है। ऐसैं इन अनुयोगनिविषैं पद्धति मुख्य हैं। और भी अनेक पद्धति लिएं व्याख्यान इनविषै पाईए है। यहां कोऊ कहै- अलंकार गणित नीति न्यायका तौ ज्ञान पंडितनिकै होय, तुच्छबुद्धि समझै नाहीं, तातैं सूधा कथन क्यौं न किया। ताका उत्तर—

शास्त्र है सो मुख्यपनैं पंडित अर चतुरनिके अभ्यास करने योग्य है। सो अलंकारादिक आम्नाय लिएं कथन होय, तौ तिनका मन लागै। बहुरि जे तुच्छबुद्धि हैं, तिनकौं पंडित समझाय दें। अर जे न समझि सकै, तौ तिनकौं मुखतैं सूधा ही कथन कहैं। परंतु ग्रंथनिमैं सूधा कथन लिखें विशेषबुद्धि तिनका अभ्यासविषै न प्रवर्तै। तातैं अलंकारादि आम्नाय लिए कथन कीजिए है। ऐसैं इन च्यारि अनुयोगनिका निरूपण किया। बहुरि जिनमत

विषै घने शास्त्र तौ इन च्यारौं अनुयोगनिविषै गर्भित हैं। बहुरि व्याकरण न्याय छंद कोषादिक शास्त्र वा वैद्यक ज्योतिष व मंत्रादि शास्त्र भी जिनमतविषैं पाईए है। तिनका कहा प्रयोजन है, सो सुनहु—

व्याकरण न्यायादिकका अभ्यास भए अनुयोगरूप शास्त्रनिका अभ्यास होय सकै है। तातैं व्याकरणादिक शास्त्र कहे हैं। कोऊ कहै,—भाषारूप सूधा निरूपण करते तौ व्याकरणादिकका कहा प्रयोजन था। ताका उत्तर—

भाषा तौ अपभ्रंशरूप अशुद्ध वाणी है। देश देशविषैं और और है। सो महंतपुरुष शास्त्रनिविषैं ऐसी रचना कैसैं करैं। बहुरि व्याकरण न्यायादिककरि जैसा यथार्थ सूक्ष्म अर्थ निरूपण हो है, तैसा सूधी भाषाविषै होय सकै नाहीं। तातैं व्याकरणादि आम्नायकरि वर्णन किया है। सो अपनी बुद्धिअनुसार थोरा बहुत इनका अभ्यासकरि अनुयोगरूप प्रयोजनभूत शास्त्रनिका अभ्यास करना। बहुरि वैद्यकादि चमत्कारतैं जिनमतकी प्रभावना होय वा औषधादिकतैं उपकार भी बनै, अथवा जे जीव लौकिक कार्यविषैं अनुरक्त हैं, ते वैद्यकादिक चमत्कारतैं जैनी होय पीछैं सांचा धर्म्म पाय अपना कल्याण करैं। इत्यादि प्रयोजन लिए वैद्यकादि शास्त्र कहे हैं। यहां इतना है—ए भी जिनशास्त्र हैं, ऐसा जानि इनका अभ्यासविषै बहुत लगना नाहीं। जो बहुत बुद्धितैं इनका सहज जानना होय, अर इनकौं जाने आपकै रागादिक विकार बधते न जानैं, तौ इनका भी जानना होहु।

अनुयोग शास्त्रवत् ए शास्त्र बहुत कार्यकारी नाहीं । तातैं इनका अभ्यासका विशेष उद्यम करना युक्त नाहीं । यहां प्रश्न–जो ऐसैं है, तौ गणधरादिक इनकी रचना काहेकौं करी । ताका उत्तर–

पूर्वोक्त किंचित् प्रयोचन जानि इनकी रचना करी । जैसैं बहुत धनवान् कदाचित् स्तोककार्यकारी वस्तुका भी संचय करै । बहुरि थोरा धनवान् उन वस्तुनिका संचय करे, तौ धन तौ तहां लगि जाय, बहुतकार्यकारी वस्तुका संग्रह काहेतैं करै । तैसैं बहुत बुद्धिमान् गणधरादिक कथंचित् स्तोकार्यकारी वैद्यकादि शास्त्रनिका भी संचय करै । थोरा बुद्धिमान् उनंका अभ्यासविषै लागै तौ बुद्धि तौ तहां लगि जाय, अर उत्कृष्ट कार्यकारी शास्त्रनिका अभ्यास कैसैं करै । बहुरि जैसैं मंदरागी तौ पुराणादिविषै शृंगारादि निरूपण करै, तौ भी विकारी न होय । तीव्ररागी तैसैं शृंगारादि निरूपै तौ पाप ही बांधै । तैसैं मंदरागी गणधरादिक हैं, ते वैद्यकादि शास्त्र निरूपैं, तौ भी विकारी न होंय, अर तीव्ररागी तिनका अभ्यासविषै लगि जाय, तौ रागादिक बधाय पापकर्म्मको बांधै ऐसैं जानना । या प्रकार जैनमतके उपदेशका स्वरूप जानना ।

अब इनविषै दोषकल्पना कोई करै है, ताका निराकारण करिए है—

कोई जीव कहै है–प्रथमानुयोगविषै शृंगारादिकका वा संग्रामादिकका बहुत कथन करैं, तिनके निमित्ततैं रागादिक

बधि जाय, तातैं ऐसा कथन न करना था। ऐसा कथन सुनना नाहीं। ताकौं कहिए है--कथा कहनी होय, तब तौ सर्व ही अवस्थाका कथन किया चाहिए। बहुरि जो अलंकारादिकरि बधाय कथन करै हैं, सो पंडितनिके वचन युक्ति लिएं ही निकसैं। अर जो तू कहैगा, संबंध मिलावनेंकौं सामान्य कथन किया होता, बधायकरि कथन काहेकौं किया। ताका उत्तर—

जो परोक्षकथनकौं बधाय कहे विना वाका स्वरूप भासै नाहीं। बहुरि पहलैं तौ भोग संग्रामादि ऐसैं किए, पीछैं सर्वका त्यागकरि मुनि भए, इत्यादि चमत्कार तब ही भासै, जब वधाय कथन कीजिए। बहुरि तू कहै है, ताके निमित्ततैं रागादिक बधि जांय, सो जैसैं कोऊ चैत्यालय बनावै, सो वाका तौ प्रयोजन तहां धर्मकार्य करावनेका है। अर कोई पापी तहां पापकार्य करै, तौ चैत्यालय बनावनेवालाका तौ दोष नाहीं। तैसैं श्रीगुरु पुराणादिविषै शृंगारादि वर्णन किए, तहां उनका प्रयोजन रागादि करावनेका तौ है नाहीं—धर्म्मविषै लगावनेका प्रयोजन है। अर कोई पापी धर्म न करै, अर रागादिक ही बधावै, तौ श्रीगुरुका कहा दोष है। बहुरि जो तू कहै—जो रागादिकका निमित्त होय, सो कथन ही न करना था। ताका उत्तर—

सरागी जीवनिका मन केवल वैराग्यकथनविषै लागै नाहीं, तातैं जैसैं बालककौं पतासाकै आश्रय औषधि दीजिए, तैसैं सरागीकौं भोगादिकथनकै आश्रय धर्मविषै रुचि कराईए है। बहुरि तू कहैगा—ऐसैं है, तौ विरागी पुरुषनिकौं तौ ऐसे ग्रंथनिका

अभ्यास करना युक्त नाहीं। ताका उत्तर—

जिनकै अंतरंगविषै रागभाव नाहीं, तिनकै शृंगारादि कथन सुनें रागादि उपजै ही नाहीं। यह जानै, ऐसैं ही यहां कथन करनेकी पद्धति है। बहुरि तू कहैगा—जिनकै शृंगारादि कथन सुनें रागादि होय आवै, तिनकौं तो वैसा कथन सुनना योग्य नाहीं। ताका उत्तर—

जहां धर्महीका तौ प्रयोजन अर जहां तहा धर्मकौ पोषै, ऐसे जैनपुराणादिकका तिनविषै प्रसंग पाय शृंगारादिकका कथन किया, ताकौं सुनें भी जो बहुत रागी भया, तौ वह अन्यत्र कहां विरागी होगा, पुराण सुनना छोड़ि और कार्य भी ऐसा ही करैगा, जहां बहुत रागादि होय। तातैं वाकै भी पुराण सुनें थोरा बहुत धर्म बुद्धि होय तौ होय और कार्यनितैं यह कार्य भला ही है। बहुरि कोई कहै—प्रथमानुयोगविषै अन्य जीवनिकी कहानी है, वातै अपना कहा प्रयोजन सधै है। ताकौं कहिए है—

जैसैं कामीपुरुषनिकी कथा सुने आपकै भी कामका प्रेम बधै है, तैसै धर्मात्मा पुरुषनिकी कथा सुनें आपकै धर्मकी प्रीति विशेष बधै है। तातैं प्रथमानुयोगका अभ्यास करना योग्य है। बहुरि केई जीव कहै हैं—करणानुयोगविषै गुणस्थान मार्गणादिकका वा कर्मप्रकृतिनिका कथन किया, वा त्रिलोका-दिकका कथन किया, सो तिनकौं जानि लिया 'यह ऐसैं है' 'यह ऐसैं है'-यामैं अपना कार्य कहा सिद्ध भया। कै तौ भक्ति करिए, कै व्रत दानादि करिए, कै आत्मानुभवन करिए, इनतैं

अपना भला होय। ताकौं कहिए है--

परमेश्वर तौ वीतराग हैं। भक्ति किएं प्रसन्न होयकरि किछू करते नाहीं। भक्ति करतैं मंदकषाय हो है, ताका स्वयमेव उत्तम फल हो है। सो करणानुयोगकै अभ्यासविषै तिसतैं भी अधिक मंद कषाय होय सकै है, तातैं याका फल उत्तम हो है। बहुरि व्रतदानादिक तौ कषाय घटावनेके बाह्य निमित्तका साधन हैं, अर चरणानुयोगका अभ्यास किएं तहां उपयोग लगि जाय, तब रागादिक दूरि होंय, सो यहु अंतरंग निमित्तका साधन है। तातैं यह विशेष कार्यकारी है। व्रतादिक धारि अध्ययनादि कीजिए है। बहुरि आत्मानुभव सर्वोत्तम कार्य है। परंतु सामान्य अनुभवविषै उपयोग थँभै नाही, अर न थँभै तब अन्य विकल्प होय। तहां करणानुयोगका अभ्यास होय, तौ तिस विचारविषै उपयोगकौं लगावै। यह विचार वर्त्तमान भी रागादिक घटावै है। अर आगामी रागादिक घटावनेका कारण है। तातैं यहां उपयोग लगावना। जीव कर्मादिकके नाना प्रकार भेद जानैं, तिनविषै रागादिकरनेका प्रयोजन नाहीं, तातैं रागादि बधै नाहीं। वीतराग होनैका प्रयोजन जहां तहां प्रगट है, तातैं रागादि मिटावनेकौं कारण है। यहां कोऊ कहै—कोई तौ कथन ऐसा ही है, परंतु द्वीप समुद्रादिकके योजनादि निरूपे, तिनमैं कहा सिद्धि है। ताका उत्तर—

तिनकौं जानैं किछू तिनविषै इष्ट अनिष्ट बुद्धि न होय, तातैं पूर्वोक्त सिद्धि हो है। बहुरि वह कहै है,--ऐसैं है, तौ

जिसतैं किछू प्रयोजन नाहीं, ऐसा पाषाणादिककौं भी जानें तहां इष्ट अनिष्टपनो न मानिए हैं, सो भी कार्यकारी भया।
ताका उत्तर—

सरागी जीव रागादि प्रयोजनविना काहूकौ जाननेका उद्यम न करै। जो स्वयमेव उनका जानना होय, तौ अंतरंग रागादिकका अभिप्रायके वशकरि तहांतैं उपयोगकौं छुड़ाया ही चाहै है। यहां उद्यमकरि द्वीप समुद्रादिककौं जानै है, तहां उपयोग लगावै है। सो रागादि घटे ऐसा कार्य होय। बहुरि पाषाणादिकविषै इस लोकका कोई प्रयोजन भासि जाय, तौ रागादिक होय आवैं। अर द्वीपादिकविषै इस लोकसंबंधी कार्य किछू नाहीं। तातैं रागादिकका कारण नाहीं। जो स्वर्गादिककी रचना सुनि तहां राग होय, तौ परलोकसंबंधी होय। ताका कारण पुण्यकौं जानै, तब पाप छोड़ि पुण्यविषै प्रवर्तै। इतना ही नफा होय। बहुरि द्वीपादिकके जानें यथावत् रचना भासै, तब अन्यमतादिकका कह्या झूंठ भासै, सत्य श्रद्धानी होय। बहुरि यथावत् रचना जाननैंकरि भ्रम मिटैं उपयोगकी निर्मलता होय, तातै यह अभ्यास कार्यकारी है। बहुरि केई कहै हैं-करणानुयोगविषै कठिनता घनी, तातैं ताका अभ्यासविषै खेद होय। ताकौं कहिए है

जो वस्तु शीघ्र जाननेमैं आवै, तहां उपयोग उलझै नाहीं अर जानी वस्तुकौं वारंवार जाननेका उत्साह होय नहीं, तब पापकार्यनिविषै उपयोग लगि जाय। तातैं अपनी बुद्धि अनुसार

कठिनताकरि भी जाका अभ्यास होता जानै, ताका अभ्यास करना। अर जाका अभ्यास होय ही सकै नाहीं ताका कैसैं करै। बहुरि तू कहै है--खेद होय, सो प्रमादी रहनेमैं तौ धर्म है नाहीं! प्रमादतैं सुखिया रहिए, तहां तौ पाप होय। तातैं धर्मकै अर्थ उद्यम करना ही युक्त है। या विचारि करणानुयोगका अभ्यास करना।

बहुरि केई जीव कहै हैं--चरणानुयोगविषै बाह्य व्रतादि साधनका उपदेश है, सो इनतैं किछू सिद्धि नाहीं। अपने परिणाम निर्मल चाहिए, बाह्य चाहो जैसैं प्रवर्त्तो। तातैं या उपदेशतैं पराङ्मुख रहै हैं। तिनिकौं कहिए है--आत्मपरिणामनिकै और बाह्य प्रवृत्तिकै निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है। क्योंकि छद्मस्थकै क्रिया पारिणामपूर्वक हो है। कदाचित् विना परिणाम हू कोई क्रिया हो है, सो परवशतैं हो है। अपने उद्यमकरि कार्य करिए अर कहिए परिणाम इसरूप नाहीं है, सो यह भ्रम है। अथवा बाह्य पदार्थनिका आश्रय पाय परिणाम होय सकै हैं। तातैं परिणाम मेटनेकै अर्थ बाह्यवस्तुका निषेध करना समयसारादिविषै कह्या है। इस ही वास्तैं रागादिभाव घटे बाह्य ऐसे अनुक्रमतैं श्रावक मुनिधर्म होय हैं। अथवा ऐसैं श्रावक मुनिधर्म अंगीकार किएं पंचम षष्ठम गुणस्थाननिविषै रागादि घटावनेरूप परिणामनिकी प्राप्ति होय है। ऐसा निरूपण चरणानुयोगविषै किया। बहुरि जो बाह्य संयमतैं किछू सिद्धि न होय, तौ सर्वार्थसिद्धिके वासी देव सम्यग्दृष्टी बहुतज्ञानी तिनकै तौ चौथा

गुणस्थान होय, अर गृहस्थ श्रावक मनुष्यकै पंचम गुणस्थान होय, सो कारण कहा। बहुरि तीर्थंकरादिक गृहस्थपद छोडि काहेकौं संयम ग्रहैं। तातैं यह नियम है--बाह्य संयम साधनविना परिणाम निर्मल न होय सकै है। तातै बाह्य साधनका विधान जाननेकौं चरणानुयोगका अभ्यास अवश्य किया चाहिए।

बहुरि केई जीव कहैं हैं--जो द्रव्यानुयोगविषै व्रतसंयमादि व्यवहारधर्मका हीनपना प्रगट किया है। सम्यग्दृष्टीकै विषय भोगादिककौं निर्जराका कारण कह्या है। इत्यादि कथन सुनि जीव हैं, सो स्वच्छन्द होय पुण्य छोडि पापविषै प्रवर्तैंगे, तातैं इनका वाचना सुनना युक्त नाहीं। ताकौं कहिए है—जैसैं गर्दभ मिश्री खाएं मरै, तौ मनुष्य तौ मिश्री खाना न छोडै। तैसैं विपरीतबुद्धि अध्यात्मग्रंथ सुनि स्वच्छन्द होय, तौ विवेकी तौ अध्यात्मग्रंथनिका अभ्यास न छोडै। इतना करै-जाकौं स्वच्छन्द होता जानै, ताकौं जैसै वह स्वच्छंद न होय, तैसैं उपदेश दे। बहुरि अध्यात्मग्रंथनिविषै भी स्वच्छन्द होनेका जहां तहां निषेध कीजिए है तातैं जो नीकैं तिनकौं सुनै, सो तौ स्वच्छन्द होता नाहीं। अर एक बात सुनि अपने अभिप्रायतैं कोऊ स्वच्छन्द होय, तौ ग्रंथका तौ दोष है नाहीं, उस जीवहीका दोष है। बहुरि जो झूंठा दोषकी कल्पनाकरि अध्यात्मशास्त्रका बाचना सुनना निषेधिए तौ मोक्षमार्गका मूल उपदेश तौ तहां ही है ताका निषेध किए मोक्षमार्गका निषेध होय। जैसैं मेघवर्षा भए बहुत जीवनिका कल्याण होय, अर काहूकै उलटा टोटा पड़ै तौ तिसकी मुख्य--

ताकरि मेघका तौ निषेध न करना। तैसैं सभाविषै अध्यात्म उपदेश भएं बहुत जीवनिकौं मोक्षमार्गकी प्राप्ति होय अर काहूकै उलटा पाप प्रवर्तै, तौ तिसकी मुख्यताकरि अध्यात्मशास्त्र-निका तौ निषेध न करना। बहुरि अध्यात्मग्रंथनितैं कोऊ स्वछंद होय, सो तौ पहलैं भी मिथ्यादृष्टी था, अब भी मिथ्या-दृष्टी ही रह्या। इतना ही टोटा पड़ै, जो सुगति न होय कुगति होय। अर अध्यात्म उपदेश नहीं भएं बहुत जीवनिकै मोक्षमा-र्गकी प्राप्तिका अभाव होय, सो यामैं घने जीवनिका घना बुरा होय। तातैं अध्यात्म उपदेशका निषेध न करना। बहुरि कोऊ कहै है--जो द्रव्यानुयोगरूप अध्यात्म उपदेश है, सो उत्कृष्ट है सो ऊंची दशाकौं प्राप्त होंय, तिनकौ कार्यकारी है, नीचली दशावालोंकौं तौ व्रत संयमादिकका ही उपदेश देना योग्य है। ताकौं कहिए है—जिनमतविषै तौ यह परिपाटी हैं, जो पहलैं सम्यक्त होय पीछै व्रत होय। सो सम्यक्त स्वपरका श्रद्धान भये होय अर सो श्रद्धान द्रव्यनुयोगका अभ्यास किए होय। तातैं पहलैं द्रव्यानुयोगकै अनुसार श्रद्धानकरि सम्यदृष्टी होय, पीछैं चरणानुयोगकै अनुसार व्रतादिक धारि व्रती होय। ऐसैं मुख्यपनै तौ नीचली दशाविषै ही द्रव्यानुयोग कार्यकारी है, गौणपनै जाकौं मोक्षमार्गकी प्राप्ति होती न जानिए, ताकौं पहलैं कोई व्रतादिकका उपदेश दीजिए, है। जातैं ऊंची दशवालौंकौं अध्यात्म उपदेश अभ्यास योग्य है ऐसा जानि नीचलीदशावालौंकौं तहांतैं पराङ्मुख होना योग्य नाहीं। बहुरि जो कहौगे, ऊंचा उपदेशका स्वरूप

नीचली दशावालोंकौ भासै नाहीं। ताका उत्तर—

और तौ अनेक प्रकार चतुराई जानैं अर यहां मूर्खपना प्रगट कीजिए, सो युक्त नाहीं। अभ्यास किएं स्वरूप नीकैं भासै है। अपनी बुद्धि अनुसार थोरा वहुत भासै, परंतु सर्वथा निरुद्यमी होनेकौं पोषिए, सो तौ जिनमार्गका द्वेषी होना है। वहुरि जो कहौगे, अवार काल निकृष्ट है तातैं उत्कृष्ट, अध्यात्मका उपदेश-की मुख्यता न करी। ताकौं कहिए है, अवार काल साक्षात् मोक्ष होनेकी अपेक्षा निकृष्ट है, आत्मानुभवनादिककरि सम्यक्ता-दिकका होना अवार मानैं नाहीं। तातैं आत्मानुभवनादिककै अर्थ द्रव्यानुयोगका अवश्य अभ्यास करना। सोई षट्पाहुडविषै (मोक्षपाहुडमैं) कह्या है--

अज्जवि तिरयणसुद्धा अप्पाज्झाऊण जंति सुरलोये।
लोयंते देवत्तं तच्छ चुया णिव्बुदिं जंति॥ ७७॥

याका अर्थ—अवहू त्रिकरणकरि शुद्ध जीव आत्माकौं ध्यायकरि स्वर्गलोकविषै प्राप्त हो हैं, वा लोकांतिकविषै देवपणो पावै हैं। तहांतैं च्युत होय मोक्ष जाय हैं। तातैं इस कालविषै भी द्रव्यानुयोगका उपदेश मुख्य चाहिए। बहुरि कोई कहै है-द्रव्यानुयोगविषै अध्यात्मशास्त्र हैं, तहां स्वपरभेद विज्ञानादिकका उपदेश दिया, सो तौ कार्यकारी भी घना अर समझिमैं भी शीघ्र आवै। परंतु द्रव्यगुणपर्यायादिकका वा अन्यमतके कहे तत्त्वा-दिकका निराकरणकरि कथन किया, सो तिनका अभ्यासतैं

1 "लहइ इंदत्तं" ऐसा भी पाठ है।

विकल्प विशेष होय। बहुत प्रयास किए जाननेमैं आवै। तातैं इनका अभ्यास न करना। तिनकौं कहिए है—

सामान्य जाननेतैं विशेष जानना बलवान् है। ज्यौं ज्यौं विशेष जानै त्यौं त्यौं वस्तुस्वभाव निर्म्मल भासै, श्रद्धान दृढ़ होय, रागादि घटै, तातैं तिस अभ्यासविषै प्रवर्त्तना योग्य है। ऐसैं च्यारयौं अनुयोगनिविषै दोषकल्पना अभ्यासतैं पराङ्मुख होना योग्य नाहीं।

बहुरि व्याकरण न्यायादिक शास्त्र हैं, तिनका भी थोरा बहुत अभ्यास करना। जातैं इनका ज्ञानविना बड़े शास्त्रनिका अर्थ भासै नाहीं। बहुरि वस्तुका भी स्वरूप इनकी पद्धति जानें जैसा भासै, तैसा भाषादिककरि भासै नाहीं। तातैं परंपरा कार्यकारी जानि इनका भी अभ्यास करना। परंतु इनहीविषैं फसि न जाना। किछू इनका अभ्यासकरि प्रयोजनभूत शास्त्रनिका अभ्यासविषै प्रवर्त्तना। बहुरि वैद्यकादि शास्त्र हैं, तिनतैं मोक्षमार्गविषै किछू प्रयोजन ही नाहीं। तातैं कोई व्यवहार धर्मका अभिप्रायतैं विनाखेद इनका अभ्यास होय जाय, तौ उपकारादि करना, पापरूप न प्रवर्त्तना। अर इनका अभ्यास न होय तौ मति होहु, बिगार किछू नाहीं। ऐसैं जिनमतके शास्त्र निर्दोष जानि तिनका उपदेश मानना।

अब शास्त्रनिविषै अपेक्षादिककौं न जानें परस्पर विरोध भासै, ताका निराकरण कीजिए है। प्रथमादि अनुयोगनिकी आम्नायकै अनुसारि जहां जैसैं कथन किया होय, तहां तैसैं जानि

लेना अर अनुयोगका कथनतैं अन्यथा जानि संदेह न करना। जैसैं कहीं तौ निर्मल सम्यग्दृष्टीहीकै शंका कांक्षा विचिकित्साका अभाव कह्या, कहीं भयका आठवां गुणस्थान पर्यंत, लोभका दशमा पर्यंत, जुगुप्साका आठवां पर्यंत उदय कह्या। तहां विरुद्ध न जानाना। श्रद्धानपूर्वक तीव्र शंकादिकका सम्यग्दृष्टीकैं अभाव भया, अथवा मुख्यपनैं सम्यग्दृष्टी शंकादि न करै, तिस अपेक्षा चरणानुयोगविषै शंकादिकका सम्यग्दृष्टीकै अभाव कह्या। बहुरि सूक्ष्मशक्ति अपेक्षा भयादिकका उदय अष्टमादि गुणस्थान पर्यंत पाईए है। तातैं करणानुयोगविषै तहां पर्यंत तिनका सद्भाव कह्या। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। पूर्वं अनुयोगनिका उपदेशविधानविषै कैई उदाहरण कहे हैं, ते जानने अथवा अपनी बुद्धितैं समझि लैने। बहुरि एक ही अनुयोगविषै विविक्षाके वशतै अनेकरूप कथन करिए है। जैसैं करणानुयोगविषै प्रमादनिका सप्तम गुणस्थानविषै अभाव कह्या, तहां कषाय प्रमादके भेद कहे। बहुरि तहां ही कपायादिकका सद्भाव दशमादि गुणस्थान पर्यंत कह्या, तहां विरुद्ध न जानना। जातै यहां प्रमादनिविपै तौ जे शुभ अशुभ भावनिका अभिप्राय लिएं कषायादिक होंय, तिनका ग्रहण है। सो सप्तम गुणस्थानविपै ऐसा अभिप्राय दूरि भया, तातैं तिनका तहां अभाव कह्या। बहुरि सूक्ष्मादिभावनिकी अपेक्षा तिनहीका दशमादि गुणस्थान पर्यंत सद्भाव कह्या है। बहुरि चरणानुयोगविषै चोरी परस्त्री आदि सप्तव्यसनका त्याग प्रथम प्रतिमा-

विषै कह्या, बहुरि तहां ही तिनका त्याग द्वितीय प्रतिमाविषै कह्या। तहां विरुद्ध न जानना। जातैं सप्तव्यसनविषै तौ चोरी आदि कार्य ऐसैं ग्रहे हैं जिनकरि दंडादिक पावै, लोकविषै अतिनिंदा होय। बहुरि व्रतनिविषै चोरी आदि त्याग करनेयोग्य ऐसैं कहे हैं, जे गृहस्थधर्मविषै विरुद्ध होंय, वा किंचित् लोकनिंद्य होंय। ऐसा अर्थ जानना। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि नाना भावनिकी सापेक्षतैं एक ही भावकौं अन्य अन्य प्रकार निरूपण कीजिए है। जैसैं कहीं तौ महाव्रतादिक चारित्रके भेद कहे, कहीं महाव्रतादि होतै भी द्रव्यलिंगीकौं असंयमी कह्या, तहां विरुद्ध न जानना। जातैं सम्यग्ज्ञान–सहित महाव्रतादिक तौ चारित्र है, अर अज्ञानपूर्वक व्रतादिक भएं भी असंयमी ही है। बहुरि जैसैं पंच मिथ्यात्वनिविषै भी विनय कह्या, अर बारह प्रकार तपनिविषै भी विनय कह्या, तहां विरुद्ध न जानना। जातैं विनय करने योग्य नाहीं, तिनका भी विनयकरि धर्म मानना, सो तौ विनय मिथ्यात्व है अर धर्म्मपद्धतिकरि जे विनय करने योग्य है, तिनका यथा-योग्य विनय करना, सो विनय तप है। बहुरि जैसैं कहीं तौ अभिमानकी निंदा करी, कहीं प्रशंसा करी, तहां विरुद्ध न जानना। जातैं मानकषायतैं आपकौं ऊंचा मनावनेकै अर्थ विनयादि न करै, सो अभिमान तौ निंद्य ही है, अर निर्लोभपनातैं दीनता आदि न करै, सो अभिमान प्रशंसा योग्य है। बहुरि जैसैं कहीं चतुराईकी निंदा करी, कहीं प्रशंसा करी, तहां विरुद्ध न जानना।

जातैं मायाकषायतैं काहूका ठिगनेकै अर्थ चतुराई कीजिए, सो तौ निंद्य ही है अर विवेक लिएं यथासंभव कार्य करनेविषै जो चतुराई होय, सो श्लाघ्य ही है। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि एक ही भावकी कहीं तौ उसतै उत्कृष्टभावकी अपेक्षाकरि निंदा करी होय, अर कहीं तिसतैं हीनभावकी अपेक्षाकरि प्रशंसा करी होय, तहां विरुद्ध न जानना। जैसैं किसी शुभ-क्रियाकी जहां निंदा करी होय, तहां तौ तिसतै ऊंची शुभ-क्रिया वा शुद्धभाव तिनकी अपेक्षा जाननी, अर जहां प्रशंसा करी होय, तहां तिसतै नीची क्रिया वा अशुभक्रिया तिनकी अपेक्षा जाननी। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि ऐसै ही काहू जीवकी ऊंचे जीवकी अपेक्षा निंदा करी होय, तहां सर्वथा निंदा न जाननी। काहूकी नीचे जीवकी अपेक्षा प्रशंसा करी होय, तौ सर्वथा प्रशंसा न जाननी। यथासंभव वाका गुण दोष जानि लैना। ऐसै ही अन्य व्याख्यान जिस अपेक्षा लिएं किया होय, तिस अपेक्षा वाका अर्थ समझना। बहुरि एक ही शब्दका कहीं तौ कोई अर्थ हो है, कहीं कोई अर्थ हो है, तहां प्रकरण पहचानि वाका संभवता अर्थ जानना। जैसै मोक्षमार्गविषै सम्यक्दर्शन कह्या। तहां दर्शन शब्दका अर्थ श्रद्धान है, अर उपयोगवर्णनविषै दर्शन शब्दका अर्थ सामान्य ग्रहण मात्र है, अर इंद्रियवर्णनविषै दर्शन शब्दका अर्थ नेत्रकरि देखने मात्र है। बहुरि जैसै सूक्ष्मबादरका अर्थ वस्तुनिका प्रमाणादिक कथनविषै छोटा प्रमाण लिए होय, ताका नाम सूक्ष्म अर बड़ा

प्रमाण लिएं होय, ताका नाम बादर, ऐसा अर्थ होय। अर पुद्गलस्कंधादिका कथनविषै इंद्रियगम्य न होय, सो सूक्ष्म, इंद्रिय गम्य होय सो बादर, ऐसा अर्थ है। जीवादिकका कथनविषै ऋद्धि आदिका निमित्तविना स्वयमेव रुकै नाहीं, ताका नाम सूक्ष्म, रुकै ताका नाम बादर ऐसा अर्थ है। वस्त्रादिकका कथन विषै महीनताका नाम सूक्ष्म, मोटाका नाम बादर ऐसा अर्थ है। करणानुयोगके कथनविषै पुद्गलस्कंधके निमित्ततैं रुकै नाहीं, ताका नाम सूक्ष्म है अर रुक जाय ताका नाम बादर है। बहुरि प्रत्यक्ष शब्दका अर्थ लोकव्यवहारविषै तौ इंद्रियनिकरि जाननेका नाम प्रत्यक्ष है, प्रमाणभेदनिविषै स्पष्ट व्यवहार प्रतिभासका नाम प्रत्यक्ष है, आत्मानुभवनादिविषैं आपविषै अवस्था होय, ताका नाम प्रत्यक्ष है। बहुरि जैसैं मिथ्यादृष्टीकै अज्ञान कह्या, तहां सर्वथा ज्ञानका अभाव न जानना, सम्यग्ज्ञानके अभावतैं अज्ञान कह्या है। बहुरि जैसैं उदीरणा शब्दका अर्थ जहां देवादिककै उदीरणा न कही, तहां तौ अन्य निमित्ततैं मरण होय, ताका नाम उदीरणा है। अर दश करणनिका कथनविषै उदीरणा करण देवायुकै भी कह्या। तहां तौ ऊपरिके निषेकनिका द्रव्य उदयावलीविषै दीजिए, ताका नाम उदीरणा है। ऐसैं ही अन्यत्र यथासंभव अर्थ जानना। बहुरि एक ही शब्दका पूर्व शब्द जोड़ैं अनेक प्रकार अर्थ हो है। वा उस ही शब्दके अनेक अर्थ हैं। तहां जैसा संभवै, तैसा अर्थ जानना। जैसैं 'जीतै' ताका नाम 'जिन' है। परंतु धर्मपद्धतिविषै कर्मशत्रुकौं जीतै, ताका नाम

'जिन' जानना। यहां कर्मशत्रु शब्दकौं पूर्व जोड़ें जो अर्थ होय, सो ग्रहण किया अन्य न किया। बहुरि जैसैं 'प्राण धारै' ताका नाम 'जीव' है। जहां जीवन मरणका व्यवहार अपेक्षा कथन होय; तहां तौ इंद्रियादि प्राण धारै, सो जीव है। बहुरि द्रव्यादिकका निश्चय अपेक्षा निरूपण होय, तहां चैतन्यप्राणकौं धारै सो जीव है। बहुरि जैसै समय शब्दके अनेक अर्थ है। तहां आत्माका नाम समय है, सर्व पदार्थनिका नाम समय है, कालका नाम समय है, समयमात्र कालका नाम समय है, शास्त्रका नाम समय है, मतका नाम समय है। ऐसै अनेक अर्थनिविषै जैसा जहां संभवै, तैसा तहां अर्थ जान लेना। बहुरि कहीं तौ अर्थ अपेक्षा नामादिक कहिए है, कहीं रूढ़िअपेक्षा नामादिक कहिए है। जहां रूढ़िअपेक्षा नाम लिख्या होय, तहां वाका शब्दार्थ न ग्रहण करना। वाका रूढ़िरूप अर्थ होय, सो ही ग्रहण करना। जैसै सम्यक्तादिककौ धर्म कह्या। तहां तौ यह जीवकौ उत्तम-स्थानविषै धारै हैं, तातै याका नाम सार्थक है। बहुरि धर्मद्रव्यका नाम धर्म कह्या, तहा रूढ़ि नाम है। याका अक्षरार्थ न ग्रहणा। इस नाम धारक एक वस्तु है, ऐसा अर्थ ग्रहण करना। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि कहीं जो शब्दका अर्थ होता हो, सो तौ न ग्रहण करना अर जहां जो प्रयोजनभूत अर्थ होय, सो ग्रहण करना। जैसैं कहीं किसीका अभाव कह्या होय, अर तहां किंचित् सद्भाव पाईए, तौ तहां सर्वथा अभाव न ग्रहण करना। किंचित् सद्भावकौ न गिणि अभाव कह्या है, ऐसा अर्थ

जानना। सम्यग्दष्टीकैं रागादिकका अभाव कह्या, तहां ऐसैं अर्थ जानना। बहुरि नोकषाय अर्थ तौ यह,–'कषायका निषेध' सो तौ अर्थ न ग्रहण करना, अर यहां क्रोधादि सारिखे ए कषाय नाहीं, किंचित् कषाय हैं, तातैं नोकषाय हैं। ऐसा अर्थ ग्रहण करना। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि जैसैं कहीं कोई युक्तिकरि कथन किया होय, तहां प्रयोजन ग्रहण करना। **समयसारका कलशा**विषै यह कह्या–"धोबीका दृष्टांतवत् परभावका त्यागकी दृष्टि यावत् प्रवृत्तिकौं न प्राप्त भई, तावत् यह अनुभूति प्रगट भई"। सो यहां यह प्रयोजन है–परभावका त्याग होतैं ही अनुभूति प्रगट हो है। लोकविषै काहूकौं आवतैं ही कोई कार्य भया होय, तहां ऐसै कहिए,—"जो यह आया ही नाहीं, अर यह कार्य होय गया।" ऐसा ही यहां प्रयोजन ग्रहण करना। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि जैसैं प्रमाणादिक किछू कह्या होय, सोई तहां न मानि लेना, तहां प्रयोजन होय सो जानना। **ज्ञानार्णव**विषै ऐसा कह्या है—"अवार दोय तीन सत्पुरुष हैं[1]।" सो नियमतैं इतने ही नाहीं। यहां 'थोरे हैं' ऐसा प्रयोजन जानना। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। इस ही रीति लिए और

---

१ दुःप्रज्ञाबललुप्तवस्तुनिचया विज्ञानशून्याशयाः
विद्यन्ते प्रतिमन्दिरं निजनिजस्वार्थोद्यता देहिनः।
आनन्दामृतसिन्धुशीकरचयैर्निर्वाप्य जन्मज्वरं
ये मुक्तेर्वदनेन्दुवीक्षणपरास्ते सन्ति द्वित्रा यदि ॥ २४ ॥
[ज्ञानार्णव; पृष्ठ ८८.]

भी अनेक प्रकार शब्दनिके अर्थ हो है, तिनकौं यथासंभव जानने। विपरीत अर्थ न जानना। बहुरि जो उपदेश होय, ताकौ यथार्थ पहचानि जो अपने योग्य उपदेश होय, ताका अंगीकार करना। जैसै वैद्यकशास्त्रनिविषै अनेक औषधि कही हैं, तिनकौ जानै, अर ग्रहण तिसहीका करै, जाकरि अपना रोग दूरि होय। आपकै शीतका रोग होय, तौ उष्ण औषधिका ही ग्रहण करै। शीतल औषधिका ग्रहण न करै। यह औरनिकौं कार्यकारी है, ऐसा जानै। तैसै जैनशास्त्रनिविषै अनेक उपदेश हैं तिनकौं जानै, अर ग्रहण तिसहीका करै, जाकरि अपना विकार दूरि होय। आपकै जो विकार होय, ताका निषेध करनहारा उपदेशकौं ग्रहै, तिसका पोषक उपदेशकौ न ग्रहै। यह उपदेश औरनिकौ कार्यकारी है, ऐसा जानै। यहां उदाहरण कहिए है—जैसैं शास्त्रविषै कहीं निश्चयपोषक उपदेश है। कहीं व्यवहारपोषक उपदेश है। तहां आपकै व्यवहारका आधिक्य होय, तौ निश्चयपोषक उपदेशका ग्रहण करि यथावत् प्रवर्त्तै; अर आपकै निश्चयका आधिक्य होय, तौ व्यवहारपोषक उपदेशका ग्रहणकरि यथावत् प्रवर्त्तै। बहुरि पूर्वै तौ व्यवहारश्रद्धानतैं आत्मज्ञानतैं भ्रष्ट होय रह्या था, पीछैं व्यवहारउपदेशहीकी मुख्यताकरि आत्मज्ञानका उद्यम न करैं, अथवा पूर्वै तौ निश्चय-श्रद्धानतैं वैराग्यतैं भ्रष्ट होय स्वच्छन्द होय रह्या था, पीछैं निश्चय उपदेशहीकी मुख्यताकरि विषयकषाय पोषै। ऐसैं विपरीत उपदेश ग्रहैं बुरा ही होय। बहुरि जैसै **आत्मानुशासनविषै**

ऐसा कह्या—जो तू गुणवान् होय, दोष क्यों लगावै है। दोषवान् होना था, तौ दोषमय ही क्यौं न भया[1]।" सो जो जीव आप तौ गुणवान् होय अर कोई दोष लगाता होय, तहां दोष दूर करनेके अर्थ तिस उपदेशकौं अंगीकार करना। बहुरि आप तौ दोषवान् होय, अर इस उपदेशका ग्रहणकरि गुणवान् पुरुषनिकौं नीचा दिखावै, तौ बुरा ही होय। सर्व दोषमय होनेतैं तौ किंचित् दोषरूप होना बुरा नाहीं है। तातैं तुझतैं तौ भला है। बहुरि यहां यह कह्या—"तू दोषमय ही क्यौ न भया" सो यह तर्क करी है। किछू सर्व दोषमय होनेकै अर्थ यह उपदेश नाहीं है। बहुरि जो गुणवानकै किंचित् दोप भएं भी निंदा है, तौ सर्वदोषरहित तौ सिद्ध हैं, नीचली दशाविषै तौ कोई गुण कोई दोष ही होय। यहां कोऊ कहै-ऐसैं है, तौ "मुनिलिंग धारि किंचित् परिग्रह राखै, सो भी निगोद जाये[2]।" ऐसा षट्पाहुड़विषै कैसें कह्या है? ताका उत्तर-

ऊंची पदवी धारि तिस पदविषै संभवता नीच कार्य करै तौ

1—हे चन्द्रमः किमिति लाञ्छनवानभूस्त्वं
तद्वान् भवेः किमिति तन्मय एव नाभूः।
किं ज्योत्स्नयामलमलं तव घोषयन्त्या
स्वर्भानुवन्ननु तथा सति नाऽसि लक्ष्यः॥ १४१॥

२—जह जायरूवसरिसो तिलतुसमत्तं ण गहदि अत्थेसु।
जइ लेइ अप्पबहुअं तत्तो पुण जाइ णिग्गोयं॥ १८॥
[सूत्रपाहुड़]

प्रतिज्ञा भंगादि होनेतैं महादोष लागै है। अर नीची पदवीविषै तहां संभवता गुण दोष होय, तौ होय, तहां वाका दोष ग्रहण करना योग्य नाहीं। ऐसा जानना। बहुरि **उपदेशसिद्धांतरत्नमालाविषै** कह्या—"आज्ञा अनुसार उपदेश देनेवालाका क्रोध भी क्षमाका भंडार है[1]।" सो यह उपदेश वक्ताका ग्रहवा योग्य नाहीं। इस उपदेशतैं वक्ता क्रोध किया करै, तौ बुरा ही होय। यह उपदेश श्रोतानिका ग्रहवा योग्य है। कदाचित् वक्ता क्रोधकरिकै भी सांचा उपदेश दे, तौ श्रोता गुण ही मानै। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि जैसै काहूकै अतिशीतांग रोग होय, ताकै अर्थ अति उष्ण रसादिक औषधि कही है। तिस औषधिकौं जाकैं दाह होय, वा तुच्छ शीत होय, सो ग्रहण करै, तौ दुख ही पावै। तैसै काहूकै कोई कार्यकी अतिमुख्यता होय, ताकै अर्थ तिसके निषेधका अति खींचकरि उपदेश दिया होय, ताकौं जाकै तिस कार्यकी मुख्यता न होय, वा थोरी मुख्यता होय, सो ग्रहण करै, तौ बुरा ही होय। यहां उदाहरण—जैसैं काहूकौं शास्त्राभ्यासकी अतिमुख्यता अर आत्मानुभवका उद्यम ही नाहीं, ताकै अर्थ बहुत शास्त्राभ्यासका निषेध किया। बहुरि जाकै शास्त्राभ्यास नाहीं, वा थोरा शास्त्राभ्यास है, सो जीव तिस उपदेशतै शास्त्राभ्यास छोड़ै अर आत्मानुभवविषै उपयोग रहै नाहीं, तब वाका तौ बुरा ही होय। बहुरि जैसै काहूकै यज्ञ

---

१ रोसोवि खमाकोसो सुत्तं भासंत जस्सणधणस्य (?)
उस्सूत्तेण खमाविय दोस महामोहआवासो ॥ १४ ॥

स्नानादिकरि हिंसातैं धर्म माननेकी मुख्यता है, ताके अर्थ "जो पृथ्वी उलटै, तौ भी हिंसा किएं पुण्यफल न होय," ऐसा उपदेश दिया। बहुरि जो जीव पूजनादि कार्यनिकरि किंचित् हिंसा लगावै, अर बहुत गुण उपजावै, सो जीव इस उपदेशतै पूजनादि कार्य छोड़ै, अर हिंसारहित सामायिकादि धर्मविषै उपयोग लागै नाहीं, तब वाका तौ बुरा ही होय। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि जैसैं कोई औषधि गुणकारी है। परंतु आपकै यावत् तिस औषधितै हित होय तावत् तिसका ग्रहण करै। जो शीत मिटैं भी उष्ण औषधिका सेवन किया ही करै, तौ उलटा रोग होय। तैसैं कोई कार्य है, परंतु आपकै यावत् तिस धर्मकार्यतैं हित होय, तावत् तिसका ग्रहण करै। जो ऊंची दशा होतै नीची दशा-संबंधी धर्मका सेवनविषै लागै, तौ उलटा बिगार ही होय। यहां उदाहरण—जैसैं पाप मेटनेकै अर्थ प्रतिक्रमणादि धर्मकार्य कहे, बहुरि आत्मानुभव होतैं प्रतिक्रमणादिकका विकल्प करै, तौ उलटा विकार वधै, याहीतैं **समयसार**विषै प्रतिक्रमणादिकौं विष कह्या है। बहुरि जैसै अव्रतीके करने योग्य प्रभावनादि धर्मकार्य कहे, तिनकौं व्रती होयकरि करै, तौ पाप ही बांधै। व्यापारादि आरंभ छोड़ि चैत्यालयादि कार्यनिका अधिकारी होय, सो कैसैं बनै। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि जैसैं पाकादिक औषधि पुष्टकारी हैं, परन्तु ज्वरवान् ग्रहण करै, तौ महादोष उपजै। तैसैं ऊंचा धर्म बहुत भला है, परंतु अपने विकारभाव दूरि न होंय, अर ऊंचा धर्म ग्रहै, तौ महादोष उपजै। यहां

उदाहरण–जैसैं अपना अशुभविकार न छूटया, अर निर्विकल्प दशाकौ अंगीकार करै तौ उलटा विकार वधै। जैसैं व्यापारादि करनेका विकार तौ न छूटया अर ध्यानका भेषरूप धर्म अंगीकार करै, तौ महादोष उपजै। बहुरि जैसैं भोजनादि विषयनिविषै आसक्त होय अर आरंभत्यागादि धर्मकौं अंगीकार करै, तौ बुरा ही होय। ऐसै ही अन्यत्र जानना। याही प्रकार और भी सांचा विचारतै उपदेशकौ यथार्थ जानि अंगीकार करना। बहुरि विस्तार कहां ताईं करिए। अपनै सम्यग्ज्ञान भए आपहीकौं यथार्थ भासै। उपदेश तौ वचनात्मक है। बहुरि वचनकरि अनेक अर्थ युगपत् कहे जाते नाहीं। तातैं उपदेश तौ एक ही अर्थकी मुख्यता लिएं हो है। बहुरि जिस अर्थका जहां वर्णन है, तहां तिसहीकी मुख्यता है। दूसरे अर्थकी तहां ही मुख्यता करै तौ दोऊ उदेश दृढ़ न होंय। तातैं उपदेशविषै एक अर्थकौ दृढ़ करै। परंतु सर्व जिनमतका चिन्ह स्याद्वाद है। सो 'स्यात्' पदका अर्थ 'कथंचित्' है। तातैं उपदेश होय ताकौ सर्वथा न जानि लेना। उपदेशका अर्थकौं जानि तहां इतना विचार करना, यह उपदेश किस प्रकार है, किस प्रयोजन लिएं है, किस जीवकौं कार्यकरी है। इत्यादि विचारकरि तिस अर्थका ग्रहण करै, पीछै अपनी दशाविषै जो उपदेश जैसै आपकौं कार्यकारी होय, तिसकौं तैसै आप अंगीकार करै। अर जो उपदेश जानने योग्य ही होय, तौ ताकौं यथार्थ जानि ले। ऐसै उपदेशका फलकौं पावै। यहां कोई कहै—जो तुच्छबुद्धि इतना

विचार न करि सकै, सो कहा करै। ताका उत्तर—

जैसैं व्यापारी अपनी बुद्धिकै अनुसारि जिसमैं समझै, सो थोरा वा बहुत व्यापार करै। परन्तु नफा टोटाका ज्ञान तौ अवश्य चाहिए। तैसैं विवेकी अपनी बुद्धिकै अनुसारि जिसमैं समझै, सो थोरा वा बहुत उपदेशकौं ग्रहै, परन्तु मुझकौं यह कार्यकारी है, यह कार्यकारी नाहीं, इतना तौ ज्ञान अवश्य चाहिए। सो कार्य तौ इतना है—यथार्थ श्रद्धानज्ञानकरि रागादि घटावना। सो यह कार्य अपनै सधै, सोई उपदेशका प्रयोजन ग्रहै। विशेष ज्ञान न होय, तौ प्रयोजनकौं तौ भूलै नाहीं। यह तौ सावधानी अवश्य चाहिए। जिसमैं अपना हितकी हानि होय, तैसैं उपदेशका अर्थ समझना योग्य नाहीं। या प्रकार स्याद्वाददृष्टि लिएं जैनशास्त्रनिका अभ्यास किएं अपना कल्याण हो है।

यहां कोई प्रश्न करै—जहां अन्य अन्य प्रकार न संभवै, तहां तौ स्याद्वाद संभवै। बहुरि एक ही प्रकारकरि शास्त्रनिविषै विरुद्ध भासै, तहा कहां करिए। जैसैं प्रथमानुयोगविषै एक तीर्थंकरकी साथि हजारौं मुक्ति गए बताए, करणानुयोग विषै छह महीना आठसमयविषै छसै आठ जीव मुक्ति जांय। ऐसा नियम किया। प्रथमानुयोगविषै ऐसा कथन किया—देव देवांगना उपजि पीछैं मरि साथि ही मनुष्यादि पर्यायविषै उपजे। करणानुयोगविषै देवका सागरों प्रमाण देवांगनाका पल्यों प्रमाण आयु कह्या। इत्यादि विधि कैसैं मिलै। ताका उत्तर—

करणानुयोगविषै कथन है, सो तौ तारतम्य लिएं है। अन्य

अनुयोगनिविषै कथन प्रयोजन अनुसारि है। तातैं करणानुयोगका कथन तौ जैसैं किया है, तैसैं ही है। औरनिका कथनकी जैसैं विधि मिलै, तैसैं मिलाय लैनी। हजारौ मुनि तीर्थंकरकी साथि मुक्ति गए बताए, तहां यह जानना—एक ही काल इतने मुक्ति गए नाहीं। जहां तीर्थंकर गमनादि क्रिया मेटि स्थिर भए, तहां तिनकी साथ इतने मुनि तिष्ठे, बहुरि मुक्ति आगैं पीछैं गए। ऐसैं प्रथमानुयोगका करणानुयोगका विरोध दूरि हो है। बहुरि देव देवांगना साथि उपजे, पीछैं देवांगना चयकरि बीचमैं अन्य पर्याय धरै, तिनका प्रयोजन न जानि कथन किया। पीछै वह साथि मनुष्य पर्यायविषै उपजे, ऐसैं विधि मिलाएं विरोध दूरि हो है। ऐसैं ही अन्यत्र विधि मिलाय लैनी। बहुरि प्रश्न—जो ऐसैं कथननिविषै भी कोइ प्रकार विधि मिलै। परंतु कहीं नेमिनाथ स्वामीका सौरीपुरविषै कहीं द्वारावतीविषै जन्म कह्या, रामचंद्रादिककी कथा अन्य अन्य प्रकार लिखी। एकेन्द्रियादिककौं कही सासादन गुणस्थान लिख्या, कहीं न लिख्या. इत्यादि इन कथननिकी विधि कैसैं मिलै ताका उत्तर—

ऐसैं विरोध लिएं कथन कालदोषतैं भए हैं। इस कालविषैं प्रत्यक्ष ज्ञानी वा बहुश्रुतनिका तौ अभाव भया, अर स्तोकबुद्धि ग्रंथ करनेके अधिकारी भए। तिनकै भ्रमतैं कोई अर्थ अन्यथा भासै, ताकौं तैसैं लिखैं, अथवा इस कालविषै केई जैनमतविषै भी कषायी भए हैं, सो तिननैं कोई कारण पाय अन्यथा कथन लिख्या है ऐसैं अन्यथा कथन भया, तातैं जैनशास्त्रनिविषै

विरोध भासने लागा। सो जहां विरोध भासै, तहां इतना करना कि, इस कथन करनेवाले बहुत प्रमाणीक हैं कि, इस कथन करनेवाले बहुत प्रमाणीक हैं। ऐसा विचारकरि बड़े आचार्यादिकनिका कह्या कथन प्रमाण करना। बहुरि जिनमतके बहुत शास्त्र हैं, तिनहीकी आम्नाय मिलावनी। जो परंपराआम्नायतैं मिलै, सो कथन प्रमाण करना। ऐसैं विचार किएं भी सत्य असत्यका निर्णय न होय सकै तौ जैसैं केवलीकौं भास्या है, तैसै प्रमाण है, ऐसैं मान लेना। जातैं देवादिकका वा तत्वनिका निर्द्धार भए विना तौ मोक्षमार्ग होय नाहीं। तिनिका तौ निर्द्धार भी होय सकै है, सो कोई इनिका स्वरूप विरुद्ध कहै, तौ आपहीकौं भासि जाय। बहुरि अन्य कथनका निर्द्धार न होय, वा संशयादि रहै, वा अन्यथा जानपना होय जाय, अर केवलीका कह्या प्रमाण है, ऐसा श्रद्धान रहै, तौ मोक्षमार्गविषै विघ्न नाहीं, ऐसा जानना। इहां कोई तर्क करै–जैसैं नाना प्रकार कथन जिनमत–विषै कह्या, तैसैं अन्यमतविषै भी कथन पाइए है, सो तुम्हारे मतके कथनका तो तुम तिस जिस प्रकार स्थापन किया, अन्य मतविषै ऐसे कथनकौं तुम दोष लगावो हौ, सो यह तुम्हारै रागद्वेष है। ताका समाधान--

कथन तौ नाना प्रकार होय और प्रयोजन एकहीकौं पोषै तौ कोई दोष है नाहीं। अर कहीं कोई प्रयोजन पोषै, कहीं कोई प्रयोजन पोषै, तौ दोष ही है। सो जिनमतविषै तो एक प्रयोजन रागादि मेटनेका है, सो कहीं सर्व रागादि छुड़ाय थोरा रागादि

करावनेका प्रयोजन पोष्या है, कहीं सर्व रागादि छुड़ावनेका प्रयोजन पोष्या है। परन्तु रागादि बधावनेका प्रयोजन कहीं भी नाहीं। तातै जिनमतका कथन सर्व निर्दोष हैं। अर अन्यमतविषै कहीं रागादि मिटावनेके प्रयोजन लिएं कथन करैं, कहीं रागादि बधावनेका प्रयोजन लिएं कथन करैं। ऐसैं ही और भी प्रयोजनकी विरुद्धता लिए कथन करै हैं। तातै अन्यमतका कथन सदोष है। लोकविषै भी एक प्रयोजनको पोषते नाना वचन कहै, ताकौ प्रमाणीक कहिए है। अर प्रयोजन और और पोषती वात करै, ताकौं वावला कहिए है। बहुरि जिनमतविषै नाना प्रकार कथन है, सो जुदी जुदी अपेक्षा लिए है, तहां दोष नाहीं। अन्यमतविषै एक ही अपेक्षा लिए अन्य कथन करै, तहां दोष है,। जैसैं जिनदेवके वीतरागभाव हैं, अर समवसरणादि विभूति पाइए है, तहां विरोध नाहीं। समवसरणादि विभूतिकी रचना इंद्रादिक करै है, इनकै तिसविषै रागादिक नाहीं, तातैं दोऊ वातैं संभवैं है। अर अन्यमतविषै ईश्वरकौं साक्षीभूत वीतराग भी कहैं, अर तिसहीकर किए काम क्रोधादि भाव निरूपण करै, सो एक ही आत्माकै वीतरागपनौ अर काम क्रोधादि भाव कैसै संभवै। ऐसैं ही अन्य जानना। बहुरि काऊ दोषतैं जिनमतविषै एक ही प्रकारकरि कोई कथन विरुद्ध लिख्या है, सो यह तुच्छ बुद्धीनिकी भूलि है, किछू मतविषै दोष नाहीं। सो भी जिनमतका अतिशय इतना है कि, प्रमाणविरुद्ध कोई कथन कर सकै नाहीं, कहीं सौरीपुरविषै कहीं द्वारावतीविषै

नेमिनाथ स्वामीका जनम लिख्या है, सो कोठै ही होइ, परंतु नगर विषै जनम होना प्रमाणविरूद्ध नाहीं । अब भी होता दीसै है ।

बहुरि अन्यमतविषै सर्वज्ञादि यथार्थ ज्ञानीके किए ग्रंथ बतावैं, बहुरि तिनिविषै परस्पर विरुद्ध भासै । कहीं तौ बाल-ब्रह्मचारीका प्रशंसा करैं, कहीं कहैं **"पुत्राविना गति ही होय नाहीं"** सो दोऊ सांचा कैसैं होय । सो ऐसे कथन तहां बहुत पाइए है । बहुरि प्रमाणविरुद्ध कथन तिनविषै पाइए है । जैसैं वीर्य मुखविषै पड़नेतैं मछलीकै पुत्र हूवो, सो ऐसैं अवार काहूकै होना दीसै नाहीं । अनुमानतैं मिलै नाहीं । ऐसे भी कथन बहुत पाइए है । यहां सर्वज्ञादिककी भूलि मानिए, सो तौ कैसैं भूलैं । अर विरुद्ध कथन माननेमैं आवै नाहीं । तातैं तिनिके मतविषै दोष ठहराइए हैं । ऐसा जानि एक जिनमतका ही उपदेश ग्रहण करने योग्य है । तहां प्रथमानुयोगादिकका अभ्यास करना । तहां पहिलै याका अभ्यास करना, पीछैं याका करना, ऐसा नियम नाहीं । अपने परिणानिकी अवस्था देखि जिसके अभ्यासतैं अपने धर्मविषै प्रवृत्ति होय, तिसहीका अभ्यास करना । अथवा कदाचित् किसी शास्त्रका अभ्यास करै, कदाचित किसी शास्त्रका अभ्यास करै । बहुरि जैसैं रोजनामाविषै तौ अनेक रकम जहां तहां लिखी हैं, तिनिकौं खातेमैं ठीक खतावै, तौ लैना दैनाका निश्चय होय । तैसैं शास्त्रनिविषै तौ अनेक प्रकारका उपदेश जहां तहां दिया है, ताकौं सम्यग्ज्ञानविषै यथार्थ प्रयो-

जन लिंएं पहिचानै, तौ हित अहितका निश्चय होय। तातैं स्यात्पदकी सापेक्ष लिंएं सम्यग्ज्ञानकरि जे जीव जिनवचनविषै रमै हैं, ते जीव शीघ्र ही शुद्ध आत्मस्वरूपकौ प्राप्त हो हैं। मोक्षमार्गविषै पहिला उपाय आगमज्ञान कह्या है। आगमज्ञान विना और धर्मका साधन होय सकै नाहीं। तातैं तुमकौं भी यथार्थबुद्धिकरि आगम अभ्यास करना। तुम्हारा कल्याण होगा।

इति श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक नाम शास्त्रमध्ये उपदेशस्वरूप-प्रतिपादक नामा आठवां अधिकार पूरण भया।

अथ मोक्षमार्गका स्वरूप कहिए है—

दोहा।

शिवउपाय करतें प्रथम. कारन मंगलरूप।
विघनविनाशक सुखकरन, नमौं शुद्ध शिवभूप॥ १॥

पहिलैं मोक्षमार्गके प्रतिपक्षी मिथ्यादर्शनादिक तिनिका स्वरूप दिखाया। तिनिकौं तो दुःखरूप दुःखका कारन जानि हेय मानि तिनिका त्याग करना। बहुरि बीचमैं उपदेशका स्वरूप दिखाया। ताकौं जानि उपदेशकौं यथार्थ समझना। अब मोक्षके मारग सम्यग्दर्शनादिक तिनिका स्वरूप दिखाइए है। इनकौं सुखरूप सुखका कारण जानि उपादेय मानि अंगीकार करना। जातैं आत्माका हित मोक्ष ही है। तिसहीका उपाय आत्माकौं कर्त्तव्य है। तातैं इसहीका उपदेश इहां दीजिए है। तहां आत्माका हित मोक्ष ही है और नाहीं। ऐसा निश्चय कैसैं होय, सो कहिए है—

आत्माके नाना प्रकार गुणपर्यायरूप अवस्था पाइए है। तिन-विषै और तौ कोई अवस्था होहू, किछू आत्माका बिगाड़ सुधार नाहीं। एक दुखसुखअवस्थातैं बिगाड़ सुधार है। सो इहां किछू हेतु दृष्टांत चाहिए नाहीं। प्रत्यक्ष ऐसै ही प्रतिभासै है! लोक-विषै जेते आत्मा है, तिनिकै एक उपाय यह पाइए है।—दुख न होय सुख ही होय। बहुरि अन्य उपाय जेते करैं है, तेते एक इस ही प्रयोजन लिएं करै हैं, दूसरा प्रयोजन नाहीं। जिनके निमित्ततैं दुख होता जानै, तिनकौं दूरकरनेका उपाय करै। अर जिनके निमित्ततैं सुख होता जानै, तिनिके होनेका उपाय करै है। बहुरि संकोच विस्तार आदिक अवस्था भी आत्माकै हो है, वा अनेक परद्रव्यका भी संयोग मिलै है। परंतु जिनतैं सुख दुख होता न जानै, तिनके दूर करनेका वा होनेका कुछ भी उपाय कोऊ करै नाहीं। सो इहां आत्मद्रव्यका ऐसा ही स्वभाव जानना। और तौ सर्व अवस्थाकौं सहि सकै, एक दुखकौं सह सकता नाहीं। परवश दुख होय तौ यह कहा करै, ताकौं भोगवै, परन्तु स्ववशपनै तौ किंचित् भी दुःखकौं न सहै। अर संकोच विस्ता-रादि अवस्था जैसी होय, तैसी होय, तिसकौं स्ववशपनै भी भोगवै, सो स्वभावविषै तर्क नाहीं। आत्माका ऐसा ही स्वभाव जानना। देखो, दुखी होय तब सूता चाहै, सो सोवनेमैं ज्ञानादिक मंद हो जाय है, परन्तु जड़सारिखा भी होय दुखकौं दूरि किया चाहै है, वा मूआ चाहै। सो मरनेमैं अपना नाश मानै है, परन्तु अपना अस्तित्व खोकर भी दुख दूर किया चाहै

है। तातैं एक दुखरूप पर्यायका अभाव करना ही याका कर्तव्य है। बहुरि दुख न होय, सो ही सुख है। सो यह भी प्रत्यक्ष भासै है। बाह्य कोई सामग्रीका संयोग मिलें जाके अंतरंगविषै आकुलता है, सो दुखी ही है। जाकै आकुलता नाहीं, सो सुखी है। बहुरि आकुलता हो है, सो रागादिक कषायभाव भएं हो है। जातैं रागादि भावनिकरि यह तौ द्रव्यनकौ और भांति परिणमाया चाहै, अर वै द्रव्य और भांति परिणमैं, तब याकै आकुलता होय। तहां कै तौ आपकै रागादिक दूर होंय, कै आप चाहै तैसैं ही सर्वद्रव्य परिणमैं तौ आकुलता मिटै। सो सर्व द्रव्य तौ याकै आधीन नाहीं। कदाचित् कोई द्रव्य जैसी याकी इच्छा होय, तैसैं ही परिणमैं, तौ भी याकी सर्वथा आकुलता दूरि न होय। सर्व कार्य याका चाह्या ही होय, अन्यथा न होय, तब यह निराकुल रहै। सो यह तौ होय ही सकै नाहीं। जातैं कोई द्रव्यका परिणमन कोई द्रव्यके आधीन नाहीं। तातैं अपने रागदिक भाव दूरि भएं निराकुलता होय, सो यह कार्य बनि सकै है,। जातैं रागादिक भाव आत्माका स्वभाव भाव तौ है नाहीं। उपाधिक भाव हैं, परनिमित्ततैं भएं है, सो निमित्त मोहकर्मका उदय है। ताका अभाव भएं सर्व रागादिक विलय होय जांय, तब आकुलताका नाश भएं दुख दूरि होय, सुखकी प्राप्ति होय। तातैं मोहकर्मका नाश हितकारी है। बहुरि तिस आकुलताकौं सहकारी कारण ज्ञानावरणादिकका उदय है। ज्ञानावरण दर्शनावरणके उदयतैं ज्ञानदर्शन संपूर्ण न प्रगटै है-

तातैं याकै देखने जाननेकी आकुलता होय, अथवा यथार्थ संपूर्ण वस्तुका स्वभाव न जानै, तब रागादिरूप होय प्रवर्त्तै, तहां आकुलता होय। बहुरि अंतरंगके उदयतैं इच्छानुसार दानादि कार्य न बनै, तब आकुलता होय। इनका उदय है, सो मोहका उदय होतैं आकुलताकौं सहकारी कारण है। मोहके उदयका नाश भएं इनिका बल नाहीं। अंतर्मुहूर्त्तकरि आपोआप नाशकौं प्राप्ति होय। परंतु सहकारी कारण भी दूरि होय जाय, तब प्रगटरूप निराकुल दशा भासै। तहां केवलज्ञानी भगवान् अनंत-सुखरूप दशाकौं आप्त कहिए। बहुरि अघाति कर्मनिका उदयके निमित्ततैं शरीरादिकका संयोग हो है, सो मोहकर्मका उदय होतैं शरीरादिकका संयोग आकुलताकौं बाह्य सहकारी कारण है। अंतरंग मोहका उदयतैं रागादिक होय अर बाह्य अघाति कर्मनिके उदयतैं रागादिककौं कारण शरीरादिकका संयोग होय, तब आकुलता उपजै हैं। बहुरि मोहका उदय नाश भएं भी अघाति-कर्मका उदय रहै है, सो किछू भी आकुलता उपजाय सकै नाहीं। परन्तु पूर्व आकुलताका सहकारि कारण था, तातैं अघाति कर्मनिका भी नाश आत्माकौं इष्ट ही है। सो केवलीकै इनिके होतैं किछू दुख नाहीं। तातैं इनका नाशका उद्यम भी नाहीं। परंतु मोहका नाश भएं ए कर्म आपै आप थोरे ही कालमैं सर्व नाशकौं प्राप्त होय जाय हैं। ऐसैं सर्व कर्मका नाश होना आत्माका हित है। बहुरि सर्व कर्मका नाशहीका नाम मोक्ष है। तातैं आत्माका हित एक मोक्ष ही है- और किछू नाहीं, ऐसा

निश्चय करना। इहां कोऊ कहै—संसार दशाविषै पुण्यकर्मका उदय होतैं भी जीव सुखी हो है, तातैं केवल मोक्ष ही हित है, ऐसा काहेकौं कहिए। ताका समाधान—

संसारदशाविषै सुख तौ सर्वथा है ही नाहीं, दुख ही है। परंतु काहूकै कबहू बहुत दुख हो है, काहूकै कबहू थोरा दुख हो है। सो पूर्वै बहुत दुख था, वा अन्य जीवनिकै बहुत दुख पाइए है, तिस अपेक्षातैं थोरे दुखवालेकौं सुखी कहिए। बहुरि तिस ही अभिप्रायतैं थोरे दुखवाला आपकौं सुखी मानै है परमार्थतै सुख है नाहीं। बहुरि जो थोरा भी दुख सदा काल रहै है, तौ वाकौ भी हित ठहराइए, सो भी नाहीं। थोरे काल ही पुण्यका उदय रहै, तहां थोरा दुख हो है, पीछैं बहुत दुख हो जाय। तातैं संसारअवस्था हितरूप नाहीं। जैसैं काहूकैं विषम ज्वर है, ताकै कबहू असाता बहुत हो है, कबहू थोरी हो है। थोरी असाता होय, तब वह आपकौं नीका मानै। लोक भी कहैं—नीका है। परन्तु परमार्थतै यावत् ज्वरका सद्भाव है, तावत् नीका नाहीं है। तैसैं संसारीकै मोहका उदय है। ताकै कबहू आकुलता बहुत हो है, कबहू थोरी हो है। थोरी आकुलता होय, तब वह आपकौं सुखी मानै, लोक भी कहैं—सुखी है। परमार्थतैं यावत् मोहका सद्भाव है, तावत् सुखी नाहीं। बहुरि संसार दशाविषै भी आकुलता घटें सुखी नाम पावै है। आकु-लता बधे दुखी नाम पावै है। किछू बाह्य सामग्रीतैं सुख दुख नाहीं। जैसैं काहू दरिद्रीकै किंचित् धनकी प्राप्ति भई। तहां किछू

आकुलता घटनेतैं वाकौं सुखी कहिए, अर वह भी आपकौं सुखी मानै। बहुरि काहू बहुत धनवान्कै किंचित् धनकी हानि भई तहां किछू आकुलता बधनैतैं वाकौं दुखी कहिए। अर वह भी आपकौं दुखी मानै है। ऐसैं ही सर्वत्र जानना। बहुरि आकुलता घटना बधना भी बाह्य सामग्रीकें अनुसार नाहीं। कषाय भावनिकै घटने बधनेकै अनुसार है। जैसैं काहूकै थोरा धन है अर वाकै संतोष है, तौ वाकै आकुलता थोरी है। बहुरि काहूकै बहुत धन है, अर वाकै तृष्णा है, तौ वाकै आकुलता घनी है। बहुरि काहूकौं काहूनै बहुत बुरा कह्या, अर वाकै थोरा क्रोध न भया, तौ आकुलता न हो है। अर थोरी बातैं कहे ही क्रोध होय आवै, तौ वाकै आकुलता घनी हो है। बहुरि जैसैं गऊकै बछड़ेतैं किछू भी प्रयोजन नाहीं। परंतु मोह बहुत, तातैं वाकी रक्षा करनेकी बहुत आकुलता हो है। बहुरि सुभटकै शरीरादिकतैं घने कार्य सधै हैं, परंतु रणविषै मानादिककरि शरीरादिकतैं मोह घटि जाय, तब मरनेकी भी थोरी आकुलता हो है। तातैं ऐसा जानना—संसार अवस्थाविषै भी आकुलता घटने बधनेहीतैं सुखदुख मानिए है। बहुरि आकुलताका घटना बधना रागादि कषाय घटने बधनेकै अनुसार है। बहुरि परद्रव्यरूप बाह्य सामग्रीके अनुसार सुख दुख नाहीं। कषायतैं याकै इच्छा उपजै, अर याकी इच्छा अनुसारि बाह्य सामग्री मिलै, तब याका किछू कषाय उपशमनेतैं आकुलता घटै, तब सुख मानै। अर इच्छा-नुसार सामग्री न मिलै, तब कषाय बधनेतैं आकुलता बधै, तब

दुख मानै। सो है तौ ऐसैं, अर यह जानै-मोकूं परद्रव्यके निमित्ततैं सुख दुख हो है। सो ऐसा जानना भ्रम ही है। तातैं इहां ऐसा विचार करना, जो संसार अवस्थाविषै किंचित् कषाय घटे सुख मानिए, ताकौं हित जानिए, तौ जहां सर्वथा कषाय दूर भएं वा कषायके कारण दूरि भएं परम निराकुलता होने करि अनंत सुख पाइए, ऐसी मोक्षअवस्थाकौं कैसे हित न मानिए। बहुरि संसार अवस्थाविषै उच्च पदकौं पावै, तौ भी कै तौ विषयसामग्री मिलावनेकी आकुलता होय, कै विषयसेवनेकी आकुलता होय, कै और कोई क्रोधादि कषायतैं इच्छा उपजै, ताकौं पूरण करनेकी आकुलता होय, कदाचित् सर्वथा निराकुल होय सकै नाहीं। अभिप्रायविषै तौ अनेकप्रकार आकुलता बनी ही रहै। अर बाह्य कोई आकुलता मेटनेके उपाय करै, सो प्रथम तौ कार्य सिद्ध होय नाहीं। अर जो भवितव्य योगतै वह कार्य सिद्ध होय जाय, तौ तत्काल और आकुलता मेटनेका उपायविषै लागै। ऐसैं आकुलता मेटनेकी आकुलता निरंतर रह्या करै। जो ऐसी आकुलता न रहै, तो नये नये विषयसेवनादि कार्यविषै काहेकौं प्रवर्तै है। तातैं संसार अवस्थाविषै पुण्यका उदयतैं इंद्र अहमिन्द्रादि पदकौं पावै, तौ भी निराकुलता न होय, दुःखी ही रहै। तातैं संसारअवस्था हितकारी नाहीं।

बहुरि मोक्ष अवस्थाविषै कोई प्रकारकी आकुलता रही नाहीं तातैं आकुलता मेटनेका उपाय करनेका भी प्रयोजन नाहीं। सदा काल शांतरसकरि सुखी रहै है। तातैं मोक्षअवस्था ही हितकारी

है। पूर्वै भी संसार अवस्थाका दुःखका अर मोक्ष अवस्थाका सुखका विशेष वर्णन किया है, सो इसही प्रयोजनके अर्थि किया है। ताकौं भी विचारि मोक्षका उपाय करना। सर्व उपदेशका तात्पर्य इतना है। इहां प्रश्न—जो मोक्षका उपाय काललब्धि आएं भवितव्यानुसारि बनै है कि, मोहादिकका उपशमादि भएं बनै है, अथवा अपने पुरुषार्थतैं उद्यम किए बनै, सो कहौ। जो पहिले दोय कारण मिले बनै है, तौ हमकौं उपदेश काहेकौं दीजिए है। अर पुरुषार्थतैं बनै है, तौ उपदेश सर्व सुनि, तिन-विषै कोई उपाय कर सकै, कोई न करि सकै, सो कारण कहा। ताका समाधान—

एक कार्य होनेविषै अनेक कारण मिलै हैं। सो मोक्षका उपाय बनै है, तहां तौ पूर्वोक्त तीनौं ही कारण मिलै हैं। अर न बनै है, तहां तीनौं ही कारण न मिलै हैं। पूर्वोक्त तीन करण कहे. तिनविषै काललब्धि वा होनहार तौ किछू वस्तु नाहीं। जिस कालविषै कार्य बनै, सोई काललब्धि और जो कार्य भया सोई होनहार। बहुरि कर्मका उपशमादि है, सो पुद्गलकी शक्ति है। ताका आत्मा कर्त्ता हर्त्ता नाहीं। बहुरि पुरुषार्थतैं उद्यम करिए है, सो यह आत्माका कार्य है। तातैं आत्माकौं पुरुषार्थकरि उद्यम करनेका उपदेश दीजिए है। तहां यह आत्मा जिस कारणतैं कार्यसिद्धि अवश्य होय तिसकारणरूप उद्यम करै, तहां तौ अन्य कारण मिलैं ही मिलैं, अर कार्यकी भी सिद्धि होय ही होय। बहुरि जिस कारणतैं कार्यसिद्धि होय,

अथवा नाहीं भी होय, तिस कारणरूप उद्यम करै, तहां अन्य कारण मिलैं तौ कार्यसिद्धि होय, न मिलैं तौ सिद्धि न होय। सो जिनमतविषै जो मोक्षका उपाय कह्या है, सो इसतैं मोक्ष होय ही होय। तातैं जो जीव पुरुषार्थकरि जिनेश्वरका उपदेश अनुसार मोक्षका उपाय करै है, ताकै काललब्धि वा होनहार भी भया। अर कर्मका उपशमादि भया है, तौ यह ऐसा उपाय करै है। तातै जो पुरुषार्थकरि मोक्षका उपाय करै है, ताकै सर्व कारण मिलै हैं, ऐसा निश्चय करना। अर वाकै अवश्य मोक्षकी प्राप्ति हो है। बहुरि जो जीव पुरुषार्थकरि मोक्षका उपाय न करै, ताकै काललब्धि होनहार भी नाहीं। अर कर्मका उपशमादि न भया है, तौ यह उपाय न करै है। तातैं जो पुरुषार्थकरि मोक्षका उपाय न करै है, ताकै कोई कारण मिलै नाहीं, ऐसा निश्चय करना। अर वाकै मोक्षकी प्राप्ति न हो है। बहुरि तू कहै है— उपदेश तौ सर्व सुनै हैं, कोई मोक्षका उपाय कर सकै, कोई न करि सकै, सो कारण कहा। सो कारण यह है कि—जो उपदेश सुनिकरि पुरुषार्थ करै हैं, सो तौ मोक्षका उपाय करि सकै है अर पुरुषार्थ न करै, सो मोक्षका उपाय न कर सकै है। उपदेश तौ शिक्षामात्र है, फल जैसा पुरुषार्थ करै तैसा लागै। बहुरि प्रश्न–जो द्रव्यलिंगी मुनि मोक्षके अर्थि गृहस्थपनौ छोड़ि तपश्चरणादि करै हैं, तहां पुरुषार्थ तौ किया कार्य सिद्ध न भया, तातैं पुरुषार्थ किए तौ किछू सिद्धि नाहीं। ताका समाधान,—

अन्यथा पुरुषार्थ फल चाहै, तौ कैसैं सिद्धि होय।

तपश्चरणादि व्यवहार साधनविषै अनुरागी होय प्रवर्त्तै, ताका फल शास्त्रविषै तौ शुभबंध कह्या है, अर यह तिसतैं मोक्ष चाहै है, तौ कैसैं सिद्धि होय। यह तौ भ्रम है। बहुरि प्रश्न— जो भ्रमका भी तौ कारण कर्म ही है, पुरुषार्थ कहा करै। ताका उत्तर—

सांचा उपदेशतैं निर्णय किए भ्रम दूरि हो है। सो ऐसा पुरुषार्थ न करै है, तिसहीतैं भ्रम रहै है। निर्णय करनेका पुरुषार्थ करै, तौ भ्रमका कारण मोहकर्म ताका भी उपशमादि होय तब भ्रम दूरि हो जाय। जातैं निर्णय करतां परिणामनिकी विशुद्धता होय, तिसतैं मोहका स्थिति अनुभाग घटै है। बहुरि प्रश्न—जो निर्णय करनेविषै उपयोग न लगावै है, ताका भी तौ कारण कर्म है। ताका समाधान—

एकेंद्रियादिकके विचार करनेकी शक्ति नाहीं, तिनकै तौ कर्महीका कारण है। याकै तो ज्ञानावरणादिकका क्षयोपशमतैं निर्णय करनेकी शक्ति प्रगट भई है। जहां उपयोग लगावै, तिसहीका निर्णय होय सकै है। परंतु यह अन्य निर्णय करनेविषै उपयोग लगावै, यहां उपयोग न लगावै। सो यह तौ याहीका दोष है, कर्मका तौ किछू प्रयोजन नाहीं। बहुरि प्रश्न—जो सम्यक्त्वचारित्रका तौ घातक मोह है। ताका अभाव भए विना मोक्षका उपाय कैसैं बनै। ताका समाधान—

तत्त्वनिर्णय करनेविषै उपयोग न लगावै, सो तो याहीका दोष है। बहुरि पुरुषार्थकरि तत्त्वनिर्णयविषै उपयोग लगावै, तब

स्वयमेव ही मोहका अभाव भएं सम्यक्त्वादिरूप मोक्षके उपायका पुरुषार्थ बनै है । सो मुख्यपनै तौ तत्त्वनिर्णयविषै उपयोग लगावनेका पुरुषार्थ करना । बहुरि उपदेश भी दीजिए है, सो इस ही पुरुषार्थ करावनेके अर्थि दीजिए है । बहुरि इस पुरुषार्थतैं मोक्षके उपायका पुरुषार्थ आपहीतैं सिद्ध होयगा । अर तत्त्वनिर्णय करनेविषै कोई कर्मका दोष है नाहीं । अर तू आप तौ महंत रह्या चाहै, अर अपना दोष कर्मादिककैं लगावै, सो जिनआज्ञा मानें तौ ऐसी अनीति संभवै नाहीं । तोकौं विषय कषायरूप ही रहना है, तातै झूंठ बोलै है । मोक्षको सांची अभिलाषा होय, तौ ऐसी युक्ति काहेकौं बनावै । संसारके कार्यनिविषै अपना पुरुषार्थतै सिद्ध न होती जानै, तौ भी पुरुषार्थकरि उद्यम किया करै, यहां पुरुषार्थ खोई बैठै । सो जानिए है, मोक्षकौं देखादेखी उत्कृष्ट कहै हैं । याका स्वरूप पहचानि ताकौ हितरूप न जानै है । हित जानि जाका उद्यम बनै, सो न करै यह असंभव हैं । इहां प्रश्न—जो तुम कह्या सो सत्य, परंतु द्रव्यकर्मके उदयतैं भावकर्म होय, भावकर्मतैं द्रव्यकर्मका बंध होय, बहुरि ताके उदयतैं भावकर्म होय, ऐसैं ही अनादितैं परंपराय है, तब मोक्षका उपाय कैसैं होय सकै ? ताका समाधान,—

कर्मका बंध वा उदय सदाकाल समान ही हुवा करै, तौ ऐसा ही है । परंतु परिणामनिके निमित्ततैं पूर्वबंधे कर्मका भी उत्कर्षण अपकर्षण संक्रमणादि होतैं तिनकी शक्ति हीन अधिक हो है । कर्मउदयके निमित्तकरि तिनका उदय भी तीव्र मंद हो

है । तिनके निमित्ततैं नवीन बंध भी तीव्र मंद हो हैं । तातैं संसारी जीवनिकै कबहू ज्ञानादिक घने प्रगट हो है, कबहू थोरे प्रगट हो हैं। कबहू रागादि मंद हो है कबहू तीव्र हो है । ऐसैं ही पलटनि हूवा करै है । तहां कदाचित् संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त पर्याय पाया तब मनकरि विचार करनेकी शक्ति भई । बहुरि याकै कबहू तीव्र रागादिक होय कबहू मंद होय । तहां रागादिकका तीव्र उदय होतैं तौ विषयकषायादिकके कार्यनिविषै ही प्रवृत्ति होय । बहुरि रागादिकका मंद उदय होतैं बाह्य उपदेशादिकका निमित्त बनै अर आप पुरुषार्थकरि तिन उपदेशादिकविषै उपयोगकौं लगावै, तौ धर्मकार्यविषै प्रवृत्ति होय । अर निमित्त बनैं, वा आप पुरुषार्थ न करै, कोई अन्य कार्यनिविषै प्रवर्तै, परंतु मंदरागादि लिएं प्रवर्तै, ऐसे अवसरविषै उपदेश कार्यकारी है । विचारशक्तिरहित एकेंद्रियादिक हैं, तिनिकै तौ उपदेश समझनेका ज्ञान ही नाहीं । तीव्ररागादिसहित जीवनका उपदेशविषैं उपयोग लागै नाहीं । तातैं जो जीव विचार शक्तिसहित होंय, अर जिनकै रागादि मंद होंय, तिनकौं उपदेशका निमित्ततैं धर्मकी प्राप्ति होय जाय, तौ ताका भला होय । बहुरि इस ही अवसरविषैं पुरुषार्थ कार्यकारी है । एकेंद्रियादिक तौ धर्मकार्य करनेकौं समर्थ ही नाहीं, कैसै पुरुषार्थ करैं । अर तीव्रकषायी पुरुषार्थ करै, सो पापहीको करै धर्म कार्यका पुरुषार्थ होय सकै नाहीं । तातैं विचारशक्ति-सहित होय, अर जिसकै रागदिक मंद होय, सो जीव पुरुषार्थ

करि उपदेशादिकके निमित्ततैं तत्त्वनिर्णयादिविषै उपयोग लगावै तौ याका उपयोग तहां लागै तब याका भला होय। जो इस अवसरविषै भी तत्त्वनिर्णय करनेका पुरुषार्थ न करै, प्रमादतैं काल गमावै। कै तौ मंदरागादि लिएं विषयकषायनिके कार्यनिहीविषै प्रवर्तै, कै व्यवहार धर्मकार्यनिविषै प्रवर्तै, तब अवसर तौ जाता रहै, संसारविषै ही भ्रमण होय। बहुरि इस अवसरविषै जे जीव पुरुषार्थकरि तत्त्वनिर्णयकरनेविषै उपयोग लगावनेका अभ्यास राखैं, तिनिकै विशुद्धता बधै, ताकरि कर्मनकी सक्ति हीन होय। कितेक कालविषै आपोआप दर्शनमोहका उपशम होय, तब याकै तत्त्वनिविषै यथावत् प्रतीति आवै। सो याका तौ कर्त्तव्य तत्त्वनिर्णयका अभ्यास ही है। इसहीतैं दर्शनमोहका उपशम तौ स्वयमेव ही होय। यामैं जीवका कर्त्तव्य किछू नाहीं। बहुरि ताकौं होतै जीवकै स्वयमेव सम्यग्दर्शन होय। बहुरि सम्यग्दर्शन होतैं श्रद्धान तौ यह भया—मै आत्मा हौं, मुझको रागादिक न करने। परंतु चारित्रमोहके उदयतैं रागादिक हो हैं। तहां तीव्र उदय होय, तब तौ विषयादिविषै प्रवर्तै है, अर मंद उदय होय, तब अपने पुरुषार्थतैं धर्मकार्यनिविषै वा वैराग्यादिभावनाविषै उपयोगकौं लगावै है। ताके निमित्ततैं चारित्रमोह मंद होता जाय। ऐसै होतैं देशचारित्र वा सकलचारित्र अंगीकार करनेका पुरुषार्थ प्रगट होय। बहुरि चारित्रको धारि अपना पुरुषार्थकरि धर्मविषै परिणतिकौं बधावै, तहां विशुद्धताकरि कर्मकी हीन शक्ति होय, तातैं विशुद्धता बधै,

ताकरि अधिक कर्मकी शक्ति हीन होय। ऐसैं क्रमतैं मोहका नाश करै, तब सर्वथा परिणाम विशुद्ध होंय, तिनकरि ज्ञानावरणादिका नाश होय, तब केवलज्ञान प्रगट होय। तहां पीछैं विना उपाय अघातिया कर्मका नाशकरि शुद्ध सिद्धपदकौं पावै। ऐसैं उपदेशका तौ निमित्त बनै, अर अपना पुरुषार्थ करै, तौ कर्मका नाश होय। बहुरि जब कर्मका उदय तीव्र होय, तब पुरुषार्थ न होय सकै है। ऊपरले गुणस्थाननितैं भी गिर जाय है। तहां तौ जैसा होनहार तैसा ही होय। परन्तु जहां मंद उदय होय, अर पुरुषार्थ होय सकै, तहां तौ प्रमादी न होना—सावधान होय अपना कार्य करना। जैसैं कोऊ पुरुष नदीका प्रवाहविषै पड़या बहै है। तहां पानीका जोर होय-तब तो वाका पुरुषार्थ किछू नाहीं। उपदेश भी कार्यकारी नाहीं। और पानीका जोर थोरा होय, तब तो पुरुषार्थकरि निकसना चाहैं, तो निकसि आवे तिसहीकौ निकसनेकी शिक्षा दीजिए है। और न निकसे तो होले २ बहै, पीछे पानीका जोर भएं बह्या चल्या जाय। तैसैं ही यह जीव संसारविषै भ्रमै है। तहां कर्मनिका तीव्र उदय होय, तब तौ याका पुरुषार्थ किछू नाहीं। ताकौं उपदेश भी कुछ कार्यकारी नाहीं। अर कर्मका मंद उदय होय, तब पुरुषार्थकरि मोक्षमार्गविषै प्रवर्त्तै, तौ मोक्ष पावै। तिसहीकौं मोक्षमार्गका उपदेश दीजिए है। अर वह मोक्षमार्गविषै न प्रवर्त्तै, तौ किंचित् विशुद्धता पाय पीछैं तीव्र उदय आएं निगोदादि पर्यायकौं पावै। तातैं अवसर चूकना योग्य नाहीं

अब सर्व प्रकार अवसर आया है, ऐसा अवसर पावना कठिन है। तातैं श्रीगुरु दयालु होय मोक्षमार्गकौं उपदेशैं, तिसविषै भव्य जीवनिकौं प्रवृत्ति करनी।

अब मोक्षमार्गका स्वरूप कहिए है—

जिनके निमित्ततैं आत्मा अशुद्ध दशाकौं धारि दुखी भया, ऐसे जो मोहादिक कर्म तिनिका सर्वथा नाश होतैं केवल आत्माकी जो सर्व प्रकार शुद्ध अवस्थाका होना, सो मोक्ष है। ताका जो उपाय-कारण, सो मोक्षमार्ग जानना। सो कारण तौ अनेक प्रकार हो है। कोई कारण तौ ऐसे हो हैं, जाके भएं विना तो कार्य न होय, अर जाके भएं कार्य होय वा न भी होय। जैसै मुनि लिंग धारे विना तौ मोक्ष न होय, परंतु मुनिलिंग धारे मोक्ष होय भी अर नाहीं भी होय। बहुरि केई कारण ऐसे है, जो मुख्यपनै तौ जाके भएं कार्य होय, अर काहूके विना भएं भी कार्य सिद्ध होय। जैसैं अनशनादि बाह्य तपका साधन किए मुख्यपनै मोक्ष पाइए है, परंतु भरतादिकके बाह्य तप किए विना ही मोक्षकी प्राप्ति भई। बहुरि केई कारण ऐसे है, जाके भए कार्य सिद्ध होय ही होय, और जाके न भए कार्य सिद्धि सर्वथा न होय। जैसैं सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकी एकता भए तौ मोक्ष होय ही होय, अर तिनके न भए सर्वथा मोक्ष न होय। ऐसैं ए कारण कहे, तिनविषै अतिशयकरि नियमतैं मोक्षका साधक जो सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रका एकीभाव, सो मोक्षमार्ग जानना। इनि सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रनिविषै एक भी न होय, तौ

मोक्षमार्ग न होय। सोई **तत्त्वार्थसूत्र**विषै कह्या है—,

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ ॥

इस सूत्रकी टीकविषै कह्या है—जो यहां **मोक्षमार्गः** ऐसा एक वचन कह्या है ताका अर्थ है—यह जो तीनौ मिले एक मोक्षमार्ग है। जुदे २ तीन मार्ग नाहीं है। यहां प्रश्न—जो असंयत सम्यग्दृष्टिकै तौ चरित्र नाहीं, वाकै मोक्षमार्ग भया है कि न भया है। ताका समाधान—

मोक्षमार्ग वाकै होसी, यह तौ नियम भया। तातैं उपचारतैं वाकै मोक्षमार्ग भया भी कहिए। परमार्थतै सम्यक्चारित्र भए ही मोक्षमार्ग हो है। जैसै कोई पुरुषकै किसी नगर चालनेका निश्चय भया। तातैं वाकै व्यवहारतैं ऐसा भी कहिए जो "यह तिस नगरकौं चल्या है।" परमार्थतैं मार्गविषै गमन किएं ही चलना होसी। तैसैं असंयत सम्यग्दृष्टीकै वीतरागभावरूप मोक्षमार्गका श्रद्धान भया, तातैं वाकौं उपचारतैं मोक्षमार्गी कहिए, परमार्थतैं वीतरागभावरूप परिणमै ही मोक्षमार्ग होसी। बहुरि **प्रवचनसार**विषै भी तीनौंकी एकाग्रता भए ही मोक्षमार्ग कह्या है। तातैं यह जानना—तत्त्वश्रद्धान विना तौ रागादि घटाए मोक्षमार्ग नाहीं, अर रागादि घटाए विना तत्त्वश्रद्धानज्ञानतैं भी मोक्षमार्ग नाहीं। तीनौं मिले साक्षात् मोक्षमार्ग हो है

अब इनका निर्देश अर लक्षण निर्देश अर परीक्षाद्वारा निरूपण कीजिए हैं। तहां "सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र मोक्षमार्ग है," ऐसा नाम मात्र कथन सो तौ 'निर्देश' जानना। बहुरि

अतिव्याप्ति अव्याप्ति असंभवपनाकरि रहित होय, जाकरि इनकौं पहचानिए, सो 'लक्षण' जानना। ताका जो निर्देश कहिए, निरूपण सो 'लक्षण निर्देश' जानना। तहां जाकौ पहचानना होय ताका नाम लक्ष्य है। उस विना औरका नाम अलक्ष्य है। सो लक्ष्य वा अलक्ष्य दोऊविषै पाइए, ऐसा लक्षण जहां कहिए तहां अतिव्याप्तिपनौ जानना। जैसैं आत्माका लक्षण 'अमूर्त्तत्व' कह्या। सो अमूर्त्तत्व लक्षण है, सो लक्ष्य जो है आत्मा तिसविषै भी पाइए है अर अलक्ष्य जो है आकाशादिक तिनविषै भी पाइए। तातै यह 'अतिव्याप्त' लक्षण है। याकरि आत्मा पहचानैं आकाशादिक भी आत्मा होय जाय, यह दोष लागै। बहुरि जो कोइ लक्ष्यविषै तौ होय अर कोइविषै न होय, ऐसा लक्ष्यका एकदेशविषै पाइए ऐसा लक्षण जहां कहिए, तहां अव्याप्तिपना जानना। जैसैं—आत्माका लक्षण केवलज्ञान कहिए, सो केवलज्ञान कोई आत्माविषै तौ पाइए, कोईविषै न पाइए, तातै यह 'अव्याप्त' लक्षण है। याकरि आत्मा पहचानै, स्तोकज्ञानी आत्मा न होय, यह दोष लागै। बहुरि जो लक्ष्यविषै पाइए ही नाहीं, ऐसा लक्षण जहां कहिए, तहां असंभवपणा जानना। जैसै आत्माका लक्षण जड़पना कहिए। सो प्रत्यक्षादि प्रमाणकरि यह विरुद्ध है। तातैं यह 'असंभव' लक्षण है। याकरि आत्मा मानैं पुद्गलादिक भी आत्मा होय जांय। अर आत्मा है, सो अनात्मा होय जाय, यह दोष लागै। ऐसैं अतिव्याप्त अव्याप्त असंभवी लक्षण होय, सो लक्षणाभास है। बहुरि लक्ष्यविषै तौ सर्वत्र

पाइए, अर अलक्ष्यविषैं कहीं न पाइए, सो सांचा लक्षण है जैसैं आत्माका लक्षण चैतन्य है। सो यह लक्षण सर्व ही आत्मा विषै तौ पाइए है, अनात्माविषै कहीं न पाइए। तातैं यह सांचा लक्षण है। याकरि आत्मा मानें, आत्मा अनात्माका यथार्थ ज्ञान होय, किछू दोष लागै नाहीं। ऐसैं लक्षणका स्वरूप उदाहरण-मात्र कह्या।

अब सम्यग्दर्शनादिकका सांचा लक्षण कहिए है,--विपरीता-भिनिवेशरहित जीवादि तत्त्वार्थश्रद्धान सो सम्यग्दर्शनका लक्षण है। जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष, ए सात तत्त्वार्थ है। इनका जो श्रद्धान 'ऐसैं ही है अन्यथा नाहीं' ऐसा प्रतीति भाव, सो तत्त्वार्थश्रद्धान है। बहुरि विपरीताभिनिवेश जो अन्यथा अभिप्राय ताकरि रहित सो सम्यग्दर्शन है। यहां विपरीताभिनिवेशका निराकरणके अर्थि 'सम्यक्' पद कह्या है। जातैं 'सम्यक्' ऐसा शब्द प्रशंसावाचक है। सो श्रद्धानविषै विपरीताभिनिवेशका अभाव भए ही प्रशंसा संभवै है, ऐसा जानना। यहां प्रश्न—जो 'तत्त्व' अर 'अर्थ' ए दोय पद कहे, तिनिका प्रयोजन कहा। ताका समाधान--

'तत्' शब्द है सो 'यत्' शब्दकी अपेक्षा लिए है। तातैं जाका प्रकरण होय, सो तत् कहिए, अर जाका जो भाव कहिए स्वरूप सो तत्त्व जानना। जातैं **'तस्य भावस्तत्त्वं'** ऐसा तत्त्व शब्दका समास होय है। बहुरि जो जाननेमैं आवै ऐसा 'द्रव्य' वा गुण पर्याय ताका नाम अर्थ है। बहुरि **'तत्त्वेन अर्थ-**

स्तत्त्वार्थः' तत्त्व कहिए अपना स्वरूप, ताकरि सहित पदार्थ तिनिका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है। यहां जो 'तत्त्वश्रद्धान' ही कहते, तौ जाका यह भाव (तत्त्व) है, ताका श्रद्धान विना केवल भावहीका श्रद्धान कार्यकारी नाहीं। बहुरि जो 'अर्थ-श्रद्धान' ही कहते, ता भावका श्रद्धान विना पदार्थका श्रद्धान भी कार्यकारी नाहीं। जैसै कोईकै ज्ञान दर्शनादिक वा वर्णादिकका तौ श्रद्धान होय—यह जानपना है, यह श्वेतवर्ण है, इत्यादि। परंतु ज्ञान दर्शन आत्माका स्वभाव है, सो मैं आत्मा हौं। बहुरि वर्णादि पुद्गलका स्वभाव है। पुद्गल मोतैं भिन्न जुदा पदार्थ है। ऐसा पदार्थका श्रद्धान न होय, तौ भावका श्रद्धान मात्र कार्यकारी नाहीं। बहुरि जैसै 'मै आत्मा हौं' ऐसैं श्रद्धान किया, परंतु आत्माका स्वरूप जैसा है, तैसा श्रद्धान न किया। तौ भावका श्रद्धान विना पदार्थका भी श्रद्धान कार्यकारी नाहीं। तातै तत्वका अर्थका श्रद्धान हो है, सो ही कार्यकारी है। अथवा जीवादिककौं तत्व संज्ञा भी है, अर्थ संज्ञा भी है तातैं '**तत्त्वमेवार्थस्तत्त्वार्थः**' जो तत्व सो ही अर्थ तिनका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है। इस अर्थकरि कहीं तत्वश्रद्धानकौ सम्यग्दर्शन कहै, वा कहीं पदार्थ श्रद्धानकौं सम्यग्दर्शन कहै, तहां विरोध न जानना। ऐसैं तत्व और 'अर्थ' दोय पद कहनेका प्रयोजन है। यहां प्रश्न--जो तत्वार्थ तो अनंते हैं। ते सामान्य अपेक्षाकरि जीव अजीवविषै सर्व गर्भित भए, तातैं दोय ही कहने थे आश्रवादिक तौ जीव अजीवहीके विशेष हैं, इनकौं जुदा जुदा कहनेका प्रयोजन कहा।

ताका समाधान—

जो यहां पदार्थश्रद्धानका ही प्रयोजन होता, तौ सामान्यकरि वा विशेषकरि जैसै पदार्थनिका जानना होय, तैसैं ही कथन करते। सो तौ यहां प्रयोजन है नाहीं। यहां तौ मोक्षका प्रयोजन है। सो जिन सामान्य वा विशेष भावनिका श्रद्धान किए मोक्ष होय, अर जिनका श्रद्धान किए विना मोक्ष न होय, तिनहीका यहां निरूपण किया। सो जीव अजीव ए दोय तौ बहुत द्रव्यनकी एक जाति अपेक्षा सामान्यरूप तत्त्व कहे। सो ए दोय जाति जानें जीवके आपापरका श्रद्धान होय। तब परतैं भिन्न आपकौं जानै, अपना हितके अर्थि मोक्षका उपाय करै, अर आपतैं भिन्न परकौं जानै, तब परद्रव्यतैं उदासीन होय रागादिक त्यागि मोक्षमार्ग विषै प्रवर्तै। तातैं इन दोऊ जातिका श्रद्धान भए ही मोक्ष होय। अर दोऊ जाति जानें विना आपापरका श्रद्धान न होय, तब पर्यायबुद्धितैं संसारीक प्रयोजनहीका उपाय करै। परद्रव्यविषै रागद्वेषरूप होय प्रवर्तै, तब मोक्षमार्गविषै कैसैं प्रवर्तै। तातैं इन दोय जातीनिका श्रद्धान न भए मोक्ष न होय। ऐसैं ए दोय तो सामान्य तत्त्व अवश्य श्रद्धान करने योग्य कहे। बहुरि आस्रवादिक पांच कहे, ते जीव पुद्गलके पर्याय हैं। तातैं ए विशेषरूप तत्त्व हैं। इन पांच पर्यायनिकौं जानें मोक्षका उपाय करनेका श्रद्धान होय। तहां मोक्षकौं पहिचानै, तौ ताकौं हित मानि ताका उपाय करै। तातैं मोक्षका श्रद्धान करना। बहुरि मोक्षका उपाय संवर निर्जरा है। सो इनकौं पहिचनै तौ जैसैं संवर निर्जरा होय

तैसैं प्रवर्त्तै। तातैं संवर निर्जराका श्रद्धान करना। बहुरि संवर निर्जरा तौ अभाव लक्षण लिए है, सो जिनका अभाव किया चाहिए, तिनकौ पहचानना चाहिए। जैसैं क्रोधका अभाव भए क्षमा होय। सो क्रोधकौ पहचानना तौ ताका अभाव करि क्षमा रूप प्रवर्त्तै। तैसैं ही आश्रवका अभाव भए संवर होय अर बंधका एकदेश अभाव भए निर्जरा होय। सो आश्रव बंधकौं पहिचानैं, तौ तिनिका नाशकारि संवर निर्जरारूप प्रवर्त्तै। तातैं आस्रव बंधका श्रद्धान करना। ऐसैं इनि पांच पर्यायनिका श्रद्धान भए ही मोक्षमार्ग होय। इनिकौ न पहचानै, तौ मोक्षकी पहचान विना ताका उपाय काहेकौं करै। संवर निर्जराकी पहचान विना तिनिविषै कैसैं प्रवर्तै। आश्रव बंधकी पहचान विना तिनिकरि नाश कैसैं करै। ऐसैं इन पांच पर्यायनिका श्रद्धान न भए मोक्ष न होय। या प्रकार यद्यपि तत्त्वार्थ अनंते हैं, तिनिका सामान्य विशेषकरि अनेक प्रकार प्ररूपण होय। परंतु यहां मोक्षका प्रयोजन है, तातैं दोय तौ जातिअपेक्षा सामान्य तत्व अर पांच पर्यायरूप विशेष तत्व मिलाय सात ही तत्व कहे। इनिका यथार्थ श्रद्धानके आधीन मोक्षमार्ग है। इनि बिना औरनिका श्रद्धान होहु वा मति होहु वा अन्यथा श्रद्धान होहु, किसीके आधीन मोक्षमार्ग नाहीं। ऐसा जानना। बहुरि कहीं पुण्य पाप सहित नव पदार्थ कहे हैं। सो पुण्य पाप आस्रवादिकके ही विशेष हैं। तातैं साततत्वविषै गर्भित भए। अथवा पुण्यपापका श्रद्धान भए पुण्यकौं मोक्षमार्ग न मानै, वा स्वच्छंद होय पापरूप न प्रवर्तै, तातैं मोक्षमार्गविषै

इनिका श्रद्धान भी उपकारी जानि दोय तत्व विशेष मिलाय नव, तत्व कहे। वा समयसारादिविषै इनकौं नव तत्व भी कहे हैं। बहुरि प्रश्न—इनिका श्रद्धान सम्यग्दर्शन कह्या, सो दर्शन तौ सामान्य अवलोकन मात्र अर श्रद्धान प्रतीति मात्र, इनिकै एकार्थपनौ कैसै संभवै। ताका उत्तर—

प्रकरणके वशतैं धातुका अर्थ अन्यथा होय है। सो यहां प्रकरण मोक्षमार्गका है, तिसविषै 'दर्शन' शब्दका अर्थ सामान्य अवलोकन मात्र ग्रहण न करना। जातैं चक्षु अचक्षु दर्शनकरि सामान्य अवलोकन सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टीके समान होय है। कुछ याकरि मोक्षमार्गकी प्रवृत्ति होती नाहीं। बहुरि श्रद्धान हो है, सो सम्यदृष्टीकै हो हैं। याकरि मोक्षमार्गकी प्रवृत्ति हो है। तातै 'दर्शन' शब्दका अर्थ भी यहां श्रद्धान मात्र ही ग्रहण करना। बहुरि प्रश्न—यहां विपरीताभिनिवेशरहित श्रद्धान करना कह्या, सो प्रयोजन कहा। ताका समाधान—

अभिनिवेशनाम अभिप्रायका है। सो जैसा तत्वार्थश्रद्धानका अभिप्राय है, तैसा न होय अन्यथा अभिप्राय होय ताका नाम विपरीताभिनिवेश है। सो तत्वार्थश्रद्धान करनेका अभिप्राय केवल तिनिका निश्चय करना मात्र ही नाहीं है। तहां अभिप्राय ऐसा है—जीव अजीवकौं पहचानि आपकौं वा परकौं जैसाका तैसा मानै। बहुरि आस्रवकौं पहचानि ताकौं हेय मानै। बहुरि बंधकौं पहचानि ताकौ अहित मानै। बहुरि संवरकौं पहचानि ताकौं उपादेय मानै। बहुरि निर्जराकौं पहचानि ताकौं हितका

कारण मानै। बहुरि मोक्षकौ पहचानि ताकौं अपना परमहित मानै। ऐसैं तत्त्वार्थश्रद्धानका अभिप्राय है। तिसतैं उलटा अभिप्रायका नाम विपरीताभिनिवेश है। सो सांचा तत्वार्थश्रद्धान भए ताका अभाव होय। तातैं तत्वार्थश्रद्धान है, सो विपरीताभिनिवेश रहित है। ऐसा यहां कह्या है। अथवा काहूकै अभ्यासमात्र तत्वार्थ श्रद्धान हो है। परंतु अभिप्रायविषै विपरीतपनौ नाहीं छूटै है। कोई प्रकारकरि पूर्वोक्त अभिप्रायतैं अन्यथा अभिप्राय अंतरंगविषै पाईए है, तौ वाकै सम्यग्दर्शन न होय। जैसैं द्रव्यलिंगी मुनि जिनवचनतैं तत्त्वनिकी प्रतीति करै। परंतु शरीराश्रित क्रियानिविषै अहंकार वा पुण्यास्रवविषै उपादेयपना आदि विपरीत अभिप्रायतैं मिथ्यादृष्टी ही रहै है। तातैं जो तत्त्वार्थश्रद्धान विपरीताभिनिवेशरहित है, सोई सम्यग्दर्शन है। ऐसैं विपरीताभिनिवेशरहित जीवादि तत्त्वनिका श्रद्धानपना तौ सम्यग्दर्शनका लक्षण है। सम्यग्दर्शन लक्ष्य है। सोई तत्त्वार्थसूत्रविषै कह्या है,—'**तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्**' ॥ २ ॥ तत्त्वार्थनिका श्रद्धान सोई सम्यग्दर्शन है। बहुरि सर्वार्थसिद्धि नामा सूत्रनिकी टीका है, तिसविषै तत्त्वादिक पदनिका अर्थ प्रगट लिख्या है, वा सात ही तत्व कैसैं कहे सो प्रयोजन लिख्या है, ताके अनुसारतैं इहां किछू कथन किया है, ऐसा जानना।

बहुरि पुरुषार्थसिद्ध्युपायके विषै ऐसैं ही कह्या है—

जीवाजीवादीनां तत्त्वार्थानां सदैव कर्त्तव्यम्।
श्रद्धानं विपरीताभिनिवेशविविक्तमात्मरूपं तत् ॥ २२॥

याका अर्थ—विपरीताभिनिवेशकरि रहित जीवअजीव आदि तत्वार्थनिका श्रद्धान सदाकाल करना योग्य है। सो यह श्रद्धान आत्माका स्वरूप है। दर्शनमोह उपाधि दूर भए प्रगट हो है, तातैं आत्माका स्वभाव है। चतुर्थादि गुणस्थानविषै प्रगट हो है। पीछैं सिद्ध अवस्थाविषै भी सदा काल याका सद्भाव रहै है ऐसा जानना। यहां प्रश्न उपजै है–जो तिर्यंचादि तुच्छज्ञानी केई जीव सात तत्वनिका नाम भी न जानि सकैं, तिनिकै भी सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति शास्त्रविषै कही है। तातैं तत्वार्थश्रद्धानपना तुम सम्यक्त्वका लक्षण कह्या, तिसविषै अव्याप्तिदूषण लागै है। ताका समाधान,—

जीव अजीवादिकका नामादिक जानौ वा मति जानौ, वा अन्यथा जानौ, उनका स्वरूप यथार्थ पहचानि श्रद्धान किए सम्यक्त्व हो है। तहां कोई सामान्यपनै स्वरूप पहचानि श्रद्धान करै, कोई विशेषपनै स्वरूप पहचानि श्रद्धान करै। तातैं तुच्छज्ञानी तिर्यंचादिक सम्यग्दृष्टी हैं, सो जीवादिकका नाम भी न जानै हैं, तथापि उनका सामान्यपनै स्वरूप पहिचानि श्रद्धान करै हैं। तातैं उनकौं सम्यक्त्वकी प्राप्ति हो है। जैसैं कोई तिर्यंच अपना वा औरनिका नामादिक तौ नाहीं जानै, परन्तु आपहीविषै आपौ मानै है, औरनिकौं पर मानै है। तैसैं तुच्छज्ञानी जीव अजीवका नाम न जानै, परन्तु ज्ञानादिकस्वरूप आत्मा है, तिसविषै आपौ मानै है। अर जो शरीरादिक हैं, तिनकौं पर मानै है। ऐसा श्रद्धान वाकै हो है, सो ही जीव अजीवका श्रद्धान है। बहुरि

जैसैं सोई तिर्यंच सुखादिकका नामादिक न जानै है, तथपि सुख अवस्थाकौं पहचानि ताके अर्थि आगामी दुःखका कारणकौं पहि- चानि ताका त्यागकौं किया चाहै है। बहुरि जो दुखका कारण बनि रह्या है, ताके अभावका उपाय करै है। तुच्छज्ञानी मोक्षदिकका नाम न जानै, तथापि सर्वथा सुखरूप मोक्ष अव- स्थाकौं श्रद्धान करि ताके अर्थि आगामी बंधकारण रागादिक आस्रव ताके त्यागरूप संवरकौं किया चाहै है। बहुरि जो संसार दुःखका कारण है, ताकी शुद्धभावकरि निर्जरा किया चाहै है। ऐसैं आस्रवादिकका वाकै श्रद्धान है। या प्रकार वाकै भी सप्ततत्वका श्रद्धान पाइए है। जो ऐसा श्रद्धान न होय, तौ रागादि त्यागि शुद्ध भाव करनेकी चाह न होय। सोई कहिए है—जो जीवकी जाति न जानै, आपापरकौं न पहचानै, तौ परविषै रागादिक कैसैं न करै। रागादिककौं न पहचानै, तो तिनका त्याग कैसैं किया चाहै। सो रागादिक ही आस्रव है। रागादिकका फल बुरा न जानै, तौ काहेकौं रागादिक छोड्या चाहै। सो रागादिकका फल सोई बंध है। बहुरि रागादिक रहित परिणामकौ पहिचानै है, तौ तिसरूप हुवा चाहै है। सो रागादिकरहित परिणामका हीं नाम संवर है। बहुरि पूर्वै संसार अवस्थाका कारण कर्म है, ताकी हानिकौं पहिचानै है, तौ ताकै अर्थि तपश्चरणादिकरि शुद्ध भाव किया चाहै है। सो पूर्व संसारअवस्थाका कारण कर्म है, ताकी हानि सोई निर्जरा है। बहुरि संसार अवस्थाका अभाव कौं न पहिचानै, तौ संवर निर्जरारूप काहेकौं प्रवर्तै। संसार

अवस्थाका अभाव सो ही मोक्ष है। तातैं सातौं तत्वनिका श्रद्धान भए ही रागादिक छोड़ि शुद्ध भाव होनेकी इच्छा उपजै है। जो इनिविषै एक भी तत्व का श्रद्धान न होय, तौ ऐसी चाह न उपजै। बहुरि ऐसी चाह तुच्छज्ञानी तिर्यंचादि सम्यग्दृष्टीकै होय ही है, तातैं वाकै सप्ततत्वनिका श्रद्धान पाइए है। ऐसा निश्चय करना। ज्ञानावरणका क्षयोपशम थोरा होतै विशेषपनै तत्वनिका ज्ञान न होवै, तथापि दर्शनमोहका उपशमादिकतैं सामान्यपनै तत्वश्रद्धानकी शक्ति प्रगट हो है। ऐसैं इस लक्षणविषै अव्याप्ति दूषण नाहीं हैं बहुरि प्रश्न—जिसकालविषै सम्यग्दृष्टी विषयकषायनिके कार्यनिविषै प्रवर्तै है, तिसकालविषै सप्त तत्वनिका विचार ही नाहीं, तहां श्रद्धान कैसैं संभवै। अर सम्यक्त्व रहै ही है, तातैं तिस लक्षणविषैं अव्याप्ति दूषण आवै हैं। ताका समाधान, —

विचार है, सो तौ उपयोगके आधीन है। जहां उपयोग लागै, तिसहीका विचार हैं। बहुरि श्रद्धान है, सो प्रतीतिरूप हैं। तातैं अन्य ज्ञेयका विचार होतैं वा सोवना आदि क्रिया होतैं तत्वनिका विचार नाहीं, तथापि तिनकी प्रतीति बनी रहैं है, नष्ट न हो है। तातैं वाकै सम्यक्त्वका सद्भाव है। जैसैं कोई रोगी पुरुषकै ऐसी प्रतीति है- मैं मनुष्य हौ, तिर्यंच नाहीं हौं मेरे इस कारणतैं रोग भया हैं। सो अब कारण मेटि रोगकौं घटाय निरोग होना। बहुरि वो ही मनुष्य प्रश्न विचारादिरूप प्रवर्त्तै है, तब वाकै ऐसा विचार न हो हैं। परंतु श्रद्धान ऐसैं ही

रह्या करै है । तैसैं इस आत्माकै ऐसी प्रतीति है—मैं आत्मा हौं, पुद्गलादि नहीं हौं, मेरे आस्रवतै बंध भया है, सो अब संवर-करि निर्जरा करि मोक्षरूप होना । बहुरि सोइ आत्मा अन्य विचारादिरूप प्रवर्त्तै है, तब वाकै ऐसा विचार न हो है । परंतु श्रद्धान ऐसा ही रह्या करै है । बहुरि प्रश्न—जो ऐसा श्रद्धान रहै है, तौ बंध होनेके कारणनिविषै कैसैं प्रवर्तै है । ताका उत्तर—

जैसैं कोई मनुष्य कोई कारणके वशतै रोग बधनेके कारणनि-विषै भी प्रवर्तै । व्यापारादिक कार्य वा क्रोधादिक कार्य करै है, तथापि तिस श्रद्धानका वाकै नाश न हो है । तैसैं सो ही आत्मा कर्म उदय निमित्तेक वशतैं बंध होनेके कारणनिविषै भी प्रवर्त्तै है । विषयसेवनादि कार्य वा क्रोधादि कार्य करै है, तथापि तिस श्रद्धानका वाकै नाश न हो है । याका विशेष निर्णय आगे करैंगे । ऐसा सप्ततत्त्वका विचार न होते भी श्रद्धानका सद्भाव पाइए है । तातैं तहां अव्याप्तिपना नाहीं है । बहुरि प्रश्न—ऊंची दशाविषै जहां निर्विकल्प आत्मानुभव हो है, तहां तौ सप्त तत्त्वादिकका विकल्प भी निषेध किया है । सो सम्यक्त्वके लक्ष-णका निषेध करना कैसै संभवै । अर तहां निषेध संभवै है तो अव्याप्ति दूषण आया । ताका उत्तर—

नीचली दशाविषै सप्त तत्वनिके विकल्पनिविषै उपयोग लगाया, ताकरि प्रतीतिकौं दृढ़ कीन्हीं, अर विषयादिकतैं उप-योग छुड़ाय रागादि घटाया, बहुरि कार्य सिद्ध भए कारणनिका

भी निषेध कीजिए है । तातैं जहां प्रतीति भी दृढ भई, अर रागादिक दूर भए, तहां उपयोग भ्रमावनेका खेद काहेकौं करिए । तातैं तहां तिनि विकल्पनिका निषेध किया है । बहुरि सम्यक्त्वका लक्षण तौ प्रतीति ही है । सो प्रतीतिका तौ निषेध न किया । जो प्रतीति छुड़ाई होय, तो इस लक्षणका निषेध किया कहिए । सो तो है नाहीं । सो तौ तत्त्वनिकी प्रतीति तहां भी बनी रहै है । तातैं यहां अव्याप्तिपना नाहीं है बहुरि प्रश्न—जो छद्मस्थकै तौ प्रतीति अप्रतीति कहना संभवै है, तातैं तहां सप्त तत्त्वनिकी प्रतीति सम्यक्त्वका लक्षण कह्या सो हम मान्या, परन्तु केवली सिद्ध भगवानकै तौ सर्वका जानपना समान रूप है । तहां सप्ततत्वनिकी प्रतीति कहना संभवै नाहीं । अर तिनकै सम्यक्त्व गुण पाइए ही है, तातैं तहां तिस लक्षणका अव्याप्तिपना आया । ताका समाधान—

जैसैं छद्मस्थके श्रुतज्ञानके अनुसार प्रतीति पाइए है तैसैं केवली सिद्धभगवानके केवज्ञानके अनुसार ही प्रतीति पाइए है । जो सप्त तत्त्वनिका स्वरूप पहिले ठीक किया था, सो ही केवलज्ञानकरि जान्या । तहां प्रतीतिकौं परम अवगाढ़पनो भयो । याहीतैं परमअवगाढ़ सम्यक्त्व कह्या । जो पूर्व श्रद्धान किया था, ताकौं झूठ जान्या होता, तौ तहां अप्रतीति होती । सो तौ जैसा सप्त तत्त्वनिका श्रद्धान छद्मस्थके भया था, तैसा ही केवली सिद्धभगवानके पाइए है । तातैं ज्ञानादिककी हीनता अधिकता होतैं भी तिर्यंचादिक वा केवली सिद्ध भगवानकै सम्यक्त्व गुण

समान ही कह्या। बहुरि पूर्व अवस्थाविषै यह मानै था, संवर निर्जराकरि मोक्षका उपाय करना। पीछैं मुक्ति अवस्था भए ऐसैं मानने लगै, जो संवर निर्जराकरि हमारे मोक्ष भई। बहुरि पूर्वं ज्ञानकी हीनताकरि जीवादिकके थोड़े विशेष जानै था, पीछैं केवलज्ञान भए तिनके सर्व विशेष जानै। परन्तु मूलभूत जीवादिकके स्वरूपका श्रद्धान जैसा छद्मस्थके पाइए है, तैसा ही केवलीके पाइए है। बहुरि यद्यपि केवली सिद्ध भगवान् अन्यपदार्थनिकौं भी प्रतीति लिए जानै हैं, तथापि ते पदार्थ प्रयोजन-भूत नाहीं। तातैं सम्यक्त्वगुणविषै सप्त तत्त्वनिहीका श्रद्धान ग्रहण किया है। केवली सिद्धभगवान् रागादिरूप न परिणमैं हैं। संसार अवस्थाकौं न चाहै हैं। सो इस श्रद्धानका बल जानना। बहुरि प्रश्न--जो सम्यग्दर्शन तौ मोक्षमार्ग कह्या था मोक्षविषै याका सद्भाव कैसैं कहिए है। ताका उत्तर—कोई कारण ऐसा भी हो है, जो कार्य सिद्ध भए भी नष्ट न हो है। जैसैं काहू वृक्षकै कोई एक शाखाकरि अनेक शाखायुक्त अवस्था भई तिसकौं होतै वह एक शाखा नष्ट न हो है। तैसैं काहू आत्माकै सम्यक्त्व गुणकरि अनेकगुणयुक्त मुक्त अवस्था भई, ताकौं होतैं सम्यक्त्व गुण नष्ट न हो है। ऐसैं केवली सिद्धभगवानकै भी तत्त्वार्थश्रद्धान लक्षण ही सम्यक्त्व पाइए है। तातैं तहां अव्या-सिपनौं नाहीं है। बहुरि प्रश्न—मिथ्यादृष्टीकै भी तत्वार्थश्रद्धान हो है, ऐसा शास्त्रविषै निरूपण है। प्रवचनसारविषै आत्मज्ञान-शून्य तत्वार्थश्रद्धान अकार्य्यकारी कह्या है। तातैं सम्यक्त्वका

लक्षण तत्वार्थश्रद्धान कह्या है, तिसविषै अतिव्याप्ति दूषण लागै है। ताका समाधान—

मिथ्यादृष्टीकै जो तत्त्वश्रद्धान कह्या है, सो नामनिक्षेपकरि कह्या है। जामैं तत्वश्रद्धानका गुण नाहीं, अर व्यवहारविषै जाका नाम तत्वश्रद्धान कहिए, सो मिथ्यादृष्टीकै हो है। अथवा आगमद्रव्यनिक्षेपकरि हो है। तत्वार्थश्रद्धानके प्रतिपादक शास्त्रनिकौं अभ्यास है, तिनिका स्वरूप निश्चय करनेविषै उपयोग नाहीं लगावै है, ऐसा जानना। बहुरि यहां सम्यक्त्वका लक्षण तत्वार्थश्रद्धान कह्या है, सो भावनिक्षेपकरि कह्या है। सो गुण सहित सांचा तत्वार्थश्रद्धान मिथ्यादृष्टीके कदाचित् न होय। बहुरि आत्मज्ञानशून्य तत्त्वार्थश्रद्धान कह्या है। तहां भी सोई अर्थ जानना। सांचा जीव अजीवादिकका जाकै श्रद्धान होय, ताकै आत्मज्ञान कैसैं न होय। होय ही होय। ऐसैं कोई मिथ्यादृष्टीकै सांचा तत्वार्थश्रद्धान सर्वथा न पाइए है, तातैं तिस लक्षणविषै अतिव्याप्ति दूषण न लागै है।

बहुरि जो यह तत्वार्थश्रद्धान लक्षण कह्या, सो असंभवी भी नाहीं है। जातैं सम्यक्त्वका प्रतिपक्षी मिथ्यात्व ही है। याका लक्षण इससे विपरीतता लिए है। ऐसैं अव्याप्ति अतिव्याप्ति असंभवीपनाकरि रहित सर्व सम्यग्दृष्टीनिविषै तौ पाइए, अर कोई मिथ्यादृष्टीनिविषै न पाइए, ऐसा सम्यग्दर्शनका सांचा लक्षण तत्त्वार्थश्रद्धान है। बहुरि प्रश्न उपजै है—जो यहां सातौं तत्त्वनिके श्रद्धानका नियम कहा है सो बनै नाहीं। जातैं कहीं परतैं

भिन्न आपका श्रद्धानहीकौं सम्यक्त्व कहैं हैं । समयसारविषै '[1]एकत्वे नियतस्य' इत्यादि कलशा लिखा है, तिसविषै ऐसा कह्या है-जो इसका आत्माका परद्रव्यतैं भिन्न अवलोकन सो ही नियमतैं सम्यग्दर्शन है । तातैं नव तत्वनिकी संततिकौं छोड़ि हमारे यह एक आत्मा ही होहु । बहुरि कहीं एक आत्माके निश्चयहीकौं सम्यक्त्व कहै हैं । पुरुषार्थसिद्धयुपायविषै '[2]दर्शनमात्मविनिश्चितिः' ऐसा पद है । सो याका यह ही अर्थ है । तातैं जीव अजीवहीका वा केवल जीवहीका श्रद्धान भए भी सम्यक्त्व हो है । सातौं तत्वनिका श्रद्धानका नियम होता, तौ ऐसा काहेकौं लिखते । ताका समाधान,—

परतैं भिन्न आपका श्रद्धान हो है, सो आस्रवादिकका श्रद्धानकरि रहित हो है कि सहित हो है, । जो रहित हो है तौ मोक्षका श्रद्धान विना किस प्रयोजनके अर्थि ऐसा उपाय करै है । संवर निर्जराका श्रद्धान विना रागादिकरहित होय स्वरूपविषै उपयोग लगावनेकां काहेकौं उद्यम राखै है । आस्रव बंधका श्रद्धान विना पूर्व अवस्थाकौं काहेकौं छांड़ै है । तातैं आस्रवादिकका श्रद्धान-

---

१ एकत्वे नियतस्य शुद्धनयतो व्याप्तुर्यदस्यात्मनः
पूर्णज्ञानघनस्य दर्शनमिह द्रव्यान्तरेभ्यः पृथक् ।
सम्यग्दर्शनमेतदेव नियमादात्मा च तावानयम्
तन्मुक्त्वा नवतत्वसन्ततिमिमामात्मायमेकोऽस्तु नः ॥ ६ ॥

२ दर्शनमात्मविनिश्चितिरात्मपरिज्ञानमिष्यते बोधः ।
स्थितिरात्मनि चारित्रं कुत एतेभ्यो भवति बन्धः ॥ २१६ ॥

रहित आपापरका श्रद्धान करना संभवै नाहीं। बहुरि जो आस्रवादिकका श्रद्धानसहित हो है, तौ स्वयमेव सातौं तत्त्वनिके श्रद्धानका नियम भया। बहुरि केवल आत्माका निश्चय है, सो परका पररूप श्रद्धान भए विना आत्माका श्रद्धान न होय, तातैं अजीवका श्रद्धान भए ही जीवका श्रद्धान होय। बहुरि पूर्ववत् आस्रवादिकका भी श्रद्धान होय ही होय। तातैं यहां भी सातौं तत्त्वनिके ही श्रद्धानका नियम जानना। बहुरि आस्रवादिकका श्रद्धान विना आपापरका श्रद्धान वा केवल आत्माका श्रद्धान सांचा होता नाहीं। जातैं आत्मा द्रव्य है, सो तौ शुद्ध अशुद्ध पर्याय लिए है। जैसैं तंतु अवलोकन विना पटका अवलोकन न होय, तैसैं शुद्ध अशुद्ध पर्याय पहचाने विना आत्मद्रव्यका श्रद्धान न होय। सो शुद्ध अशुद्ध अवस्थाकी पहचानि आस्रवादिककी पहचानतैं हो है। बहुरि आस्रवादिकका श्रद्धान विना आपापर-का श्रद्धान वा केवल आत्माका श्रद्धान कार्यकारी भी नाहीं। जातैं श्रद्धान करो वा मति करो, आप है सो आप ही है, पर है सो पर ही है। बहुरि आस्रवादिकका श्रद्धान होय, तौ आस्रवबंधका अभावकरि संवर निर्जरारूप उपायतैं मोक्षपदकौं पावै। बहुरि जो आपापरका भी श्रद्धान कराइए है, सो तिस ही प्रयोजनके अर्थि कराइए है। तातैं आस्रवादिकका श्रद्धानसहित आपापरका जानना वा आपका जानना कार्यकारी है। यहां प्रश्न—जो ऐसै है, तौ शास्त्रनिविषै आपापरका श्रद्धान वा केवल आत्माका श्रद्धानहीकौं सम्यक्त्व कह्या, वा कार्यकारी कह्या। बहुरि नव

तत्वकी संतति छोड़ि हमारे एक आत्मा ही होहु, ऐसा कह्या । सो कैसें कह्या -ताका समाधान —

जाका सांचा आपापरका वा आत्माका श्रद्धान होय, ताकै सातौं तत्वनिका श्रद्धान होय ही होय । वहुरि जाकै सांचा सात तत्वनिका श्रद्धान होय, ताकै आपापरका वा आत्माका श्रद्धान होय ही होय । ऐसा परस्पर अविनाभावीपना जानि आपापरका श्रद्धानकौं वा आत्मश्रद्धान होनेकौं सम्यक्त्व कह्या है । बहुरि इस छलकरि कोई सामान्यपनै आपापरकौं जानि व आत्माकौं जानि कृतकृत्यपनौ मानै, तौ वाकै भ्रम है । जातैं ऐसा कह्या है- 'निर्विशेषो हि सामान्यो भवेत्खरविषाणवत्' याका अर्थ यह, जो विशेषरहित सामान्य है सो गधेके सींगके समान है । तातैं प्रयोजनभूत आस्रवादिक विशेषनिसहित आपापरका वा आत्माका श्रद्धान करना योग्य है । अथवा सातौं तत्वार्थनिका श्रद्धानकरि रागादिक मेटनेके अर्थि परद्रव्यनिकौ भिन्न भावै है, वा अपने आत्माहीकौं भावै है । ताकै प्रयोजनकी सिद्धि हो है । तातैं मुख्यताकरि भेदविज्ञानकौं वा आत्मज्ञानकौ कार्यकारी कह्या है । बहुरि तत्वार्थश्रद्धान किए विना सर्व जानना कार्यकरी नाहीं । जातैं प्रयोजन तौ रागादि मेटनेका है । सो आस्रवादिकका श्रद्धानविना यह प्रयोजन भासै नाहीं । तब केवल जाननेहीतै मानकौ वधावै, रागादिक छांडै नाहीं, तब वाका कार्य कैसें सिद्ध होय । बहुरि नवतत्त्वसंततिका छोड़ना कह्या है । सो पूर्वं नवतत्वके विचार करि सम्यग्दर्शन भया, पीछै निर्विकल्पदशा

होनेके अर्थि नवतत्वनिका भी विकल्प छोड़नेकी चाहि करी। वहुरि जाकै पहिलै ही नवतत्त्वनिका विचार नाहीं, ताकै तिस विकल्प छोड़नेका कहा प्रयोजन है। अन्य अनेक विकल्प आपकै पाइए है, तिनहीका त्याग करौ। ऐसैं आपापरका श्रद्धानविषै वा आत्मश्रद्धानविषै नवतत्त्व श्रद्धानविषै सप्ततत्त्वनिका श्रद्धानकी सापेक्षा पाइए है। तातैं तत्वार्थश्रद्धान सम्यक्त्वका लक्षण है। बहुरि प्रश्न--जो कहीं शास्त्रनिविषै अरहंतदेव निर्ग्रंथ गुरु हिंसा-रहित धर्मका श्रद्‌धानकौं सम्यक्त्व कह्या है, सो कैसैं है। ताका समाधान,—

अरहंत देवादिकका श्रद्धान होनेतैं वा कुदेवादिकका श्रद्धान दूर होनेकरि गृहीत मिथ्यात्वका अभाव हो है। तिस अपेक्षा याकौं सम्यक्त्वी कह्या है। सर्वथा सम्यक्त्वका लक्षण यह नाहीं। जातैं द्रव्यलिंगी मुनि आदि व्यवहार धर्मके धारक मिथ्यादृष्टी तिनिकै भी ऐसा श्रद्धान हो है। अथवा जैसैं अणुव्रत महाव्रत होतैं देशचारित्र सकलचारित्र होय, वा न होय। परंतु अणुव्रत भए विना देशचारित्र कदाचित् न होय अर महाव्रत धारे विना सकलचारित्र कदाचित् न होय। तातै इनि व्रतनिकौं अन्वयरूप कारण जानि कारणविषै कार्यका उपचारकरि इनकौं चारित्र कह्या तैसैं अरहंत देवादिकका श्रद्धान होतैं, तौ सम्यक्त्व होय वा न होय। परंतु अरहंतादिकका श्रद्धान भए विना तत्वार्थश्रद्धान-रूप सम्यक्त्व कदाचित् न होय। तातैं अरहंतादिकके श्रद्धान-कौं अन्वयरूप कारण जानि कारणविषै कार्यका उपचारकरि इस

श्रद्धानकौं सम्यक्त्व कह्या है। याहीतैं याका नाम व्यवहारसम्यक्त्व है। अथवा जाकै तत्वार्थश्रद्धान होय, ताकै सांचा अरहंतादिकके स्वरूपका श्रद्धान होय ही होय। तत्वार्थश्रद्धान विना पक्षकरि अरहंतादिकका श्रद्धान करै, परंतु यथावत् स्वरूपकी पहचानलिये श्रद्धान होय नाहीं। बहुरि जाकै सांचा अरहंतादिकके स्वरूपका श्रद्धान होय, ताकै तत्वार्थ श्रद्धान होय ही होय। जाकै अरहंतादिकका स्वरूप पहचानें जीव अजीव आस्रवादिककी पहचान हो है। ऐसै इनकौं परस्पर अविनाभावी जानि कहीं अरहंतादिकके श्रद्धानकौं सम्यक्त्व कह्या है। यहां प्रश्न—जो नारकादिक जीवनिकै देवकुदेवादिकका व्यवहार नाहीं, अर तिनिकै सम्यक्त्व पाइए है। तातैं सम्यक्त्व होतैं अरहंतादिकका श्रद्धान होय ही होय, ऐसा नियम संभवै नाहीं। ताका समाधान,—

सप्त तत्वनिका श्रद्धानविषै अरहंतादिकका श्रद्धान गर्भित है। जातैं तत्वश्रद्धानविषै मोक्षतत्वकौं सर्वोत्कृष्ट मानै है सो मोक्षतत्व तौ अरहंतसिद्धका लक्षण है। जो लक्षणकौ उत्कृष्ट मानै, सो ताके लक्ष्यको उत्कृष्ट मानै ही मानै। तातैं उनकौं भी सर्वोत्कृष्ट मान्या औरकौं न मान्या सो ही देवका श्रद्धान भया। बहुरि मोक्षका कारण संवर निर्जरा है तातैं इनकौ भी उत्कृष्ट मानै है। सो संवर निर्जराके धारक मुख्यपनै मुनि है। तातै मुनिकौं उत्तम मानै है औरकौं न मानै है, सोई गुरुका श्रद्धान भया। और रागादिकरहित भावका नाम अहिंसा है, ताहीकौं उपादेय मानै हैं औरकौं न मानै है सोई धर्मका श्रद्धान भया। ऐसै तत्वार्थ-

श्रद्धानविषै अरहंतदेवादिकका भी श्रद्धान गर्भित है। अथवा जिस निमित्ततैं इनके तत्वार्थ श्रद्धान हो है, तिस निमित्ततै अरहंतदेवादिकका भी श्रद्धान हो है। तातैं सम्यक्त्वविषै देवादिकके श्रद्धानका नियम है। बहुरि प्रश्न—जो केई जीव अरहंतादिकका श्रद्धान करै हैं, तिनके गुण पहिचानै हैं, अर उनकै तत्वश्रद्धानरूप सम्यक्त्व न हो है। तातैं जाकै सांचा अरहंतादिकका श्रद्धान होय, ताकै तत्वश्रद्धान होय ही होय, ऐसा नियम संभवै नाहीं। ताका समाधान,—

तत्वश्रद्धान विना अरहंतादिकके छियालीसादि गुण जानै है, सो पर्यायाश्रित गुण जानना भी न हो है। जातैं जीव अजीवकी जाति पहचाने विना अरहंतादिकके आत्माश्रित गुणनिकौं वा शरीराश्रित गुणनिकौं भिन्न भिन्न न जानै। जो जानै, तौ अपने आत्माकौं परद्रव्यतै भिन्न कैसैं न मानै। तातैं प्रवचनसारविषै ऐसा कह्या है,—

जो जाणदि अरहंतं दव्वत्तगुणत्तपज्जयत्तेहिं।
जो जाणदि अप्पाणं मोहो खलु जादि तस्स लयं ॥१॥

याका अर्थ—यह जो अरहंतकौं द्रव्यत्व गुणत्व पर्यायत्वकरि जानै है, सो आत्माकौं जानै है। ताका मोह विलयकौं प्राप्त हो है। तातैं जाकै जीवादिक तत्वनिका श्रद्धान नाहीं, ताकै अरहंतादिकका भी सांचा श्रद्धान नाहीं। बहुरि मोक्षादिक तत्वनिका श्रद्धानविना अरहंतादिकका माहात्म्य यथार्थ न जानै। लौकिक अतिशयादिककरि अरहंतका तपश्चरणादिकरि गुणका अर

परजीवनिकी अहिंसादिकरि धर्मकी महिमा जानै, सो ए पर्यायाश्रित भाव हैं ! बहुरि आत्माश्रित भावनिकरि अरहंतादिकका स्वरूप तत्वश्रद्धान भए ही जानिए हैं। तातैं जाकै सांचा अरहंतादिकका श्रद्धान होय, ताकै तत्वश्रद्धान होय ही होय, ऐसा नियम जानना। या प्रकार सम्यक्त्वका लक्षण निर्देश किया। यहां प्रश्न--जो सांचा तत्वार्थश्रद्धान वा आपापरका श्रद्धान वा आत्मश्रद्धान वा देवधर्मगुरुका श्रद्धान सम्यक्त्वका लक्षण कह्या। बहुरि इन सर्व लक्षणनिकी परस्पर एकता भी दिखाई, सो जानी। परंतु अन्य अन्य प्रकार लक्षण करनेका प्रयोजन कहा ताका उत्तर-

ए चार लक्षण कहे, तिनविषै सांची दृष्टिकरि एक लक्षण ग्रहण किए चारों लक्षणोंका ग्रहण हो है। तथापि मुख्य प्रयोजन जुदा जुदा विचारि अन्यअन्य प्रकार लक्षण कहे हैं। जहां तत्वार्थ श्रद्धान लक्षण कह्या है, तहां तौ यह प्रयोजन है जो इन तत्वनिकैं पहिचानै, तौ यथार्थ वस्तुके स्वरूप वा अपने हित अहितका श्रद्धान करै तब मोक्षमार्गविषै प्रवर्तै। बहुरि जहां आपापरका भिन्न श्रद्धान लक्षण कह्या है, तहां तत्वार्थश्रद्धानका प्रयोजन जाकरि सिद्ध होय, तिस श्रद्धानकौं मुख्य लक्षण कह्या है। जीव अजीवके श्रद्धानका प्रयोजन आपापरका भिन्न श्रद्धान करना है। बहुरि आश्रवादिकके श्रद्धानका प्रयोजन रागादि छोड़ना है। सो अपापरका भिन्न श्रद्धानं भए परद्रव्यविषैं रागादि न करनेका श्रद्धान हो है। ऐसै तत्वार्थश्रद्धानका प्रयोजन अपापरकेभिन्न श्रद्धानतै सिद्ध होना जानि इस लक्षणकौं कह्या है। बहुरि जहां

आत्मश्रद्धान लक्षण कह्या है, तहां आपापरका भिन्नश्रद्धानका प्रयोजन इतना ही है—आपकौं आप जानना। आपकौं आप जानैं परका भी विकल्प कार्यकारी नाहीं। ऐसा मूलभूत प्रयोजनकी प्रधानता जानि आत्मश्रद्धानकौं मुख्य लक्षण कह्या है। बहुरि जहां देवगुरुधर्मका श्रद्धान लक्षण कह्या है, तहां बाह्य साधनकी प्रधानता करी है। जातैं अरहंतदेवादिकका श्रद्धान सांचा तत्त्वार्थश्रद्धानकौं कारण है। अर कुदेवादिकका श्रद्धान कल्पित अतत्त्वश्रद्धानका कारण है। सो बाह्य कारणकी प्रधानताकरि कुदेवादिकका श्रद्धान न करावनेके अर्थि देवगुरुधर्मका श्रद्धानकौं मुख्य लक्षण कह्या है। ऐसैं जुदे जुदे प्रयोजननिकरि मुख्यता करि जुदे जुदे लक्षण कहे हैं। इहां प्रश्न—जो ए चार लक्षण कहे, तिनविषै यह जीव किस लक्षणकौं अंगीकार करै। ताका समाधान,—

मिथ्यात्वकर्मका उपशमादि होतैं विपरीताभिनिवेशका अभाव हो है। तहां च्यारौं लक्षण युगपत् पाइए है। बहुरि विचार अपेक्षा मुख्यपनैं तत्वार्थनिकौं विचारै है। कै आपापरका भेद विज्ञान करै है। कै आत्मस्वरूपहीकौं संभारै है। कै देवादिकका स्वरूप विचारै हैं। ऐसैं ज्ञानविषै तौ नाना प्रकार विचार होंय, परंतु श्रद्धानविषै सर्वत्र परस्पर सापेक्षपना पाइए है। तत्वविचार करै है, तौ भेदविज्ञानादिकका अभिप्राय लिए करै हैं। ऐसैं ही अन्यत्र भी परस्पर सापेक्षपणौ है। तातैं सम्यग्दृष्टीकै श्रद्धानविषै च्यारौं ही लक्षणनिका अंगीकार हैं। बहुरि जाकै मिथ्यात्वका

उदय है, ताकै विपरीताभिनिवेश पाइए है । ताकै ए लक्षण आभास मात्र होंय, सांचे न होंय । जिनमतके जीवादिकतत्त्वनिकौं मानै, औरकौं न मानै, तिनके नाम भेदादिककौं सीखै हैं, ऐसै तत्वार्थश्रद्धान होय है । परंतु तिनका यथार्थ भावका श्रद्धान न होय, बहुरि आपापरका भिन्नपनाकी बातैं करै, अर वस्त्रादिकविषै परबुद्धिका चिंतवन करै परंतु जैसै पर्यायविषै अहंबुद्धि है, अर वस्त्रादिकविषै परबुद्धि है, तैसै आत्मविषै अहंबुद्धि शरीरविषै परबुद्धि न हो है। बहुरि आत्माकौ जिनवचनानुसार चिंतवै, परंतु प्रतीतिरूप आपकौ आप श्रद्धान न करै है । बहुरि अरहंतादिक विना और कुदेवादिककौ न मानै है । परंतु तिनके स्वरूपकौं यथार्थ पहचानि श्रद्धान न करै है। ऐसै ए लक्षणाभास मिथ्यादृष्टिकै हो हैं। इनविषै कोई होय, कोई न होय। यहां इनकै भिन्नपनो भी न संभवै है । बहुरि इन लक्षणाभासनिविषै इतना विशेष है--जो पहिलै तौ देवादिकका श्रद्धान होय, पीछैं तत्त्वनिका विचार होय, पीछैं आपापरका चिंतवन करै, पीछैं केवल आत्माकौं चिंतवै । इस अनुक्रमतै साधन करै, तौ परंपराय सांचा मोक्षमार्गकौं पाय कोई जीव सिद्धपदकौ भी पावै । बहुरि इस अनुक्रमका उलंघन करै, वाकै देवादिक माननेका कछू ठीक नाहीं । अर बुद्धिकी तीव्रतातैं तत्त्वातत्त्वविचारादिविषै प्रवर्त्तै है । तातैं आपकौ ज्ञानी जानै है । अथवा तत्त्वविचारविषै भी उपयोग न लगावै है । अर आपापरका भेदविज्ञानी हुवा विचारै है। अथवा आपापरका भी ठीक न करै

है अर आपकौं आत्मज्ञानी मानै है। सो ए सर्व चतुराईकी बातैं हैं, मानादिक कषायनिके साधन हैं किछू भी कार्यकारी नाहीं। तातैं जो जीव अपना भला करया चाहै, तिसकौं यावत् सांचा श्रद्धान दर्शनकी प्राप्ति न होय, तावत् इनकौं भी अनुक्रमतैं अंगीकार करना। सो ही कहिए है—

पहलै तौ आज्ञादिककरि वा कोई परीक्षाकरि कुदेवादिकका मानना छोड़ि अरहंतदेवादिकका श्रद्धान करना। जातैं ऐसा श्रद्धान भए गृहीतमिथ्यात्वका तौ अभाव हो है। बहुरि मोक्ष-मार्गके विघ्न करनहारे कुदेवादिकका निमित्त दूर हो है। मोक्ष-मार्गका सहाई अरहंतदेवादिकका निमित्त मिलै है, तातैं पहिलैं देवादिकका श्रद्धान करना। बहुरि पीछैं जिनमतविषै कहे जीवादिक तत्त्वनिका विचार करना। नाम लक्षणादिक सीखने। जातै इस अभ्यासतैं तत्त्वार्थश्रद्धानकी प्राप्ति होय। पीछैं आपापरका भिन्नपना जैसै भासै तैसैं विचार किया करै जातैं इस अभ्यासतैं भेदविज्ञान होय। बहुरि पीछैं आपविषै आपो माननेके अर्थि स्वरूपका विचार किया करै। जातैं इस अभ्यासतैं आत्मानुभवकी प्राप्ति हो है। बहुरि ऐसैं अनुक्रमतैं इनकौं अंगीकार करि पीछैं इनहीविषै कबहू देवादिकका विचारविषै कबहू तत्त्वविचार-विषै, कबहू आपापरका विचारविषै, कबहू आत्मविचारविषै उप-योग लगावै। ऐसे अभ्यासतै दर्शनमोह मंद होता जाय, तब कदाचित् सांचे सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति हो है। जातैं ऐसा नियम तौ है नाहीं। कोई जीवकै कोई विपरीत कारण प्रबल बीचिमैं

होय जाय, तौ सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति नाहीं भी होय। परंतु मुख्य-पनैं घने जीवनिकै तौ इस ही अनुक्रमतैं कार्यसिद्धि हो है। तातैं इनकौं ऐसैं ही अंगीकार करना। जैसैं पुत्रका अर्थी विवाहादि कारणनिकौं मिलावै, पीछै घने पुरुषनिकै तौ पुत्रकी प्राप्ति होय ही है। काहूकै न होय, तौ नाहीं भी होय। परंतु याकौं तौ उपाय करना ही। तैसैं सम्यक्त्वका अर्थी इन कारणनिकौं मिलावै पीछै घने जीवनिकै तौ सम्यक्त्वकी प्राप्ति होइ ही है। काहूकै न होय, तौ नाहीं भी होय। परंतु याकौं तौ जातैं कार्य बनै, सोई उपाय करना। ऐसैं सम्यक्त्वका लक्षण निर्देश किया। यहां प्रश्न— जो सम्यक्त्वके लक्षण तौ अनेक प्रकार कहे, तिनविषै तुम तत्त्वार्थश्रद्धान लक्षणकौं मुख्य कह्या, सो कारण कहा। ताका समाधान,—

तुच्छबुद्धीनकौं अन्य लक्षणनिविषै प्रयोजन प्रगट भासै नाहीं, वा भ्रम उपजै। अर इस तत्त्वार्थश्रद्धान लक्षणविषै प्रगट प्रयोजन भासै है, किछू भ्रम उपजै नाहीं। तातै इस लक्षणकौं मुख्य किया है। सोई दिखाइए है—देवगुरुधर्मका श्रद्धानविषै तुच्छ-बुद्धीनिकौं यह भासै—अरहंतदेवादिककौं मानना, औरकौं न मानना। इतना ही सम्यक्त्व है। तहां जीव अजीवका बंधमोक्षके कारणकार्यका स्वरूप न भासै, तब मोक्षमार्ग प्रयोजनकी सिद्धि न होय। वा जीवादिकका श्रद्धान भए विना इस ही श्रद्धानविषै संतुष्ट होय आपकौं सम्यक्ती मानै। एक कुदेवादिकतैं द्वेष तौ राखै, अन्य रागादि छोड़नेका उद्यम न करै, ऐसा भ्रम उपजै।

बहुरि आपापरका श्रद्धानविषै तुच्छबुद्धीनकौं यह भासै कि, आप-परका ही जानना कार्यकारी है। इसतै ही सम्यक्त्व हो है। तहां आस्रवादिकका स्वरूप न भासै। तब मोक्षमार्ग प्रयोजनकी सिद्धि न होय। वा आस्रवादिकका श्रद्धान भए विना इतना ही जाननेविषै संतुष्ट होय, आपकौं सम्यक्ती मान स्वच्छंद होय रागादि छोड़नेका उद्यम न करै। ऐसा भ्रम उपजै। बहुरि आत्मश्रद्धान लक्षणविषै तुच्छबुद्धीनिकौं यह भासै कि, आत्माहीका विचार कार्यकारी है। इसहीतै सम्यक्त्व हो है। तहां जीव अजीवादिकका विशेष वा आस्रवादिकका स्वरूप न भासै, तब मोक्षमार्ग प्रयोजनकी सिद्धि न होय। वा जीवादिकका विशेष वा आस्रवादिकके स्वरूपका श्रद्धान भए विना इतने ही विचारतैं आपकौं सम्यक्ती मानि स्वच्छन्द होय रागादि छोड़नेका उद्यम न करै है। याकै ऐसा भ्रम उपजै है। ऐसा जान इन लक्षणनिकौं मुख्य न किए। बहुरि तत्त्वार्थ-श्रद्धान लक्षणविषै जीव अजीवादिकका वा आस्रवादिकका श्रद्धान होय। तहां सर्वका स्वरूप नीकै भासै तब मोक्षमार्गका प्रयोजनकी सिद्धि होय। बहुरि इस श्रद्धानके भए सम्यक्त होय। परन्तु यह संतुष्ट न हो है। आस्रवादिकका श्रद्धान होनैतै रागादि छोड़ मोक्षका उद्यम राखै है। याकै भ्रम न उपजै है। तातैं तत्त्वार्थ-श्रद्धान लक्षणकौं मुख्य किया है। अथवा तत्वार्थश्रद्धान लक्षण विषै तौ देवादिकका श्रद्धान वा आपापरका श्रद्धान वा आत्म-श्रद्धान गर्भित हो है। सो तो तुच्छ बुद्धिनकौ भी भासै। बहुरि अन्य लक्षणनिविषै तत्त्वार्थश्रद्धानका गर्भितपनो विशेष बुद्धिमान

होंय तिनहीकौं भासै। तुच्छबुद्धिनिकौं न भासै। तातै तत्वार्थ श्रद्धान लक्षणकौं मुख्य किया है। अथवा मिथ्यादृष्टीकै आभास मात्र ए होय। तहां तत्त्वार्थनिका विचार तो शीघ्रपनै विपरीताभिनिवेश दूर करनेकौं कारण हो है। अन्य लक्षण शीघ्र कारण नाहीं होंय। वा विपरीताभिनिवेशका भी कारण होय जाय। तातैं यहां सर्व प्रकार प्रसिद्ध जानि **विपरीताभिनिवेश रहित जीवादि तत्त्वार्थनिका श्रद्धान सो ही सम्यक्त्वका लक्षण है,** ऐसा निर्देश किया। ऐसै लक्षणनिर्देशका निरूपण किया। ऐसा लक्षण जिस आत्माका स्वभावविषै पाइए है। सो ही सम्यक्त्वी जानना।

अब इस सम्यक्त्वके भेद दिखाइए है, तहां प्रथम निश्चय व्यवहारका भेद दिखाइए है,—विपरीताभिनिवेशरहित श्रद्धान-रूप आत्मपरिणाम सो तौ निश्चय सम्यक्त्व है। जातै यह सत्यार्थ सम्यक्त्वका स्वरूप है। सत्यार्थहीका नाम निश्चय है। बहुरि विपरीताभिनिवेशरहित श्रद्धानकौं कारणभूत श्रद्धान सो व्यवहार सम्यक्त्व है। जातैं कारणविषै कार्यका उपचार किया है। सो उपचारहीका नाम व्यवहार है। तहां सम्यग्दृष्टी जीवकै देवगुरु धर्मादिकका सांचा श्रद्धान है। तिसही निमित्ततैं याकै श्रद्धानविषै विपरीताभिनिवेशका अभाव है। सो यहां विपरीताभिनिवेशरहित श्रद्धान सो तो निश्चय सम्यक्त्व है, अर देवगुरुधर्मादिकका श्रद्धान है, सो व्यवहार सम्यक्त्व है। ऐसैं एक ही कालविषै दोऊ सम्यक्त्व पाइए है। बहुरि मिथ्यादृष्टी जीवकै देवगुरुधर्मादिकका

श्रद्धान आभास मात्र हो है । अर याकै श्रद्धानविषै विपरीताभि-
निवेशका अभाव न हो है । जातैं यहां निश्चय सम्यक्त्व तौ है
नाहीं, अर व्यवहार सम्यक्त्व भी आभासमात्र है । जातै याकै
देवगुरुधर्मादिकका श्रद्धान है, सो विपरीताभिनिवेशके अभावकौं
साक्षात् कारण भया नाहीं । कारण भए विना उपचार संभवै
नाहीं । तातैं साक्षात् कारण अपेक्षा व्यवहार सम्यक्त्व भी याकैं
न संभवै है । अथवा याकै देवगुरुधर्मादिकका श्रद्धान नियमरूप
हो है । सो विपरीताभिनिवेशरहित श्रद्धानकौ परंपरा कारणभूत
है । यद्यपि नियमरूप कारण नाहीं, तथापि मुख्यपनै कारण है ।
बहुरि कारणविषै कार्यका उपचार संभवै है । तातैं मुख्यरूप
परंपरा कारण अपेक्षा मिथ्यादृष्टीकै भी व्यवहार सम्यक्त्व कहिए
है । यहां प्रश्न—जो केई शास्त्रनिविषै देवगुरुधर्मका श्रद्धानकौं
वा तत्त्वश्रद्धानकौं तो व्यवहार सम्यक्त्व कह्या है, अर आपापरका
श्रद्धानकौं वा केवल आत्माके श्रद्धानकौं निश्चय सम्यक्त्व कह्या है
सो कैसैं है । ताका समाधान,—

देवगुरुधर्मका श्रद्धानविषै प्रवृत्तिकी मुख्यता है । जो प्रवृत्ति-
विषै अरहंतादिककौं देवादिक मानै, औरकौं न मानैं, सो देवादि-
कका श्रद्धानी कहिए हैं । अर तत्त्वश्रद्धानविषै तिनके विचार-
की मुख्यता है । जो ज्ञानविषै जीवादितत्त्वनिकौं विचारै, ताकौं
तत्त्वश्रद्धानी कहिए है । ऐसै मुख्यता पाइए है । सो ए दोऊ
काहू जीवकै सम्यक्त्वकौ कारण तौ होय, परंतु इनका सद्भाव
मिथ्यादृष्टीकै भी संभवै है । तातैं इनकौं व्यवहार सम्यक्त्व कह्या

है। बहुरि आपापरका श्रद्धानविषै वा आत्मश्रद्धानविषै विपरी-ताभिनिवेशरहितपना की मुख्यता है। जो आपापरका भेद-विज्ञान करै, वा अपने आत्माकौं अनुभवै, ताकै मुख्यपनै विपरी-ताभिनिवेश न होय। तातैं भेदविज्ञानीकौं वा आत्मज्ञानीकौं सम्यग्दृष्टी कहिए है। ऐसै मुख्यताकरि आपापरका श्रद्धान व आत्मश्रद्धान सम्यग्दृष्टीहीकै पाइए है। तातै इनकौं निश्चय सम्यक्त्व कह्या, सो ऐसा कथन मुख्यताकी अपेक्षा है। तारतम्यपनै ए चारौं आभासमात्र मिथ्यादृष्टीकै होंय, सांचे सम्यग्दृष्टीकै होंय। तहां आभासमात्र है, सो नियम विना परंपरा कारण हैं। अर ए सांचे है, सो नियमरूप साक्षात् कारण है। तातैं इनकौं व्यवहाररूप कहिए। इनके निमित्ततै जो विपरीताभिनिवेश-रहित श्रद्धान भया, सो निश्चय सम्यक्त्व है ऐसा जानना। बहुरि प्रश्न—केई शास्त्रनिविषै लिखै हैं—आत्मा है, सो ही निश्चय सम्यक्त्व है, और सर्व व्यवहार है। सो कैसैं है। ताका समाधान,-

विपरीताभिनिवेशरहित श्रद्धान भया, सो आत्माहीका स्वरूप है। तहां अभेदबुद्धिकरि आत्मा अर सम्यक्त्वविषै भिन्नता नाहीं। तातैं निश्चयकरि आत्माहीकौं सम्यक्त्व कह्या। और सर्व सम्यक्त्व तौ निमित्तमात्र है। वा भेदकल्पना किए आत्मा अर सम्यक्त्वकै दोय भेद हो हैं। अर अन्य निमित्तादिककी अपेक्षा आज्ञा-सम्यक्त्वादि सम्यक्त्वके दश भेद कहे हैं, सो **आत्मानुशासन** विषै कहा है,—

आज्ञामार्गसमुद्भवमुपदेशात्सूत्रबीजसंक्षेपात्।
विस्ताराथाभ्यां भवमवगाढपरमावगाढे च ॥११॥

याका अर्थ–जिनआज्ञातैं तत्त्वश्रद्धान भया होय, सो आज्ञा सम्यक्त्व है। यहां इतना जानना–"मोकौं जिनआज्ञा प्रमाण है" इतना ही श्रद्धान सम्यक्त्व नाहीं है। आज्ञा मानना, तौ कारणभूत है। याहीतै यहां आज्ञातैं उपज्या कह्या है। तातैं पूर्वैं जिनआज्ञा माननैतैं पीछैं जो तत्त्वश्रद्धान भया, सो **आज्ञा–सम्यक्त्व** है। ऐसैं ही निर्ग्रन्थमार्गके अवलोकनतैं तत्त्वश्रद्धान भया होय, सो **मार्गसम्यक्त्व** है। बहुरि उत्कृष्ट पुरुष तीर्थंकरा–दिक तिनके पुराणनिका उपदेशतैं जो उपज्या सम्यग्ज्ञान ताकरि उत्पन्न आगमसमुद्रविषै प्रवीणपुरुषनिकरि उपदेश आदितैं भई जो उपदेशकदृष्टि सो **उपदेशसम्यक्त्व** है। मुनिके आचरणका विधानकौं प्रतिपादन करता जो आचारसूत्र ताहि सुनकर श्रद्धान करना जो होय, सो सूत्रदृष्टि भलेप्रकार कही है। यह **सूत्रसम्यक्त्व** है। बहुरि बीज जे गणितज्ञानकौं कारण तिनकरि अनुपम दर्शनमोहका उपशमके बलतैं दुष्कर है जाननेकी गति जाकी ऐसा पदार्थनिका समूह ताकी भई है उपलब्धि श्रद्धान-रूप परणति जाकै, ऐसा करणानुयोगका ज्ञानी भया, ताकै बीजदृष्टी हो है। यह **बीजसम्यक्त्व** जानना। बहुरि पदार्थनिकौं संक्षेपपनेतैं जानकरि जो श्रद्धान भया, सो भली संक्षेपदृष्टि है। यह **संक्षेपसम्यक्त्व** जानना। जो द्वादशांगबानीकौं सुन कीन्हीं जो रुचि श्रद्धान, ताहि विस्तारदृष्टी हे भव्य तू जानि। यह

विस्तारसम्यक्त्व है। बहुरि जैनशास्त्रके वचनविना कोई अर्थका निमित्ततैं भई सो अर्थदृष्टि है। यह **अर्थसम्यक्त्व** जानना। बहुरि अंग अर अंगबाह्यसहित जैनशास्त्र ताकौं अवगाह करि जो निपजी, सो अवगाढ़दृष्टि है। यह **अवगाढसम्यक्त्व** जानना। ऐसै आठ भेद तौ कारण अपेक्षा किए है। बहुरि श्रुतकेवलीके जो तत्त्वश्रद्धान है, ताकौं **अवगाढ़सम्यक्त्व** कहिए है। केवलज्ञानीकै जो तत्त्वश्रद्धान है, ताकौं **परमावगाढसम्यक्त्व** कहिए है। ऐसै दोय भेद ज्ञानका सहकारीपनाकी अपेक्षा किए हैं। या प्रकार दशभेद सम्यक्त्वके किए। तहां सर्वत्र सम्यक्त्वका स्वरूप तत्वार्थश्रद्धान ही जानना। बहुरि सम्यक्त्वके तीन भेद किए हैं। १ औपशमिक, २ क्षायोपशमिक, ३ क्षायिक। ए तीन भेद दर्शनमोहकी अपेक्षा किए है। तहां उपशमसम्यक्त्वके दोय भेद हैं। एक प्रथमोपशम सम्यक्त्व, दूसरा द्वितीयोपशम सम्यक्त्व। तहां मिथ्यात्वगुणस्थानविषै करणकरि दर्शनमोहकौ उपशमाय सम्यक्त्व उपजै, ताकौं प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहिए है। तहां इतना विशेष है—अनादि मिथ्यादृष्टीकै तो एक मिथ्यात्वप्रकृतिहीका उपशम होय है। जातैं याकै मिश्रमोहिनी अर सम्यक्त्वमोहिनीकी सत्ता है नाहीं। जब जीव उपशमसम्यक्त्वकौ प्राप्त होय, तिस सम्यक्त्वके कालविषै मिथ्यात्वके परमाणूनिकौं मिश्रमोहिनीरूप वा सम्यक्त्वमोहिनीरूप परिणमावै है, तब तीन प्रकृतीनकी सत्ता हो है। तातैं अनादि मिथ्यादृष्टीकै एक मिथ्यात्वप्रकृतिकी ही सत्ता है। तिसहीका उपशम हो है।

बहुरि सादिमिथ्यादृष्टीकै काहूकै तीन प्रकृतीनिकी सत्ता है, काहूकै एकहीकी सत्ता है। जाकै सम्यक्त्वकालविषै तीनकी सत्ता भई थी, सो सत्ता पाइए ताकै तीनकी सत्ता है। अर जाकै मिश्रमोहिनी सम्यक्त्वमोहिनीकी उद्वेलना होय गई होय, उनके परमाणु मिथ्यात्वरूप परिणम गए होंय, ताकै एक मिथ्यात्वकी सत्ता है। तातैं सादि मिथ्यादृष्टीकै तीन प्रकृतीनिका वा एक प्रकृतीका उपशम हो है। उपशम कहा? कहिए है—अनिवृत्तिकरणविषै किया अंतःकरणविधानतैं जे सम्यक्त्वकालविषैं उदय आवनेयोग्य निषेक थे, तिनिका तौ अभाव किया, तिनिके परमाणु अन्यकालविषै उदय आवनेयोग्य निषेकरूप किए। बहुरि अनिवृत्तकरणहीविषै किया उपशमविधानतैं जे तिसकालविषै उदय आवनेयोग्य निषेक, ते उदीरणारूप होय इस कालविषै उदय न आ सकैं ऐसे किए। ऐसैं जहां सत्ता तौ पाइए, अर उदय न पाइए, ताका नाम उपशम है सो यह मिथ्यात्वतैं भया प्रथमोपशम सम्यक्त्व, सो चतुर्थादि सप्तमगुणस्थान पर्यंत पाइए, है। बहुरि उपशम श्रेणीकौं सन्मुख होतैं सप्तमगुणस्थानविषै क्षयोपशम-सम्यक्त्वतैं जो उपशम सम्यक्त्व होय, ताका नाम द्वितीयोपशम-सम्यक्त्व है। यहां करणकरि तीन ही प्रकृतीनिका उपशम हो है। जातैं यातैं तीनहीका सत्ता पाइए यहां भी अंतःकरणविधानतैं वा उपशमविधानतैं तिनिके उदयका अभाव करै है। सोही उपशम है। सो यह द्वितीयोपशम सम्यक्त्व सप्तमादि ग्यारवां गुणस्थान-पर्यंत हो है। पड़ता हुवा कोई छठै पांचवैं चौथै गुणस्थान भी रहै

है, ऐसा जानना। ऐसै उपशम सम्यक्त्व दोय प्रकार है। सो यह सम्यक्त्व वर्तमानकालविषै क्षायिकवत् निर्मल है। याका प्रतिपक्षी कर्मकी सत्ता पाइए है, तातै अन्तर्मुहूर्त कालमात्र यह सम्यक्त्व रहै है। पीछैं दर्शनमोहका उदय आवै है, ऐसा जानना। ऐसैं उपशम सम्यक्त्वका स्वरूप कह्या। बहुरि जहां दर्शनमोहकी तीन प्रकृतिनिविषै सम्यक्त्वमोहनीका उदय पाइए है, ऐसी दशा जहां होय, सो क्षयोपशम है। जातैं समलतत्त्वार्थ श्रद्धान होय, सो क्षयोपशम सम्यक्त है। अन्य दोय प्रकारका उदय न होय, तहां क्षयोपशम सम्यक्त्व हो है, सो उपशम सम्यक्त्वका काल पूर्ण भए यह सम्यक्त्व हो है। वा सादि मिथ्यादृष्टीकै मिथ्यात्वगुण-स्थानतैं वा मिश्रगुणस्थानतै भी याकी प्राप्ति हो है। क्षयोपशम कहा-सो कहिए है,—

दर्शनमोहकी तीन प्रकृतीनिविषै जो मिथ्यात्वका अनुभाग है, ताके अनंतवै भाग मिश्रमोहनीका है। ताके अनंतवै भाग सम्यक्त्वमोहनीका है। सो इनविषै सम्यक्त्वमोहिनी प्रकृति देशघातिक है। याका उदय होतैं भी सम्यक्त्वका घात न होय। किंचित् मलीनता करै, मूलघात न कर सकै। ताहीका नाम देश-घाति है। सो जहां मिथ्यात्व वा मिश्रमिथ्यात्वका वर्त्तमानकाल-विषै उदय आवनेयोग्य निषेक तिनिका उदय हुए विना ही निर्जरा होना, सो तौ क्षय जानना। और इनहीका आगामि-कालविषै उदय आवने योग्य निषेकनिकी सत्ता पाइए है, सो ही उपशम है। और सम्यक्त्व मोहिनीका उदय पाइए है, ऐसी दशा

जहां होय सो क्षयोपशम है तातैं समलतत्त्वार्थश्रद्धान होय, सो क्षयोपशम सम्यक्त्व है। यहां जो मल लागै हैं, ताका तारतम्य स्वरूप तौ केवली जानै है, उदारण दिखावने के अर्थि चलमलिन अगाढ़पना कह्या है हैं। तहां व्यवहारमात्र देवादिककी प्रतीति तौ होय, परंतु अरहंतदेवादिविषै यह मेरा है, यह अन्यका है, इत्यादि भाव सो चलपना है। शंकादि मल लागै है, सो मलीन-पना है। यह शांतिनाथ शांतिका कर्त्ता है, इत्यादि भाव सो अगाढ़पना है। सो ऐसा उदाहरण व्यवहारमात्र दिखाए। परंतु नियमरूप नाहीं। क्षयोपशम सम्यक्त्वविषै जो नियमरूप कोई मल लागै है, सो केवली जानै हैं। इतना जानना-याके तत्त्वार्थ-श्रद्धानविषै कोई प्रकार करि समलपनो हो है। तातै यह सम्यक्त्व निर्मल नाहीं है। इस क्षयोपशम सम्यक्त्वका एक ही प्रकार है। याविषै कछू भेद नाहीं है। इतना विशेष है-जो क्षायिक सम्वक्त्वकौ सन्मुख होतै, अंतर्मुहूर्तकाल मात्र जहां मिथ्यात्वकी प्रकृतिका लोप करै है, तहां दोय ही प्रकृतीनिकी सत्ता रहै है। पीछै मिश्रमोहिनीका भी क्षय करै है। तहां सम्यक्त्वमोहिनीकी ही सत्ता रहै है। पीछै सम्यक्त्वमोहिनीकी कांडकघातादि क्रिया न करै है। तहां कृतकृत्य वेदकसम्यग्दृष्टी नाम पावै है, ऐसा जानना। बहुरि इस क्षयोपशमसम्यक्त्वहीका नाम वेदकसम्यक्त्व है। जहां मिथ्यात्वमिश्रमोहिनीकी मुख्यता करि कहिए, तहां क्षयो पशमसम्यक्त्व नाम पावै है। सम्यक्त्व मोहिनीकी मुख्यताकरि कहिए तहां वेदक नाम पावै है। सो कहने मात्र दोय नाम है

स्वरूपविषै भेद है नाहीं । बहुरि यह क्षयोपशम सम्यक्त्व चतुर्थादि सप्तम गुणस्थान पर्यंत पाइए है । ऐसैं क्षयोपशम सम्यक्त्वका स्वरूप कह्या--

बहुरि तीनै प्रकृतीनिके सर्वथा सर्व निषेकनिका नाश भए अत्यंत निर्मल तत्वार्थश्रद्धान होय, सो क्षायिक सम्यक्त्व है। सो चतुर्थादि चार गुणस्थानविषै कहीं क्षयोपशम सम्यग्दृष्टीकै याकी प्राप्ति हो है। कैसैं हो हैं, सो कहिए है--प्रथम तीन करणकरि मिथ्यात्वके परमणूनिकौं मिश्रमोहिनीरूप परिणमावै वा सम्यक्त्व मोहिनीरूप परिणमावै, वा निर्जरा करै। ऐसैं मिथ्यात्वकी सत्ता नाश करै। बहुरि मिश्र आदि मोहिनीके परमाणूनिकौं सम्यक्त्व-मोहिनीरूप परिणमावै वा निर्जरा करै, ऐसैं मिश्रमोहिनीका नाश करै। बहुरि सम्यक्त्वमोहिनीका निषेक उदय आय खिरै, वाकी बहुत स्थिति होय, तौ ताकौ स्थितिकांडादिकरि घटावै। जहां अंतर्मुहूर्तस्थिति रहै, तब कृतकृत्य वेदकसम्यग्दृष्टी होय। बहुरि अनुक्रमतैं इन निषेकनिका नाश करि क्षायिक सम्यग्दृष्टी हो है। सो यह प्रतिपक्षी कर्मके अभावतै निर्मल है, वा मिथ्यात्वरूपी रज ताके अभावतै वीतराग है। याका नाश न होय। जहांतैं उपजै तहांतैं सिद्ध अवस्था पर्यंत याका सद्भाव है। ऐसैं क्षायिक सम्यक्त्वका स्वरूप कह्या। ऐसैं तीन भेद सम्यक्त्वके कहे। बहुरि अनंतानुबंधी कषाय होतैं सम्यक्त्वकी दोय अवस्था हो हैं। कै तो अप्रशस्त उपशम हो है, कै विसंयोजन होहै। तहां जो करणकरि उपशम विधानतैं उपशम हो है, ताका नाम प्रशस्त उपशम है।

उदयका अभाव ताका नाम अप्रशस्त उपशम है। सो अनंतानुबंधी-का प्रशस्त तौ उपशम होय नाहीं, अन्य मोहकी प्रकृतिनका हो है। बहुरि इसका अप्रशस्त उपशम हो है। बहुरि जो तीन करण करि अनंतानुबंधीनिके परमाणुनिकौं अन्य चारित्रमोहिनीकी प्रकृतिरूप परिणमाई, तिसका सत्ता नाश करिए, ताका नाम विसंयोजन है। जो इनविषै प्रथमोपशम सम्यक्त्वविषै तौ अनंतानुबंधीका अप्रशस्त उपशम ही है। बहुरि द्वितीयोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्ति पहिलै अनंतानुबंधीका विसंयोजन भए ही होय, ऐसा नियम कोई आचार्य लिखै है। कोई नियम नाहीं लिखै हैं। बहुरि क्षयोपशम सम्यक्त्वविषै कोई जीवकैं अप्रशस्त उपशम हो है, वा कोईकैं विसंयोजन हो है। बहुरि क्षायक सम्यक्त्व है, सो पहलै अनंतानुबंधीका विसंयोजन भए ही हो है; ऐसा जानना। यहां यह विशेष है—जो उपशम क्षयोपशम सम्यत्वीकै अनंतानुबंधीके विसंयोजनतैं सत्ता नाश भया था। बहुरि वह मिथ्यात्वविषै आवै, तौ अनंतानुबंधीका बंधकौ अर तहां वाकी सत्ताका सद्भाव हो है। बहुरि क्षायिकसम्यग्दृष्टी मिथ्यात्वविषै आवै नाहीं। तातैं वाकै अनंतानुबंधीकी सत्ता कदाचित् न होय। यहां प्रश्न—जो अनंतानुबंधी तौ चारित्रमोहकी प्रकृति है। सो सर्व निमित्त चारित्रहीकौं घातै है। याकरि सम्यक्त्व घात कैसैं संभवै। ताका समाधान—

अनंतानुबंधीके उदयतैं क्रोधादिकरूप परिणाम हो हैं। कुछ अतत्त्वश्रद्धान होता नाहीं। तातै अनन्तानुबंधी चारित्रहीकौं

घातै है। सम्यक्त्वकौं नाहीं घातै है। सो परमार्थतैं है तौ ऐसैं ही परंतु अनंतानुबंधीके उदयतैं जैसैं क्रोधादिक हौ हैं, तैसैं क्रोधादिक सम्यक्त्व होतैं न होय। ऐसा निमित्त नैमात्तिकपना पाइए है। जैसैं त्रसपनाकी घातक तौ स्थावरप्रकृति ही है। परंतु त्रसपना होतै एकेन्द्रिय जाति प्रकृतिका भी उदय न होय, तातैं उपचारकरि एकेन्द्रिय प्रकृतिकौं भी त्रसपनाकी घातक कहिए, तौ दोष नाहीं। तैसैं सम्यक्त्वका घातक तौ दर्शनमोह है। परंतु सम्यक्त्व होतै अनंतानुबंधी कषायनिका भी उदय न होय, तातैं उपचारकरि अनंतानुबंधीकै भी सम्यक्त्वका घातकपना कहिए, तौ दोष नाहीं। बहुरि यहां प्रश्न—जो अनंतानुबंधी चारित्रकौं घातै है, तौ याकै गए किछू चारित्र भया। असंयत गुणस्थानविषै असंयम काहेकौं कहो हो। ताका समाधान—

अनंतानुबंधी आदि भेद हैं ते तीव्र मंदकषायकी अपेक्षा नाहीं है। जातैं मिथ्यादृष्टीकै तीव्रकषाय होतैं वा मंदकषाय होतैं अनंतानुबंधी आदि च्यारौंका उदय युगपत् हो है। तहां च्यारौंके उत्कृष्ट स्पर्द्धक समान कहे है। इतना विशेष है-जो अनंतानुबंधीके साथ जैसा तीव्र उदय अप्रत्याख्यानादिकका होय, तैसा ताके गए न होय। ऐसै ही अप्रत्याख्यानकी साथ प्रत्याख्यान संज्वलनका उदय होय, तैसा ताके गए न होय। बहुरि जैसा प्रत्याख्यानकी साथि संज्वलनका उदय होय, तैसा केवल संज्वलनका उदय न होय। तातैं अनंतानुबंधीके गए किछू कषायनिकी मंदता तौ हो है, परंतु ऐसी मंदता न होय जाकरि

कोई चारित्र नाम पावै। जातै कषायनिके असंख्यात लोकप्रमाण स्थान हैं। तिनिविषै सर्वत्र पूर्वस्थानतैं उत्तरस्थानविषै मंदता पाइए। परंतु व्यवहारकरि तिनि स्थाननिविषै तीन मर्यादा करीं। आदिके बहुत स्थान तौ असंयमरूप कहे, पीछैं केतेक देश-संयमरूप कहे, पीछैं केतेक सकलसंयमरूप कहे। तिनिविषै प्रथम गुणस्थानतैं लगाय चतुर्थ गुणस्थान पर्यंत जे कषायके स्थान हो हैं, सर्व असंयमहीके हो हैं। तातैं कषायनिकी मंदता होतैं भी चरित्र नाम न पावै हैं। यद्यपि परमार्थतैं कषायका घटना चारित्रका अंश है, तथापि व्यवहारतैं जहां ऐसा कषायनिका घटना होय, जाकरि श्रावकधर्म वा मुनिधर्मका अंगीकार होय तहां ही चारित्र नाम पावै है। सो असंयमविषैं ऐसे कषाय घटैं नाहीं। तातैं यहां असंयम कहा है। कषायनिका अधिक हीनपना होतैं भी जैसैं प्रमत्तादिगुणस्थाननिविषै सर्वत्र सकलसंयम ही नाम पावै है, तैसैं मिथ्यात्वादि असंयतपर्यंत गुणस्थाननिविषै असंयम नाम पावै है। सर्वत्र असंयमकी समानता न जाननी। बहुरि यहां प्रश्न--जो अनंतानुबंधी सम्यक्त्वकौं न घातै है, तौ याकै उदय होतैं सम्यक्त्वतैं भ्रष्ट होय सासादन गुणस्थानकौं कैसैं पावै है। ताका समाधान,—

जैसै कोई मनुष्यकै मनुष्यपर्याय नाशका कारण तीव्ररोग प्रगट भया होय, ताकौं मनुष्यपर्यायका छोड़नहारा कहिए। बहुरि मनुष्यपना दूर भए देवादिपर्याय होय, सो तौ रोग अवस्थाविषै न भया। वहां तौ मनुष्यहीका आयु है। तैसैं सम्यक्त्वीकै

सम्यक्त्वका नाशका कारण अनंतानुबंधीका उदय प्रगट भया ताकौं सम्यक्त्वका विरोधक सासादन कह्या । बहुरि सम्यक्त्वका अभाव भए मिथ्यात्व होय सो तौ सासादनविषै न भया । यहां उपशमसम्यक्त्वका ही काल है, ऐसा जानना । ऐसैं अनंतानुबंधी चतुष्ककी सम्यक्त्व होतैं अवस्था हो है । तातैं सातप्रकृतिनिकै उपशमादिकतैं भी सम्यक्त्वकी प्राप्ति कहिए है । बहुरि प्रश्न—सम्यक्त्वमार्गणाके छह भेद किए सो कैसै हैं । ताका समाधान—

सम्यक्त्वके तो भेद तीन ही हैं । सम्यक्त्वका अभावरूप मिथ्यात्व है । दोऊनिका मिश्रभाव सो मिश्र है । सम्यक्त्वका घातकभाव सो सासादन है । ऐसैं सम्यक्त्व मार्गणाकरि जीवका विचार किए छह भेद कहै हैं । यहां कोई कहै कि, सम्यक्त्वतैं भ्रष्ट होय मिथ्यात्वविषै आया होय ताकौ मिथ्यात्वसम्यक्त्व कहिए । सो यह असत्य है जातैं अभव्यकै भी तिसका सद्भाव पाइए है । बहुरि मिथ्यात्वसम्यक्त्व कहना ही अशुद्ध है । जैसैं संयममार्गणाविषै असंयम कह्या भव्यमार्गणाविषै अभव्य कह्या, तैसैं ही सम्यक्त्वमार्गणाविषैं मिथ्यात्व कह्या है । मिथ्यात्वकौं सम्यक्त्वका भेद न जानना । सम्यक्त्व अपेक्षा विचार करते केई जीवनिकै सम्यक्त्वका अभावतैं ही मिथ्यात्व पाइए है । ऐसा अर्थ प्रकट करनेंकें अर्थि सम्यक्त्वमार्गणाविषै मिथ्यात्व कह्या है । ऐसैं ही सासादन मिश्र भी सम्यक्त्वके भेद नाहीं हैं । सम्यक्त्वके भेद तीन ही हैं, ऐसा जानना । यहां कर्मके उपशमादिकतैं

उपशमादिक सम्यक्त्व कहे, सो कर्मका उपशमादिक याका किया होता नाहीं। यह तौ तत्त्वश्रद्धान करनेका उद्यम करै, ताके निमित्ततैं स्वयमेव कर्मका उपशमादिक हो है। तब याकै तत्त्वश्रद्धानकी प्राप्ति हो है। ऐसा जानना। याप्रकार सम्यक्त्वके भेद जानने। ऐसैं सम्यग्दर्शनका स्वरूप कह्या।

बहुरि सम्यग्दर्शनके आठ अंग कहे हैं। निःशांकित्व निःकांक्षित्व, निर्विचिकित्सित्व अमूढदृष्टित्व, उपबृंहण, स्थितिकरण, प्रभावना, वात्सल्य। तहां भयका अभाव अथवा तत्वनिविषै संशयका अभाव सो निःशांकित्व है। बहुरि परद्रव्यविषै रागरूप वांछाका अभाव, सो निःकांक्षित्व है। बहुरि परद्रव्यादिविषै द्वेषरूप ग्लानिका अभाव सो निर्विचिकित्सित्व है। बहुरि तत्त्वनिविषै देवादिकविषै अन्यथा प्रतीतिरूप मोहका अभाव, सो अमूढदृष्टित्व है। बहुरि आत्मधर्म वा जिनधर्मका बधावना, ताका नाम उपबृंहण है। इसही अंगका नाम उपगूहन भी कहिए है। तहां धर्मात्मा जीवनिका दोष ढांकना ऐसैं ताका अर्थ जानना। बहुरि अपने स्वभावविषै वा जिनधर्म विषै आपकौं वा परकौं स्थापन करना, सो स्थितिकरण अंग है। बहुरि अपने स्वरूपकी वा जिनधर्मकी महिमा प्रगट करनी सो प्रभावना है। बहुरि स्वरूपविषै वा जिनधर्मविषै धर्मात्मा जीवनिविषै प्रीतिभाव सो वात्सल्य है। ऐसैं आठ अंग जानने। जैसैं मनुष्यशरीरके हस्तपादादिक अंग हैं, तैसैं ए सम्यक्त्वके अंग हैं। यहां प्रश्न—जो केई सम्यक्त्वी जीवनिकै भी भय इच्छा ग्लानि आदि पाइए है, अर केई मिथ्यादृष्टीके न पाइए है। तातैं

निःशंकितादि अंग सम्यक्त्वके कैसैं कहो हो। ताका समाधान,—

जैसैं मनुष्य शरीरके हस्तपादादि अंग कहिए है। तहां कोई मनुष्य ऐसा भी होय है, जाकै हस्तपादविषै कोई अंग न होय। तहां याकै मनुष्यशरीर तौ कहिए है, परंतु तिनि अंगनि विना वह शोभायमान सकल कार्यकारी न होय। तैसैं सम्यक्त्वके निःशंकितादिअंग कहिए है। तहां कोई सम्यक्ती ऐसा भी होय, जाकै निःशंकितादिविषै कोई अंग न होय। ताकै सम्यक्त्व तौ कहिए, परन्तु तिनिका अंगनिविना यह निर्मल सकल कार्यकारी न होय। बहुरि जैसै बांदरेकै भी हस्तपादादि अंग हो हैं। परन्तु जैसैं मनुष्यकै होंय, तैसैं न हो हैं। तैसैं मिथ्यादृष्टीकै भी व्यवहाररूप निःशंकितादिक अंग हो हैं। परन्तु जैसैं निश्चयकी सापेक्षा लिए सम्यक्त्वीकै होय, तैसैं न हो हैं। बहुरि सम्यक्त्वविषै पचीस मल कहे हैं,——आठ शंकादिक, आठ मद, तीन मूढता, षट् अनायतन, सो ए सम्यक्त्वीकै न होंय। कदाचित काहूकै मल लागैं सम्यक्त्वका नाश न हो है, तहां सम्यक्त्व मलिन ही हो है, ऐसा जानना।